समर्पण

देशहितैषी महाशयो !

आपकी करतूत तो बहुत कुछ है, उसका पूरा-पूरा उपकार मानना और यथोचित धन्यवाद देना मेरी जिह्वा और लेखनी का काम नहीं। उनकी सामर्थ्य से बाहर है। केवल मनमात्र का ही अनुभव हो सकता है, तथापि मैं कुछ यथाबुद्धि, बल और सामर्थ्यपूर्वक सुदामा के तण्डुल अर्पण करता हूँ, स्वीकार कीजियेगा।

आपके महत्कार्य में सहायता तो यह क्षुद्रबुद्धि क्या दे सकता है? पर तो भी जैसे गिलहरी एक तिनका लेकर रामचन्द्र के पास सेतु बाँधते समय गई थी और रामचन्द्रजी ने उसको उसकी सामर्थ्य समझकर प्रसन्नता से अंगीकृत किया था, उसी आशा से यह 'स्त्रीसुबोधिनी' आपके करकमल में निवेदित है, ग्रहण करके कृतार्थ कीजियेगा।

आपका दासानुदास
ग्रन्थकर्ता

निवेदन

---:०:---

जिस समय मैंने इस पुस्तक के लिखने का सङ्कल्प किया और लेखनी उठाई, उस समय यह विचार था कि इसको ऐसा लिखना चाहिये कि फिर स्त्रियों को किसी दूसरी पुस्तक के पढ़ने और अवलोकन करने की आवश्यकता न रहे। पर क्या किया जाय, इच्छा जगदीश की; समय ही न मिला। अप्रैल में तो इसका विज्ञापन मेरे दृष्टिगोचर हुआ, फिर कई आवश्यक कार्यों से बाधा पड़ती गई। अन्त में ६ मई से इसको लिखने का आरम्भ किया और ३१ मई ही को इसे समाप्त कर दिया। केवल २२ दिन लिखने को मिले; क्योंकि विज्ञापन में अवधि ३० जून तक ही की थी। उसके पहले ही संशोधन आदि सब करना था। इसलिये यह पुस्तक मेरी इच्छा के अनुसार न हुई। मैं इसको इससे तिगुनी करना चाहता था; पर फिर कभी अवकाश मिलनेपर इसकीपूर्ति करते समय मैं कुरीति-संशोधन, गीतगान, सुई की करतूत, स्यानों का कौतुक और खोर निवारण लिखूँगा।

पाठकगण! २२ दिवस की अवधि और इस पुस्तक के कलेवर तथा विषयों पर ध्यान दीजियेगा। बुद्धिमानों से विशेष निवेदन करना नहीं होता, उनको तो संकेत ही बहुत है। और अपने मुख से अपनी करतूत कहना अपने मुँह "मियाँमिट्ठू" बनना है।

इस पुस्तक में निम्न-लिखित विषयों पर ध्यान दिया गया है—क्लिष्ट संस्कृत और फ़ारसी या अरबी के शब्द नहीं आने दिये गये। संयुक्त अक्षर भी बहुधा गिनतीमात्र के ही आये हैं, सो भी बहुत सरल। भाषा भी प्रायः बोलचाल की ही रक्खी है, गूढ़ नहीं होने दी। समझने में सुगमता रक्खी है, भाषा के लालित्य पर ध्यान नहीं दिया। स्त्रियों के कारण वाक्यखण्ड भी बहुत छोटे-छोटे रक्खे हैं। सब विषयों की तात्त्विक बातों को लिखा है। उनको प्रमाण से सिद्ध करके दिखलाया है। कहानी और कथा से पुस्तक को नहीं बढ़ाया नहीं तो तत्त्व की बातें बहुत न आने पातीं।

औषधियाँ भी परीक्षित और प्रमाणित लिखी हैं। एक-एक रोग की कई-कई औषधियाँ लिखी हैं, जिनका मिलना भी सुगम है और जो रात-दिन खाने-पीने में आती हैं। यह पुस्तक स्त्रियों के लिये रची गई है, इसलिये इसमें यथास्थान ऐसे लेख भी रक्खे हैं, जिनसे उनकी कुबुद्धि और कुविचारों का निपारण हो। पाँचवाँ भाग तो मुख्य इसी अभिप्राय से लिखा है। विशेष क्या निवेदन करूँ। गुणग्राही सज्जन इसके दोषों को छोड़ गुणों ही को ग्रहण करेंगे।

सन्तहि अगुण साधु गुणग्राही। काग गेह हँस मुक्ता माही॥

कोसी }

सन्नूलाल गुप्त

स्त्रीसुबोधिनी प्रथम भाग का सूचीपत्र

विषय	पृष्ठ
उपोद्घात	
धर्म की अवनति ...	१
धर्म के उद्धार का उपाय...	२
सनातन आर्यधर्म का गौरव ...	२
देवालयों में कथा बाँचने की प्रचलित प्रथा से हानि ...	३
मूर्ख स्त्रियों पर इन कथाओं का बुरा प्रभाव ...	४
श्रीमद्भागवत के दशमस्कन्ध आदि की कथा	६
मूर्ख और अपढ़ स्त्रियों पर ऐसी कथा सुनने का प्रभाव ...	८
आजकल की स्त्रियों की दुर्दशा ...	९
इनकी दुर्दशा पर पश्चात्ताप और ईश्वर से सुधार की प्रार्थना ...	१०
प्राचीन समय की विदुषी और शिक्षित स्त्रियों की नामावली और संक्षिप्त वृत्तान्त ..	११
अन्य प्रदेशों की शिक्षित स्त्रियों की संख्या और उनका व्यवसाय ...	१७
इस देश की शिक्षित बालिकाओं की संख्या	१८
इस देश की विलायत में पढ़नेवाली स्त्रियाँ ..	१९
इस देश में स्त्री-शिक्षा और स्त्री-समाज के प्रसिद्ध स्थान ..	१९
प्राचीन काल की स्त्रियों के प्रशंसनीय गुण ...	२०
आजकल की स्त्रियों के निन्दनीय दोष ...	२०
स्त्रियों के गहने पहनने का चाव ...	२०
उनके झूठे और सच्चे आभूषण ...	२१

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
अब की युवा स्त्रियों का विद्योपार्जन में कथन और पहली युवा स्त्रियों का विद्योपार्जन	.. २२	विद्यावती स्त्री की सन्तान	... ३५
स्त्री का सच्चा सौन्दर्य	... २३	विद्यावती स्त्री से पति को सहायता	... ३५
गुणहीन स्त्री की दशा	... २४	विद्या और बुद्धि की तुलना	... ३६
स्त्री प्रशंसा	... २४	स्त्री को विद्योपार्जन की आवश्यकता	... ३७
बुद्धिमती स्त्री के गुण	... २४	विषय सूची	... ३८
बुद्धि का बल	... २६		
बाल्यावस्था में विद्याभ्यास	... २७		
युवावस्था में विद्याभ्यास की कठिनता	... २८		
शिक्षित और अशिक्षित बूढ़ी स्त्री की दशा	... २९		
मूर्ख स्त्री के दोष	... २९		
मूर्ख स्त्री की संतान	... ३०		
मूर्ख विधवा स्त्री की दशा	३२		
विद्यावती स्त्री का आनन्द और भोग	... ३३		
बुद्धिमती और विद्यावती की प्रशंसा	... ३३		

गृहस्थधर्म

विषय	पृष्ठ
गृहस्थधर्म का आशय	... ३९
गृहस्थधर्म	... ४०
गृहस्थ की महिमा	... ४०
गृहस्थ का वृक्षरूपकालंकार	... ४१
सुमति और शील	... ४१
प्रीति की महिमा	... ४३
जल और दूध का दृष्टान्त	... ४४
सुहागे का दृष्टान्त	... ४४
नम्रता के गुण	... ४५
अभिमान का निषेध	... ४५

विषय	पृष्ठ
मर्यादात्याग के दोष	४६
सन्तोष की महिमा	४७
शान्ति के गुण	४८
धैर्य के गुण	४८
उद्यम के गुण और लाभ	४६
परिश्रम में लाभ	५०
साम्यावस्था के गुण	५०
गृहस्थी के लिए वर्जित विषय	५२
सुखप्राप्ति के नियम	५३
सम्बन्धियों में वर्ताव	५४
मेघवृत्ति का उपदेश	५५
स्त्री के धर्म	५५
स्त्री के लिए तीन प्रकार के गुणों का उपदेश	५६
भार्या बनने के गुणों का उपदेश	५७
ऐसे गुण, जिनसे पति कभी अप्रसन्न न हो	५८
दुष्टा स्त्री	६२
दुष्टा स्त्रियों के नाम और लक्षण	६३
पातिव्रतधर्म के लक्षण	६५
पतिव्रताओं के भेद	६६
एक पतिव्रता स्त्री का दृष्टान्त	६६
प्राचीन विख्यात पतिव्रताओं की नामावली	६७
पतिसेवा का उपदेश	६८
सुहाग और गुणों की तुलना	६८
पति के प्रति कटुवचनों का निषेध	६६
प्रियवादी के गुण	६६
स्त्री की स्वतंत्रता का निषेध	७०
सत्य के गुण और कपट-छल के अवगुण	७२
मूर्ख स्त्रियों की दुर्दशा	७३
पतिमहिमा	७३
पूर्व की सती स्त्रियों की संख्या	७४
सती होने का आशय	७५
पूर्व समय की प्रसिद्ध सती स्त्रियों की नामावली	७५

स्त्रीसुबोधिनी प्रथम भाग का सूचीपत्र

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
पूर्व पतिव्रता पतिपरित्यक्ता स्त्रियों के गुण	७६	लोकापवाद का प्रभाव...	६१
अब की स्त्रियों का पतिप्रेम और बर्ताव	७७	निर्लज्जता के दोष	६१
द्रौपदी की पतिभक्ति और सेवा	७७	लज्जा के गुण	६१
अब की स्त्रियों का जारी विषयक विचार	७७	प्रोषितपतिका का निर्वाह	६
अहल्या का पश्चात्ताप...	७७	विधवा के धर्म	६३
पातिव्रत धर्म के गुर ...	७७	मन मारने के लाभ	६३
पतिव्रतास्तोत्र	७६	विधवा की ईश्वराराधना	६३
सतीचरित्र	७६	आठ प्रकार के मैथुनों का निषेध	६४
शैव्या (महाराज हरिश्चन्द्र की रानी) की भक्ति	८१	विधवा के लिये व्रतों का फल	६४
शाण्डिली की कथा ...	८२	विधवाधर्म के गुर	६५
पद्मिनी की पतिभक्ति, साहस इत्यादि	८४	स्त्री का नातेदारों से बर्ताव	६६
स्त्री की षोडश कलाएँ...	८७	रूप का गर्व न करना ...	६७
प्रोषितपतिका के धर्म...	८६	सखी-सहेलियों से बर्ताव	६७
जितेन्द्रिय रहने के लाभ	८६	देवरानी और जेठानी के संग बर्ताव	६६
स्त्री की वास्तविक लज्जा	६०	बेकार रहने के दोष	६६
		दीर्घसूत्री होने का	

विषय	पृष्ठ
निषेध	... ९९
गृह के कामों में दक्षता	... १००
गृहभण्डार	... १००
लक्ष्मी के लक्षण और गुण	... १००
उपकार का फल	... १०१
गृहस्थों को शिल्प-विद्या से लाभ	... १०१
मूर्खों का पश्चात्ताप	... १०१
दक्ष स्त्री का गृह	... १०३
पराया काम करना	... १०३
उपकार का स्मरण, प्रत्युपकार की चिंता और चेष्टा	... १०४
दूती के दोष	... १०५
दूती के प्रति वर्ताव	... १०६
भीड़ में जाने का निषेध	... १०६
परदेशवास और उसके नियम	... १०८
वस्त्रधारण और राह का चलना	... ११०
परनिन्दा का निषेध	... १११
पड़ोसिन का धर्म	... ११३
पड़ोसी की वस्तु चुराने का निषेध	... ११३
लोभ के अवगुण	... ११४
नीच से सम्बन्ध का निषेध	... ११५
मूर्ख मित्र का निषेध	... ११५
उच्च सम्बन्ध का निषेध	११६
समान सम्बन्ध की महिमा	... ११७
संग-कुसंग के गुण-अवगुण	... ११८
हितोपदेश का ग्रहण	११९
मूर्ख को उपदेश	... ११९
क्रुद्ध जन के प्रति व्यवहार	... १२०
क्रोधनिवारण के उपाय	१२१
प्रत्युपकार का निषेध	१२२
ईख का दृष्टान्त	... १२२
घर आये का आदर-सत्कार	... १२३
पाहुने का सत्कार	... १२३

स्त्रीसुबोधिनी प्रथम भाग का सूचीपत्र

विषय	पृष्ठ

सम्बन्धियों से वैर का निषेध ... १२३
जाति-बिरादरी में आना-जाना ... १२४
गृहस्थधर्म के गुण ... १२५

सामान्य शिक्षा

नई बहू को उपदेश ... १२८
नई बहू का उठना-बैठना ... १२८
अँगिया के गुण और महीन वस्त्र का निषेध ... १२९
स्त्री की स्नानविधि ... १२९
नई बहू का कार्यारम्भ १३०
नई बहू का सखी-सहेलियों के प्रति व्यवहार ... १३०
चिट्ठी लिखने के नियम १३०
विदाई समय के वचन १३१
व्यभिचारी पति की स्त्री का धर्म और उपाय १३२
रानी कैकेयी की कथा और महारानी कौशल्या का समाचार ... १३३
त्याज्य स्त्रियों के नाम १३३
ससुराल की बुराई का निषेध ... १३४
पतिगृह का बर्ताव १३४
सास बहू दोनों को उचित शिक्षा ... १३५
माता को शिक्षा ... १३५
मा का बेटी को उपदेश, ससुराल जाते समय १३५
बेटी से ससुराल की बुराई सुनना ... १३६
बहू को सास की शिक्षा का पालन ... १३७
बहू का प्रत्येक के संग बर्ताव ... १३८
वचन के गुण और दोष १३९
बोलचाल के नियम ... १३९
सास-ननँद से कपट रखने के अवगुण ... १४०
ठगनी स्त्रियों के लक्षण और व्यवहार ... १४१

विषय	पृष्ठ
किन-किन से सदा बचती रहे	... १४२
शिक्षक का उपकार और घृणोत्पादक बातों का निषेध	... १४२
भोजन की प्रशंसा	.... १४२
भोजन करने के नियम	१४३
मिल बाँटकर भोजन करने के गुण	... १४४
वस्त्ररक्षा	... १४४
रात्रि में किस प्रकार रक्षा करे	... १४४
पर घर का व्यवहार...	१४५
गहनों के गुण और दोष	१४६
स्त्रियों को गहने का चाव	१४६
एक स्त्री का गहने के कारण लज्जित होना	१४७
स्त्री का सच्चा शृंगार और आभूषण	... १४८
स्त्री के आठ अवगुण	१५०
बड़ों का मान और आदर	... १५०
पतिसेवाकी महिमा और व्रत आदि का निषेध	१५०
यात्रा के विषय में उचित शिक्षा	.. १५१
ठगों का वृत्तान्त	... १५१
ठगों की ठगी के उपाय	१५२
यात्रा में सावधानी	... १५३
यात्रा में गहना-पाता ले जाने की विधि	... १५३
राह भूलने पर क्योंकर पता लगावे	... १५४
बिछुड़ने पर शीघ्रतर पता लगाने के उपाय	१५५
स्मरणीय उपदेश	... १५६
कौन किससे प्रसन्न होता है	... १५६

घर का काम-धन्धा

विषय	पृष्ठ
समयका उचित विभाग	१६०
समय की महिमा और मूल्य	... १६१
नित्यकर्म	.. १६२
भोजन के निमित्त कर्तव्य-कर्म	... १६३

विषय	पृष्ठ
भोजन करने का समय और क्रम	१६४
भोजन के पश्चात् कर्तव्य-कर्म	१६४
शिल्पविद्या के लाभ	१६६
संध्या-भोजन के पश्चात् कर्तव्य-कर्म	१६८
शयनसमय का परिमाण	१६८
वस्तु मँगाने का समय	१६६
वस्तुरक्षाविधि	१६६
देवरानी आदि के संतानों के प्रति व्यवहार	१७०
साख पर वस्तु मँगाने के लाभ	१७०
पूरी वस्तु मँगाने के गुण	१७१
पालित पशुओं की टहल	१७१
वर्षाऋतु से पूर्व वस्तु-संग्रह	१७२
घर की बड़ी-बूढ़ी स्त्रियों का काम	१७३
भोज आदि का प्रबन्ध	१७३
अधूरे काम करने से हानि	१७३
उत्तम और अधम कामों के करने में भेद	१७४
उत्तम और अधम कामों की सूची	१७४
घर के काम-धन्धे के गुर और कुछ शिक्षा	१७८

व्यय आदि का प्रबन्ध

विषय	पृष्ठ
किसमें कितना व्यय करना ठीक है	१७७
व्यर्थ व्यय होने के दोष	१७८
व्यर्थ व्यय रोकने के उपाय	१७८
बचत और सुप्रबंध के गुण और लाभ	१८०
विवाह आदि का प्रबन्ध	१८१
मनुष्य को ऋण लेने की आवश्यकता के कारण	१८१
ऋण के दोष	१८२
ऋण लेना सुगम है या कठिन	१८२
ऋण किस प्रकार ले	१८३

विषय	पृष्ठ
उऋण होने के उपाय	१८५
ऋणी की प्रतिष्ठा ...	१८६
अधिक व्याज के दोष	१८७
सास-नन्द की चोरी से देने-लेने का निषेध	१८८
नौकर-चाकर की तनख्वाह ...	१८८
कैसा मनुष्य नौकर रखने योग्य है	१८६
नौकर के प्रति वर्ताव	१६०
चटोरपने के अवगुण और हानि ...	१६०
गृहस्थी का चटोरपन	१६०
निर्धनता के दोष ...	१६१
वस्तु खरीदने के नियम	१६२
उधार और नक़द खरीद का अन्तर ...	१६२
उचापत की हानियाँ	१६२
सैंतने के लाभ ...	१६३
तुच्छ और व्यर्थ वस्तुओं से भी चतुर स्त्री को लाभ ...	१६३
चतुर स्त्रीका अन्य व्यवहारों में वचत करना	१६४
मेले-तमाशे में जाने का प्रवन्ध ...	१६६
चींटी और मुर्गी से गृहस्थी की शिक्षा	१६६
टिड्डे और मधुमक्खी का दृष्टान्त ...	१६७
गहने द्वारा धनसंचय	१६७
गहने की हानि का परिमाण ...	१६८
समस्त भारत का गहने से हानि का परिमाण	१६६
धनी होने की क्रिया	२००
एक सुप्रवन्ध करनेवाली स्त्री की कथा	२००
गृहप्रवन्ध के गुर ...	२१३

विषय	पृष्ठ
कचरी भूनने की रीति	२७५
ग्वार की फलों तलने की रीति	... २७६
टैंटी उठाने की क्रिया	२७६
खरबूजे के छिलकों की कचरी	... २७६
करेले की कचरी	.. २७७
अनेक प्रकार की कचरी	२७७
पिस्ते की कचरी	... २७७
पापड़ बनाने की क्रिया	२७७
तिलमुँगौड़ी	... २७७
साग और भाजी के लक्षण	.. २७८
अरवी के पत्ते	... २७८
पालक का साग	... २७६
सरसों का साग	... २७६
किस-किस की भाजी बनती है	... २८०
जमींकन्द बनाने की तीन क्रियाएँ	... २८०
शकरकन्द की भाजी	२८१
आलू बनाने के अनेक प्रकार	... २८१
आलू की साधारण रीति	.. २८२
रसेदार आलू	... २८२
आलू का दम	... २८२
मूल कितने हैं	... २८३
गाजर की भाजी	... २८३
रतालू की भाजी	... २८४
अरवी की भाजी	... २८४
कद्दू की भाजी	... २८५
बैंगन की भाजी	... २८५
इसकी दूसरी रीति	... २८६
साबित बैंगन बनाने की रीति	... २८६
केले की फली की भाजी	२८७
इसकी दूसरी क्रिया	२८७
करेले की भाजी	... २८८
ढेंडस या टिंडे की भाजी	... २८८
भिंडी की भाजी	... २८८
साबित भिंडी बनाने की रीति	... २८६
गोभी के फूल की भाजी	... २८६

विषय	पृष्ठ
मीठा केसरिया भात	२५३
इसकी दूसरी रीति ...	२५४
गजरभत्त ...	२५५
अनेक प्रकार की खिचड़ी ...	२५५
भुनी खिचड़ी ...	२५६
इसकी दूसरी विधि...	२५६
खीर ...	२५७
छेने की खीर ..	२५८
तहरी ...	२५६
बड़ी-मुँगौड़ी बनाने की रीति ...	२५६
बनौरी ...	२६०
टटकी मुँगौड़ी ...	२६१
मांड़िया ...	२६१
कढ़ी ...	२६२
मूँग की पिट्ठी की कढ़ी	२६३
झोल या झोर ...	२६३
सेवई ...	२६४

फलाहार

विषय	पृष्ठ
दूध के अनेक भोजन	२६६
सादा दूध औटाने की रीति ...	२६६
दही जमाने की रीति	२६६
एक ही हाँडी में चार प्रकार का दही जमाने की क्रिया ...	२६६
रबड़ी बनाने की रीति	२६८
पेड़ा बनाने की रीति	२६६
बर्फी बनाने की रीति	२६६
कुट्टू के भोजन बनाने की रीति ...	२६६
सिंघाड़े के भोजन बनाने की रीति ...	२७०
सिंघाड़े का शीरा बनाना ...	२७०
अरबी (घुइयाँ) बनाने की अनेक रीति ...	२७०
सिंघाड़ा बनाने की विधि	२७२
रतालू बनाना ...	२७२
कच्चे सिंघाड़े की पूरियाँ	२७३

चबेना

विषय	पृष्ठ
दाल बनाने की क्रिया	२७३
सेव बनाने की विधि	२७४

विषय	पृष्ठ
कचरी भूनने की रीति	२७५
ग्वार की फली तलने की रीति	२७६
टेंटी उठाने की क्रिया	२७६
खरबूजे के छिलकों की कचरी	२७६
करेले की कचरी	२७७
अनेक प्रकार की कचरी	२७७
पिस्ते की कचरी	२७७
पापड़ बनाने की क्रिया	२७७
तिलमुँगौड़ी	२७७
साग और भाजी के लक्षण	२७८
अरवी के पत्ते	२७८
पालक का साग	२७९
सरसों का साग	२७९
किस-किस की भाजी बनती है	२८०
जमींकन्द बनाने की तीन क्रियाएँ	२८०
शकरकन्द की भाजी	२८१
आलू बनाने के अनेक प्रकार	२८१
आलू की साधारण रीति	२८२
रसेदार आलू	२८२
आलू का दम	२८२
मूल कितने हैं	२८३
गाजर की भाजी	२८३
रतालू की भाजी	२८४
अरवी की भाजी	२८४
कद्दू की भाजी	२८५
बैंगन की भाजी	२८५
इसकी दूसरी रीति	२८६
साबित बैंगन बनाने की रीति	२८६
केले की फली की भाजी	२८७
इसकी दूसरी क्रिया	२८७
करेले की भाजी	२८८
ढेंडस या टिंडे की भाजी	२८८
भिंडी की भाजी	२८८
साबित भिंडी बनाने की रीति	२८९
गोभी के फूल की भाजी	२८९

विषय	पृष्ठ
इसकी दूसरी रीति	२९०
गोभी के फूल की डंडी की भाजी	२९०
कचनार की कली की भाजी	२९१
किस-किसकी भुजिया बनती है	२९१
आलू का भुर्ता	२९२
दूसरी रीति	२९२
तीसरी रीति	२९२
चौथी रीति	२९३
बैंगन का भुर्ता	२९३
दूध की तरकारी	२९४
नमक की भाजी	२९४
रायतों के प्रकार	२९५
नमकीन रायता	२९५
ककड़ी का रायता	२९६
गाजर का रायता	२९६
कद्दू का रायता	२९६
अन्य रायता	२९७
अचार के प्रकार	२९७
पानी का अचार	२९८
तेल का अचार	२९८
आम का अचार (तेल का)	२६
आम का सूखा अचार	२६
तेल-पानी का अचार	३००
आम की अचारी	३०१
करेले का अचार	३०२
नींबू का अचार	३०२
मसालेदार नींबू का अचार	३०२
अदरख का अचार	३०३
टेंटी का अचार	३०३
हड़ का अचार	३०३
छोटी हड़ का अचार	३०४
नींबू का दूसरा अचार	३०४
बताशों का अचार	३०५
आक (मदार) के पत्तों का अचार	३०५
सिरके का अचार	३०६
नींबू का मीठा अचार	३०६
अनन्नास का अचार	३०७
मिर्च का अचार	३०७
भसींड़े या कमलककड़ी का अचार	३०७

विषय	पृष्ठ
आम का मुरब्बा	... ३०७
आमलों का मुरब्बा	... ३०८
अन्य मुरब्बे	... ३०८
नींबू का मुरब्बा	... ३०८
सेव का मुरब्बा	... ३०६
अदरक का मुरब्बा	... ३०६
मीठी चटनी	... ३१०
नौरतन चटनी	... ३१०
सूखी चटनी	... ३११
जमींकन्द की चटनी	३११
आम की चटनी	... ३११
अमलतास की चटनी	३१२
समोसे या तिकोने	... ३१२
गुझिया	... ३१३
नारियल की बर्फी	... ३१३
बादाम की बर्फी	... ३१४
कुलफी	... ३१४
सोंठ	... ३१४
प्याज का लच्छा	... ३१५
नमकीन पानी	... ३१५
चाय बनाने की क्रिया	३१५
काफी बनाने की क्रिया	... ३१५

सीना-पिरोना

विषय	पृष्ठ
सीना-सिखानेकी विधि	३१६
सीने के विविध प्रकार	३१७
पिरोने का अर्थ	.. ३१७
सीने की विधि	.. ३१८
कैसे डोरे से किस कपड़े को सीते हैं	... ३१६
सिलाई के विविध प्रकार	.. ३१६
संजाफ व गोट काटना	३२१
सुजनी	. ३२२
गोट टाँकने की विधि	३२३
इकहरे कपड़े पर गोट लगाना	... ३२४
संजाफ का टाँकना	... ३२४
गोट और संजाफ में कोने निकालना	... ३२५
अँगरखा ब्योंतने की रीति	... ३२५
अचकन ब्योंतने की रीति	... ३२७
कुर्ता ब्योंतने की रीति	३२७

विषय	पृष्ठ
चोगा ब्योंतने की रीति	३२८
पाजामा ब्योंतने की रीति	... ३२८
औरंगी पाजामे की रीति	३२९
कुर्ती ब्योंतने की रीति	३२९
दामन व लहँगा सीना	३३०
चोली	... ३३०
गोटे टाँकने की रीति	३३१
गोखुरू टाँकने की रीति	३३१

शिल्प-विद्या

विषय	पृष्ठ
पूर्वकाल की शिल्प-विद्या	... ३३२
चौदह विद्याएँ और चौंसठ कलाएँ	.. ३३३
चौंसठ कलाओं का विस्तार	... ३३४
मुख्य रंग और उनके भेद	... ३४१
रंग के अनेक प्रकार	३४२
रंगों के नाम	.. ३४२
किस वस्तु में कौन रंग बनता है	... ३४३
कौन वस्तु रंग काटने और कौन रंग पक्का करने में वर्ती जाती है	३४३
रँगने का कपड़ा कैसा होना चाहिये	... ३४३
किस कपड़े पर किसका रंग चढ़ता है	... ३४४
रंग को गहरा करना	३४४
लोहे के कट बनाने की क्रिया	... ३४४
किस वस्तु का रंग कैसे निकलता है	३४५
कुसुम की रंगी बनाना	३४५
लाल का खमीर उठाना	३४६
कपड़े का रंग काटना	३
रँगने की क्रिया	... ३
कलप बनाने की विधि	३४
रँगने में धब्बा न पड़ने की क्रिया	
खाकी रँगना	... ३४८
आसमानी रँगना	... ३४८
जमुर्रदी रँगना	... ३४९
नाश्र रँगना	... ३४९

विषय	पृष्ठ
सरदई रँगना	... ३४६
अब्बासी रँगना	.... ३५०
सब्ज काही रँगना	... ३५०
काही रँगने की दूसरी विधि	.... ३५०
कासनी रँगना	... ३५०
कोकई रँगना	... ३५१
नाफरमानी रँगना	... ३५१
लीला रँगने की दो रीतियाँ	.... ३५१
पीला रँगने की दो रीतियाँ	... ३५१
केसरिया रँगना	... ३५२
नारंजी रँगना	... ३५२
कपासी रँगने की दो क्रियाएँ	... ३५२
कपूरी रँगना	... ३५३
अंगूरी रँगना	... ३५३
शर्बती रँगना	... ३५३
बादामी रँगना	... ३५३
गुलाबी रँगना	... ३५३
लाल रँगना	... ३५३
गुलेनार रँगना	... ३५३
पिस्तई रँगने की दो क्रियाएँ	... ३५४
जंगाली रँगना	... ३५४
तूसी रँगना	... ३५४
उन्नाबी रँगना	... ३५५
फाखताई रँगना	... ३५५
फीरोजई रँगना	... ३५५
काकरेजी रँगना	... ३५५
करंजवी रँगना	... ३५५
किशमिशी रँगना	... ३५६
अद्भुत दुरंगा	... ३५६

कपड़ों के धब्बे छुड़ाना

विषय	पृष्ठ
कपड़े पर से खून का धब्बा छुड़ाना	... ३५७
अन्य धब्बे छुड़ाना	... ३५७
स्याही के धब्बे छुड़ाना	३५७
चिकनई के धब्बे छुड़ाना	... ३५७
पशमीने की चिकनई छुड़ाना	... ३५७
रेशमी कपड़े की चिकनई दूर करना	.... ३५७

विषय	पृष्ठ
सब प्रकार के दाग छुड़ाना	... ३५८

चित्रकारी

विषय	पृष्ठ
पूर्वकाल की स्त्रियों की चित्रविद्या	... ३५८
चित्रों का मूल्य	... ३५९
इस देश के पहले चितेरे	३५९
देश में चित्रकारी की वर्तमान दशा	... ३५९
चित्रकारी के भेद	... ३६०
चित्रकारी के लिये आवश्यक वस्तुएँ	... ३६१
चित्रकारी की कूची	... ३६१
सम्मुख से मनुष्य के अंगों के चित्र का लेखा	.... ३६२
तथा उसकी चौड़ाई का लेखा	... ३६३
चेहरे का लेखा	... ३६५
अंगों की परस्पर लंबाई चौड़ाई	... ३६५
नेत्र बनाने के नियम	३७०
हाथों की लम्बाई	... ३७०
मुख बनाने का लेखा	... ३७१

फुटकल

विषय	पृष्ठ
ताँबे आदि के बरतन साफ करना	... ३७२
उन पर कलई करना	... ३७२
काँच पर कलई करना	३७३
बरतनों पर चाँदी का पानी चढ़ाना	... ३७३
चाँदी का पानी बनाना	३७४
मोती उजालना	... ३७५
गुलदस्ते को बहुत दिन तक ताजा रखना	... ३७५
काँच और चीनी के टूटे बरतन जोड़ना	... ३७५
काँच में पीतल आदि धातु की वस्तुएँ चिपकाना	... ३७६

स्त्रीसुबोधिनी तृतीय भाग का सूचीपत्र

विषय	पृष्ठ
गर्भाधान	
अच्छी या बुरी संतान कैसे होती है	.... ३७७
सन्तान में अब क्यों अवगुण अधिक होते हैं	३७८
गर्भ में अब क्यों बाधा पड़ जाती है	.... ३७८
पहले पूर्ण आयु आदि गुणोंवाली सन्तान क्यों होती थी	.... ३७८
सन्तानोत्पत्ति के लिए पूर्वकाल में क्या-क्या क्रियायें वर्ती जाती थीं	३७६
सन्तान उत्पन्न करने में किन-किन बातों का विचार मुख्य है	.... ३७६
स्त्रीधर्म	.... ३८०
नीरोग स्त्रीधर्म की पहिचान	.... ३८१
दूषित स्त्रीधर्म की पहिचान	.... ३८१
स्त्रीधर्म की समाप्ति	.... ३८२
गर्भ और रज की समाप्ति का भेद	... ३८२
दोनों की पहिचान के लक्षण	.... ३८३
वन्ध्या के लक्षण	... ३८३
स्त्रीधर्म के चार दिनों का आचार-विचार	३८३
चतुर्थ दिन की क्रिया	३८४
कौन-से दिन पुत्र या कन्या का जन्म हो सकता है	... ३८५
गर्भाधान का समय और विधि	.... ३८५
क्षेत्र के गुणों का प्रभाव	३८८
गर्भ का पिंड काहे से बनता है	.... ३८६
सत्त्व, रज और तम गुणवाली संतान काहे-काहे से उत्पन्न होती है	.... ३६०
गर्भ के बालक में बाधा क्योंकर पड़ जाती है	३६०

विषय	पृष्ठ
स्त्री के गर्भ में बन्दर या पशु की आकृतिवाली संतान क्यों कर उत्पन्न हो गई	३६१
माता के विचारों का संतान की प्रकृति में कैसा प्रभाव होता है, इसके दृष्टान्त	३६२
गर्भ पहचानने के लक्षण	३६६
गर्भ में पुत्र-पुत्री के पहचानने के लक्षण ...	३६७
नपुंसक संतानके लक्षण	३६८
गर्भ में दो बालकों की पहचान	३६८
गर्भ में अच्छे या बुरे बालक होने के लक्षण	३६८
दोहद	३६६
गर्भ के बालक का भोजन ...	३६६
कितने दिन में बालक उत्पन्न होता है	४००
कितने-कितने समय में गर्भ में बालक का कौन-सा अंग बनता है	४००
किन-किन दशाओं में गर्भ नहीं रहता	४०१
गर्भ रहने के उपाय ...	४०२
गर्भवती के मन मारने से संतान में कौन कौन गुण उत्पन्न होते हैं ...	४०३
प्रतिमास गर्भ कैसे बढ़ता है	४०३
किन-किन महीनों में बालक गर्भ से उत्पन्न होता है	४०४
किस महीने का उत्पन्न हुआ बालक जी सकता है और उसका कारण	४०४
गर्भ में बालक किस प्रकार से रहता है	४०५
गर्भ में बालक इस प्रकार से क्यों रहता है	४०५
एक ही गर्भ में एक से अधिक बालक क्यों	

विषय	पृष्ठ
उत्पन्न हो जाते हैं	... ४०४

गर्भ-रक्षा

विषय	पृष्ठ
गर्भ की रक्षा किस प्रकार से करें	.... ४०६
किन-किन बातों से गर्भ में हानि पहुँचती है	... ४०६
गर्भवती का आहार-विहार और आचार-विचार	... ४०७
गर्भवती का नियम-पालन	... ४०८
गर्भस्राव और गर्भपात का भेद	... ४०९
इसके लक्षण	... ४१०
इसके उपाय	... ४११
कितने-कितने समय में ये हो सकते हैं	.... ४१२
जिस स्त्री का गर्भस्राव व गर्भपात हो जाता हो उसके लिए औषध	४१३
गर्भवती की चर्या	... ४१३
गर्भवती को मिट्टी खाने से हानि	.... ४१५
उसका उपाय	... ४१६
अधिक गर्भाधान से हानि	.... ४१६

धात्री-शिक्षा

विषय	पृष्ठ
धात्री को क्या-क्या जानना चाहिए	.. ४१८
अब दाई नीच जाति की क्यों होती हैं	... ४१८
आजकल की दाइयाँ कैसी हैं, उनसे क्या हानि-लाभ है	... ४१८
सौर का घर कैसा होना चाहिए	.. ४२०
उसका प्रबन्ध	.. ४२०
कौन-कौन-सी वस्तु उसमें रहनी चाहिये	४२१
प्रसव होते समय प्रसूतिका के पास कौन-सी और कैसी स्त्रियाँ रहनी चाहिये	— ४२१

विषय	पृष्ठ
पीरों के समय का उपचार	४२२
पीर की पहचान	४२२
सची और झूठी पीड़ा के लक्षण	४२२
पीड़ा होने पर गर्भवती की क्रिया	४२२
दाई इस समय क्या करे	४२२
दाई के इस समय का काम	४२३
गर्भ में बालक किस प्रकार है, इसकी पहचान	४२३
विष्णुपद के लक्षण	४२३
गर्भ में तिरछे पड़े हुए बालक के लक्षण	४२४
गर्भ में कितने महीने तक किस प्रकार बालक रहता है	४२५
छः महीने से पूर्व के बालक का उत्पन्न होना	४२५
गर्भवती को यात्रा के दोष	४२५
पीड़ा की तीन अवस्थाएँ	४२६
जरायु (गर्भाशय) की आकृति	४२६
पीड़ा के समय की दशा	४२७
प्रसव के लक्षण	४२७
पीड़ा की पहली अवस्था में प्रसूतिका क्या करे	४२८
मूर्ख दाइयाँ जो इस अवस्था में किया करती हैं, वे हानिकारक हैं, उनका निषेध	४२८
पीड़ा धीमी पड़ जाने का उपाय	४२८
प्रसूतिका का भोजन और मल-मूत्र त्याग	४२९
गुलहड़ का चीरना	४२९
इसकी असावधानी में बालक की हानि	४२९

विषय	पृष्ठ
पीड़ा को उत्तेजित करने के उपाय	.... ४३०
प्रसूतिका को अधिक बल करने का निषेध	४३०
प्रसव के समय की बैठक	४३०
प्रसूतिका के पीड़ों का उपाय	.... ४३१
प्रसूतिका के दुःख का उपचार	.... ४३२
बालक का सिर पकड़कर न खींचना चाहिये	४३२
किस प्रकार प्रसूतिका को जनाना चाहिए	... ४३३
उत्पन्न हुए बालक की क्रिया	... ४३३
नार की क्रिया	... ४३४
बालक रोता न हो तो उसका उपाय	.... ४३५
मूर्ख दाइयों का प्रचलित उपाय	.... ४३६
नार किस प्रकार काटनी चाहिए	.... ४३६
जोड़ुओं की नार काटना	४३७
नार काटने की सावधानी और असावधानी	४३७
नार की शुद्धि	.... ४३७
नार में लगाने की औषधि	.... ४३८
अनन्तमूलप्राश	.... ४३८
निर्बल बालक का उपचार	.... ४३८
बालक का स्नान	... ४३९
बालक के अंग को ठीक करना	. ४३९
प्रसूतिका का खोनार	४४०
खोनार को खींचना न चाहिए	... ४४०
खोनार निकालने की विधि	.... ४४
प्रसूतिका का पेट बांधना	४४
प्रसूतिका का भोजन	... ४४
प्रसूतिका को आराम	४४
गाने-बजाने की प्रचलित प्रथा	.... ४४
सौर में सांड़ न रखने	४४
मल और मूत्र का त्याग	४

विषय	पृष्ठ
पीरों के समय का उपचार	४२२
पीर की पहचान	४२२
सच्ची और झूठी पीड़ा के लक्षण	४२२
पीड़ा होने पर गर्भवती की क्रिया	४२२
दाई इस समय क्या-क्या करे	४२२
दाई के इस समय का काम	४२३
गर्भ में बालक किस प्रकार है, इसकी पहचान	४२३
विष्णुपद के लक्षण	४२३
गर्भ में तिरछे पड़े हुए बालक के लक्षण	४२४
गर्भ में कितने महीने तक किस प्रकार बालक रहता है	४२५
छः महीने से पूर्व के बालक का उत्पन्न होना	४२५
गर्भवती को यात्रा के दोष	४२५
पीड़ा की तीन अवस्थाएँ	४२६
जरायु (गर्भाशय) की आकृति	४२६
पीड़ा के समय की दशा	४२७
प्रसव के लक्षण	४२७
पीड़ा की पहली अवस्था में प्रसूतिका क्या करे	४[illegible]
मूर्ख दाइयाँ जो इस अवस्था में किया करती हैं, वे हानिकारक हैं, उनका निषेध	४२८
पीड़ा धीमी पड़ जाने का उपाय	४२८
प्रसूतिका का भोजन और मल-मूत्र त्याग	४२९
मुतहड़ का चीरना	४२९
इसकी असावधानी में बालक को हानि	४२९

विषय	पृष्ठ
पीड़ा को उत्तेजित करने के उपाय	४३०
प्रसूतिका को अधिक बल करने का निषेध	४३०
प्रसव के समय की बैठक	४३०
प्रसूतिका के बाँइटों का उपाय	४३१
प्रसूतिका के दुःख का उपचार	४३२
बालक का सिर पकड़कर न खींचना चाहिये	४३२
किस प्रकार प्रसूतिका को जनाना चाहिए	४३३
उत्पन्न हुए बालक की किया	४३३
नार की किया	४३४
बालक रोता न हो तो उसका उपाय	४३५
मूर्ख दाइयों का प्रचलित उपाय	४३६
नार किस प्रकार काटनी चाहिए	४३६
जोड़लों की नार काटना	४३७
नार काटने की सावधानी और असावधानी	४३७
नार की शुद्धि	४३७
नार में लगाने की औषधि	४३८
अनन्तमूलप्राश	४३८
निर्बल बालक का उपचार	४३८
बालक का स्नान	४३९
बालक के अंग को ठीक करना	४३९
प्रसूतिका का औनार	४४०
औनार को खींचना न चाहिए	४४०
औनार निकालने की विधि	४४१
प्रसूतिका का पेट बाँधना	४४२
प्रसूतिका का भोजन	४४२
प्रसूतिका को आराम	४४२
गाने-बजाने की प्रचलित प्रथा	४४३
सौर में भीड़ न रक्खे	४४३
मल और मूत्र का त्याग	४४३

विषय	पृष्ठ
मूर्च्छा-रोग के लक्षण	४६३
मूर्च्छा-रोग का उपाय	४६५
गर्भिणी के मसूढ़ों की औषध	४६५
गर्भिणी के लिये मेदी (दस्तावर) औषध	४६६
हुक्मी विरेचन	४६७
गर्भिणी के वायु का उपाय	४६७
गर्भिणी के अफरा का उपाय	४६७
गर्भिणी को मूत्र न उतरने पर	४६७
संग्रहणी	४६७
गर्भिणी को वमन	४६७
गर्भिणी के पाँव की सूजन	४६८
गर्भिणी को कम नींद आना	४६८
गर्भिणी का रुधिरप्रवाह	४६८
जरायु का प्रवाह रुकना	४६८
गर्भपात के लक्षण और उपाय	४६६

विषय	पृष्ठ
पुष्पावरोध का उपाय	४७०
प्रसूतिका का पेट बढ़ना	४७०
शीघ्र और सुगम प्रसव के उपाय	४७०
दूध बढ़ाने की औषध	४७१
दूध का शोधन	४७२
थनैला	४७२
दूध से भरे स्तन जो चर्राते हों और बालक न पीता हो	४७३
प्रदर-रोग के लक्षण	४७४
प्रदर-रोग उत्पन्न होने का कारण	४७४
श्वेत प्रदर की औषध	४७५
पीले प्रदर की औषध	४७५
प्रदर-रोग की औषधियाँ	४७६
आँखों के रोग और औषधियाँ	४७८
रतौंधी की औषध	४७६
नेत्रज्योति बढ़ाने की औषध	४७६
बवासीर की औषध	४७६
उबटना	४८०

विषय	पृष्ठ
स्वास्थ्यरक्षा	
आरोग्यता के गुण	४८१
आरोग्यता किस प्रकार से रह सकती है	४८१
कैसा भोजन करना चाहिये	४८२
भोजन कब करना चाहिये	४८२
भोजन करके क्या करना चाहिये	४८२
भोजन के नियम	४८३
विरुद्ध भोजन	४८४
भोजनों की छः प्रकार की विरुद्धता	४८५
भोजन के उपरान्त क्या करना चाहिये	४८६
पानी पीने के नियम	४८६
अजीर्ण में पानी का गुण	४८७
किस ऋतु में किस प्रकार पानी पिये	४८८
स्नान के नियम	४८६

विषय	पृष्ठ
शयन का घर	४८६
सोने की खाट किस भाँति बिछानी चाहिए और किस प्रकार सोना चाहिए	४६०
उत्तर को मस्तक करके सोने से हानि	४६०
ओढ़ने बिछाने के कपड़े किस प्रकार से रहने चाहिए	४६०
मुख खोलकर सोने के गुण	४६०
किस समय का सोना हानिकारी और गुणकारी है	४६१
दिन में सोना किसे चाहिये	४६१
ओस में सोने से हानि	४६२
मुख घोकर सोना और उठकर मों डालने के गुण	४६३
जल्दी उठने के लाभ	४६३
उठने के पीछे का कर्म	४६३

विषय	पृष्ठ

नानविधि ४९३
यटना ४९३
लमर्दन के गुण ... ४९३
नान में अँगोछे का काम ४९४
ातः और नदी में स्नान के गुण ४९५
रिश्रम के गुण ... ४९५
ृहनिर्माण के नियम ४९६
ौचगृह ... ४९६
ृह की स्वच्छता ४९७
ृह की लिपाई-पुताई और रंग ४९७
घर में तुलसी आदि के पेड़ ४९८
अँधेरे घर के अवगुण ४९८
घर में कबूतरों से लाभ ४९९
सोने की सामग्री की
सावधानी .. ४९९
किस ऋतु में कौन सी वस्तु न खानी चाहिए ५००
ऋतुचर्या ५००
सावन में झूले के प्रचार का कारण ... ५०१
दूध का सेवन (छहों ऋतुओं में) ५०१
स्वास्थ्यसहायक बातें ५०४
स्वास्थ्यविनाशक बातें ५०६
स्वास्थ्य के सिद्धान्त ५०८
प्रकृति के स्वास्थ्य-रक्षक नियम ... ५०९
जलशोधन ... ५०९
पहले मनुष्य स्वास्थ्य ही के कारण हृष्टपुष्ट होते थे ... ५११
पार (Parr) साहब का वृत्तान्त ... ५१२

विषय	पृष्ठ
स्वस्थ मल के लक्षण	५३२
बालकों का मिट्टी खाना	५३३
बालकों को डराने का निषेध	५३३
डरे हुए बालक का उपाय	५३३
बालकों की यथेच्छ क्रीड़ा के लाभ	५३४
बालकों की सावधानी	५३४
घूटीमात्र का विधान	५३४
टीके लगाने में सावधानी	५३४
चरक और सुश्रुत की अनुमोदित औषधियाँ	५३६
शरीर-बल-बुद्धिवर्द्धक नाश या योग	५३६
बालकों को गरिष्ठ भोजन का निषेध	५३८
गरिष्ठ भोजन देने की आयु का विधान	५३९
बालक्रीड़ा के गुण	५३९
बालकों की रोचक	
व्यायाम-विधि	५३९
व्यायाम से बालकों के शरीर का सुडौलपन	५४०
बाल-विवाह-निषेध	५४१
विवाह के योग्य आयु	५४१
बालकों की हजामत	५४२
नाक-कान कुरेदने से हानि	५४२
पाँव पर पाँव रखने से हानि	५४२
ओछी खाट पर सोने से हानि	५४३
पान और हुक्के के दोष	५४३

बालचिकित्सा

विषय	पृष्ठ
रोगचिकित्सा की विधि	५४३
सौर की सावधानी	५४५
बालकों के रोग में मूर्खों का भ्रम	५४५
बालकों का कायस्नान	५४६
बालकों की धूनी	५४६
बालक को होते ही दस्त कराना	५४७

स्त्रीसुबोधिनी चतुर्थ भाग का सूचीपत्र

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
बाल रोग निदान	... ५४७	आमातीसार के लक्षण और उपाय	... ५६०
बाल रोग लक्षण और उपाय	... ५४८	रक्तातीसार के लक्षण और उपाय	... ५६१
बालकों को दवा देने की विधि	... ५५०	अफरा के लक्षण और उपाय	... ५६२
ढूँडी पकने की औषध	५५०	लार गिरने की औषध	५६२
खाल लग जाने की औषध	... ५५१	कान बहने की औषध	५६२
बालक के दूध डालने की औषध	... ५५१	दाँत निकलने की चिकित्सा	... ५६३
बालक दूध न पिये उसका उपाय	... ५५२	गला बैठ जाने के लक्षण और उपाय	... ५६८
ढूँडी बिठाने की विधि	५५२	आँख के कोहे और रोहों का उपाय	... ५६८
हँसली बिठाने की विधि	५५३	नालू पकने या बैठ जाने के लक्षण और उपाय	५६९
काग लटकने की औषध	... ५५३	अलाई के लक्षण और उपाय	... ५६९
दुखनी आँख की औषध और उपाय	... ५५४	अफोह रोग के लक्षण और उपाय	... ५६९
खाँसी के भेद और उपाय	... ५५५	दुकास के लक्षण और उपाय	... ५७०
ज्वरसहित खाँसी के लक्षण और उपाय	५५८	ज्वर की उत्पत्ति और	
पेट चलने की औषध	५५८		

विषय	पृष्ठ
ाय	.... ५७०
ग्रहणी की औषधि	५७३
न आने की औषध	५७४
ांतला-रोग और उसके उपाय	... ५७४
सान-रोग की उत्पत्ति, लक्षण और उपाय	५७८
सान-रोग के भेद	... ५७८
टीमात्रा बनाने की विधि	... ५८०
सानलाशक तैल	... ५८१
सानग्रस्त बालक की माता के लिए नियम	५८१
मनूनो (छारुवे) की उत्पत्ति, लक्षण और उपाय	... ५८२
चकों का उपाय	... ५८४
ल की औषध	... ५८४
ाग से जले की औषध	५८४
जलो की औषध	... ५८५
ाँग निकलने का उपाय	... ५८५
ट बढ़े का उपाय	... ५८५
चिनग की औषध	... ५८५
मिरगी-रोग के लक्षण और उपाय	... ५८६
नकसीर का उपाय	... ५८७
हैजे का उपाय	... ५८७
लू लगे का उपाय	... ५८८
चूने से फटने का उपाय	५८८
आँख की फूली का उपाय	... ५८८
बालकों का कब्ज दूर करने का उपाय	... ५८८
मकड़ी के फैले का उपाय	.. ५८९
मक्खी के काटे का उपाय	... ५८९
ततैया के काटे का उपाय	... ५८९
कुत्ते के काटे का उपाय	५९०
बावले कुत्ते के काटे का उपाय	.. ५९०
कौवर चिपटे का उपाय	५९०
बिच्छू के काटे का उपाय	... ५९१

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
साँप के काटे का उपाय	५९३	बाल-शिक्षा के चार अंग	५९८
साँप के रोकने का उपाय	... ५९४	बालक को पिता का नाम आदि बताने की शिक्षा	... ५९
अफ़ीम का विष दूर करने का उपाय	... ५९४	इसके न बताने में हानि	५९
संखिया का विष दूर करने का उपाय	... ५९५	बालकों को डराने से हानि	... ५९९
सींगिया का विष दूर करने का उपाय	... ५९५	बालकों को ईश्वर के भय से लाभ	... ६००
धतूरे का विष दूर करने का उपाय	... ५९५	पुत्र को बुँदा आदि और पुत्रियों को नीला आदि गोदाने का निषेध	... ६०
बालशिक्षा		सन्तान के उत्तम नाम रखने के लाभ	... ६०१
बालक की आदि-शिक्षा	५९५	नाम रखने की विधि	६०१
आदि-शिक्षा न होने से हानि	... ५९६	पुत्र और पुत्री के पालनभेद का निषेध	६०२
माता-पिता के विचार और पीछे का पश्चात्ताप	... ५९६	इसके गुण और दोष	६०२
पुत्र और पुत्री की समान शिक्षा	... ५९७	सुशील और दुश्शील बालक का अन्तर	६०३
पुत्री-शिक्षा न होने से अमित हानि	... ५९७	बालकों की शिक्षा	... ६०३
		गाली और अपशब्द	

विषय	पृष्ठ
का निषेध	... ६०४
बुरे बालकों के संग रहने का निषेध	... ६०४
बालताड़ना की विधि	६०५
हर समय और हर बेर की ताड़ना से हानि	६०५
बालकों पर क्रोध का प्रभाव	... ६०६
आज्ञापालन की टेंव डालना	... ६०६
बालकों पर लाड़प्यार का प्रभाव	... ६०७
बालकों की इच्छा पूरी करने के गुण	... ६०७
सुमाता का प्रभाव	... ६०८
वार्तालाप की शिक्षा	... ६०८
अर्थात् गुण सिखाने में आदर्श बनना	... ६०९
बालकों के अपराध पर क्षमादान	... ६०९
बालकों पर ताड़ना के झूठे भय का प्रभाव	६०९
सन्तान में	

विषय	पृष्ठ
भाव उत्पन्न करना	६१०
सन्तान के लिये उत्तम शिक्षा क्या है ?	... ६१०
बालकों के आगे उनके ब्याह आदि की चर्चा का निषेध	... ६११
बालकों का निडर फिरना	.... ६११
गुड़ियों के खेल का उद्देश्य	... ६१२
पुत्रियों को गृहस्थ-शिक्षा का समय	... ६१२
गुरुजनों की मानशिक्षा	६१४
बालकों की वाक्यशक्ति के साथ ही अक्षरा-भ्यास की शिक्षा का आरम्भ	... ६१५
कहानियों द्वारा शिक्षा	६१५
अक्षर सिखाने की सुगम विधि	... ६१५
	... ६१५
...के ... लेना	६१६

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
कण्ठाग्र शिक्षा	६१६	कार्य-सिद्धि के नियम	६३०
लिखाने की शिक्षाविधि	६१७	बालक के चित्त में धर्म के विचार उत्पन्न करना	६३२
बालक का हकलापन छुड़ाने के उपाय	६१७	अँगरेजी-शिक्षा का प्रभाव	६३२
मातृभाषा की शिक्षा के गुण	६१८	धर्मशिक्षा के अभाव से स्वधर्म में अविश्वास	६३२
बुरी पुस्तकों के पढ़ने का निषेध	६१६	धर्मशिक्षा पानेवाले बालकों के गुण	६३३
समझाकर पढ़ाने के गुण	६२०	चिढ़ाने का निषेध	६३३
तोते की भाँति पढ़ना	६२०	जीवहत्या के दोष	६३४
दूसरे बालक की प्रशंसा	६२१	अपराध-क्षमा का प्रभाव	६३४
दृष्टान्त की कहानियाँ	६२२	सत्य की शिक्षा और असत् से घृणा	६३४
रुचि के अनुसार शिक्षा के गुण	६२८	झूठ का फल	६३४
जोड़ आदि सिखाने की विधि	६२६	जीवों के प्रति प्रेम	६३५
व्यवहारशिक्षा	६३०	ईश्वर-प्रार्थना	६३५
पुनर्शिक्षा	६३०	ईश्वरनाममाला	६३६

स्त्रीसुबोधिनी पञ्चम भाग का सूचीपत्र

विषय	पृष्ठ
धर्मोपदेश	
धर्म का अर्थ ...	६३८
धर्म की मैत्री ...	६३८
स्त्रियों के गुरु ...	६३६
तुलसी की माला ...	६४०
स्त्रियों का जप-तप ...	६४०
स्त्रियों के पूजन-पाठ का कुफल ...	६४१
स्त्रियों का धर्म ...	६४१
ईश्वर का उपकार ...	६४२
स्त्रियों का विश्वास ...	६४३
अमरोहे के मियाँ ...	६४३
मियाँ और गंगाजी में श्रेष्ठतर कौन है ...	६४३
शहीद और जाहर पीर इत्यादि की पूजा	६४५
जलैया-पूजन में स्त्रियों की निर्दयता ...	६४६
आर्य नारियों के अधम विचार ...	६४७
ताज़ियों के पूजन और अभीष्ट की प्रार्थना	६४८
सेहू, पाराही इत्यादि का पूजन ...	६४६
स्त्रियों का गुप्त रीति से निषिद्ध पूजन ...	६५०
तीर्थ पर का दान ..	६५१
पुण्य का वर्णन ...	६५२
धर्म का भ्रम ...	६५२
वैतरणी के लिये गोदान	६५३
एक दृष्टान्त ...	६५३
वैतरणी का ठीक अभिप्राय ...	६५६
यमदूतों का ठीक स्वरूप	६५७
स्यानों का कपट	
स्यानों का प्रपंच और पाखण्ड ...	६५८
स्याने नाम की उत्पत्ति	६५८
स्यानों की बातें ...	६५६
स्यानों को धोखा ...	६६१
मूर्खों का स्यानों में विश्वास ...	६६२
स्यानों के मन्त्र का प्रभाव ...	६६३
मूर्खों के चित्त पर विश्वास जमाने की	

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
ग्राह्य गुण	... ६८६	मित्र	... ६९९
त्याज्य दोष	... ६९०	लोभ	... ६९९
पण्डित के गुण	... ६९०	तृष्णा	... ७००
सज्जन के गुण	... ६९१	द्यूत	... ७००
मूर्ख के लक्षण	... ६९१	फुटकर०	... ७००
पाप, पुण्य	... ६९१	सामाजिक नीति	... ७०१
फुटकल	... ६९२	ग्राह्य गुण	... ७०१
राजनीति	... ६९२	त्याज्य दोष	... ७०२
शत्रुनीति	... ६९३	सम्पत्ति	... ७०२
नीति	... ६९३	पराधीनता	... ७०२
वचन	... ६९५	शोभा	... ७०३
समानता	... ६९५	सत्संग	... ७०३
कीर्ति	... ६९६	प्रीति	... ७०३
शील	... ६९६	कुलकलह	... ७०४
साक्षी	... ६९६	उपकार	... ७०४
रक्षा	... ६९६	धन	... ७०४
बुद्धिमानी	... ६९६	सज्जन	... ७०४
गुण	... ६९७	दुष्ट	... ७०५
त्याज्य दोष	... ६९७	कृतघ्न	... ७०६
बल	... ६९७	दुःखद	... ७०६
अधम नर	... ६९८	बल	... ७०६
दुष्ट	... ६९८	फुटकल	... ७०७
दुःखद	... ६९८	**रीति, त्योहार और व्रत**	
संग	... ६९८	ठीक रीति क्या है	... ७०७

विषय	पृष्ठ
त्योहार की शाब्दिक उत्पत्ति	... ७३६
चार वर्णोंके चार त्योहार	७४०
त्योहारोंका गूढ़अभिप्राय	७४०
सूपकर्म (रसोई बनाने) की उन्नति	... ७४१
आजकल के त्योहार	७४२
तीज का त्योहार	... ७४२
सलूनों	... ७४३
दशहरा	... ७४३
करवा चौथ	... ७४४
दिवाली	... ७४४
अन्नकूट	... ७४६
गोवर्द्धनपूजा	... ७४६
देवउठान	... ७४७
वसन्तपञ्चमी	... ७४८
होली	... ७४६
उपर्युक्त त्योहारों का गूढ़ अर्थ	... ७५०
व्रत का सत्य अर्थ	... ७५१
वर्षाऋतु के व्रतों का अभिप्राय	... ७५२
व्यर्थ के व्रतों से अमित हानि	... ७५२
ठीक व्रतों से तीन बड़े-बड़े लाभ	... ७५३
व्रतों के भेद	... ७५४
व्रतों का ठीक अभिप्राय	७५५
व्रतों की संख्या	... ७५५
व्रतों का वर्णन	... ७५५
पन्द्रह तिथियोंके १५ व्रत	७५६
चैत्रसुदी तीज	... ७५७
जेठ की अमावस	.... ७५८
भादोंसुदी तीज	... ७५६
भादोंसुदी पञ्चमी	... ७६०
शीतला के व्रत	... ७६१
चौथ का व्रत	... ७६२
अहोई का व्रत	... ७६२
सावनसुदी पञ्चमी	.... ७६२
भाईदूज	... ७६३
व्यासपूर्णिमा	.... ७६४
बहुला चौथ	.... ७६४
सिद्धि विनायक	.... ७६५
वामनद्वादशी	.... ७६६
अनन्त-चौदस	.... ७६६
कार्तिकस्नान	.... ७६६
माघस्नान	.... ७६७
आशीर्वाद	.... ७६८

स्त्रीसुबोधिनी

प्रथम भाग

उपोद्घात

लक्ष्मी सी जिनमें हुई, त्यों सरस्वती मात।
वे अब ऐसी है गईं, धन बुधि जात नसात॥

एक नगर में किसी समय ऐसा हुआ कि सब लोगों ने मिलकर सोचा, आजकल समय के प्रभाव से, लोगों के अधिकतर अपढ़ और मूर्ख होने से, अपने धर्म का राजा न होने से, उन लोगों की बुद्धि हीन हो जाने से और इसी प्रकार के अन्य सैकड़ों कारणों से वैदिक धर्म की बहुत हानि हो गई है। ब्राह्मणों ने उपदेश करना छोड़ दिया, वे लोभी बन गये। जो कोई कुछ दे तो कहीं कथा बाँचें, देवालय की पूजा करें, नहीं तो कुछ काम नहीं। इसी कारण हमारे सनातनधर्म की अमित हानि होती जाती है। उपदेशकों ने सब प्रकार कंधा डाल दिया है। न तो वे उपदेश करते हैं, न चेताते हैं, न आप वेद पढ़ते हैं, न दूसरों को [illegible] में कोई व्यवस्था देते [illegible] पर ही

आरूढ़ हो मुँहदेखी कह देते हैं और बहुत तो उनमें से यह भी नहीं जानते कि धर्म क्या है ? इधर-उधर से जो कुछ सुन लिया है, वही अपने अन्नदाताओं को सुना देते हैं। इसलिए यह उत्तम हो कि जैसे ईसाई लोग अपना धर्म फैलाने के लिए स्थान-स्थान पर उपदेश करते फिरते हैं, निज व्यय से अपने मत की पुस्तकें छाप छापकर बाँटते हैं, वैसे ही हम सभी करें। नगर के दस बीस देवालयों में या ऐसे ही अन्य स्थानों में कथा बचवाया करें, जिसके सुनने को सब छोटे-बड़े स्त्री-पुरुष आया करें। सुनकर अपने धर्म से जानकार हों और शुरू से ही निजमत के जानकार होकर दूसरे मतों से भ्रष्ट न होने पावें—जैसे आजकल अँगरेजी पढ़े हुए बहुत से मनुष्य ईसाई हो जाते या अपने मत की निन्दा करने लगते हैं, जिसका कारण केवल यही है कि वे अपने मत के जानकार नहीं होते हैं। नहीं तो कभी ऐसा न होने पावे। कारण, जब से आर्यसमाज इस देश में स्थापित हुए हैं, लोगों में सनातन आर्यधर्म के अकाट्य सिद्धान्त प्रकाशित हुए हैं, तब से अँगरेजी पढ़े हुए क्या, वरन् अँगरेज और मुसलमान तक अपने-अपने मत को त्याग सनातन आर्यधर्म की प्रशंसा कर और उसका गौरव मान इस ओर को खिचने लगे हैं। ईसाई होना तो अब मन्द-

सा होता जाता है, तो भी अभी लोग निज-निज धर्मों का ज्ञान नहीं रखते। सो निजमत की जानकारी होने का उपाय अवश्य ही करना चाहिये। यह विचारकर उन्होंने ऐसा किया कि देवालयों में कथाएँ बिठा दीं और सदा के लिये यह प्रबन्ध किया कि नित दिन के चार बजे से सन्ध्या तक इसी की चर्चा रहे। स्त्री-पुरुष सब सुनने को आया करें। जो कोई न आवे उसकी निन्दा हो, उसे दण्ड मिले। इसलिये सब अपने सौ काम छोड़कर भी कथा सुनने को जाया करें। लोगों ने कहीं स्मृति, कहीं पुराण, कहीं वेदान्त, कहीं वेद, कहीं धर्मशास्त्र और कहीं नीति बाँचना आरम्भ कर दिया। इसी प्रकार जैसी जिसकी रुचि था, जो जिसमें निपुण था, उसी को वह ले बैठा और यथारुचि उपदेश करना आरम्भ कर दिया। स्त्री तो बहुत करके पुराण सुनने को जाया करती थीं। इन्हीं स्त्रियों में एक स्त्री अपनी बेटी को, जिसका नाम मोहिनी था, संग ले जाकर श्रीमद्भागवत की कथा सुना करती थी। उसका लिखना-पढ़ना सब छुड़वाकर रात-दिन कथा ही ‑नी बातें घुखवाया करती थी। सिवा इस धर्मकहानी के

और

थी।

को गई थी, उसकी

अपनी ससुराल से

किसी आवश्यक काम के लिये अपनी माँ के यहाँ आई। घर को सूना देख वह दासी से पूछने लगी कि मा, भावज और बहन सब आज कहाँ गई हैं ? दासी ने उत्तर दिया कि मुहल्ले भर की सब स्त्रियाँ नित इस समय कथा सुनने को जाया करती हैं। यहाँ सात-आठ दिन ही से अब ऐसा हो गया है कि पाँच वर्ष तक के बालक को कथा सुनने जाना पड़ता है। जो नहीं जाता, उस पर दण्ड होता है। यह सुन दुर्गा अपने मन में बहुत हँसी। कहने लगी, बात तो अच्छी विचारी; पर छोटे बालकों को इससे कुछ लाभ न होगा। वे तो कथा की बातों को समझेंगे भी नहीं, और जो कहीं समझ भी लिया तो यथार्थ न समझेंगे। इसलिए कुछ का कुछ ही ध्यान बँधेगा। इससे तो उनकी शिक्षा के लिये पाठशालाएँ नियत कर दी जातीं और उनमें उनको अपने-अपने धर्म की पुस्तकें पढ़ाई जातीं तो उत्तम होता। इससे इतना लाभ न होगा, जितना इन पाठशालाओं से होता। यह विचार-कर वह चुप हो गई।

दासी से कुछ और पूछने ही को थी कि इतने में उस-की मा, भावज और बहन कथा सुनकर आ गई। दुर्गा उठकर सबसे प्रेम से मिली और मोहिनी को प्यार करके बोली—बहन! कहाँ गई थी ? मैं तो तेरी राह ही

देख रही थी। कह, अच्छी तो रही ? माता का कहना माना ? भावज से क्या-क्या सीखा, पढ़ा ? मैं जो कह गई थी, वह पढ़ चुकी या नहीं ? अब क्या पढ़ती है ?

मोहिनी बोली—कई दिन हुए पढ़ना तो मा ने छुड़वा दिया। अब तो अपने संग कथा सुनने को ले जाया करती है, और सब दिन उसी को सुखवाती है। जो कुछ मैंने पढ़ा था, अब तो उसे भी भूलती जाती हूँ। थोड़े दिन में कुछ भी याद न रहेगा।

यह सुन दुर्गा बोली—अच्छा, जो तू कथा सुनती है सो बता, कथा में तूने क्या-क्या सुना ? कथा की कोई अच्छी बात तो सुना, जो तूने याद की हो।

मोहिनी सुनते ही बोल उठी—अरी बहन ! कथा में बड़ी अच्छी-अच्छी बातें सुनने में आती हैं। जो तू चलेगी तो तू भी सुना करेगी कि कथा में कैसी-कैसी अच्छी बातें निकला करती हैं। सुन, श्रीकृष्णचन्द्रजी की बातें मैं तुझे सुनाती हूँ, जो मुझे याद हैं। बातें तो मैंने बहुत सुनीं; पर सब मेरी समझ में नहीं आईं। उन बातों को तो मा भी नहीं समझी, और न बहुत सी और लुगाई ही समझीं। कोई-कोई [illegible] हों तो समझी हों। पर पूरी-पूरी [illegible]। किसी-किसी दिन [illegible] में नहीं आती

और न मन ही लगता है। उस दिन तो सब जनी आपस में बातचीत करती रहती हैं। कोई-कोई तो वहाँ काम करने को ले जाया करती हैं। जिस दिन अच्छी कथा बँचती है, उस दिन तो सबका मन लग जाता है और सब मन लगाकर सुनती हैं। उस दिन की कथा सबको भली भाँति याद भी हो जाती है।

दुर्गा ने हँसकर पूछा—बहन! अच्छी कथा किसे कहते हैं? मोहिनी बोली—जिसमें अच्छी-अच्छी बातें आयें और हँसते-हँसते पेट फूल जाय। बहन, पंडितजी कथा में ऐसी-ऐसी बातें कहा करते हैं कि हँसाते-हँसाते लोटा देते हैं। जब उन्होंने श्रीकृष्णचन्द्रजी की कथा बाँची थी, तब तो बहुत ही हँसाते थे। उस कथा को तो सब जनी भली भाँति समझ जाती थीं और सबको भली भाँति याद भी है। बहन, कल से तू भी चलना। देख तो कैसी-कैसी बातें सुनने में आती हैं। तू तो बहुत पढ़ी-लिखी है, पोथी बाँचती है। तू सब समझ जायगी।

दुर्गा ने कहा—अच्छा, तू कह तो सही कि तूने कथा में क्या-क्या सुना। मोहिनी कहने लगी—क्या-क्या बताऊँ, बहुत-सी बातें हैं। एक हो तो बताऊँ। पर हाँ, जो मुझे याद हैं, वे सब तुझको बता दूँगी। सुन, श्रीकृष्णजी जब गोपियों के घर में पीछे से घुस जाते, दूध-दही या

मक्खन खा आते, गोपों को ले-लेकर छींके पर चढ़ जाते और जब गोपियाँ घर आकर यह देखतीं, तब यशोदा रानी के पास उलहना लेकर जातीं और सब बातें कहतीं, तब सबको बड़ी हँसी आया करती थी। श्रीकृष्णचन्द्रजी की बातें सुन-सुनकर पेट में बल पड़-पड़ जाते थे। कभी किसी गोपी के घर चोरी करते; किसी की मथनियाँ (हाँडी) फोड़ आते; कभी गुजरियों को राह में रोक लेते और उनसे हँसी कर-करके गोरस का दान माँगते; किसी का घूँघट उघार देते; किसी का दुपट्टा झटक देते; इसी भाँति किसी का कुछ करते और किसी का कुछ। अन्त में जब गोपियाँ बहुत ही खीझतीं, तब उनको छोड़ते थे। कभी किसी गूजरी से घर जाने को कह देते, पर उसके यहाँ न जाते, दूसरी के चले जाते। वह रात भर राह देखा करती। कभी आप वन में जाकर बंशी बजाते, तो उसकी ध्वनि सुनकर सब गोपियाँ उठ भागतीं। कोई एक आँख में काजल दिये हुए, कोई उलटी कंचुकी कसे हुए, कोई कैसे और कोई कैसे, सब वन को दौड़ी जातीं। जब वे सब वहाँ पहुँचतीं, तब [illegible] हँसी करने लगते। कथा में [illegible] सुनने में आती हैं। [illegible] आई। एक दिन [illegible] घर यमुनाजी

नहाने को घुसीं और उन्होंने डुबकी मारी, तो कृष्णजी सबके चीर लेकर कदम के पेड़ पर जा चढ़े। जब गोपियाँ कपड़े पहनने को निकलीं, तब अपने चीर न देखे। तब तो वे बहुत घबराईं और मारे लाज के पानी-पानी होने लगीं। जब गोपियों को बहुत देर हो गई, तब आप कदम पर से बोल उठे कि तुम्हारे चीर ये हैं हमारे पास। पर मिलेंगे तब, जब यहाँ आकर तुम माँगोगी। उस दिन तो वे बेचारी लाज और सकुच के मारे मर-मर गईं और बहुत ही खीझीं। अन्त को गोपियों को बहुत ही खिझाकर उनके चीर दिये। इसी प्रकार उनकी कथा राधाजी के संग बँधी थी कि उनसे भी वह वैसा ही किया करते थे। कहीं दूध काढ़ने के मिस उनके घर जाते थे, कहीं बाज़ीगर बनकर पहुँचते थे, कभी मालिन बनकर जाते थे, कभी मनिहारिन बनकर जाते थे। इसी प्रकार राधिकाजी भी उनसे मिलने के लिये एक न एक उपाय निकाल ही लेती थीं। कभी हार पोने का मिस करतीं, कभी कोई और कभी कोई, इस प्रकार बड़ी बातें कथा में सुनीं। बहन! मैं तो अच्छी तरह कह नहीं सकती, जैसे पंडितजी बाँचते थे, नहीं तो बहन, तू भी मारे हँसी के लोट-लोट जाती। मा को मुझसे अच्छी आती होगी, उनसे सुनना।

दुर्गा इन सब बातों को सुनकर मन में बहुत ही पछ-
ताई कि हाय! देखो मूर्खता का क्या फल है कि जो
बातें बुरी हैं, उनको तो समझ लिया और याद कर लिया,
पर जो अच्छी थीं, उनको न सुना, न समझा। इसका
कारण नासमझी ही है। जो यह पढ़ी-लिखी होती, तो
पाँचवें तथा ग्यारहवें स्कन्ध को और जो सम्पूर्ण भागवत
में उत्तम-उत्तम विषय हैं (जैसे जड़भरत का चरित्र
आदि), उनको सुनकर लाभ उठाती और मुक्तिमार्ग
को पहचानती। पर उनमें तो एक अक्षर भी न सुना,
न समझा, और दशम स्कन्ध की वे बातें याद कर लीं,
जिनके यथार्थ अभिप्राय को वक्ता भी नहीं समझ
सकते। ऐसा मन में विचारकर वह कहने लगी कि इस
देश की स्त्रियों की दशा कब सुधरेगी? यह देश क्या
निरा अधम ही होता चला जायगा? क्या कभी यहाँ की
स्त्रियाँ पहली सी बुद्धिमती फिर भी किसी समय होंगी?
क्या इनके शुभ दिन फिर भी कभी बहुरेंगे? अथवा ये
इसी दशा में गधों की भाँति अपना जन्म बिताया
करेंगी? चाहे इनको बँधुआ बनाकर रक्खो, चाहे दासी
बनाकर, और चाहे उनसे भी बुरी तरह रक्खो; पर
इन्हें कुछ नहीं। क्या इन्हें कभी अपनी दशा का सोच
आवेगा, और उससे निकलकर पुरुषों के ...

मीरा और गंगाबाई–इनके रचित सहस्रों प्रसिद्ध भजन
ाये जाते हैं।

इसी तरह और भी अनेकों स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी बुद्धिमती
ी गई हैं।

बहुत सी स्त्रियों के नाम तो केवल उनके पढ़ने-लिखने
के कारण ही अब तक घर-घर प्रसिद्ध और विख्यात हैं।
से अनसूया, द्रौपदी, ऊषा, शकुन्तला (राजा दुष्यन्त
ो कमलदल पर श्लोक लिखकर दिये थे), लीलावती,
मयन्ती, मैत्रेयी, भगवती, रुक्मिणी और राधिका
श्रीकृष्णचन्द्रजी को पत्री लिखकर भेजती थीं),
ीता, मालती, अदिति, शतरूपा, कुन्ती, सरस्वती,
ुका और मायावती इत्यादि। कहाँ तक इनके नाम
नाऊँ।

इस देश की स्त्रियाँ सब बातों में बड़ी निपुण और
तुर होती थीं। क्या धनसञ्चय में, क्या विद्योपार्जन में,
या गृहस्थी की दक्षता में और क्या शास्त्रविद्या में, प्रायः
भी कामों में वे निपुण होती थीं। यहाँ तक कि इसी
रण उनको प्रत्येक गुण और विद्या की अधिष्ठाता और
ी माना गया है। जैसे विद्या की सरस्वती, धन की
क्ष्मी, आठ सिद्धि, नव दुर्गा इत्यादि।

महारानी लीलावती–जो महाराजा भोज की स्त्री

थीं, अपने नाम की एक पुस्तक रच गई हैं, जिससे बढ़कर गणित-विद्या में दूसरी पुस्तक नहीं रची गई। उक्त महारानी ने राजा भोज को विद्याप्रचार के प्रबन्ध में बहुत बड़ी सहायता दी थी, जो भोजप्रबन्ध से भली भाँति प्रकट है। इन महारानी ने अपढ़ स्त्रियों को बिन्दी लगाने का निषेध करा दिया था कि जब तक स्त्री लिखना-पढ़ना न सीख ले, उसको बिन्दी लगाने का अधिकार नहीं। यदि लगावे तो दण्ड पावे।

अनसूयाजी—इन्होंने सीताजी को पातिव्रत धर्म का कैसा उपदेश किया था।

विद्याधरी (मंडन मिश्र की स्त्री)—इन्होंने महाराजा भोज के राज्य भर में विद्याप्रचार का कैसा उत्तम प्रबन्ध किया था।

यदि आजकल की पढ़ी-लिखी स्त्रियों के नाम यहाँ पर लिखे जायँ, तो एक पुस्तक जो निरी उनकी नामा-वली ही से भर जायगी; क्योंकि आजकल स्त्रियाँ तेजी के साथ उच्चकोटि की शिक्षा पाकर अपनी पुरुषों के समान योग्यता व विद्या-बुद्धि का परिचय दे रही हैं। समाचारपत्रों से प्रत्येक का नाम सबको ज्ञात हो जाता है। सुन, उनमें से थोड़े से नाम तुझको, संक्षेप वृत्तान्त सहित, बताये देती हूँ।

पण्डिता रमाबा –ने, जो संस्कृत अच्छी पढ़ी थीं, स्वामी दयानन्द से शास्त्रार्थ किया था। यह अँगरेजी पढ़ी हैं। विलायत हो आई हैं, और अब बम्बई नगर में शारदासदन खोल रक्खा है।

जानकीबाई—ब्राह्मण वर्ण, जयपुर प्रान्त के नारायणग्राम की निवासिनी; संस्कृत-भाषा में वेद, वेदान्त, गीता, उपनिषद्, स्मृति, काव्य, दर्शन, व्याकरण इत्यादि में निपुण।

श्रीमती हेमन्तकुमारी–"सुगृहिणी" की सम्पादिका, प्रसिद्ध पण्डित नवीनचन्द्र राय की कन्या।

श्रीमती हरदेवी–"भारतभगिनी" की सम्पादिका, अँगरेजी में निपुण और विलायत भी हो आई हैं।

श्रीमती भाग्यवती देवी–"वनिताहितैषी" की सम्पादिका। कानपुर प्रान्त के सँचेड़ी स्थान की निवासिनी।

चन्द्रकला बाई–बूँदी की। इसने कवियों के संग समस्यापूर्ति करके, कई बार पारितोषिक पाया। इनका रचा हुआ "करुणाशतक" ग्रन्थ भी है।

प्रेमदेवी (पंजाबनिवासिनी)–इन्होंने लाहौर से सन् १८८८ ई० में डाक्टरी पास की।

श्रीमती जगन्नाथन (विजगापट्टमनिवासिनी)–

इन्होंने १८९० ई० में, एल्. आर. सी. पी. ई. की उपाधि प्राप्त की।

कुमारी सोहराबजी—यह बी. ए. हैं। पूना-निवासिनी हैं। लन्दन में आपने वक्तृता भी दी थी।

कुमारी एस. ए. बनर्जी—इन्होंने सन् १८९० ई० में लन्दन में जाकर परीक्षा दी और एम्. ए. की उपाधि प्राप्त की।

सन् १८९० ई० में कुमारी अशोकलता, आग्नेश-दत्त मृणालिनी बनर्जी इंट्रेंस, प्रियंवदा बागची, हेमप्रभा बोस, इन्द्रा ठाकुर एफ. ए. और कुमारी सरला घोषाल (Honours in English) एवं कुमारी शरद चक्रवर्ती बी. ए. की परीक्षा देकर उत्तीर्ण हुईं।

कुमारी विधुमुखी बोस ने डाक्टरी में एल्० एम्० एस्० की परीक्षा दी और उत्तीर्ण हुईं।

बम्बई नगर में जो जातीय सभा (National Congress) (सन् १८८९ ई० में) हुई थी, उसमें पं० रमाबाई, श्रीमती कादम्बिनी गांगोली बी. ए., श्रीमती त्र्यम्बक कनारेल और श्रीमती त्र्यम्बक प्रतिनिधि बनकर गई थीं।

यह तो संक्षेप से इस देश की थोड़ी सी स्त्रियों का

वृत्तान्त मैंने तुझको सुना दिया है। जो अमेरिका और इँगलैंड की स्त्रियों का वृत्तान्त सुनाऊँगी, तो तू चकित रह जायगी। कहना तो एक ओर रहा, उनकी तो अकथ कहानी है। जो कुछ वे करें, और जितनी उनकी विद्या की प्रशंसा की जाय, सो थोड़ी है। उनमें तो सहस्रों बी०ए०, एम्०ए० हैं। उनके देश में तो पुत्र-पुत्री दोनों की समान शिक्षा होती है। कुछ अन्तर नहीं। उनमें बड़ी-बड़ी विदुषी स्त्रियाँ उत्पन्न होती हैं, जैसी प्राचीन समय में इस देश में भी होती थीं। उनमें तो इसी कारण स्त्रियों में इतनी योग्यता आ गई है कि वे पुरुषों से कम नहीं हैं। जैसे मैडम ब्लेवेटस्की (Madam) (Blavatsky), मिसेज एनी बेसेन्ट (Mrs. Annie) (Besant), मिसेज ए० पी० सिनैट (Mrs. A. P.) (Sinnet) इत्यादि।

वे तो पुरुषों के बराबर काम-धंधे और नौकरी करने लगी हैं। अमेरिका (United States) में ६,००० स्त्रियाँ डाक्टर हैं। सहस्रों छापे (Printers and Compositors) का काम करती हैं, जो पुरुषों से अच्छा होता है। इसी कारण वे पुरुषों के बराबर वेतन पाती हैं। लंदन में १८,००० स्त्रियाँ संवादपत्रों में काम करती हैं। सारे इँगलैंड में ६६ स्त्रियाँ बड़े-बड़े व्यापार करनेवाली हैं;

३ साहूकार की कोठी चलाती हैं; ७६५ दलाली और आढ़त करती हैं; १६ हुण्डी की दूकान करती हैं; ६८७ माल मोल ले-लेकर बेचती हैं; १६७ व्यापारी बनकर देश-विदेश जानेवाली हैं; १७,८५५ दफ्तरों में लेखक (Clerks) का काम करती हैं; ६६० संवादपत्रों की सम्पादिका हैं; १२६ संवाददाता हैं; ३,६६० नाटकपात्री हैं।*

यह प्रथा अभी उसी देश में है। इस देश—भारतभूमि में अभी यह प्रचलित नहीं हुई है कि स्त्रियाँ लिख-पढ़-कर पुरुषों के समान नौकरी करें। हाँ, मद्रासप्रान्त (Madras Presiderey) में एक स्त्रीपाठशालाओं की इंस्पेक्ट्रस (Inspectress of Schools) नियत हुई है और श्यामदेश के राजा के यहाँ तो ४०० स्त्रियाँ सिपाही का काम करती हैं। अब पढ़ने-लिखने की रीति, पुत्रियों के लिये, कुछ-कुछ इस देश में भी प्रचलित होती जाती है; क्योंकि १८८१ ई० की मनुष्यगणना से ज्ञात होता है कि उस समय बङ्गदेश में ६१,४४६ स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी थीं; और ३५,७६० बालिकाएँ पाठशालाओं में पढ़ती थीं। पर इस पर भी ३,७७,८८,६८६ स्त्रियाँ

* ये संख्याएँ अब कई गुना हो गई होंगी। अमेरिका की स्त्रियाँ बहुत तेज़ी से आगे बढ़ रही हैं।—सं०

मूर्ख थीं। इसी प्रकार दक्षिण में सन् १८८८-८६ ई० में ८७० कन्यापाठशालाएँ थीं। इनमें ४१,१४६ बालिकाएँ पढ़ती थीं। पर सन् १८८६-६० ई० ही में ६१८ पुत्रीपाठशालाएँ (Girls Schools) हो गई, जिनमें ४७,२४५ बालिकाएँ पढ़ने लगीं। बर्मा में १७१ पाठशालाएँ थीं, जिनमें २,००० बालिकाएँ पढ़ती थीं। सन् १८६४ ई० में भी इस देश की ११ बालिकाएँ डाक्टरी पढ़ती थीं, और एक चित्रकारी विलायत में सीख रही थी।

अब यहाँ के मनुष्यों का ध्यान इस ओर हो चला है। समाचारपत्रों में इस विषय के लेख छपते हैं। कई समाचारपत्र स्त्रीवर्ग के पठन योग्य भी अब छपने लगे हैं*—जैसे भारतभगिनी, वनिताहितैषी, पांचालपंडिता इत्यादि। पाठशालाएँ बहुत हो गई हैं और होती जाती हैं—जैसे भारतीभवन और सावित्रीभवन प्रयाग में, शारदासदन बम्बई में, विधवाश्रम कलकत्ते में, कन्या-महाविद्यालय जालंधर में। इनके अलावा बम्बई, पूना, अहमदाबाद, कलकत्ता, मैसोर, मद्रास, मेरठ, लखनऊ, लाहौर, कानपुर, जालंधर

* अब इनमें एक भी नहीं है। बीच में और अनेक स्त्रियों के पत्र निकले और बंद भी हुए, जिनमें कई की संपादिका स्त्रियाँ थीं—यथा स्त्री-दर्पण आदि। अब भी चाँद, गृहलक्ष्मी, स्त्रीधर्म-दर्पण, ज्योति, सहेली, आदि पत्र निकलते हैं।—सं०

इत्यादि नगरों में स्त्रीसमाज बन गये हैं। कुछ समय में विद्या-प्रचार होकर दशा पलटा खावेगी। कहाँ तो इस देश में पहले ऐसी-ऐसी पण्डित, नीतिज्ञ, शास्त्र जानने-वाली और शूरवीर स्त्रियाँ होती थीं, और कहाँ आजकल अधिकतर लड़ाका, मूर्ख, व्यभिचारिणी, पतिहत्या और भ्रूणहत्या (गर्भपात) तक करनेवाली दुष्ट और निर्लज्ज होती हैं। जहाँ दो मिलीं कि एक दूसरी की निन्दा-बुराई करने और दोष कहने के सिवा और कोई बात ही नहीं करतीं। कभी दो स्त्रियों को प्रेम से मिलकर बैठे न देखा। यह उसकी लगालूतरी कर रही है और वह इसकी। सदा आपस में ईर्ष्या-द्वेष ही बना रहता है। जब देखो तब लड़ाई-झगड़ा ही देख पड़ता है। सास-बहू हैं तो वे लड़ रही हैं, नंद-भावज हैं तो ठन रही है, समधिन-समधिन हैं तो चोंचें हो रही हैं और ठोकरें उड़ती हैं, मा-बेटी हैं तो कहा-सुनी मच रही है।

निदान कोई स्त्री ऐसी नहीं, जो हेलमेल से रहती हो, प्यार-प्रीति से बर्तती हो। यहाँ तक मूर्खता का प्रभाव बढ़ गया है कि स्त्री-पुरुष में भी तो नहीं बनती, खटकती ही रहती है। क्या हुआ, जो किसी लक्ष्मी की कृपादृष्टि अपने पति पर हो गई।

गहने के विषय में कहो तो चाँदी-सोने की बेड़ी, हथ-

पड़ी, तौक तक गले में डाल दो, कभी नकार मुख से न निकलेगी, और जो गुण की कहो तो नाम को नहीं, जो उनका सच्चा भूषण है। यह उनकी मूर्खता ही के कारण है कि झूठे भूषणों ही को वे चाहती हैं, सच्चों की चाह कभी मन में भी नहीं लातीं, जिनको न कभी कोई ले सके, न चुरा सके, जो कभी न घिसें, न टूटें, न खोयें, वरन् औरों को देने से बढ़ें और चमकें। इन्हीं झूठे आभूषणों के धारण करने से तो उनकी यह दशा हो रही है, जैसे मृग-मरीचिका* से, जिसमें मृग प्यासा ही प्यासा फिरता है, पर पानी नहीं पाता कि प्यास बुझ जाय और तृप्ति हो। इसी प्रकार स्त्रियाँ जन्म भर आभूषणों की भूखी ही बनी रहती हैं; क्योंकि वे झूठे आभूषण धारण करती रहती हैं, सच्चे ग्रहण नहीं करतीं। आप तो रहीं सो रहीं, अपनी सन्तान को भी इन सच्चे आभूषणों से अलग रखती हैं, और कोरे लाड़-चाव तथा प्यार में उनको जन्म भर के लिये बिगाड़ देती हैं।

ये झूठे भूषण बालकपन में उनकी जान के दुश्मन

* घोर गर्मी के दिनों में मृग दूर से धूप की चमक को पानी समझकर उसके पास दौड़ा जाता है, पर पानी नहीं पाता। इसी को मृग-मरीचिका कहते हैं।—सं०

हो जाते हैं और जवानी तथा बुढ़ापे में हँसी का कारण बनते हैं। गुणरूपी भूषण सदा आनन्द और बड़ाई देते हैं। ये सच्चे भूषण पहनने से पीछे उतरते ही नहीं। पर उनके ऐसे विचार कहाँ ? वे तो कूटना, पीसना, चौका करना, बर्तन माँजना और चर्खा कातना आदि को ही अपनी पुत्रियों की शिक्षा समझती हैं। पढ़ने-लिख को तो जानती भी नहीं।

जो स्त्रियाँ कुछ समझ भी गई हैं, वे आप पढ़ा नहीं सकतीं; क्योंकि आप पढ़ी नहीं होतीं। जब उनसे यह कहा जाता है कि तुम पहले पढ़ो, ताकि तुम्हारी संतान भी तुमको देखकर पढ़ने लगे—तो इस पर वे कहने लगती हैं—"कहीं बूढ़े तोते भी पढ़ते हैं!" पर यह नहीं जानतीं कि पहले समय में कितनी ही स्त्रियाँ अधिक अवस्था में भी पढ़-लिखकर पुरुषों से भी अधिक चतुर हो गई हैं—जैसे लोलिम्बराज की स्त्री रत्नकला, जिसने युवावस्था में काव्य और वैद्यक पढ़ा। जयदेव की स्त्री पद्मावती ने विवाह के उपरान्त काव्य पढ़ा। अहल्याबाई ३० वर्ष की अवस्था में पढ़ी और राज्यभार सँभाला। श्रीकृष्णचन्द्र के रनिवास में नारदजी रानियों को विद्याभ्यास कराया करते थे। * विराट की पुत्री उत्तरा ने

* ऐसा किसी पुराण में नहीं लिखा पाया जाता।—[illegible]

अर्जुन से पढ़ा। कृष्णचन्द्र की रानी पद्मिनी ने रानी ऋतु से पढ़ा।

बहन! यह तो आजकल की स्त्रियों की अनोखी बात है, जो समझ में नहीं आती कि वे अधिक अवस्था में पढ़ने से क्यों मुख मोड़ती हैं? धन को कोई कभी नहीं त्यागता; चाहे जिस समय मिले; धन तो सर्वदा ही ग्रहण किया जाता है। मैं पूछती हूँ, बुढ़ापे में यदि किसी स्त्री को सोने-चाँदी के आभूषण या धन मिले, तो क्या वह उसको ग्रहण नहीं करेगी? यह कहकर क्या वह उसे त्याग देगी कि मैं बूढ़ी हूँ, न लूँगी। पर मैं जानती हूँ, कोई ऐसी स्त्री न होगी, जो इस प्रकार कहकर त्याग दे। जब और धन को वे नहीं त्यागतीं, तब फिर ऐसे दुर्लभ विद्याधन ही को क्यों ग्रहण नहीं करतीं? मेरी समझ में यह उनकी बड़ी भूल है, जो उनको मूर्ख बना रही है।

इसी कारण तो स्त्रियाँ अपना सौंदर्य गहने-कपड़े में समझे बैठी हैं। पर जो उनका ठीक और सच्चा सौंदर्य है, उसको वे जानतीं भी नहीं। मैं पूछती हूँ, जो गहने-कपड़े में ही स्त्री का सौंदर्य है, तो कुरूपा स्त्री भी इनको धारण करके सुरूपा बन सकती है और अति सुन्दर भी इनके अभाव में कुरूपा बन जायगी। पर नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता। स्त्री का सौंदर्य वस्त्र-आभूषण

तो एक श्रोर रहे, रूप-रंग में भी नहीं है। स्त्री का सौन्दर्य तो शील, लज्जा, सत्त्व, धर्म, स्वच्छता, साधुता, सहनशीलता, पतिप्रेम, पतिसेवा, मधुरभाषण इत्यादि गुणों ही में है, जो केवल विद्या से आते हैं।

जैसे टेसू का फूल बिना गन्ध-गुण के निकम्मा है, कोई उसको धारण नहीं करता, पर चमेली, बेला इत्यादि को सादा होने पर भी सब कोई धारण करते हैं। कारण, इनमें सुगन्धरूपी गुण भरा हुआ है। इसलिये स्त्री में यदि रूप ही रूप है, गुणरूपी गन्ध नहीं, तो वह टेसू के सदृश है। यदि स्त्री कुरूपा भी है, परन्तु गुणवती है, तो अवश्य ही पति उसका आदर करेगा। यदि रूप होने पर गुण भी है, तो फिर वह गुलाब है, जो सब पुष्पों का राजा है। निदान यह कि गुण होना स्त्री में परमावश्यक और सर्वोत्तम है। गुणहीन स्त्री के सन्तान भी ठीक नहीं होती। जैसी पढ़ी-लिखी गुणवती स्त्रियों के सन्तान होती है, वैसी मूर्ख गुणहीन स्त्रियों के काहे को हो सकती है ? गुणहीन स्त्री का तो आदर, सत्कार, मान, गौरव, आनन्द, सुख, अनुभव कुछ भी नहीं। उसको तो वेश्या से भी अधम कहा है।

यथा—"वरं वेश्या पत्नी न पुनरविनीता कुलवधूः"

अर्थात् गुणहीन कुलवधू से वेश्यापत्नी श्रेष्ठ है। इसी-

लिये जो इस देश की स्त्रियाँ अब भी इन आभूषणों को ग्रहण और धारण करें; तो इस देश की परम उन्नति हो सकती है; क्योंकि स्त्रियाँ अपने पुरुषों की सदा से सब कामों में संगिनी और सहायक होती चली आई हैं।

प्रथम तो यही देखो कि बिना स्त्री के सृष्टि ही नहीं होती और चलती। ईश्वर ने सृष्टि का मुख्य कारण इसी को रक्खा है। जैसे एक भुजा (पक्खे) के चूल्हे पर कुछ नहीं पक सकता, न उससे कोई काम निकल सकता है; जिस प्रकार बिना दूसरे पहिये के एक पहिये का रथ नहीं चल सकता, इसी प्रकार सृष्टि के कामों के चलने के लिये स्त्री और पुरुष, दोनों दो पहिये हैं। स्त्री से पुरुष को बड़ी-बड़ी सहायताएँ पहुँचती हैं। पुरुष की सहायता का मुख्य आधार स्त्री ही है। स्त्री बिना घर नहीं, और घर बिना पुरुष कुछ नहीं कर सकता। पुरुष धन कमाकर लाता है, स्त्री उसको खर्च करके गृह के काम-काज चलाती है। जब पुरुष जीविका के लिए बाहर जाता है, तब स्त्री बालक को शिक्षा दे सकती है। घर को स्वच्छ रखती है, जिससे आरोग्यता रहती है। इसी प्रकार स्त्री अनेक प्रकार से सहायता पहुँचाती रहती है। भोजन बनाने में, कपड़े सीने में, सुख-दुःख

में कुछ नहीं सीखा, उसका जन्म वृथा है, और वह दुःख तथा क्लेश ही में बीतता है ; क्योंकि गुणहीन से सुख की आशा कदापि नहीं होती, और न अब इस बड़ी अवस्था में वह कुछ सीख ही सकती है। गुणहीन होने से वह उलटी अपने पति के लिये दुःखदायिनी हो जाती है, और आप भी अपने को एक प्रकार का भार समझकर बुरे-बुरे विचार मन में लाती है, और यही कहावत हो जाती है—

समगुण दोष मिलाय के, बर खोजो यह रीति।
ब्याह बायसी हंस सँग, कैसे ह्वै है प्रीति॥

और जो किसी स्त्री ने इस अवस्था में चाहा भी कि कुछ सीख लूँ तो भी बहुत कठिनता पड़ती है। प्रथम तो मन ही नहीं लगता, जैसा कि कहा है—

हरे वृक्ष की ज्यों छड़ी, मनमानी लचि जाय।
सूखे से नहिं लचत है, करौ अनेक उपाय॥

दूसरे घर का भार, आलस्य के दिन, मदन का वेग और बुद्धि की जड़ता—ऐसी कठिन दशा में पढ़ना-लिखना कैसे बन सकता है ? इसी कारण जो इस अवस्था का सुख है, उसका अनुभव भी वे नहीं कर सकतीं। उसका भोग तो दूर रहा। फिर मूर्ख स्त्रियाँ बुढ़ापे में अति दुःख पाती हैं ; क्योंकि ये अति ही हीन दशा में

हैं। अंग शिथिल हो जाते हैं। वे घरवालों को बोझ जान पड़ती हैं। बहू-बेटियाँ सब नठराती हैं। परन्तु जो बुद्धिमती हैं, वे इस प्रकार निर्वाह करती हैं कि सबकी आदरणीय बनी रहती हैं। वे बालकों की शिक्षा और उनके पालन-पोषण का भार अपने ऊपर लेकर कुल की वृद्धि करती हैं, कुल को सब प्रकार के दोष और कलंक से बचाये रखती हैं। इसलिये स्त्री को इस प्रकार बर्ताव करना चाहिए।

चौपाई

बालभाव जबलौं रह नारी। तबलौं पितु आज्ञा अनुसारी॥
स्वामी भये करै पति सेवा। ताको समझि लेइ निजदेवा॥
मन प्रसन्न राखै सब छन में। आलस नींद ग्रसै नहिं तन में॥
होइ गेह कारज में दक्षा। करै सदा धन सम्पति रक्षा॥
सब पदारथन रहै बनाये। रात दिवस देखै मन भाये॥

हे बहन! अब मैं तुझे विद्या और मूर्खता के गुण और दोष बताती हूँ, जिससे तू जान जायगी कि विद्या सीखना स्त्री का सबसे पहला काम है। मैं तुझसे मूर्ख स्त्रियों के कुछ और दोष वर्णन करती हूँ। उन्हें कान लगाकर सुन। प्रथम तो मूर्ख स्त्रियाँ कच्चे भ्रम में पड़ जाती हैं। हर कोई इनको फुसला लेता है। वे ऐसी-ऐसी मूर्खता की बातों में विश्वास कर बैठती हैं, जिनको

सुनकर मेरा तो हृदय काँप उठता है। सब कोई उनको धोखा देकर ठग ले जाते हैं। महरी, भगत, स्याने-भोपे तो तूने देखे ही हैं कि मूर्ख स्त्रियाँ इनको कैसा मानतं हैं। उनका विश्वास है कि ये ही हमारे बालकों का जीवदान देते हैं। इनके सिवा सैंकड़ों ऐसे दुष्ट मनुष्यों के कहने-सुनने और बहकाने में आ जाती हैं कि कुल को कलंक लगा बैठती हैं, लोक में निन्दा कराती हैं और उल्टी अपने पति के लिये दुःखदायिनी हो जाती हैं। अपढ़ और मूर्ख का स्वभाव तो जानती ही है कि कैसा लट्ठ सा होता है, नवाये नहीं नवता। पति ने कुछ कहा कि टका सा उत्तर दे, उसके जी को दुखा दिया। वही कहावत है कि—

करिये सुख को होय दुख, यह धौं कौन सयान।
वा सोने को जारिये, जाते फाटत कान॥

रात-दिन दोनों दुखी रह चिंता में दहकते हैं, जिसमें चिता से 'न्' अधिक है। चिता मरे को ही जलाती है, पर चिंता जीवित को। स्त्री के मूर्ख होने से केवल पुरुष के सुख और घर ही की हानि नहीं होती, वरन् मूर्ख स्त्री की सन्तान भी तो वैसी ही मूर्ख होती है। क्योंकि जो कुछ टेंव बालकपन में पड़ जाती है, वह फिर कठिनता से दूर होती है। बालक अपनी मा के ही

पास बहुत रहता है, और जैसी टेंव मा की होती है वैसी ही वह सीखता है। मूर्ख माता से मूर्खता की टेंव और विद्यावती माता से विद्या की बातें उसमें आती हैं।

प्रथम तो जैसा वृक्ष होगा, वैसा ही उसके बीज में अंकुर निकलेगा, और दूसरे जो उसको इस अवस्था में कोई हानि पहुँच गई, तो वह उस उत्तमता को नहीं पहुँचता, जैसी कि उसके बीज में थी। सो यही दशा मनुष्यसन्तान की है। जैसी संगति में वह बैठेगा वैसी ही टेंव, गुण और दोष ग्रहण करके सीखेगा, और तब यही दोहा कहते बनेगा—

बुरी प्रकृति जाकी पड़ी, कभी न छूटत सोय॥
नीलवर्ण ज्यों वस्त्र में, नहिं छूटत है धोय॥

बहुधा देखने में आया है कि मूर्ख स्त्रियाँ लाड़-प्यार में गाली दे-देकर अपने बालकों को भी गाली देना सिखा लेती हैं। छोटेपन में तो जब वह तोतली बोली से मा-बाप को गाली देता है; तब हँस-हँसकर सुख मानते हैं; किन्तु पीछे उसके बड़े होने पर उन्हीं गालियों से दुःख मान पछताते और सन्तान को दोष लगाते हैं। अपनी करतूत का कुछ विचार नहीं करते, कि ये गालियाँ वह नहीं देता, वरन् हमीं देते हैं।

इस प्रकार मूर्ख स्त्रियाँ सदा सब प्रकार से दुःख ही

पाती हैं। पिता के यहाँ हैं, तो कोई आदर नहीं करता। पति से बनती नहीं, जायँ तो कहाँ। जो किसी कुसंगति में पड़ गईं, तो और अपना जन्म बिगाड़ा। वही कहावत हुई कि "धोबी का कुत्ता घर का न घाट का।" वहाँ भी दुःख भोगती हैं और जो कहीं विधाता की कृपा से विधवा हो बैठीं, तो फिर उनके दुःख का क्या कहना—कहीं भी आदर नहीं। अब तक पति के घर में निवास तो था भी, 'अब चल पिता के।' ससुरालवाले नित यही कह-कहकर प्राण खाते हैं। इधर पिता के आई तो बस, यहाँ भी नित उठ सौ बुरी-भली भाई-भावज से सुननी पड़ती हैं।

प्रथम तो विधवापन के जो-जो दुःख हैं, वे तो एक ओर रहे, खाने को, पहनने को, बोलने को, बैठने को सभी बातों को जी चलता है और मन कुढ़ता है। पर यदि वही स्त्री पढ़ी-लिखी, बुद्धिमती हुई तो जगत् आदर करता है। पति और पिता के कुलवाले तो करते ही हैं, इसमें तो सन्देह ही नहीं। पति जीवित है, तो उसके संग नाना प्रकार के सुख वह भोगती है, उसके वियोग में अच्छी-अच्छी पुस्तकों के पाठ से अपने समय को बिताती है। विधवा हो जाने पर भी कभी किसी बुरे काम का विचार अपने मन में नहीं लाती।

सदा अपने मन को अपने हाथ में रखती और इस दोहे का स्मरण किया करती है—

मन मदान्ध हाथी भयो, ज्ञान महावत कीन।
ज्यों-ज्यों चले कुपन्थ में, त्यों-त्यों अंकुश दीन॥

पढ़ी-लिखी स्त्री को पति का विरह कभी नहीं व्यापता। अपने ज्ञान से वह सदा उसके चरणों ही में चित्त रखती है, चाहे विरह परदेश जाने से हो या विधवा होने से।

मूर्ख सुहागिन तो ऐसा गहना पहनती है, जो पति का वियोग हो जाने से छिन जाते हैं; परन्तु बुद्धिमती स्त्री ऐसे गहने धारण करती है, जो सदा उसका सुहाग बनाये रखते हैं। जो ऐसे गहने हैं, उनका नाम मैं तुझे पीछे बताऊँगी। देख, किसी कवि ने ऐसी ही बुद्धिमती स्त्रियों की बड़ाई में ये दोहे कहे हैं—

नारी निन्दा जनि करो, नारी नर की खान।
नारी ही ते ऊपजैं, ध्रुव प्रह्लाद समान॥
पुरुषन ते दुगुनी क्षुधा, बुद्धि चौगुनी होय।
मोह आठ, साहस छगुन, या विधि त्रिय सब कोय॥

विद्यावती स्त्री कभी किसी की [illegible] नहीं आती। मैं तुझसे अपनी आँखोंदेखी [illegible] कहती हूँ। स्त्री को [illegible] नगर में एक

मनुष्य गहना रखकर लेन-देन करता है। एक समय कोई मनुष्य अपना गहना छुड़ाने को उसके यहाँ रुपये और व्याज लेकर गया; पर उसने कहा कि मैं तुम्हारा गहना कल सवेरे निकाल दूँगा। वह यह सुन चल गया। इन्होंने भी सवेरे उसे निकाल घर में एक ओर गुप्त स्थान में रख दिया, और आप किसी काम को बाहर आये। राह में वह मनुष्य मिल गया, जिसका गहना निकाला था। उसने इनसे पूछा, तो इन्होंने कहा, मैं उसे निकालकर अभी फलाने स्थान पर रख आया हूँ। यहाँ से जाकर दे दूँगा। एक ठग इसको सुन रहा था। सुनते ही इनके घर गया, और गहने का सब वृत्तान्त ठीक-ठीक बताकर कहने लगा—वह वहाँ खड़े हैं। मुझे भेजकर वह गहना मँगाया है। उस स्थान से निकालकर दे दो। इनकी स्त्री थी बड़ी चतुर। सोचने लगी, इसने पता तो ठीक-ठीक सब बता दिया; पर मेरे पति तो इस भाँति कभी गहना-पाता मँगाते नहीं। आप आकर ले जाते हैं और न घर का भेद बताते हैं। यह तो सब पते ठीक-ठीक बताता है, इसमें "दाल में कुछ काला" है। यह सोचकर 'नाहीं' कर दी कि कह देना हमको नहीं मिलता, आप आकर ले जायँ। इस ठग ने बहुत कुछ कहा कि उन्होंने बहुत ही जरूरी

सकती है और घर बैठे देश भर का समाचार पुस्तकों द्वारा देख सकती है। जैसा कहा है—

"बैठकर सैर मुल्क की करनी,
यह तमाशा किताब में देखा।"

इसलिये तू पढ़ना मत छोड़। जब तक हो सके, पढ़ जा। कल से मैं तुझे सब बातें बताऊँगी कि स्त्री को बालकपन ही से कौन-कौन सी बातें सीखनी चाहिए, जो उसको अपने पिता के घर और पति के घर काम आती हैं। इन सबको मैं तुझे सुनाऊँगी और पीछे उन सबका फल बताऊँगी। अब तो आज इतना ही बहुत है, कोई मिलने-भेंटने को आती होगी। मैं तुझे क्रम से ये ही बातें सुनाऊँगी—

१–गृहस्थधर्म, सामान्य शिक्षा, घर का काम-धंधा, व्यय आदि का प्रबन्ध।
२–भोजनसंस्कार, सीना-पिरोना, शिल्पविद्या।
३–गर्भाधान, गर्भरक्षा, धात्रीशिक्षा, स्त्रीचिकित्सा।
४–स्वास्थ्यरक्षा, बालचिकित्सा, बालपोषण, बालशिक्षा।
५–धर्मोपदेश, स्थानों का वर्णन, नीति, रीति-भाँति, त्योहार और व्रत।

गृहस्थधर्म

पतिसेवा, गृहकाज, व्यय, सूप, शिल्प, कुलरीति।
स्वास्थ्य, सीख, पालन, जनन, नारिधर्म कह नीति॥

जब दूसरा दिन हुआ, तब दुर्गा अपनी बहन मोहिनी को बुलाकर यों कहने लगी—बहन मोहिनी! आ, अब तुझे कल की बात सुनाऊँ। मोहिनी ने कहा—अच्छा बहन, आई। बोल, पहले क्या सुनावेगी? वही गृहस्थधर्म, जो आज सुनाने को कहा था या और कुछ? मैं तो इसका अर्थ भी नहीं जानती कि इसका अभिप्राय क्या है?

दुर्गा बोली—तो घबराती क्यों है? मैं तुझे इस तरह समझाकर कहूँगी कि तुझे पूछने की आवश्यकता भी न रहेगी। बैठ जा, सुन! पहले मैं तुझे यही बताती हूँ कि गृहस्थधर्म किसे कहते हैं। इसका यह अभिप्राय है कि सब मिलकर एक गाँठ बँधकर रहें। 'गृह' का अर्थ है पकड़ना या इकट्ठा होना या गाँठ, जो इसी शब्द से निकला है, 'स्थ' कहते हैं ठहरना अर्थात् इकट्ठे होकर ठहरना, और धर्म कहते हैं नियम या कार्य को। इसलिए सबका मिलकर यही अर्थ हुआ कि वे नियम, जिनसे सबमें प्यार-प्रीति रहे और सबमें एका हो, अर्थात्

अपने-अपने झकोरों से और द्रोह, ईर्ष्या, द्वेष अपने-अपने ताप से वे-वे क्लेश देते हैं कि कुटुम्ब का ठिकाना नहीं लगता। इनके मारे नाना प्रकार के दुःख सहता, इधर का उधर बेठौर-ठिकाने स्थान और मति से भ्रष्ट हो, डाँवाडोल, बुरे-बुरे कर्मों में फँसा मनुष्य मारा-मारा फिरता है। कहीं पता नहीं लगता, कोई बात नहीं पूछता, पास नहीं बैठता और न बिठाता है। कोई उसे अपना नहीं बताता, बरन् अपने पराये हो जाते हैं, और बिराने तो दृष्टि भी नहीं डालते कि कौन है। इसलिये इस वृक्ष की रक्षा अच्छी तरह करनी चाहिए। शील और सुमति को कभी इससे अलग न होने दे; क्योंकि किसी ने सुमति और शील की प्रशंसा यों की है—

चौपाई

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ विपति निदाना॥

गिरि ते गिरि परिबो भलो, भलो पकरिबो नाग।
आगि माहिं धँसिबो भलो, बुरो शील को त्याग॥

कोई-कोई इस प्रकार भी कहते हैं कि गृहस्थरूपी एक गाड़ी है, जिसमें धर्म की धुरी, मेल और प्रीति के पहिये हैं। स्त्री-पुरुष दोनों बैल हैं। यदि परिश्रम और साहस से सुमार्ग में चलें, तो मनोरथ को पा सकते हैं, नहीं तो कुमार्गगामी होने पर चकनाचूर हो जाते [illegible]

गृहस्थमात्र का धर्म है कि आपस में सदा प्यार-प्रीति से वर्ते। गृहस्थी के लिये प्रीति भी अत्युत्तम वस्तु है। प्रीति से ही जगत् वन रहा है। प्रीति ही से जगत् के काम चलते हैं। प्रीति ही से मा-बाप अपनी सन्तान को पालते हैं, और उनकी प्रीति के लिये सहस्रों कष्ट और दुःख सहते हैं। प्रीति ही के कारण सन्तान अपने बूढ़े मा-बाप की सेवा करती है। प्रीति ही से स्त्री अपने पति को प्रसन्न रखती है। प्रीति ही से पति अपनी स्त्री को सुख देता है, उसके मन को सब प्रकार लिये रहता है। प्रीति ही से भाई भाई को प्यार करता है। प्रीति ही से परदेशी स्वदेशी से भी भला बन जाता है। निदान प्रीति ही ऐसी वस्तु है, जो इस जगत् को थामे है, नहीं तो सब आपस में लड़-भिड़कर कट मरते, और जो मरते नहीं, तो एक-एक जन, एक-एक वस्तु के लिये तो अवश्य ही भटक-मटककर ही रह जाता। वह उसे कभी न मिलती। सब अपने-अपने स्वार्थ ही में लगे रहते। कोई किसी का सहायक न होता। राजा कभी अपनी प्रजा को सुख पहुँचाने के प्रबन्ध में सिर न खपाता और न प्रजा अपने राजा की मन से सेवा करती। पर यह सब प्रीति ही के कारण है कि एक दूसरे का सहायक होता है, और दूसरे के

कष्ट में पड़कर उसे निवारण करता है। इसलिये बहन! प्रीति भी गृहस्थी के लिये बहुत ही आवश्यक है; क्योंकि प्रीति की महिमा इस प्रकार कही गई है—

जल पयसरिस बिकाय, देखहु प्रीति कि रीति भल।
बिलग होय रस जाय, कपट खटाई परत ही॥

कुण्डलिया

पानी पय सों मिलत ही, जान्यो अपनो मित्त।
आप भयो फीको वहै, जल को कियो सुचित्त॥
जल को कियो सुचित्त तप्त पय को जब जानी।
तब अपनो तन जारि बारि मन प्रीतहि आनी॥
उफनि चल्यो मधि अग्नि शान्तिजल छिरकत ठानी।
सत पुरुषन की प्रीति रीति ज्यों पय अरु पानी॥

इस गृहस्थधर्म का मूल प्रीति ही है, जिसको तुझे एक दृष्टान्त देकर समझाती हूँ। तूने देखा है कि बुहारी से कूड़ा-कर्कट कैसी अच्छी तरह शीघ्र बुहर जाता है, और बुहारी में सिवा सींकों के और कुछ नहीं होता। यदि एक-एक सींक करके बुहारो, तो कभी न बुहारा जायगा। सो यह गुण बुहारी में केवल सींकों की प्रीति ही का है कि जब तक वे उस प्रीति की डोर से परस्पर बँधी हुई हैं, तब तक ही बुहार सकती हैं। जहाँ प्रेमडोर टूटी कि सींकें अलग हुईं और फिर कुछ नहीं बुहर सकता।

इसी प्रकार इस जगत् का काम केवल प्रीति ही से चलता है। यदि यह न होती, तो कोई काम न चलता।

जिस प्रकार प्रीति इस गृहस्थी का मूल है, वैसे ही नम्रता इसका फूल है। गृहस्थी इस फूल के आये बिना नहीं सोहती। इस फूल से गृहस्थी की अधिक, वरन् दूनी शोभा है। जिस गृहस्थी में यह फूल नहीं, उसका जन्म निष्फल है; क्योंकि इसी फूल के आने से इस वृक्ष में सुख का फल लगता है, नहीं तो सदा दुःख ही रहता है। वह नाना प्रकार के कष्ट सहकर अन्त में नाश को प्राप्त हो जाता है। यह नियम है कि भारी वस्तु नीचे को खिसकती और झुकती है। और हल्की वस्तु ऊपर को सरकती और उठती है। जिस गृहस्थी में सुख के फल लदे हुए हैं, उनको संसार भर के मनुष्यों से भारी समझना चाहिए। इससे और भी कि उसके माथे पर घर भर का बोझ है। इसलिये उसको तो झुकने ही बनता है। जो नहीं झुकता, वह अपनी ऐंठ में बोझ के मारे कमर टूटने से गिर पड़ता है। ओछे जनों की पहचान तो यह है कि वे सदा मस्तक उठाकर और अकड़कर चलते हैं, जैसे पक्षियों में कौआ और वृक्षों में रेंड़ और सहजना। जहाँ इनको थोड़ी सी भी प्रभुता मिली या धन हाथ लगा अथवा किसी प्रकार का गुण प्राप्त

हुआ कि फिर वे फूले नहीं समाते, और अन्त में नाश को प्राप्त हो जाते हैं। जैसे—

अम्ब फले तो नव चले, रेंड़ फले सतराय।
अति को फूल्यो सहजना, फल औ मूल नसाय॥

परन्तु जो सज्जन पुरुष होते हैं, वे आम के वृक्ष के सदृश होते हैं, जितना फलते हैं, उतना ही झुकते हैं। पर रेंड़ और सहजना ज्यों-ज्यों फूलते हैं, त्यों-त्यों भीतर से पोले और निकम्मे होते जाते हैं। पर सज्जन पुरुष इन दोहों को भी मन में धारण कर कभी धन, सम्पत्ति, बल, यौवन और अधिकार पाकर भी घमण्ड नहीं करते; क्योंकि इससे क्षुद्रता का दोष लगता है; और प्रशंसा के स्थान में निन्दा होती है।

कनक कनक ते सौगुनी, मादकता अधिकाय।
वहि खाये बौरात हैं, यहि पाये बौराय॥
गुरुजन होय न मान मद, विधिहरिहरपद पाय।
कबहुँ कि काँजी सीकरनि, छीरसिंधु विनसाय॥

गृहस्थ को चाहिए कि बड़ी से बड़ी सम्पत्ति या अधिकार पाकर भी समुद्र की भाँति शान्त-स्वभाव बना रहे, और जैसे मेह का पानी पहाड़ों को कुछ बाधा या विकार नहीं करता, इसी प्रकार इन विकारी पदार्थों या दुर्व्यसनों से साधुओं की भाँति अपने मन को निर्विकार रक्खे।

बरसाती नालों की भाँति न बन जाय कि तनिक ही में बड़े वेग से बहने लगे और तनिक पीछे ही विला जाय। गृहस्थ को चाहिए कि अपनी मर्यादा से रहे। कभी मर्यादा का उल्लंघन न करे; क्योंकि मर्यादा-त्याग करनेवाले का संग तो क्या, स्पर्श तक लोग नहीं करते; किन्तु संग छोड़ देते हैं। जैसे वर्षाऋतु में मर्यादा-त्याग के कारण नदियों का पानी पीना तो दूर रहा, लोग उनमें स्नान करना भी छोड़ देते हैं, और जैसे नदियों के मर्यादा के उल्लंघन से उनके आश्रित जीव विकल हो जाते हैं, वैसे ही गृहस्थी में स्वामी के मर्यादा छोड़ने से उसके सब आश्रितजन विपत्तिग्रस्त हो जाते हैं। इसलिये गृहस्थ में नम्रता भी अवश्य ही होनी चाहिए। इसके साथ सन्तोष, शान्ति और धीरज भी उचित हैं। इनके बिना भी गृहस्थ का धर्म नहीं निभता; क्योंकि गृहस्थी सुख के निमित्त है, और सुख बिना सन्तोष के नहीं होता। कहा भी है—"सन्तोषी सदा सुखी"। जिसमें सन्तोष नहीं, वह सदा दुःख ही पाता रहता है। जो सुख उसको मिल भी रहा है, वह भी दुःख ही हो जाता है; क्योंकि असन्तोषी को सदा भटकना ही लगा रहता है। और मन जब तक सुख को सुख देनेवाला नहीं मानता, तब तक सुख भी सुखदायक नहीं होता।

सुख भी दुःखस्वरूप ही हो जाता है। जिस प्रकार संतोष से गृहस्थ को सुख मिलता है, उसी प्रकार धीरज और शान्ति से भी मिलता है।

मनुष्य में शान्ति सदा रहनी चाहिए। संसार में यह बड़ी ही आनन्ददायक वस्तु है। परमेश्वर स्वयं शान्तिस्वरूप है। फिर ऐसी अमूल्य वस्तु गृहस्थ को अपने हाथ से कदापि न जाने देनी चाहिए। जिसने शान्ति को छोड़ा, उसने अपने आनन्द को हाथ से दे दुःख मोल लिया। जब मनुष्य की शान्ति जाती रहती है, तब क्रोध आदि उसके शत्रु मन में स्थान कर लेते हैं और अपनी आग से उसे जला-जलाकर राख कर डालते हैं। परन्तु शान्तिशील मनुष्य अपने शीतल स्वभाव द्वारा उस जलानेवाली आग से बचा रहता है, और उसे दूर ही से निवारण कर देता है—जैसे गरम लोहे को ठंडा लोहा काट देता है, पर गरम लोहे से ठंडे लोहे का कुछ नहीं हो सकता।

जैसे सन्तोष और शान्ति सुख देते हैं, वैसे ही धीरज विपत्ति और दुःख आदि को अपने पास नहीं फटकने देता। और यदि ये कभी किसी प्रकार आ भी गये, तो इन्हें निर्बल करके तुरन्त निकाल देता है, गृहस्थी को कुछ बाधा नहीं पहुँचने देता। धीरे-

धीरे उनके मूल को खोदकर उनको निर्मूल कर डालता है।

गृहस्थ को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि सदा उद्यमी बने रहने ही में लाभ है। निरुद्यमी कभी न होना चाहिए। आलस्य को मन में भी न लावे; क्योंकि आलस्य दरिद्रता है। बिना उद्यम किये गृह का पालन कभी नहीं हो सकता। आलसी होकर भूखों मरना पड़ता है। आलस्य धर्मों का नाश करनेवाला है। जिस घर में आलस्य धँसा और बसा, जानो उस घर का अन्त आ गया। प्रथम तो कुछ पूँजी ही नहीं रहती, फिर 'आमदनी' बन्द, खर्च नित नया। आवे कहाँ से? कहावत प्रसिद्ध है—"बिना सोता कुएँ भी निपट जाते हैं"। आलसी पुरुष को कोई उधार तक नहीं देता। लोग जानते हैं, जब वह अपने घर का सब खा गया, तो हमारा कर्जा कहाँ से चुकावेगा। जब वह भूखों मरने लगा, तब बुरे कामों की ओर चित्त चलायमान होता है। वह अपने धर्मों को छोड़कर भ्रष्ट हो जाता, और फिर थोड़े ही दिनों में नाश को प्राप्त होता है। लोक में अपनी निन्दा कराकर परलोक में काला मुँह कर नरक भोगता है। इसलिए गृहस्थ को कुटुम्बपालन के लिए सदा उद्यमी रहना चाहिए। नहीं तो आलसी

मनुष्य सरोवर की भाँति सूख जाता है। उद्यमी नदी बहती रहती है। जहाँ कहीं पानी थोड़ा भी हो जाता है, वहाँ दूसरी नदियाँ उसे उद्यमी जान उसकी सहायता को आ मिलती हैं। जो गृहस्थ उद्यमी होता है, उसका कभी कोई काम अटका नहीं रहता। उद्यम के सिवा थोड़ा-सा परिश्रम करने की भी टेंव गृहस्थ को रखनी चाहिए। न जाने दैवयोग से कब कैसा समय आ पड़े।

जो परिश्रम नहीं करता, वह मनुष्य नहीं। वह जीव-जन्तुओं से भी गया बीता है। वह ऐसा है, जैसे वृक्ष, ईंट, पत्थर। हाथ-पाँव होते हुए भी टूटे, लूले, लँगड़े बनना किसने कहा है। परमेश्वर ने इनको किसलिए दिया है? काम करने को या निकम्मा रखने को?

जिसमें परिश्रम करने की आदत नहीं, वह पत्थर की-सी मूर्ति है। जहाँ रख दी, वहाँ रक्खी रही। खिला दिया, खा लिया; पिला दिया, पी लिया। ऐसे जन अन्त को बहुत ही दुःख पाते हैं। आज तो परमेश्वर की कृपा से नौकर-चाकर सब हैं। कल अगर ऐसा हो कि हमको भी कोई सेवा में न रक्खे, तो फिर ऐसी दशा में ऐसे मनुष्य सिवा दुःख भोगने और पछताने के और कुछ नहीं कर सकते। पर जिनको पहले ही से थोड़ा-

थोड़ा परिश्रम करते रहने की आदत होती है, वे विपत्ति में भी कभी दुःख नहीं उठाते। न ऐसे गृहस्थ कभी विपत्ति को देखते हैं, जो अपना बर्ताव सदा एक-सा रखते हैं। न कभी कम और न कभी अधिक; वरन् सदा बराबर चले जाते हैं। कोई काम न घटकर करते और न बढ़कर। सदा वही काँटे की तोल, जिसमें न कोई बुरा कहता और न कोई बढ़कर चलने का दोष लगाता। न ऐसों की एक दफ़ा निन्दा होती है और न दूसरी दफ़ा प्रशंसा; वरन् सदा बड़ाई ही होती है। गृहस्थ को कभी कोई काम अपने वित्त से बढ़कर भी न करना चाहिए। जैसे कहावत है कि "तेते पाँव पसारिए जेती लाँबी सौर।" जिसमें जाड़ों से मरने का डर ही न रहे। सदा अपने दुबके-दुबकाये गरमाये हुए नींद ले सो रहे हैं। जो एक उत्सव या विवाह बढ़कर कर दिया, और फिर वैसा न बन पड़ा, तो सिवा हँसी और लोकनिन्दा के कुछ नहीं होता। इसलिए बर्ताव सदा एक-सा होना चाहिए। बिना कुटुम्ब के बड़े-बूढ़ों से पूछे भी कोई काम न करना चाहिए। क्योंकि उनको तुमसे अधिक बातें ज्ञात हैं, वे सब जानने-बूझने हैं और बहुत देखेभाले हुए हैं। सब बातों की बुराई-भलाई को सब प्रकार से पहचानते हैं। इसलिए जो कुछ उनकी आज्ञा हो, वही करना चाहिए। उनकी

इच्छा के विरुद्ध कोई बात न होनी चाहिए। इसमें बहुत सी हानि होने का भय है। सब गृहस्थों को ऊपर कही हुई बातों का स्मरण रखकर उन पर ध्यान देना और उन्हीं के अनुसार वर्तना चाहिए।

बहन! अब मैं तुझको वे बातें बतलाती हूँ, जिनका गृहस्थों को निषेध है, और जो कभी न करनी चाहिए। सुन, वे हैं कुसमय की निद्रा और दूसरे के घर में रहना। इन बातों से मनुष्य के दरिद्र आता है। कहा भी है— "दिन को सोना दरिद्र का लक्षण है"। कारण, जो समय परिश्रम कर जीविका प्राप्त करने का है, उस समय सोने से लाभ की जगह हानि होती है। फिर लाभ की जगह हानि होने से दरिद्र का प्रवेश होता है। ऐसे ही दशा दूसरे के यहाँ बसने से होती है। इससे न वह अपना काम करने पाता है और न हम अपना। दोनों को हानि के सिवा कुछ लाभ नहीं होता। और यही हाल वृथा भ्रमण से होता है। अर्थात् ये तीनों बातें अच्छे कामों का नाश करती हैं। कोई अच्छा काम नहीं बन पड़ता। धर्म में अन्तर पड़ जाता है, और वह नष्ट हो जाता है। धर्म नष्ट होने से मनुष्य का मन ठिकाने नहीं रहता। मन के ठिकाने न रहने से कुछ भी लाभदायक नहीं बन पड़ता। व्यर्थ बकना भी वर्जित है। इससे इतनी बातों

की हानि होती है—प्यार, प्रीति, मेल, मिलाप। दुःख-दर्द में सहायता मिलना तो दूर, उलटे इनके बदले द्रोह, ईर्ष्या, वैर, कपट आदि की वृद्धि होती है।

गृहस्थ को इतनी बातें कभी न करनी चाहिए—प्रीति का क्षय, सत्-असत् के विवेक का नाश, विद्या का विनाश, बालशिक्षा में शिथिलता और असावधानी, ज्ञान की हानि, चित्त की चंचलता, सत्संग का त्याग, बुरों का संग, अनर्थ का लाभ, सज्जनों से विरोध; किसी के प्राण की हानि, पराई निन्दा, असत् का ग्रहण और शील का त्याग।

इन बातों से गृहस्थ को बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ पड़ जाती हैं, और फिर उसका निर्वाह दुर्लभ हो जाता है। जो नियम मैंने अब तक कहे, वे गृहस्थमात्र के पालने योग्य हैं। इन नियमों के भी पालने से गृहस्थ को सदा सुख मिल सकता है, जो मैं अब बताती हूँ।

(१) गृहस्थ अपना मन अपने वश में रक्खे। धैर्य और सहिष्णुता (बरदाश्त करने का स्वभाव) सीखे।

(२) बिना विचारे कभी कोई बात मुख से न निकाले।

(३) क्रोधी की बात का उत्तर न दे; क्योंकि इससे कलह बढ़ती है।

(४) निन्दक और पिशुन (चुगल) से सावधान रहे और सदा रार को बरा दे।

(५) मधुर वचन बोलने की टेव न छोड़े; क्योंकि मधुर सबको प्रिय है।

(६) पड़ोसी या मित्र के दोषों को मन में न धरे। उनके दोष और अपराध को क्षमा करता रहे।

(७) पड़ोसी का हाथ उसके दुःख-सुख में बटावे जिससे वह हमारे सुख-दुःख में शरीक हो।

(८) किसी के अवगुण न प्रकट करे, और निन्दा करने का तो स्वप्न भी न देखे। ये दोनों दुःख के मूल हैं।

(९) छोटों पर स्नेह और बड़ों का मान करे; क्योंकि इससे परस्पर प्रेम होता है।

(१०) प्रत्येक काम को पूरे विचार के साथ आगा-पीछा सोचकर करे।

(११) इन पाँच वकारों का सदा संचय रक्खे—

(१) विद्या, (२) वपु, (३) वचन,
(४) वस्त्र, (५) विभव (धन)।

गृहस्थ को अपने सम्बन्धियों और प्रेमियों से कभी-कभी मिलते अवश्य रहना चाहिए, नहीं तो प्रीति में अन्तर आ जाता है। अधिक नहीं, तो वर्ष भर में एक बेर तो अवश्य ही किसी बहाने मिल लिया करे।

गृहस्थ मन में कभी पाप का विचार भी न करे, क्योंकि पाप में बड़ा भारी विष है, जैसा काले सर्प का,

कहा भी है—"मन का पाप और घर का साँप मृत्यु-तुल्य हैं।"

गृहस्थ को मेघ की सी वृत्ति और धारणा करनी चाहिए, अर्थात् दानी और सज्जन बनना चाहिए। बादल ही की तरह उसको देखकर सबका चित्त प्रसन्न हो जाय। परन्तु प्रलापी (बकवादी) न होना चाहिए। जैसा गरजनेवाला बादल, जो बरसता कम है।

अब मैं वे धर्म कहती हूँ, जो मुख्यकर स्त्री को गृहस्थी में रहकर बर्तने और ध्यान में रखने चाहिए; क्योंकि तुझे तो गृहस्थ ही के धर्मों से काम पड़ेगा। इसलिए मैं तुझे वे ही सुनाती हूँ।

स्त्रियों के धर्म दो प्रकार के हैं। एक तो वे जिन्हें वे अपने लिए करती हैं, और दूसरे वे, जो उन्हें दूसरों के संग बर्तने पड़ते हैं।

प्रथम मैं तुझे वे ही बताती हूँ, जो अपने आप करने होते हैं, अर्थात् जिनका सम्बन्ध अपने कुटुम्बियों के साथ ही होता है। जैसे बेटे के साथ, पति के साथ, सास, ससुर, ननँद, भावज, देवरानी, जिठानी इत्यादि अथवा और बन्धुवर्गों के साथ बर्ते जाते हैं। इनमें से भी मैं सबसे पहले वे धर्म कहती हूँ जो स्त्री को अपने पति के संग बर्तने चाहिए, क्योंकि सबसे अधिक उसी

से काम पड़ता है, और उसी की प्रसन्नता के धर्म विशेष कर मुख्य हैं।

स्त्री वही है, जो तन, मन और वाणी से अपने पति की सेवा और आज्ञा में रहे। तन से सेवा करना यह है कि पति को जिस प्रकार बने, सुख पहुंचावे, दुःख न होने दे; किन्तु दुःख को दूर करती रहे।

मन से सेवा करना यह है कि पूर्ण और निष्कपट प्रेम अपने पति पर रक्खे, उस दशा में भी कि पति या उससे प्रेम न भी करता हो। वाणी से सेवा करने का यह अभिप्राय है कि मृदु, मधुर, प्रिय और प्रेमसने, क्रोधरहित, आदर सूचक वचनों से सम्भाषण किया करे। कभी किसी प्रकार उसके मन की बात के सिवा, दूसरी बात को चित्त में भी न विचारे, न करे। सब समय अपने को दासी ही जान पति की इच्छा के काम करे। परछाहीं के समान उसके पीछे लगी रहे। जैसे परछाहीं अपने स्वामी की ओर ही चलती है। जहाँ वह जाता है, उसी ओर को परछाहीं भी चलती है, इसी भाँति अपने पति की जैसी इच्छा देखे, वैसी ही चलें। जहाँ पति कहे, वहीं बैठे। जब कहे, तब उठे। जो कहे, वही करे। कभी उसके विरुद्ध बात करके उसकी इच्छा को न बिगाड़े। जिससे देखे कि मेरा पति

प्रसन्न और सुखी होता है, उसी को करे; क्योंकि पति की प्रसन्नता मुख्य है।

पुरुष के क्रोधी या अप्रसन्न रहने से स्त्री को कुछ सुख नहीं मिलता, वरन् ठौर-ठिकाना नहीं रहता। जहाँ पुरुष है, वहाँ स्त्री है। जब पुरुष ही नहीं, जिसे वह पति कहे, तो पत्नी कब और कहाँ हो सकती है। यह तो हाथ की सी लीक है। जब हाथ ही नहीं, तब लीक कहाँ? इसलिए स्त्री को अपने पति की प्रसन्नता के सिवा दूसरा काम नहीं। जिस भाँति हो सके, पति को प्रसन्न रक्खे।

स्त्री में सदा तीन प्रकार रहने चाहिए। माता, मोहिनी और मन्त्री. अर्थात् भोजन कराने में माता की सी अत्यन्त प्रीति, केलिरस-हास्य में, प्रेम-प्रीति की बातों में, कुलटा के समान मोहिनी के गुण धारण करना और विपत्ति में मन्त्री के समान अच्छी अनुमति देकर धीरज और ढाढ़स बँधाना। जो स्त्री ऐसा करती है, उससे उसका पति सदा प्रसन्न रहता है।

यदि कोई स्त्री भार्या बनना चाहे, तो इन गुणों को ग्रहण करे, जिससे पति प्रसन्न रहे और परिवार में प्रतिष्ठा पावे—

मन क्रम वचन पतिहि [illegible] [illegible]
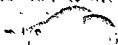
असजियजानि करहि पति सेवा। तिहिपरसानुकूलसबदेवा॥

महादेवजी ने जो पार्वतीजी को भार्याधर्म बताया था, वह महाभारत में वर्णित है। उसका आशय लेकर मैं तुझको बताती हूँ। स्त्री को भार्या बनने के लिए ये गुण और धर्म ग्रहण करने चाहिए—पति की सहधर्मचारिणी अच्छे स्वभाववाली, प्रियवादिनी, सुचरित्र, प्रियमूर्ति, सदा पतिदर्शनाभिलाषिणी, पतिव्रता, मङ्गलमयी, धर्म की साधिन, शुद्धाचारिणी, पति को देवतुल्य जानने-वाली, सदा प्रसन्नवदन, पति से क्रोध न करनेवाली, पतिसेविका, दृढ़दत्त, मधुर और नम्रभाषिणी, पति पर संसार की समस्त वस्तुओं से अधिक प्रीति करनेवाली, पाकक्रिया में निपुण, अतिथि, अभ्यागत और टहलुओं को सुख से रखनेवाली, सबसे पीछे भोजन करनेवाली, जिसकी सेवा से सब घरवाले सुखी होंगे, जो पति के हित के कामों में लगी रहनेवाली स्त्री होगी, वह भार्या कहलाने योग्य है, अन्यथा नहीं। भार्या के ये भी गुण हैं—

ज्ञानवन्त औ धर्म को, ततजानत पतिसेव।
अलपसंतोषिन होत सो, लक्ष्मी ही सत भेव॥
सदा सरस मंगलयुक्त, सदा धर्मरति धारि।
सदा दया अरु सत्ययुत, सुख सेवित सो नारि॥

सदा भक्ति पति की गहै, भोजन अतिहितकारि।
गृहकारज में जो चतुर, सुख सेवित सो नारि॥
भार्या जो गृह में चतुर, प्रिय बोलत नित बैन।
सो नारी पतिप्राण है, जिनते निजतन चैन॥

इन गुणों के पश्चात् भार्या बनने में कुछ और भी चाहिए। तुझको वह भी बताती हूँ। यदि स्त्री इन प्रेम के गुणों (कुञ्जियों) का ध्यान रक्खेगी, इनके अनुसार वर्तेगी तो आशा है, उसका पति कभी उससे अप्रसन्न न होगा; सदा प्रसन्न रहेगा—

(१) पति को जिस भाँति बने, सुख पहुँचाना; जिस प्रकार पति प्रसन्न रहे, वही करना।

(२) पति को क्लेश या दुःख न होने देना। यदि हो भी, तो उसको उपाय से दूर करना।

(३) पति कदाचित् क्रोध करे, तो भी आप क्रोध न करना; किन्तु सदा नम्र, मृदु, मधुर वचन बोलना।

(४) पति अपना निरादर करे, तो भी उसका यथायोग्य आदर-भाव करना।

(५) पति प्रीति न माने, तो भी अपनी प्रीति न घटाना, और उसकी सेवा से कभी मुँह न मोड़ना।

(६) पति की आज्ञा बिना कभी कोई कैसा भी काम न करना।

कोई-कोई स्त्रियाँ दुष्ट और मूर्ख स्त्रियों की बातें सुनकर या उनके बहकाने में आकर अपने पति की निन्दा कर कहने लगती हैं कि मैं तो अपने पति का कहना कभी नहीं मानती; सदा अपना ही कहा करती हूँ। चाहे वह हजार भूका करे, में तो अपनी ही टेक रखती हूँ। कभी उठकर आदर तक नहीं करती और न कभी पहले बोलती हूँ। वह अपने आप ही आ बोलता है। मैं तो कभी उसकी कदर नहीं करती। जब कभी वह कोई बात मुझसे कहता है, तब मैं टके सा उत्तर देकर मुँह बिगाड़ देती हूँ। वह आप हार मानकर मेरा ही कहना मानता है। सो हे बहन! जो ऐसी स्त्रियाँ होती हैं, वे सदा इस लोक और परलोक में भी दुःख पाती हैं। सब लोग लुगाई उनकी निन्दा कर उनको कर्कशा कहने लगते हैं। जिसने अपने पति की निन्दा की, उसने पति का क्या बिगाड़ा? अपना ही जीवन बिगाड़ा। यहाँ कलहिन प्रसिद्ध हुई, और वहाँ ईश्वर के यहाँ जाकर नरक में पड़ी। यहाँ पति के जीते ही राँड़ के से दुःख भोगे, और वहाँ जाकर नरक का सुख लूटा। पति और पिता के यहाँ से आदर गया। लोक में उलटी हँसी हुई। इसलिए कभी किसी स्त्री को अपने पति की निन्दा का विचार भी मन में

न लाना चाहिए। जो स्त्री पतिव्रता रहकर सती होती है, वह यहाँ तो सुख पाती ही है, मरे पर भी अपने पति को लेकर साढ़े तीन करोड़ वर्ष तक (जितने कि मनुष्य के देह पर रोएँ हैं) स्वर्ग में वास करती है। यह तो नरक में जानेवाली स्त्रियों के काम हैं कि अपने पति से वैर, कपट और छल रक्खें। आप भी दुःख पावें, और पति को भी दुःख देना चाहें। ऐसी स्त्रियाँ खोटी कहलाती हैं। इनका सङ्ग सदा त्यागना चाहिए। इनको पास तक न बिठाना चाहिए, न इनसे बोलना ही चाहिए, वरन् इनका मुख भी न देखना चाहिए। नाम और अवगुण उनके ये हैं—

(१) कुपत्नी=छिनाल।

(२) पतिद्रोहिन=जो अपने पति से वैर रक्खे, और उसकी निन्दा करे।

(३) दूती=इधर की उधर और उधर की इधर लगानेवाली।

(४) दुरशीला=दुष्ट स्वभाववाली।

(५) वकवादिन=व्यर्थ और बहुत बोलनेवाली।

(६) कुटनी=जो स्त्रियों को कुचाली और व्यभिचारिणी बनावे।

(७) बहुरूपिन=भाँति-भाँति के रूप रखनेवाली।

(८) वेश्या=गमजनी।

(९) कलहिन=कलह करने या करानेवाली।

(१०) कर्कशा=सदा लड़ाई रखनेवाली।

(११) चोर या ज्वारिन=वस्तु को चुरा ले जाय और जुए का व्यसन रक्खे।

(१२) टोटकाही=टोना या टोटका करनेवाली।

(१३) उन्मादी=काम के मद में उन्मत्त हुई, अर्थात् कामासक्त।

(१४) मदमाती=मद पिये हुए या पीनेवाली अथवा यौवन और काम के मद से उन्मत्त।

(१५) विरोधिन=तनिक-तनिक सी बात में विरोध करने व करानेवाली।

(१६) कटुवादिनी=तीखे बोल बोलनेवाली।

(१७) निर्लज्ज=स्वार्थिनी बन लज्जा को त्याग देनेवाली।

(१८) घमण्डिन=बात बात में अभिमान करनेवाली।

(१९) अधर्मिन व पापिन=अधर्म व पाप करने में भय न माननेवाली।

(२०) उलटी=जो कहो या करो, उसको उलटा ही माने।

तक नहीं देखतीं, और सवेरे उठकर नाम भी नहीं लेतीं। फिर जगत् में इनसे बढ़कर कौन सी दुखी और बुरी स्त्री होगी, जिसका न कोई नाम ले और न मुख देखे? स्त्री को चाहिए कि सदा पतिव्रता रहे, जो पतिव्रताओं के धर्म हैं, उनको भली भाँति पाले, स्वप्न में भी उनसे कभी मुख न मोड़े। अन्य पुरुष का ध्यान कभी चित्त में भी न धरे। अपने पुरुष के सिवा जितने अन्य पुरुष इस जगत् में हैं, सबको स्त्री ही समझे। कभी किसी को पुरुष न जाने। जो ऐसी स्त्रियाँ हैं, वे पतिव्रताओं में भी प्रथम हैं, जैसे अनसूयाजी ने सीता को समझाया था कि पतिव्रता चार प्रकार की हैं—

चौपाई

कह ऋषिवधू सरलमृदुवानी। नारिधर्म कछु ब्याज बखानी॥
मातु पिता भ्राता हितकारी। मित सुखप्रद सुनु राजकुमारी॥
अमित दानि भर्ता वैदेही। अधम नारि जो सेव न तेही॥
धीरज, धर्म, मित्र अरु नारी। आपतिकाल परखिए चारी॥
वृद्ध रोगवश जड़ धनहीना। अन्ध बधिर क्रोधी अतिदीना॥
ऐसेहु पतिकर किए अपमाना। नारि पाव जमपुर दुख नाना॥
एकै धर्म एक व्रत-नेमा। काय-वचन-मन पतिपद-प्रेमा॥
जगपतिव्रता चारि विधि अहहीं। वेदपुरान संत सब कहहीं॥

उत्तम मध्यम नीच लघु, सकल कहहुँ समुझाय।
आगे सुनहिं ते भवतरहिं, सुनहु सीय चित लाय॥

चौपाई

उत्तम के अस बस मन माहीं। सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं॥
मध्यम परपति देखहि कैसे। भ्राता, पिता, पुत्र निज जैसे॥
धर्म विचारि समुझि कुल रहहीं। ते निकृष्ट तिय श्रुति अस कहहीं॥
बिनु अवसर भय ते रह जोई। जानेउ अधम नारि जग सोई॥
पतिवञ्चक परपति रति करई। रौरव नरक कल्प शत परई॥
क्षण सुख लागि जन्म शत कोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी॥
बिनु श्रम नारि परमगति लहई। पतिव्रत धर्म छाँडि छल गहई॥
पति प्रतिकूल जन्म जहँ पाई। विधवा होइ पाइ तरुनाई॥

सहज अपावन नारि, पति सेवत सुभगति लहहिं।
जस गावत श्रुति चारि, अजहूँ तुलसी हरिहि प्रिय॥

किसी कवि ने एक पतिव्रता स्त्री के लक्षणों को अपनी पुस्तक में यों लिखा है—एक स्त्री पार्वतीजी के दर्शनों को यह समझकर नित्यप्रति जाया करती थी कि उनका पतिप्रेम प्रसिद्ध है, और स्त्रियों में इसी कारण वह सर्वश्रेष्ठ हैं। पर एक दिन इस स्त्री को यह ज्ञान हुआ कि पार्वतीजी महादेवजी की अर्धांगिनी हैं, अर्थात् पार्वतीजी की देह में आधी देह महादेवजी की है, तब उसी समय से पार्वतीजी के दर्शन इस विचार से त्याग,

दिये कि मुझको परपुरुष का मुखावलोकन करना
पड़ता है।

बहुत सी ऐसी-ऐसी पतिव्रता स्त्रियाँ हो गई हैं, जिनका
नाम लाखों वर्ष से आज तक प्रसिद्ध चले आते हैं
और अन्य पतिव्रता स्त्रियाँ प्रभातकाल उठकर उनका
अब तक नाम लेती हैं। तुझको उनके नाम भी बताती
हूँ। वे ये हैं—

(१) सूर्य की सुवर्चला, (२) चन्द्र की रोहिणी
(३) वशिष्ठ की अरुन्धती, (४) अगस्त्यकी लोपामुद्रा
(५) च्यवन की सुकन्या, (६) कपिल की श्रीमती
(७) इन्द्र की शची, (८) सत्यवान् की सावित्री
(९) सगर की केशिनी, (१०) नल की दमयन्ती
(११) सौदास की मदयन्ती, (१२) राम की जानकी
(१३) महादेव की सती, (१४) ब्रह्मा की सावित्री
(१५) नारायण की लक्ष्मी, (१६) रावण की मन्दोदरी

हे बहन ! पति कैसा ही बुरा क्यों न हो—लूला
लँगड़ा, काना, व्यभिचारी, चोर, जुआरी-परन्तु स
उसके अवगुणों को कभी मन में भी न लावे। सदा
उससे प्रीति ही माननी चाहिए, उसकी सेवा में तत्प
रहना चाहिए। कभी उसकी आज्ञा का उल्लङ्घन
करना चाहिए। पति की आज्ञा का उल्लङ्घन करन

से बढ़कर स्त्री के लिए इस संसार में कोई दूसरा पाप नहीं। जैसे जीवमात्र को परमेश्वर की आज्ञा न मानने से पाप होता है, वैसे ही स्त्री को केवल पति की ही आज्ञा न मानने से उतना पाप होता है; क्योंकि स्त्री का पूज्य तो केवल पति ही है। अपने पति से सदा प्रीति मानना ही स्त्री का परम धर्म है, चाहे पति अपने मन का हो या न हो; क्योंकि अब वह छूट तो सकता ही नहीं। जैसा है, वैसा ही भोगना पड़ेगा। फिर प्रीति न करने से कौन-सा कार्य निकलता है।

जगत् का नियम है कि सुन्दर और अच्छे से तो सब ही को प्रीति होती है। स्त्री ही को नहीं। पर नहीं, प्रीति तो वही है, जिसमें स्वार्थ न हो। जब स्त्री ने सुन्दर और अच्छे पति से प्रीति जोड़ी, तब उसकी क्या बड़ाई? ऐसों से तो सभी को प्रीति हो जाती है। बात तो यही है कि जिससे दूसरे प्रीति न मानें, केवल एक जन प्रीति माने, वही तो प्रीति है। स्वार्थ से जो प्रीति होती है, वह प्रीति नहीं कहला सकती। प्रीति वही है, जो अपनी हानि सहकर भी दूसरे के सुख और प्रसन्नता के लिए का जाती है। इसलिए स्त्री को अपने पति से प्रीति का बर्ताव सदा रखना चाहिए, चाहे पति कैसा ही हो। पति से प्रीति रखना तो स्त्री का परम धर्म है, और यही

उसका सुहाग है। इसके न होने से तो वह फिर कि
काम की नहीं। पर आजकल की स्त्रियाँ अपना सुह
और बड़ाई शृंगार करने, बहुत सा गहना पहनने अ
चटकीले-मटकीले गोटे-किनारी के कपड़े ओढ़ने
समझती हैं। यह उनकी बड़ी भूल है। स्त्री का सुह
उसके गुणों से हो सकता है; क्योंकि गुणवती स्त्री
पति को अवश्य ही प्रीति होती है। वरन् दूसरों को
प्रीति होती है, जो स्त्री के सुहाग का फल है। यदि
ने ऐसा ही सुहाग मान रक्खा है, और गुण कुछ
नहीं है, तो वह थोथा सुहाग है। प्रत्येक वस्तु का गु
सराहा जाता है, न कि रूप। यदि रूप और गु
दोनों हों तो फिर सोना और सुगन्ध की कहावत
स्त्री को अपने पति से कभी कड़वी या कड़ी बात
बोलनी चाहिए। सदा नम्र स्वभाव से रहे। कभी पति
ऐसा उत्तर न दे, जिससे उसके मन को दुःख हो
बुरा जान पड़े।

जब कभी अपने पति को क्रोध में देखे, तो चुप
जाय। वचन मुख से न निकाले। सदा सत्य और म
वचन बोले। कभी कटु वचन अपने मुख से न निकलने
जब बोले, तब प्रिय ही बोले। प्रिय बोलनेवाले से क
कोई अप्रसन्न नहीं होता, वरन् जगत् वश में हो ज

पुत्र हू न होय पतिपच्छ पूछि कीजै काज,
यह हू न होय पितुपच्छ राखे लाज है।
दोऊ पच्छरहित कदापि कोऊ काम करे,
सम्मति सदा ही पूछ ग्रामाधीस राज है॥

अपने पति से स्त्री को सदा सत्य ही बोलना चाहिए। कभी कोई बात कपट या छल की न कहनी और न करनी चाहिए; क्योंकि ये दोनों प्रीति के छुड़ानेवाले हैं। मैं पहले कह चुकी हूँ कि "बिलग होइ रस जाय, कपट खटाई परत ही।" जिस स्त्री ने अपने पति से झूठ बोला, उससे उसके पति की कभी प्रीति न होगी चाहे पीछे सौ उपाय करके मरिए। मन का स्वभा है कि जहाँ फटा वहाँ फटा। फटकर कभी नहीं मिलता यदि किसी दशा या काल में मिल भी गया, तो वी में अवश्य कुछ अन्तर रह जायगा। चाहे जिस वस को देख लो, एक बेर उसके दो टुकड़े करके फि मिलाओ, तो बीच में सन्धि या गाँठ रह ही जाती है यहाँ तक कि फोड़े में भी गँथ पड़ जाती और स्पष्ट दीखती रहती है—यद्यपि एक शरीर के दो भाग मिल कर फोड़ा भरता है। किसी कवि ने ठीक कहा है—

मन, मोती अरु दूध रस, इनको यही स्वभाव।
फाटे पीछे ना मिलें, कोटिन करो उपाव॥

जिनके मन में छल और कपट है, वे इस जन्म में क्या, कभी उस जन्म में भी नहीं मिलेंगे। जैसे दूध को खटाई फाड़ देती है, वैसे ही मन को कपट और छल फाड़ देते हैं। जो स्त्रियाँ अपनी मूर्खता से या दूसरों की देखादेखी और कहने-सुनने से अपने पति से कपट का व्यवहार रखती हैं, वे पीछे समझ आने पर बहुत ही पछताती हैं। फिर अपने किये को दोष दे अपने मस्तक को धुनती हैं, और जन्म भर दुःख भोग अपने इस सुन्दर जीवन को यों ही खो देती हैं।

मूर्ख तो ठगाकर कुछ सीखता है, परन्तु जो चतुर होते हैं, वे पहले ही से आगापीछा विचार, दूसरे को देख काम करते और सदा सुख भोगते हैं।

मैंने देखा है, मूर्ख स्त्रियाँ सदा दुःख ही में अपना जन्म बिताती हैं, और चतुर स्त्रियाँ अपने पति के सङ्ग नित नये सुख भोग करती हैं। वे अपना जीवन-प्राण पति को मान सदा तन, मन, धन से उसकी सेवा करती हैं। आप कष्ट सहकर भी प्रसन्न होती हैं, और कभी मन में इस बात का घमण्ड भी नहीं करतीं कि हमने अपने पति के ऊपर यह एहसान किया। वे तो अपने को दासी मानकर सदा पतिसेवा ही को अपना परम धर्म समझती हैं; क्योंकि स्त्री को इस संसार में पति

से बढ़कर कोई दूसरा पदार्थ आनन्ददायक नहीं है। इस-
लिए स्त्री को, जहाँ तक हो सके, पति को अनुकूल रखने
के उपाय सोचने और करने चाहिए, जिससे आनन्द-
लाभ हो। पहले समय में ऐसी-ऐसी स्त्रियाँ हो गई
कि सेवा की कौन कहे, जिन्होंने पति के प्रेम में अपने
प्राण तक दे दिये हैं। उनकी कीर्ति के स्तम्भ ग्राम-
ग्राम में बने हुए हैं। कोई ग्राम व नगर ऐसा ही अभागा
होगा, जिसमें इन स्वर्गवासिनी स्त्रियों के कीर्तिस्तंभ न
हों। सन् १६५६ ई० से लेकर सन् १८२६ ई० तक
(अर्थात् केवल १७३ वर्ष में) ७०,००० आर्य-महिलाएँ
इसी पतिप्रेम में सती हो स्वर्गसुख भोगने को चली गईं।
जब से सरकारी हुक्म से सतीदाह होना बन्द हो गया
है, तब से कम होते-होते अब यह प्रथा बहुत ही कम हो
गई है, तथापि बहुत-सी स्त्रियाँ अब भी अपना शरीरदाह
व प्राण-त्याग करके सती हो ही जाती हैं। जैसे ग[illegible]
नगर के [illegible]ग्राम में विष्णुसिंह ब्राह्मण की स्त्री [illegible]
१८६० ई० में सती हो गई *। कुछ मृत पति के शव [illegible]

* इस तरह के समाचार अब भी अखबारों में पढ़ने को मिलते
हैं कि अमुक स्त्री पतिशोक के मारे उसी समय या एक-दो दिन बाद
स्वर्गवासिनी हुई। बहुधा कभी-कभी पति के साथ भी सती हो
जाती है।—सं०

सङ्ग ही दाह हो जाने से सती नहीं कहलाती। नहीं, पति के प्रेम ही में प्राण-त्याग कर देने को सती कहते हैं। चाहे वह प्राण-त्याग पति की मृत्यु के सङ्ग ही हो या कुछ आगे-पीछे, परन्तु अब ऐसी स्त्रियाँ बहुत ही कम हैं, वरन् नहीं के बराबर हैं। पूर्व-काल की परम प्रसिद्ध स्त्रियों के नाम मैं तुझे बतलाती हूँ। उनके नाम सतीभाव चाहनेवाली स्त्रियाँ प्रभात में उठकर ले लिया करें और उनके गुणानुवाद सुन-सुनकर उसी के अनुकूल बर्तें, तो वे भी वही सुख प्राप्त करेंगी, जो उन्होंने प्राप्त किया था—

राग ईमन

धनि-धनि भारत सती सयानी ॥
सीता, सती, सुशीला, श्यामा, शची, सुभद्रा रानी।
सरोजिनी, ऊषा, मन्दोदरि, दमयन्ती सुखदानी॥
सावित्री, सतभामा, सुन्दरि, द्रुपदसुता गुणखानी।
श्रीकिशोर भारत की ललना, त्रिभुवन सती बखानी॥

सती होना तो आजकल अत्यन्त कठिन, वरन् असम्भव है; पर आजकल की स्त्रियों को तो पति से पूरा प्रेम भी नहीं होता। पातिव्रतधर्म का तो उनको स्वप्न भी नहीं होता। पूर्व-काल में पातिव्रत महागुण गिना जाता था। स्त्रियाँ सदा पति की आज्ञाकारिणी बनें। पर अब यह दोष गिना जाता है; क्योंकि आजकल की मूर्ख स्त्रियाँ

पति से दबकर रहना नहीं चाहतीं । तनिक सी बात
में पति को सौ खोटी-खरी सुनाने लगती हैं । प्राचीनकाल
की स्त्रियों ने अपने पति के महादोषों पर भी कभी कुछ
नहीं कहा । जैसे दमयन्ती को सोते हुए विकट जङ्गल में
अकेली छोड़कर राजा नल चले गये थे, राजा रामच-
ने निर्दोष सीताजी को गर्भावस्था में वनवास दिया थ
और राजा दुष्यन्त ने शकुन्तला को नहीं पहचाना था ।
इतने पर भी इन पतिव्रता स्त्रियों ने अपने-अपने पति
के प्रति कोई कुवाक्य या कटुवचन नहीं कहे, वरन
अपने कर्मों ही को दोष लगाया और विलाप किया । पति
के चरणों ही में ध्यान रक्खा, और ऐसी दयनीय दशा
में भी पतिप्रेम का त्याग नहीं किया । एक आजकल
की स्त्रियाँ हैं कि यदि उनके पति उनसे तनिक भी
क्रोधगे बोलें या अपमान करें तो पति को सौ सुनायें, और
जो कहीं परस्त्री से रति मानें, तब तो फिर कुछ कहना
ही नहीं । रात-दिन घर में कलह मचायें । मैं यह नहीं
कहती कि ऐसा करना पुरुष के लिए दोष नहीं है । नहीं-
नहीं, यह पुरुष का भी बड़ा भारी दोष है कि वह निज
र्य के होते हुए भी परस्त्रीगामी बनता है, पर नहीं,
वह भोगेगा । स्त्री को तो यही उचित है और
ने है कि वह अपने पति से बुरा बर्ताव न करे ।

उसको तो क्षमा और शान्ति ही धारण करना अच्छा है। इसी में उसका लाभ होगा। अब की स्त्रियाँ तो अपने एक पति को भी प्रसन्न नहीं रख सकतीं, पर द्रौपदी अपने पाँचों भर्तारों को प्रसन्न रखती थी।

पति की प्रसन्नता व पातिव्रत-धर्म-पालन का ध्यान तो दूर रहा, अब तो बहुत सी स्त्रियाँ कुकर्म या छिनाले को भी बुरा नहीं समझतीं। वे यह नहीं विचारतीं कि गौतम मुनि की स्त्री अहल्या केवल इसी दोष के पश्चात्ताप से तब पत्थर की शिला बन गई, जब उसको यह ज्ञात हो गया था कि दूसरा पुरुष उसके पति का वेष धारण करके धोखे से उससे रति कर गया। पर अब की अधम स्त्रियाँ परपुरुष की इच्छा करती और निज पति को दुरदुराती हैं। सो अब तो पतिप्रेम का स्त्रियों में अभाव-सा दीखता है। पातिव्रतधर्म तो स्वप्न में भी नहीं। वे जानती ही नहीं कि पतिव्रता किसे कहते हैं? अतएव मैं उनके लिए यहाँ कुछ बातें बतलाती हूँ। जो स्त्री पतिव्रता होना चाहे, वह इन बातों का सदा ध्यान रक्खे और बर्ते—

(१) पति के सङ्ग एकप्राण और दो देह होकर रहे।
(२) छाया की तरह पति की अनुगामिनी रहे।
(३) पतिसेनिष्कपट,निर्लोभऔरअविचलप्रेमरक्खे।

(४) स्वप्न में भी परपुरुष का ध्यान न करे।

(५) पति की अप्रीति या अप्रसन्नता में स्वर्गवास को भी सुख न माने।

(६) पूजा, व्रत, उपासना, सबको त्याग कर मन, वचन और काया से पति की सेवा करे, और इसी को व्रत, उपासना इत्यादि समझे। यथा—

चौपाई

आन कर्म नहिं दूसर देवा। नारि धर्म केवल पतिसेवा॥

(७) सदा पति के हित के कार्य करे, और अहित को त्यागे।

(८) पति की आज्ञा का कभी उल्लंघन न करे। आज्ञाकारी दासी बनकर टहल करे। नौकर-चाकर के भरोसे न रहे।

यदि कोई स्त्री इससे यह समझे कि पातिव्रतधर्म क्या बताया, स्त्री को तो पुरुष की पूरी-पूरी दासी ही बना दिया, तो ऐसा समझना उस मूर्ख स्त्री की नासमझी है। समझ ही के फेर ने इस कुमति को प्राप्त कर रक्खा है। इन बातों से कोई दासी नहीं बनती, वरन् ये वे उपाय हैं, जिनसे पुरुष स्त्री का स्वयं दास बन जाता है; क्योंकि भक्ति से तो ईश्वर तक वश में हो जाता है। पति तो मनुष्य ही है।

जो पतिव्रता स्त्री बनना चाहे, वह सवेरे उठकर इस स्तोत्र का पाठ कर लिया करे।

श्लोक

ॐ नमः कान्ताय शास्त्रेच शिवचन्द्रस्वरूपिणे।
नमः शान्ताय दान्ताय सर्वदेवाश्रयाय च॥
नमो ब्रह्मस्वरूपाय सतीप्राणपराय च।
नमस्याय च पूज्याय हृदाधाराय ते नमः॥
पञ्चप्राणाधिदेवाय चक्षुषस्तारकाय च।
ज्ञानाधाराय पत्नीनां परमानन्दरूपिणे॥
पतिर्ब्रह्मा पतिर्विष्णुः पतिर्देवो महेश्वरः।
पतिश्च निर्गुणाधारो ब्रह्मरूप नमोऽस्तु ते॥
क्षमस्व भगवन्दोषं ज्ञाताज्ञातं कृतं च यत्।
पत्नीबन्धो दयासिंधो पत्नीदोषं क्षमस्व भोः॥

अब तुझको मैं दो-एक पतिव्रता स्त्रियों के वृत्तान्त भी और बता दूँ कि उनके कैसे अच्छे विचार थे। उन्होंने इसलोक में भी सुख भोगा, और स्वर्ग में भी आनन्द लाभ किया। अब की स्त्रियों में वैसे विचार ही नहीं। तभी तो वे ऐसी हैं। उनके विचार तो निपट बदले हुए हैं। वे पातिव्रत से धर्मरूपी रत्न के गुण पहचानती ही नहीं।

सतीजी को सब जानते हैं कि राजा दक्षप्रजापति की कन्या और महादेवजी की सहधर्मिणी थीं।

कनखल में राजा दक्ष ने जब यज्ञ किया, तब अपनी अन्य कन्याओं को उनके पतियों सहित निमन्त्रित करके बुलाया, परन्तु सतीजी को नहीं; क्योंकि वह शिवजी से शत्रुता रखता था। तब सतीजी पिता के गृह में यज्ञ होने के समाचार सुनकर महादेवजी से पूछ कर ही गईं। वहाँ जाकर पिता का प्रेम और अपने पति का मान न पाया। तब पिता के मुख से अपने पति महादेवजी की निन्दा सुनकर महाक्रुद्ध हो कहने लगीं—पिता! तुमने जो मेरे पति की निन्दा की, सो अच्छा नहीं किया। महापाप किया, और मुझे भी पातकी बनाया; क्योंकि यह मेरा शरीर आप ही के शरीर से उत्पन्न हुआ है। यह भी अपवित्र हो गया। इस कारण कि आपने अपने मुख से निन्दा की और इस शरीर ने सुनी, अब यह शरीर रखने योग्य नहीं रहा। अब इसका त्याग ही उचित है। मैं इसे त्यागे देती हूँ। बस, वहीं यज्ञशाला में योगबल से अग्नि उत्पन्न करके अपना शरीर भस्म कर दिया। उनकी यह कीर्ति आज तक बनी हुई है। पति के संग दाह होने के अर्थ में इन्हीं के कारण सती-शब्द प्रयोग किया जाता है। पर आजकल की स्त्रियाँ दूसरों से पति-निन्दा सुनकर शरीर त्यागना तो दूर, स्वयं अपने मुख से पति-निन्दा करती सिहाती हैं और

अपनी बड़ाई समझती हैं। शैव्या राजा हरिश्चन्द्र की पटरानी थी। जब विश्वामित्र ऋषि ने उक्त राजा से राज-पाट छीन लिया, तब राजा राज्य से निकल आये और शैव्या भी उनके संग चली आई। पर राजपाट ले लेने पर भी विश्वामित्र की दक्षिणा पूरी न हुई, बाकी रह गई। राजा के पास अब कुछ न था, जो दक्षिणा में दे दें। राजा ने रानी से कहा—तुम अपने पिता के यहाँ चली जाओ। हमारे संग तुमको वृथा कष्ट होता है। रानी ने उत्तर दिया—हे स्वामी! मैं तुमको छोड़कर स्वर्ग में भी सुख नहीं पा सकती। मैं दासी बनकर तुम्हारे ही संग रहूँगी। उसने अपने आभूषण-वस्त्र उतारकर केवल एक साड़ी पहन ली, और राजा के संग चल दी। जब वे काशी में आये और राजा को मुनि महाराज की दक्षिणा की चिन्ता हुई, तब रानी ने राजा को चिन्ता में निमग्न देखकर कहा—आप मुझको बाजार में बेचकर मुनि की दक्षिणा चुका दीजिए, और ऋण से उऋण होइए। रानी के ऐसे वचन सुनकर अन्त को राजा ने रानी को एक ब्राह्मण के हाथ बेच दिया, जहाँ रहकर रानी को दासीकर्म करना पड़ा। परन्तु तो भी रानी ने अपना चित्त राजा के चरणों ही में रक्खा, और इतने कष्ट सहकर भी राजा को कभी बुरी बात नहीं कही।

मुझको यह स्वर्गलाभ हुआ है ; अन्य कोई बात नहीं। पद्मिनी चित्तौर (राजपूताना) की रानी थी। इसका चरित्र भी इस देश के लोगों से छिपा नहीं। यह स्त्री पति-प्रेम और पातिव्रत में पिछले समय में बड़ी धुरन्धर (बढ़ी-चढ़ी) हुई है। इसकी कथा* यों है कि दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन ने जब भीमसिंह (चित्तौर के राजा) की महारानी पद्मिनी के रूप की प्रशंसा सुनी, तब उसका चित्त चलायमान हो गया। यहाँ तक कि उसने भीमसिंह से कहला भेजा, रानी को हमारे महलों में भेज दो। राजा ने जब विरोध किया, तब उसने कपट से राजा को कैद कर लिया। पर जब यह समाचार रानी को ज्ञात हुआ, तब उसने बादशाह से कहला भेजा, आप राजा को क्यों तंग करते हैं ? मैं आप ही आपके पास आ जाऊँगी। परन्तु मुझको एक दफ़े अपने पति से भेंट करने की और अपनी एक सहस्र सहेलियों को साथ लाने की आज्ञा हो जाय। कामासक्त बादशाह ने इस प्रार्थना को स्वीकार कर लिया, और आज्ञा दे दी। रानी ने क्या चतुराई की कि एक सहस्र वीर पुरुषों से कह दिया—आप स्त्रीवेष धारण करके और सब जरूरी अस्त्र-शस्त्र लेकर पाल-

* यह कथा टाड राजस्थान में विस्तार के साथ है। इस पर कई उपन्यास, काव्य आदि अब तक लिखे जा चुके हैं।—सं०

कियों में बैठकर मेरे साथ चलिए। यह आज्ञा दे, वह स्वयं भी अस्त्र-शस्त्र लेकर और पालकियाँ उठवाकर चल दी। जब पालकियाँ बादशाह के डेरे के पास पहुँचीं, तब वह पहले बंदीगृह में जाकर निज पति से मिली। राजा ने रानी को वीर-वेष धारण किये हुए देखकर बड़ा आश्चर्य किया, और प्रेमवश हृदय से लगाना चाहा। तब रानी बोली—प्राणनाथ, यह इसका समय नहीं है। मैंने तुम्हारे छुड़ाने के लिए यह सब प्रपञ्च रचा है। एक सहस्र वीर पुरुषों को अपने संग स्त्री-वेष में लाई हूँ। मेरे और आपके लिए यहाँ से थोड़ी दूर पर दो घोड़े खड़े हैं। शीघ्रता से चल दीजिए। यह कहकर राजा के हाथ में तलवार दे दी, और वहाँ से निकाल लाई। पहरुए आज्ञावश सब अचेत हो रहे थे। कुछ रोकटोक न हुई। सवार होकर अपने गढ़ में दोनों आ गये।

जब रानी को बादशाह के पास पहुँचने में देर हुई, तब बादशाह व्याकुल होकर बंदीगृह की ओर गया। राजा-रानी, दोनों को वहाँ न पाकर क्रोधाग्नि में भभक उठा। सेना को आज्ञा दी कि जितनी सहेली रानी के संग आई हैं, सबका धर्म नष्ट कर डालो और आज ही युद्ध के लिए चढ़ चलो। पहले डोलियों के वीर ही खूब लड़े; उसके बाद शाही सेना उसी दिन चित्तौर पर चढ़

राजा हरिश्चन्द्र की कथा घर-घर में प्रसिद्ध है, सब जानते हैं। कहाँ उस रानी शैब्या का स्वभाव कि पिता के घर न जाकर ऐसे आपत्तिकाल में भी राजा ही के संग रहने में सुख माना, और अपने गहने-पत्ते छोड़कर राजा के संग चल दी—इतना ही नहीं, आप करवर पति की चिन्ता मिटाने को हाट में बिकी और पति के उऋण होने ही को मुख्य समझा, और कहाँ आजकल की स्त्रियाँ कि पति चाहे मरे, क़ैद हो, कारागार भुगते, घर बारह-बाट हो जाय, पर अपने भूषण कभी मन से न देना। वरन् उलटी घर में कलह मचा देना।

शाण्डिली की कथा महाभारत में यों लिखी है कि जब वह मरकर स्वर्ग में पहुँची, तब सुमना देवी ने शाण्डिली से पूछा, तुमने पृथ्वी में रहकर ऐसा क्या पुण्य किया था, जिसके प्रभाव से तुम्हें स्वर्ग में भी ऐसा ऊँचा पद मिला? शाण्डिली ने उत्तर दिया, हे देवि! मैंने सिर मुँड़ाकर, जटा रखाकर, या भगवे रंग का कपड़ा और वल्कल के वस्त्र पहनकर स्वर्गलाभ नहीं किया। मैंने कभी अपने पति को अहितकर व कठोर वचन नहीं कहे, सदा सावधान और पतिव्रता होकर देवता और पितृ लोगों की पूजा और सास-ससुर की सेवा करती रही। मेरे मन में कभी कुटिल भाव नहीं उत्पन्न हुआ। मैं

कभी घर के बाहरी द्वार पर खड़ी होकर किसी पुरुष से बातचीत नहीं करती थी, अर्थात् निर्लज्ज स्त्री की भाँति मैंने कभी काम नहीं किया। मैंने क्या प्रकट और क्या गुप्त, कोई कभी हँसी के योग्य काम या कुकर्म नहीं किया। मेरे पति जब बाहर से घर में आते, तब मैं मन एकाग्र कर उनको आसन देती थी, यथानियम विधि-पूर्वक उनकी सेवा करती थी। जो खाने के पदार्थ मेरे स्वामी को नहीं रुचते थे, उनको मैं भी कभी नहीं ग्रहण करती थी। पुत्र, कन्या आदि परिवार के लोगों के जो-जो काम जरूरी होते थे, मैं नितप्रति बड़े भोर ही उठकर आप वे सब काम करती और करवा लेती थी। मेरे स्वामी यदि किसी काम के लिए परदेश-गमन करते, तो मैं बाल नहीं बाँधती थी, न सुगन्धि लगाती थी। यहाँ तक कि नेत्रों में अंजन-रंजन भी नहीं करती थी। भोग-विलास की इच्छा को त्याग, सर्वथा चित्त को संयम में रख, पति के मङ्गलकार्य किया करती थी। जब मेरे पति सोते थे, तब आवश्यक कामों को भी छोड़कर मैं पति के पास ही सेवा में रहा करती थी। परिवार के प्रतिपालन के लिए भी पति को कष्ट नहीं देती थी। पति के किसी गुप्त विषय को कभी प्रकट नहीं करती थी। घर को स्वच्छ रखती थी। इसी पति-सेवा के बदले में

मुझको यह स्वर्गलाभ हुआ है ; अन्य कोई बात नहीं।
पद्मिनी चित्तौर (राजपूताना) की रानी थी। इसका
चरित्र भी इस देश के लोगों से छिपा नहीं। यह स्त्री
पति-प्रेम और पातिव्रत में पिछले समय में बड़ी धुरन्धर
(बढ़ी-चढ़ी) हुई है। इसकी कथा* यों है कि दिल्ली के
बादशाह अलाउद्दीन ने जब भीमसिंह (चित्तौर के राजा)
की महारानी पद्मिनी के रूप की प्रशंसा सुनी, तब उसका
चित्त चलायमान हो गया। यहाँ तक कि उसने भीमसिंह
से कहला भेजा, रानी को हमारे महलों में भेज दो।
राजा ने जब विरोध किया, तब उसने कपट से राजा को
कैद कर लिया। पर जब यह समाचार रानी को ज्ञात
हुआ, तब उसने बादशाह से कहला भेजा, आप राजा को
क्यों तंग करते हैं ? मैं आप ही आपके पास आ जाऊँगी।
परन्तु मुझको एक दफ़े अपने पति से भेंट करने की और
अपनी एक सहस्र सहेलियों को साथ लाने की आज्ञा हो
जाय। कामासक्त बादशाह ने इस प्रार्थना को स्वीकार
कर लिया, और आज्ञा दे दी। रानी ने क्या चतुराई की
कि एक सहस्र वीर पुरुषों से कह दिया—आप स्त्री
धारण करके और सब जरूरी अस्त्र-शस्त्र लेकर पाल-

* यह कथा टाड राजस्थान में विस्तार के साथ है। इस पर कई
नाटक, उपन्यास, काव्य आदि अब तक लिखे जा चुके हैं।—सं०

कियों में बैठकर मेरे साथ चलिए। यह आज्ञा दे, वह स्वयं भी अस्त्र-शस्त्र लेकर और पालकियाँ उठवाकर चल दी। जब पालकियाँ बादशाह के डेरे के पास पहुँचीं, तब वह पहले बंदीगृह में जाकर निज पति से मिली। राजा ने रानी को वीर-वेष धारण किये हुए देखकर बड़ा आश्चर्य किया, और प्रेमवश हृदय से लगाना चाहा। तब रानी बोली—प्राणनाथ, यह इसका समय नहीं है। मैंने तुम्हारे छुड़ाने के लिए यह सब प्रपञ्च रचा है। एक सहस्र वीर पुरुषों को अपने संग स्त्री-वेष में लाई हूँ। मेरे और आपके लिए यहाँ से थोड़ी दूर पर दो घोड़े खड़े हैं। शीघ्रता से चल दीजिए। यह कहकर राजा के हाथ में तलवार दे दी, और वहाँ से निकाल लाई। पहरुए आज्ञावश सब अचेत हो रहे थे। कुछ रोकटोक न हुई। सवार होकर अपने गढ़ में दोनों आ गये।

जब रानी को बादशाह के पास पहुँचने में देर हुई, तब बादशाह व्याकुल होकर बंदीगृह की ओर गया। राजा-रानी, दोनों को वहाँ न पाकर क्रोधाग्नि में भभक उठा। सेना को आज्ञा दी कि जितनी सहेला रानी के संग आई हैं, सबका धर्म नष्ट कर डालो और आज ही युद्ध के लिए चढ़ चलो। पहले डोलियों के वीर ही खूब लड़े; उसके बाद शाही सेना उसी दिन चित्तौर पर चढ़

गई और घोर युद्ध हुआ। राजा के दस पुत्र संग्राम में खेत रहे। तब राजा स्वयं लड़ाई में गया, और मारा गया। तब रानी ने अपनी सखियों से कहा—हमारे पति और पुत्र सब संग्राम में कट-कटकर स्वर्गवासी हुए। अब हम भी चिता में भस्म होकर उनसे चलकर मिलें। नहीं तो यह पापिष्ठ यवन हमारा धर्म नष्ट करेगा। स्त्रियों का परम भूषण और धन केवल सतीत्व ही है, सो अब उसकी रक्षा के लिए अग्निप्रवेश के सिवा और कोई उपाय नहीं। यह कह पहले पद्मिनी आप चिता पर चढ़ी और पश्चात् समस्त राजपूतानियाँ उसी प्रकार जलकर भस्म हो गईं। जब राजा भीमसिंह को बादशाह जीत चुका, तब रानी के लोभवश उसने चित्तौर के अन्तःपुर में प्रवेश किया। परन्तु जब देखा कि एक भी रमणी वहाँ दिखाई नहीं पड़ती, सबने जल-जलकर उस रमणीक भूमि को श्मशान बना दिया है, तब वह बहुत पछताया। कहते हैं, इतनी स्त्रियाँ इस समय सती हुई थीं कि उनकी नथें जो तोली गई, तो ७४½ मन उतरीं। उन्हीं की आन अब तक चिट्ठियों पर लिखी जाती है कि जो कोई अन्य पुरुष इस चिट्ठी को खोलेगा, उसको इतनी हत्याओं का पाप लगेगा *।

* एक किंवदन्ती यह भी सुनी जाती है कि इस युद्ध में जितने वीर क्षत्रिय मरे थे, उनके जनेऊ तोल में ७४½ मन निकले थे, और ७४½ का अंक चिट्ठी पर तभी से लिखने की प्रथा चली है।—सं०

यहन, रानी पद्मिनी और उसकी राजपूतानियों को देख कि सतीत्व बनाये रखने को प्राण दे दिये, पर धर्म नष्ट न होने दिया। एक आजकल की स्त्रियाँ हैं कि कामवश निज पति को भी त्याग देती हैं, विषपान कराके उनको मार डालती हैं, पति को त्याग यार के संग भाग निकलती हैं।

जो स्त्री अपने पति को प्रसन्न रखना चाहे, वह इन षोडश कलाओं को धारण करे, जो क्षेमेन्द्र कवि ने लिखी हैं—

(१) प्रसन्नमुख रहे।

(२) मुसकाते हुए मुखारविन्द से बोले।

(३) घर आने पर पति का सत्कार करे।

(४) रसोई आप बनाकर परसे।

(५) मुखवास (पान-बीड़ी इत्यादि) अपने हाथ से दे।

(६) शृंगारमयी हाव, भाव, कटाक्ष से रहे।

(७) कविता व पुस्तकादि पढ़कर पति को सुनावे।

(८) पति की रुचि के अनुसार खेल सीखे और पति के संग खेले।

(९) मनोहर गान करे।

(१०) मधुर वाणी से बोले।

(११) पति के दोषों को मन में न धरे।

(१२) पति के क्रूर वचनों का खयाल न करे।

(१३) प्रत्येक कार्य में पति को उचित सम्मति दे।

(१४) अपने ऊपर पति के लगाये दूषणों पर क्रोध न कर विनय दर्शावे।

(१५) परपुरुष के संग हँसकर कभी बात न करे।

(१६) पति को रति और विलास में संतोष दे।

बहन ! ये तो मैंने पति के संग रहने के स्त्रियों के धर्म बताये। अब मैं उनके धर्म बताती हूँ, जिनके पति परदेश को जीविका के लिए चले जाते हैं। ऐसी स्त्रियाँ, जिनके पति उनके पास नहीं हैं, अपने मन से अपने पतियों की याद दूर न करें। अपने मन में वही प्रीति बनाये रक्खें, जो पास रहने पर थी ; क्योंकि स्त्री और पति का दूर रहना ही क्या है। उनके तो मन एक हैं। जिनका मन मिला है, वे कभी दूर नहीं हैं। जैसे—

जल में बसै कुमोदिनी, चन्दा बसै अकास।
जो जन जाके मन बसै, सो जन ताके पास॥
सूरति मेरे मित्र की, रही रहत है चित्त।
कहा भयो तन ना मिल्यो, मन मिलि आवत नित्त॥

स्त्री नित उठ अपने पति का ध्यान कर ले, और उसी

के चरणों में चित्त रक्खे। सोते समय भी उसी का ध्यान करके सोवे, अथवा उसका चित्रपट कढ़वाकर, उसका फोटो उतरवाकर, नित्य प्रभात को उठकर उसके दर्शन कर लिया करे। या केवल चेहरे भर का अत्यन्त छोटा फोटो खिंचवाकर आरसी में मढ़वा ले। जो समय पति के भोजन करने का हो उसके बाद आप भोजन करे। सोने के समय के पीछे सोवे और उठने के समय से पहले उठे।

जिस स्त्री का पति परदेश में हो, वह शृंगार करके न रहे, आभूषण आदि धारण न करे, और चटकीले-भड़कीले वस्त्र न पहने, किन्तु बहुत ही साधारण प्रकार से रहे। किसी उत्सव में, जैसे विवाहादि हैं, न जाय। न किसी से हँसी करे। पराये घर कभी न रहे। जुआ आदि खेल कभी न खेले। जहाँ पुरुषों का समूह हो, वहाँ कभी न जाय और न उधर देखे। किसी के घर न घूमे, न इधर-उधर फिरे। कभी चिल्लाकर न बोले। किसी से लड़ाई या कलह न करे। बिना वस्त्र के कभी न रहे। गाने के समाज में न बैठे, और न गाना सुने। सदा बड़ी-बूढ़ियों के पास रहे। युवा स्त्रियों में कम बैठे। एकान्त में न रहे। शृंगार की [illegible] वृथा, बल्कि कभी न देखे। मन में [illegible] बढ़-

कर यह कि अपने मन को वश में रक्खे, जितेन्द्रिय बनी रहे। स्त्री के लिए इससे बढ़कर दूसरा कोई उपाय नहीं। जो स्त्री जितेन्द्रिय नहीं, उससे अपना धर्म कभी न निबहेगा; क्योंकि स्त्रियों का स्वभाव बहुत चंचल होता है, और मन की चंचलता से ऐसी-ऐसी हानियाँ देखने और सुनने में बहुधा आई हैं, जिनका न कहना ही भला है। ये तो स्त्रियाँ हैं, बड़े-बड़े ऋषियों और मुनियों के मन में चंचलता होने से उनके तप नष्ट-भ्रष्ट हो गये हैं। इसलिए स्त्री को पहले हा से जितेन्द्रिय रहने और मन को मारने की टेंव डालनी चाहिए। जो ऐसे समय में काम आवे, और अपने धर्म पर सदा आरूढ़ रहे। जो अपने और अपने पति के कुल के धर्म हैं, उनसे कभी किसी समय बाहर न हो। वे स्त्रियाँ ही कुलवती और कुलीन घराने की कहलाती हैं, जगत् में बड़ाई पाती हैं, पिता और पति, दोनों के कुल की मणि बनती हैं और बड़ाई कराती हैं। नहीं तो कुल की कलङ्किनी बन नील का टीका अपने और कुलवालों के माथे में लगाती हैं। कुलवती स्त्रियाँ सदा लज्जावती बनकर रहती हैं। कभी कोई काम ऐसा नहीं करतीं, जिससे उनकी पति (इज्जत) जाय व उन्हें दोष लगे।

लज्जा यही नहीं है कि डेढ़ हाथ का घूँघट काढ़ लिया

और मन में कुछ लाज नहीं रक्खी। घूँघट काढ़ने से लाज नहीं होती, और न परदे ही में रहने से। लाज तो मन की है। यदि मन में लाज है, तो चाहे परदे में रहो या बाहर घूँघट निकालो अथवा खुले मुँह रहो, कुछ डर नहीं। परन्तु पहले मन की निर्लज्जता को त्यागो। यदि मन ही में लाज नहीं है, तो कहीं भी नहीं है। न परदे में और न घूँघट में। फिर वही कहावत होती है—"यह खेलें कुल की वधू टट्टी ओट शिकार।"

लाज से अभिप्राय यह है कि कोई काम ऐसा न करे, जिससे लोक-हँसाई हो और कलंक लगे। चाहे वह काम छिपकर किया जाय या प्रकट। काम ऐसा करना चाहिए जिससे कोई बुरा न कहे और दोष न लगे। लोकनिन्दा से डरना ही लज्जा है; क्योंकि राजा रामचन्द्रजी ने लोक-निन्दा ही से डरकर निर्दोष और पतिव्रता सीता महारानी को केवल इतने पर ही कि एक रजक को सीताजी की निन्दा करते सुन लिया था, राजभवन से निकाल वनवास दिया था।

जिसको लोक में बुरा काम कहें, वही निर्लज्जता का है। इसलिए जगत् में फूँक-फूँककर पाँव रखकर काम करना चाहिए, जिसमें लाज बनी रहे। लाज को बनाये रखना गृहस्थ के लिए बहुत ही आवश्यक है। जिस

गृहस्थ की लाज गई, उसका इस संसार में से सर्वस्व चला गया। जिसकी लाज रही, उसका सब कुछ रहा। चाहे धनी हो या निर्धन, गृहस्थ लज्जावान् ही सराहा जाता है।

पर गृहस्थ की लाज रखना अधिकतर स्त्री के हाथ में है। जो यही रक्खे तो रहे, नहीं तो सहज में खो दे।

लज्जा स्त्री के लिए रत्नजड़े भूषणों से भी अधिक शोभा देती है; क्योंकि निर्लज्ज स्त्री मनमाने भूषण धारण करने पर भी नहीं सोहती। वरन् उसके भूषण उतना ही अधिक उसे लजाते हैं। अतएव लज्जारूपी भूषण को स्त्री अवश्य ही ग्रहण व धारण करे। उसमें यह गुण अधिक है कि वह विना मूल्य मिल जाता है। सोने-चाँदी के भूषण विना मूल्य नहीं आते, और चोरी चले जाते हैं; परन्तु यह आभूषण चोर से सुरक्षित रहता है। साथ ही यह अकेला उन सौ भूषणों से अधिक मूल्य और गुण भी रखता है।

स्त्री अपने पति के परदेश में रहने पर अपना समय सदा गृहकार्य, शिल्प और बालकों के पोषण में व्यतीत करे। जिसके सास-ससुर हैं, उसे तो अपने पालन की कुछ चिन्ता नहीं। पर जिसके सास-ससुर नहीं हैं, वह स्त्री सदा शिल्पविद्या से अपना पालन करे। ऐसी-वैसी

स्त्रियों में कभी न बैठे। बड़ी सावधानी से रहे। जिस चाल को कोई बुरा कहे, उसे तत्काल छोड़ दे। कभी उसे न करे। जिस स्त्री का पति परदेश में हो, वह इस प्रकार रहे-सहे और बर्ते। जिसका पति मर गया हो, और वह विधवा हो गई हो, उसके लिए धर्म यह है कि प्रथम तो अपने पति के साथ ही सती हो जाय। पर आजकल इस राज्य में सती होना बन्द हो गया है। कोई स्त्री सती नहीं होने पाती। और सती कुछ पति के संग भस्म होने ही से नहीं होती। अपने मन को मारना और पति के चरणों में चित्त लगाये रखकर ईश्वर का भजन करना ही सती होना है। जिसने मन मारा, उसने सब मारा, और जिससे यह न मरा, उससे कुछ भी न मरा। इस कारण विधवा के लिए मन का मारना ही सती होना है। उसको नीचे के नियमों पर ध्यान देकर चलना चाहिए। उसके लिए इससे बहुत अच्छा होगा—

उसको सबसे प्रथम परमेश्वर की आराधना में अपना समय व्यतीत करना चाहिए। शास्त्र आदि को विचारते रहना और संसार के सुखभोग से मन हटाकर ईश्वर की ओर लगाना चाहिए। सदा साधु-स्वभाव से रहना, कभी मंगल या उत्सव में न जाना, युवती

नहीं रखता ?" इस प्रकार से कह-कहकर लुगाइयाँ चवाव करने लगती हैं।

रूप, धन, विद्या व चातुरी में आप चाहे कैसी ही चढ़ी-बढ़ी क्यों न हो, पर कभी अपने मन में भी इसका अभिमान न करे कि मैं रूपवती या धनवती हूँ, दूसरी कुरूप हैं, निर्धन हैं। ऐसी बातें करनेवाली की निन्दा ही होती है। पास की बैठनेवाली सब नाम धरती हैं। उसे घमण्डिन समझ उसके पास सखी-सहेली बहुधा कम बैठती हैं। यह भी रीति की और देखी हुई बात है। इसलिए सखी-सहेलियों में बैठकर कभी अभिमान की बातें न कहे। किन्तु अपने मन में सदा यह विचार करती रहे कि मैं क्या हूँ ? सैकड़ों नहीं, लाखों ही इस संसार में मुझसे अधिक रूपवती, धनवती और विद्यावती भरी पड़ी हैं। फिर मैं किस बात पर अभिमान करूँ ? अभिमानी को लज्जा के सिवा और कुछ नहीं मिलता। सखी-सहेलियों में एक-दो घंटे अवश्य बैठे जिससे कोई अकेले-सोहनी (एकांतप्रिय) व घमण्डिन होने का दोष न लगाने पावे, अथवा अपने मन में कोई और प्रकार का विचार न बाँधे। सबको अपनी बहन से भी अधिक मानना चाहिए। दुख, दर्द में सबकी सहायता करनी चाहिये।

देवरानी व जेठानी से कभी ईर्ष्या-द्रोह न करे। उन्हें अपनी सगी बहन के समान जाने, और उनके पुत्रों को अपने पुत्र के समान। इसी प्रकार सबको अपना प्यारा ही समझे और बर्ते, किसी को पराया न जाने-माने।

गृहस्थिन को चाहिये कि कभी बेकाम न रहे। कुछ न कुछ घर का धंधा करती ही रहे। बेकाम रहने से मनुष्य आलसी और निरुद्यमी हो जाता है। यह गृहस्थों के लिये बड़ा भारी दोष है। बेकाम रहने से मन चञ्चल रहता है, जीविका में हानि होती है, बुरे-बुरे विचार मन में आते हैं, अंग शिथिल रहता है, भोजन नहीं पचता, काम करने को फिर मन नहीं करता और न किसी बात में लगता है। इसलिये कभी किसी गृहस्थिन को बेकाम न रहना चाहिये। अपने घर के काम में चतुर और सावधान रहना चाहिये। कोई काम पड़ा न रहने देना चाहिये। आज का काम कल पर कभी न छोड़ना चाहिये। इस दोहे को सदा स्मरण रक्खे—

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब्ब।
अवसर बीतो जात है, फेर करैगो कब्ब॥

काम तो एक बेर करना ही पड़ेगा। अब किया तो तुम्हें करना पड़ेगा, पीछे किया तो तुम्हीं करोगी। पर इतना होगा कि अब न करने से, पड़ा रहने देने से

और दयावती है, वह लक्ष्मी कहलाती है। अर्थात् घर का कोष, धन, सम्पत्ति आदि सब स्त्री ही के अधीन है। जो स्त्री चतुर है, वह इन सब बातों को अच्छी भाँति कर सकती है। इसलिए गृहस्थ स्त्री को चतुर होना भी परम उपयोगी है। चतुराई से सब काम अच्छे ही अच्छे होते हैं।

गृहस्थ स्त्री को चाहिये कि जो उपकार उसने दूसरे के संग किया है, उसे भूल जाय, और जो उपकार दूसरों ने उसके सङ्ग किया है, उसे सदा याद रक्खे, जिससे दूसरे फिर भी उसकी सहायता कर सकें। जो किसी के उपकार को भूल जाता है, उसके सङ्ग फिर कभी कोई उपकार नहीं करता, उसको कृतघ्न कहते हैं। अपना उपकार भूल जाने से दूसरे लोग उसे दूना याद रखते और मानते हैं। जो कोई अपने किये उपकार को अपने मुख से कहता फिरता है, उसके उपकार का फल जाता रहता है। [जितना उसका फल था, सो उसे मिल गया—दस जने जान गये कि इसने इसके संग उपकार किया था। यदि वह अपने मुख से न कहता, तो जिसके संग उपकार किया था, वह उसको दूना मानता। अब उसने अपनी बड़ाई अपने मुख से करके उसके गुण को नष्ट कर दिया। गृहस्थिन स्त्री के लिये इससे यह भी शिक्षा निकली कि अपने किये की

यदि किसी ने मोह मुलाहिज़े से अवकाश पाकर कर दिया तो भला, नहीं तो अपना सा मुँह लेकर खिसियानी सी फिर आती हैं, और पछताने लगती हैं कि हाय! हमने क्यों न सीख लिया। जो हम ही जानतीं, तो काहे को इस भाँति हाहा और निहोरे खाती फिरतीं। जो स्त्रियाँ इस विद्या को सीख लेती हैं, उनके घर में वर्तने की सब आवश्यक वस्तुएँ मौजूद रहती हैं। वे अपना समय अच्छी तरह व्यतीत करती हैं—घर को अपने हाथ की बनाई हुई वस्तुओं से सुसज्जित रखती हैं। कहीं पंखे, डलिया, खिलौने आदि बनाती हैं; कहीं फूल, बेल बना-बनाकर टोपियों और अँगरखों में लगाती हैं। भाँति-भाँति के चित्र और 'लिखने' काढ़कर घर को शोभित रखती हैं। अपनी बुद्धि से नित्य नई वस्तुएँ बना-बनाकर तैयार करती हैं। जो स्त्रियाँ इस विद्या में चतुर होती हैं, वे सब बातों में चतुराई प्रकट करती हैं। सब बात की चतुराई उनको आ जाती है।

यह रीति की बात है कि मनुष्य जितनी बात देखता और सीखता है, उससे दूनी अपनी बुद्धि से जान जाता और बना लेता है।

जो काम अपने को आता हो, और दूसरी कोई उस

काम के कराने को आवे, तो कभी 'नाहीं' न करनी चाहिये; किन्तु बड़े चाव और प्यार से उसका काम कर देना चाहिए। और जो फुरसत न हो, तो नम्रता और स्नेह के साथ कह दे कि तनिक ठहरकर कर दूँगी। इसको यहीं छोड़ जाओ। इतनी देर पीछे किसी को भेज देना, मैं करके दे दूँगी। अथवा मत भेजना, मैं ही आप भिजवा दूँगी। और यदि यह देखे कि इसके यहाँ पर छोड़ जाने से इसको सन्देह होगा कि इसमें से कुछ ले लिया है, या कोई ऐसी ही स्त्री हो, जिसका स्वभाव ऐसा ही हो (क्योंकि बहुधा स्त्रियों का स्वभाव ऐसा देखने और सुनने में आया है), तो ऐसी की वस्तु को अपने यहाँ कभी न रक्खे, यदि वह कहे तो भी न रक्खे। उसके सामने ही उसका काम कर, दे, परन्तु नाहीं न करे, चाहे उसने भले ही कभी तुम्हारे काम करने को नाहीं कर दी हो। जो उसने कभी पहले नाहीं कर दी थी, तो अब की जब तुम्हारा काम आकर पड़ेगा, तो कभी यह नाहीं न करेगी। वरन् बहुत उपकार मानकर मन से कर देगी। जिसने अपना काम किसी समय कर दिया है, उसके उपकार को तो कभी न भूल जाना चाहिये। बल्कि इसी चिन्ता में रहे कि इसके काम करके का

मुझे कब दाँव व अवसर मिले, जो मैं इससे उऋण होऊँ। जिसने तुम्हारा कभी तनिक सा भी काम कर दिया है, उसका काम तुम उससे दुगुना-तिगुना कर दो। और जिसने कभी करने से नाहीं कर दी थी, उसकी निन्दा व पीठ-पीछे बुराई कभी मत करो। ऐसा करना बहुत ही बुरी बात है। ऐसे का काम कोई भी नहीं करता। वह घर-घर मारा-मारा फिरा करता है; क्योंकि जो कोई किसी का चवाव करता है, उसको कोई अच्छा नहीं कहता। कभी किसी को छुट्टी है, कभी नहीं है। पर दूसरे पर अपने काम न करने का दोष कभी न धरना चाहिये। आप सदा दूसरे का काम कर दे, तो सब कोई उसका भी कर देगा। यह दोहा किसी ने ठीक कहा है—

आप भला तो जग भला, नाहीं भला न कोय।
जो तोसों जैसी करै, सो तिहि तैसी होय॥

सुनी हुई बात का विश्वास कभी न करे; और एक आध बेर की बात को तो मन में भी न धरे। जब तक अपनी आँख से न देख लें; तब तक कभी सच न माने क्योंकि देखी और सुनी बात में (अर्थात् आँखों और कानों में) चार अंगुल का अन्तर है। बहुत सी स्त्रियाँ ऐसी दूती होती हैं कि इधर की झूठी-सच्ची बात उधर जा कही और उधर की इधर आ कही। न उन्हें कुछ

लाभ न प्रयोजन। पर उनका स्वभाव ही ऐसा होता है कि उन्होंने इसी में कुछ लाभ और चैन समझा है। वैसे तो निन्दा और बुराई के सिवा कोई उन्हें अच्छा नहीं कहता ; परन्तु उन्हें कुछ मजा ऐसा पड़ जाता है कि जब तक दो-चार की बुराई-भलाई, लगा-लूतरी व खोटी-खरी न कह लें, तब तक उनका भोजन नहीं पचता। पेट ही में उसकी बाई भरी रहती है। इसलिये ऐसी स्त्रियों से सदा बचे रहना चाहिये, और कभी उनकी बात पर ध्यान न देना चाहिये। जो ऐसी स्त्रियाँ अपने घर भी आवें, तो यह तो उचित नहीं कि उन्हें घर से निकाल दे ; क्योंकि यह तो निन्दा की बात है। उसका सहज उपाय यही है कि ऐसी स्त्रियों से मन देकर न बोले, न उनकी बात को कान लगाकर सुने। वरन् यों कहकर टाल दे कि कोई कैसा ही हो, तुम तो अपनी और अच्छी-अच्छी बातें करो, जिसमें प्यार-प्रीति निकले। इन थोथी कहानियों में क्या धरा है ? जो करेगा, सो आप भोगेगा। तुम अपने मुख से कहकर काहे को बुरी बनती हो ? इस प्रकार कहने में बुरा नहीं लगता और अपना काम हो जाता है।

किसी-किसी स्त्री को मैंने देवताओं के दर्शन और भीड़ में भी जाने का बड़ा चाव देखा है। जिन स्त्रियों का

मन ऐसा होता है, वे अच्छी नहीं। जहाँ दूसरे पुरुष की परछाहीं पड़े, वहाँ तो स्त्री को खड़ी भी न होनी चाहिये। फिर पुरुषों की भीड़ों में तो जाना कितनी बुरी बात है। मेलों और मन्दिरों में बहुधा कैसे दुष्ट और लुच्चे लोग जाते हैं, सो तूने देखे ही थे। मैंने तुझे उस दिन अपने संग ले जाकर दिखाया था कि उस स्त्री को उस दुष्ट ने कैसा-कैसा निर्लज्ज किया था। लोग कैसे बुरे-बुरे शब्द मुँह से निकालकर उसको सुनाते थे और आँख, मुख और हाथ से कैसे-कैसे इशारे करते थे कि हम तुम सब लज्जित होकर वहाँ से हट गईं और घर को चली आईं। सो उस दिन तो बहन, कुछ भी नहीं था। ये लुच्चे मनुष्य स्त्रियों की ऐसी-ऐसी दुर्दशा करते हैं कि भले घर की बहू-बेटियाँ तो एक बेर जाकर फिर दूसरी जाने को मन नहीं चलातीं।

मेलों में गृहस्थिन स्त्री को कभी न जाना चाहिये। अब वह समय नहीं कि स्त्रियाँ मेलों और मन्दिरों में जायँ। पहले किसी समय में ऐसा था कि सब स्त्रियाँ, यहाँ तक कि रानी और महारानी भी, अपने-अपने पति के साथ मेलों और उत्सवों में जाती थीं। पर अब वह समय नहीं है। अब न वैसी स्त्रियाँ ही हैं; और न वैसे पुरुष ही। इसलिये आजकल कुलवती स्त्रियों को मेले

और भीड़ में कभी न जाना चाहिये। भीड़ ही में क्या, जहाँ दो-चार पुरुषों का समूह खड़ा देख पड़े, वहाँ होकर निकले भी नहीं। दूसरे पुरुष की परछाईं तक को भी न पतियाय। विशेषकर उस पुरुष को, जो अपने घर का या नातेदार नहीं है और जिसे तुम भला मनुष्य नहीं जानती हो। यदि जाय तो अपने पति के संग जाय। यदि स्त्री को अपने पति के संग जाकर परदेश में रहना पड़े (क्योंकि आजकल बहुधा नौकरीवालों को ऐसा करना पड़ता है कि अपनी स्त्री को, जहाँ नौकरी होती है, संग ले जाते हैं) तो व्यय आदि अधिक होता है, पर तो भी सुख नहीं मिलता। सब बातों की बेचैनी रहती है। इसलिए तुझे अब यह भी बताये देती हूँ कि जो ऐसा अवसर आ पड़े, तो क्या करना होता है।

बहुधा देखने और सुनने में आया कि पुरुष केवल अपनी स्त्री ही को ले जाते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि घर में से कोई बड़ी-बूढ़ी स्त्री संग चली जाती है, और दो-चार महीने या एक आध वर्ष रहकर आप तो चली आती है, और बहू को पति ही के पास छोड़ आती है। यह तो सबसे अच्छी बात है कि घर की कोई बड़ी-बूढ़ी स्त्री परदेश में अपने संग रहे; क्योंकि

वहाँ सब परदेशी ही परदेशी होते हैं। पति के सिवा अपना आदमी कोई नहीं होता, जिसे पतियाय और न वहाँ की रीति, चाल, व्यवहार जाना, न वहाँ के लोगों का स्वभाव-बर्ताव व चाल-ढाल मालूम, न यह ज्ञात कि कौन कैसा है, कौन कैसा, किसके पास उठना-बैठना ठीक होगा, और किसके पास नहीं। जो बड़ी-बूढ़ी अपने संग होती हैं, तो किसी बात की चिन्ता नहीं रहती। वह देखेभाले होती हैं। उड़ते पखेरू को पहचानती हैं। बहू लड़क-बुद्धि होती है। अभी संसार को कुछ देखा न भाला। सहज में बहकाने और फुसलाने में आ जायँ। पर वहाँ कठिन बात होती है, जहाँ ऐसा होता है कि घर की तो अपने संग कोई न हो, केवल आप और अपना पति ही हो, तो वहाँ पर बड़ी चतुराई और सावधानी से काम करना होता है, जिससे धोखा न खा बैठे। ऐसी दशा में यह उपदेश स्मरण रखवे कि जल्दी किसी से प्रीति न जोड़ ले, न किसी के विरुद्ध रहे। वरन् ऊपर ही से प्रीति माने और घर का भेद किसी से न कहे। कभी किसी को किसी बात का कच्चा हाल न बतावे। सुन सबकी ले; पर किसी की किसी से न कहे। अपने मन ही में विचार सबकी बात का निर्णय और निश्चय कर ले, और इसी प्रकार स्त्री-पुरुष जिससे अपना काम पड़े, परिचय कर

अपने मन में सोच ले कि यह स्त्री ऐसी है और यह ऐसी जिसको अच्छी, सच्ची और सुचाली देखे, उससे अपना मेल बढ़ावे । जिसको बुरी और अयोग्य समझे, उसका धीरे-धीरे अपने यहाँ से आना-जाना बन्द करने का ढंग निकाले। पर इस प्रकार नहीं, जिसमें लड़ाई या विरोध पैदा हो। जिसको भला जान लिया है, उससे दूसरियों का समाचार पूछकर, जो अच्छे गृहस्थियों के घर हों उनके यहाँ का आने-जाने का व्यवहार डाले। अपनी प्यार-प्रीति और चाल-चलन से उनके मन में स्थान करके उनकी सहायता प्राप्त करे। उनको अपने जातिवालों व कुटुम्बियों की भाँति समझे; क्योंकि परदेश में वे ही अपने जातिवाले हैं, जिनसे प्रीति है और अपने दुख-सुख में हाथ बटाते हैं। इसी प्रकार उनके साथ अपना निर्वाह करे।

स्त्री को जब कहीं जाना पड़े, तब कपड़े इस प्रकार ओढ़ने-पहनने चाहिए कि कोई अंग व देह दिखती न रहे । माथे से पाँव तक सब ढक जाय। कोई निर्लज्ज व फूहर न बतावे। राह-बाट में कोई देखकर कुछ टो[illegible] नहीं । धीरे-धीरे अपनी सीधी चाल से, राह में चल[illegible] चाहिए । यह नहीं कि कन्धे मटकाकर व अकड़कर [illegible] हिलाते हुए और पाँव उचकाते हुए ऊँटनी [illegible] भाँति लम्बे-लम्बे डग धरती, इधर-उधर हंस की

गर्दन फेरती और निर्लज्जों की भाँति देखती हुई जाय, जैसा बहुधा बहुत सी स्त्रियाँ करती हैं।

राह में इठलाते, हँसते व चिल्ला-चिल्लाकर बातें करते हुए और मुख खोले हुए भी न चलना चाहिये। न जाने, कौन अपना पहचाननेवाला मिल जाय, तो फिर लज्जित होना पड़े; अथवा न जाने अपने मुख से बोलते में कोई बात कैसी निकल जाय, जिससे लोग हँसें, और बोली-ठोली मारें।

जब कभी बाहर जाना हो, तो सदा दूसरी स्त्री को, जो बड़ी-बूढ़ी हो, अपने संग ले जाना चाहिये। अकेले न निकलना चाहिये।

बहन! ये बातें तो मैंने तुझे वे सुनाइ, जो स्त्री को अपने लिये करनी उचित हैं। अब यह कहती हूँ कि उसे पास-पड़ोसियों के संग रहकर कैसे वर्तना चाहिये। सबसे पहले तो इस कहावत को याद रक्खे कि "आप भला तो जग भला।" बुरा वही है, जो दूसरे को बुरा समझे; क्योंकि बुरा वही, जिसमें बुराई रहे। इस कारण दूसरी को, चाहे वह कैसी ही बुरी क्यों न हो, अपने मुख से कभी बुरी न कहे। किन्तु भलाई ही करती रहे। जो बुरी होगी, उसको हर कोई बुरी ही कहेगा। हमारे अकेले के कहने या न कहने से कोई न बुरी हो जायगी, न भली। परन्तु अपने मुख से बुरा वचन न निकालना

दूसरी ही कोई उसे ले गई हो। कहावत है—"नामी चोर मारा जाय और नामी साह कमाय खाय।" कभी दूसरे की वस्तु पर लालच नहीं करना चाहिये। वह लालच ही फिर उसे दुःख देता और उसके नाश का कारण होता है, जिसके पीछे हाथ मलने और सिर धुनने ही बनता है। जैसे शहद की मक्खी। तू देखती ही है, वह अपने पड़ोसी फूल का रस चुराकर ले गई और वृक्ष पर ले जाकर अपने छत्ते में जा धरा। जब शहद बन गया, तो लालच के मारे उसी के उसमें हाथ-पाँव फँस गये। तब पीछे पछताकर हाथ मल-मलकर सिर धुनने और यह दोहा पढ़ने लगी—

शहद पंख लिपटाय के, माखी यों पछताय।
हाथ मले और सिर धुने, लालच बुरी बलाय॥

अन्त को उसी शहद में लिपटी-लिपटी मर गई, और चींटियों ने उसे नोच-नोच खाया। न वह फूलों का शहद चुराती, न उसमें लिपटकर चींटियों का आहार होती। इसलिये अपने पड़ोसी के संग अन्याय व उसकी चोरी करने से डरना चाहिये। जो अन्याय करती है, वह सदा दुःख ही पाती और अन्यायिन कहलाती है। फिर सब उसके साथ भी अन्याय ही करना चाहती हैं। अन्यायिन की कोई सहायता नहीं करती। यहाँ तक कि ऐसी को कोई

अपने पास तक नहीं बिठाता। अन्यायिन को पंच और राजा दोनों से दण्ड मिलता है, और वह अपने अन्याय का फल पाती है। जैसा अपने को गिने, वैसा ही अपने पड़ोसी को भी सब बातों में गिने। जैसे अपने को दुःख और सुख होता है, वैसे ही अपने पड़ोसियों को होता है। जिन बातों को तुम चाहती हो कि तुम्हारी पड़ोसिन तुम्हारे संग न करे, तुम्हें भी चाहिये कि तुम भी वैसी बातें उसके संग कभी न करो। पड़ोसी कुएँ की परछाहीं है। जैसा बोलोगी व बर्तोगी, वैसा ही जवाब मिलेगा।

कभी किसी ऐसी स्त्री से हेलमेल न करो, जो अपने से नीची या अपने से ऊँची हो। जो तुम्हारी पटतर व बराबर हो, उसी से हेलमेल करना अच्छा है, और सोहता भी है। ओछे की प्रीति में दुःख के सिवा सुख कभी नहीं मिलता। पहले तो ओछे जन अपने से बड़े के पास बैठने ही से इतरा जाते हैं, और फिर तनिक ही में प्रीति का संबंध तोड़ डालते हैं। उन्हें न प्रीति तोड़ते लज्जा आती है और न जोड़ते हर्ष होता है। किसी प्रकार ओछों की प्रीति में भलाई नहीं मिलती। पीछे दुःख के सिवा, सुख कभी नहीं मिलता। तिनके की भाँति प्रीति को तोड़ डालना ओछों ही का काम होता है। इसलिये उनसे कभी प्रीति न करे।

कदाचित भी तो तूने सुनी होगी कि "ओछे की प्रीति बारू की भीति।" ओछे से अच्छे जन कभी न प्रीति जोड़ते हैं और न बिगाड़ते। दोनों भाँति से हानि होती है। इस समय एक कवि का वचन याद आ गया। व मैं तुझे सुनाती हूँ—

गिरि ते गिरिये जाय, मानसरोवर डूबिये।
मरि जैये विष खाय, मूरख मित्र न कीजिये॥

और एक सवैया भी तुझे सुनाये देती हूँ; जो अकबर बादशाह से कवि गंग ने कहा था—

सवैया

जिहि के ढिग गंग तरंग बहै तिहि कूप तड़ाग पिया न पिया।
जिहिकेउरमें हरिनामबसै तिहि और को नाम लिया न लिया॥
जिहिभाग्यसोंआनसुपात्रमिलेसोकुपात्रकोदानदियानदिया।
कवि गंग कहै सुनु शाह अकब्बर मूरख मित्र किया न किया॥

ओछे मूर्ख और नादान सब एक ही हैं। कभी वही मूर्खा कहलाती हैं, और कभी ओछी। जिसमें इनमें से एक भी बात है, उसमें ये सब अवगुण हैं। अपने से ऊँचे या बड़े से भी कभी मित्रता न करे; क्योंकि ऊँचे से जोड़ने में दबना पड़ता है, बराबर का बर्ताव नहीं रहता और जो बराबरी करनी पड़ती है, उसमें व्यय अधिक होता है, जो कि अपनी आय से अधिक हो जाता है। आप से

अधिक व्यय कर न बढ़कर चलने में भी गृहस्थ की हानि ही होती है। किसी-किसी स्थान पर तो अन्त आ जाता है, और निर्धन होना पड़ता है। इसलिये सम्बन्ध भी अपने से ऊँचे से न करना चाहिये। जो ऊँचे घर की बहू आती है, तो मा-बाप के बल से सुसरालवालों से दबती नहीं; किन्तु दबा लेती है। और जो अपनी बेटी ऊँचे घर जाती है, तो भूखे व नीचे घराने की कहलाकर दुःख पाती है, सबके ताने-तिश्ने सहती है। मा-बाप बेटी को देते-देते घबरा जाते हैं। कहाँ से लावें। जीविका थोड़ी, देना बहुत पड़ता है; क्योंकि सगाई की है, ऊँचे घर से। इसीलिये रीति-व्यवहार भी, कुछ अपनी लाज को, कुछ सम्बन्धी की लाज को, वैसे ही करने पड़ते हैं। वे यह नहीं जानते कि गृहस्थ अपने घर में कैसे काम चलाता है। पर लोकलाज के लिये करना ही पड़ता है। फिर वे इसी करनी के हो भी लेते हैं। इसलिये कभी अपने से ऊँचे या नीचे से नाता न जोड़े। जो बराबर का हो, उसी से व्यवहार रखना और नाता करना अच्छा है।

'जिसका स्वभाव और काम अपने से मिलता हो, उसी से मेल रक्खे, जिसका न मिलता हो, उससे मेल न करे; क्योंकि भलों की रीति है कि जोड़ कर पीछे

तोड़ने नहीं। जब एक का स्वभाव दूसरे से नहीं मिलता, उनके काम एक दूसरे के विरुद्ध होते हैं, तो उनसे निभती नहीं, पीछे टूट ही जाती है। जोड़कर तोड़ने से न जोड़ना ही भला होता है। इसलिये ऐसे मनुष्यों से नाता जोड़ने में लाभ नहीं, जिनका स्वभाव और काम अपने से मेल नहीं खाता।

हे बहन! सदा सज्जन स्त्रियों के पास बैठना चाहिये। जो कलह रखती हैं, क्रोध करती हैं, जिनको चुगली खाने की टेव है, जो चाल-चलन की खोटी हैं, कड़वा और चिल्लाकर बोलती हैं, घर में से वस्तु चुरा-चुराकर दूसरियों को दे देती हैं, ऐसी स्त्रियों के पास कभी न बैठना चाहिये। संगति का बड़ा भारी फल होता है। जैसी संगति बैठोगी, वैसी ही बुद्धि आवेगी, वैसी ही टेव पड़ेगी। कोई मा के पेट से गुण या अवगुण लेकर नहीं आती। पासवालियों को देख-देखकर ही सीख जाती हैं। थोड़े दिनों में उनकी सी चालढाल आये बिन नहीं रहती। यह दोहा किसी ने ठीक ही कहा है—

दोष संग ते नसत है, संग पाय बनि जाय।
काँजी ते पय फटत है, दधि डारे जमि जाय॥
पसु-पच्छी जड़ जंतु जे, नेह संगति पाय।
होत चतुर तजि देत हैं, अपने असुचि सुभाय॥

इसलिये जो सदा अपने से भली, बुद्धिमती और चतुर हो, उसकी संगति में बैठे। बड़ों और अच्छों की धूल होकर भी रहना भला है। मूर्ख, नीच और बुरों की प्रभुताई भी हानि करती है। जैसे फूल की संगति पाकर कीड़ा देवता के सीस पर चढ़ जाता है, पर वही लकड़ी के संग में रहने से चूल्हे व भट्ठी में जलता है। जल, अग्नि की संगति से भाफ होकर बादल बन आकाश में चढ़ जाता है, और वही मिट्टी के साथ रहने से कीच में पड़ दुर्गंध देने लगता है और पैरों से रौंदा जाता है। स्त्री को बुद्धिमती और साधु स्त्री की संगति में रहना चाहिये, जिससे अच्छी-अच्छी बातें सीखकर वह लोक और परलोक दोनों को सुधारे।

जो कोई तुम्हारा हित विचार उपदेश करे, चाहे वह कैसी ही हो, उसका उपकार मानो, उसके उपदेश को सुनो और ग्रहण करो। फिर अपने मन में विचार कर, जैसा हो वैसा काम करो। उपदेश करनेवाले के मुँह पर उसकी बड़ाई करो। कहो, आपने हमारे ऊपर बड़ी दया और कृपा की कि ऐसी भली बात बताई। हम आपका कहाँ तक उपकार मानें! आप तो हमारी हितू और प्यारी हो। आपके सिवा ऐसी बात कौन बताती? जो अपनी होती हैं, वे ही ऐसा करती हैं। दूसरे काहे को

करती है ! अपनी-अपनी सबको पड़ती है ; पर भली स्त्रियाँ दूसरों का भी ध्यान रखती हैं ।

जो कोई तुमको बुरा भी उपदेश दे, उसका भी उपकार मानो, चाहे उपदेश को मन में मत धरो, और त्याग दो ; परन्तु उसके उपदेश की बुराई या निन्दा कभी मत करो । दूसरी बुरा उपदेश करे, तो भले ही करे ; पर तुम कभी किसी को बुरा उपदेश मत दो । बुरा उपदेश देने से तो न देना ही अच्छा । उपदेश भी विचार कर देना चाहिये । बहुत सी स्त्रियाँ भला बताते भी बुरा मानती हैं । ऐसियों के संग भलाई करने में उलटी बुराई पल्ले बँधती है, और फिर यह दोष आता है—

हितहू की कहिये नहीं, जो नर होय अबोध ।
ज्यों नकटे को आरसी, होय दिखाये क्रोध ॥

जो कोई अपने से किसी तरह खफा हो जाय तो कभी उसके सामने उत्तर मत दो । जब तक उसका क्रोध रहे, मधुर वचन ही मुख से निकालती रहो । उसकी बात और शब्दों पर कुछ भी ध्यान मत दो कि वह क्या कह रही है; क्योंकि वह तो इस समय अन्धी है । तुम उसके संग क्यों वैसी ही बनती हो ? और जो कोई अधिक क्रोध करे तो उस समय मधुर वचन भी निकालना उचित नहीं । उस समय चुप ही साधना भला है । क्योंकि एक चुप हजार

नातेदार से बिगाड़े पीछे बनना नहीं हो सकता। नातेदारों से बिगाड़कर, अपनी माँ के लिये, ब्याह-काज के अवसर पर फिर हाथ-पाँव जोड़कर उनसे जोड़नी ही पड़ती है। यदि नहीं जोड़ने, तो दस जनी हँसी और बुराई करती हैं, और काम भी नहीं सरता। इससे यही उत्तम है कि पहले बिगाड़े ही नहीं, जिससे पीछे इतनी खुशामद न करनी पड़े, लोक-हँसाई न हो और आपस में मन न फटे। नातेदार और जाति-बिरादरी से सदा हेल-मेल ही बनाये रखने में कोई बुराई खड़ी नहीं होती, बल्कि बुराई दबती रहती है। कोई वैरी खड़ा नहीं होने पाता।

गृहस्थ को वैरी तो स्वप्न में भी न रखना चाहिये। गृहस्थधर्म बहुत ही कठिन है। न जाने कौन वैरी किस समय क्या उपद्रव उठा खड़ा कर दे, जिससे गृहस्थ को दुःख हो जाय।

गृहस्थ को अपनी बिरादरी में सदा आना-जाना रखना चाहिये; क्योंकि जो तुम किसी के न जाओगे, तो तुम्हारे कौन आवेगा? जाति में सभी बराबर हैं। थोड़ी सी ही बात में चबाव होने लगता है। बिरादरी का यदि तनिक सा भी बुलावा आवे, तो सौ काम छोड़कर सबसे पहले जाना चाहिए। जो स्त्रियाँ ऐसा करती हैं उनके यहाँ जब कोई कार्य विवाह-उत्सव आदि

होता है, तब सब हँसी-खुशी चली आती हैं। पर जो दूसरों के कभी नहीं जातीं, उनके नौं-नौं बुलावे भेजने पर भी कोई उनके नहीं आतीं। यह तो रीति की बात है कि "तू मेरे तो मैं तेरे" नहीं तो कोई किसी का बिरादरी में दबैल थोड़े है। बिरादरी में तो जो तनिक सा भी कोई काम घमण्ड या अकड़ का करती है; तो बिरादरीवाली उस थोड़े से का दसगुना करती हैं। बिरादरी में सब काम बहुत समझ-बूझकर करने चाहिये।

बुद्धिमती स्त्री तो सब प्रकार से चतुर होती हैं। वे जैसा अवसर देखती हैं, और जैसा समय समझती हैं, वैसा ही बर्तने लगती हैं। कहाँ तक कहूँ। यह थोड़ा सा कह दिया है। अब अन्त में तुझको गृहस्थी के लिये कुछ गृहस्थी के गुर बतलाती हूँ। इनके अनुसार बर्तने से गृहस्थी की मान-प्रतिष्ठा बनी रहती है, और उसमें अन्तर नहीं पड़ता।

(१) माता को पृथ्वी से भी बड़ी और पिता को आकाश से भी ऊँचा समझे; क्योंकि माता पालती और पिता रक्षा करता है।

(२) सब बड़े-छोटों का यथायोग्य मान-सम्मान करना उचित है।

(३) एकान्त में कभी किसी दूसरे पुरुष के पास ...ठे, चाहे वह बाप, भाई कोई हो।

(४) भोजन का प्रबन्ध, रसोइया होने पर भी स्त्री ... आप ही करना उचित है।

(५) छोटों को शिक्षा देनी और बड़ों से लेनी चाहिये।

(६) ऐसा न बोले कि शब्द बाहर तक सुनाई दे। ... पर खड़ी न हो। कोठे पर न चढ़े, और न खिड़की ... झरोखों में से बाहर झाँके कि बाहरवाले देख लें।

(७) अनजानी स्त्री को, या जिसके आने को पति ... घरवालों ने बरज दिया हो, न आने दे।

(८) बजने गहने पहनकर बाहर न जाना चाहिये; ... कि इससे जो मनुष्य उसकी ओर न भी देखते हों, ...ी देखने लग जाते हैं।

(९) बहुत न घूमे। न निरर्थक किसी के घर ...जाय। इससे आदर की हानि होती है।

(१०) दूसरे के घर बिना बुलाये न जाना। यदि अधिक ...मिलाप हो, तो कभी-कभी जाने में कुछ डर नहीं। ... अपने घर का पहले पूरा प्रबन्ध करके जाना चाहिये।

(११) पाहुने को सबसे पहले भोजन की चिन्ता ... चाहिये। उसका यथा-योग्य आदर-सत्कार ... चाहिये।

(१२) जो शिक्षा की बात कहे, उसकी बात माननी चाहिये।

(१३) कपड़ा ऐसा ओढ़े-पहने कि न शरीर दीखे और न लाज लगे; किन्तु शरीर की रक्षा भी होती रहे।

(१४) जिस वस्त्र से न अंग की रक्षा हुई, और न लाज ढकी, उसका पहनना न पहनना समान है।

(१५) बहू-बेटियों को सदा पुरुषों की दृष्टि से अलग सोना चाहिये। इसलिये कि इस अवस्था में सोकर सुध नहीं रहती। कोई अंग खुला हुआ पुरुषों की नजर में न पड़ जाय।

(१६) यदि पुरुष कुछ वस्तु घर में से बाहर मँगावे, तो तुरन्त दे देनी चाहिये। यदि न हो तो इस प्रकार टाले कि बाहर हँसी न हो और असली भेद न जान पड़े।

(१७) आवश्यक वस्तु से कम न करनी चाहिये, जिसमें अप्रतिष्ठा समझी जाय।

(१८) अपने रोगी की टहल और सेवा मन से करनी चाहिये।

(१९) अपने बड़े-बूढ़ों के जीतेजी कोई धन्धा ऐसा सीख लेना चाहिये, जो समय पड़े पर पेट पालने के लिये काम आवे।

सामान्य शिक्षा

इतना कहकर दुर्गा बोली—अब तक तो तुझको ने गृहस्थधर्म बतलाया, अब कुछ सामान्य शिक्षा बातें लगेहाथों और बताये देती हूँ। ले, सुन। राल में जब लड़की जाय, तो वहाँ बड़े शील-अब से रहे; क्योंकि नई बहू के देखने को सब दार व मुहल्लेवाली स्त्रियाँ आती हैं, तब यही ी हैं कि बहू की बोल-चाल, उठक-बैठक, आँचल, और चतुराई कैसी है। सो बहू को चाहिये कि े पहले उठे। अँधेरे में ही मल-मूत्र त्याग कर आवे। बहू को तो इसका विशेषकर बहुत ही ध्यान रखना हये। सबसे पीछे सोने को जाय और सदा पुरुषों अलग सोवे; क्योंकि बहू को ऐसे रहना चाहिये कि रे में कोई यह न जान सके कि बहू कब और कहाँ थी, और कब तक सोती रहती है।

उठकर पहले अपना गहना-पाता देख लेना चाहिये कुछ गिर तो नहीं पड़ा; क्योंकि जो इस समय मालूम जायगा, सो मिल भी जायगा, नहीं तो किसी टहलु टि की दृष्टि पड़ने पर फिर न मिल सकेगा।

ोजन भी सबसे पीछे करे। पति की गुप्त बातें

किसी से न कहे, और न सबके सामने उससे बोले। किसी बड़ी-बूढ़ी की बात में तर्क न करे। कभी नङ्गी होकर न नहाय, न शौच को जाय। सदा वस्त्र पहनकर ही जाय। कुच उघारे न रक्खे। यह महा निर्लज्जता की बात है, और स्वास्थ्य के भी विरुद्ध है। महीन कपड़ा पहनकर कभी स्नान न करे—विशेषकर तीर्थ आदि में, जहाँ सैकड़ों मनुष्यों की दृष्टि पड़ती है। मेरी तो सम्मति यह है कि स्त्री का तीर्थस्थान में जाना ही अच्छा नहीं, चाहे वह मोटे ही कपड़े पहनकर क्यों न स्नान करे। इस कारण कि ऐसे स्थानों पर स्नान करना महा निर्लज्जता है। मैंने देखा है कि बहुत-सी स्त्रियाँ मोटे कपड़ों के विषय में कहती हैं—चुभता है, पहना नहीं जाता और न सँभलता है। इसलिये मेरा उनसे यह प्रश्न है कि जब उनसे पाव-भर व आध सेर के भारी मोटे कपड़े नहीं सँभाले जाते, तो वे चाँदी-सोने के भारी-भारी भूषणों को क्यों नहीं उतारकर फेंक देतीं ? पर उनके लिये तो 'चूँ' भी नहीं करतीं—'भारी-भारी' ही पुकारती रहती हैं।

ससुराल में कोई बात ऐसी न करे, जिससे वहाँ चिढ़ पड़ जाय।

जब प्रथम ही जाय, तो पहले छोटे-छोटे काम करने

जेठानी को—श्रीमती सर्वगुणखानि, शीलवती, कृपालु श्री ५—

देवरानी को—रूपनिधान, शीलवती, पतिप्रमोदिनी श्री १—

पति को—प्राणनाथ, प्राणजीवन, मम सौभाग्यदायक, व सौभाग्य के कारण श्री ५—

बहू को—कुलदीप्ति, शीलवती, सौभाग्यपरिपूर्ण, प्रिय-वादिनी श्री १—

जो वचन भाँवरें फिरते समय अपने पति से कहे थे, उनका ध्यान रखना चाहिये। वे वचन ये हैं—

(१) मैं दूसरे के घर में वास न करूँगी।

(२) बहुत न बोलूँगी।

(३) न किसी दूसरे पुरुष से बोलूँ-बतलाऊँगी।

(४) जैसे सीता, रुक्मिणी और पार्वती ने अपने-अपने पति की सेवा में मन लगाया, उसी प्रकार मैं भी मन लगाऊँगी।

(५) तुम्हारी (पति की) आज्ञा के बिना माता-पिता के घर भी न जाऊँगी। राजद्वार में कभी न जाऊँगी।

(६) मद्यपान कभी न करूँगी। नशा कभी न खाऊँ-पिऊँगी।

(७) तुम्हारे सिवा दूसरा पति कभी न करूँगी।

पति से कभी द्रोह न माने। न किसी के सामने उसकी निन्दा करे। पति चाहे स्त्री का आदर करे या न करे, चाहे वह परस्त्री से रति भी मानता हो; पर स्त्री को पति की सेवा ही करनी उचित है। उसको इस बात की चर्चा किसी दूसरी स्त्री या पुरुष से न करनी चाहिये। यदि और कोई आकर करे, तो उसकी बात पर ध्यान भी न दे। ऐसी दशा में कभी अपने पुरुष की बुराई, चवाव या खोटी न कहे। न पति से कभी कोई कटु वचन और उलाहने की बात बोले। इससे पति को दूनी चिढ़ हो जाती है। पर यदि स्त्री इसकी चर्चा न करेगी, बराबर पति की सेवा करती रहेगी, आज्ञा मानती रहेगी, तो पति को स्वयं लज्जा आवेगी। यदि कभी अवसर पावे, तो एकान्त में अपने पति से बहुत ही नम्र भाव, शील-स्वभाव और अधीनता से निवेदन करे। अपना दुःख प्रकट करके समझावे। यदि एक बेर में न माने, तो फिर कभी अवसर पाकर समझावे। एक बेर, दो बेर, अनेक बेर समझावे; पर सेवा से मुँह न मोड़े, किसी से इस समझाने की चर्चा तक न करे। किसी के सामने उस स्त्री की भी बुराई न करे। न उससे ईर्ष्या व डाह माने या प्रकट करे। जो बात हो, उसको अपने मन ही में रहने दे। यदि पति इतने पर भी न समझे, तो फिर कहना

छोड़ दे, और सन्तोष कर बैठे। इसका फल अन्त में अच्छा निकलेगा; क्योंकि तुम्हारी सेवा से पति को लज्जा अवश्य आवेगी, जो स्त्री ऐसा बर्ताव न करेगी, वैसा करेगी, जैसा कि मूर्ख स्त्रियाँ करती हैं तो पति चिढ़कर दूना अनर्थ करेगा। इस उपदेश के विषय में मुझको पुराण की एक कथा स्मरण आ गई, सो सुनाती हूँ। याज्ञवल्क्य मुनि के दो स्त्रियाँ थीं—गार्गी और मैत्रेयी। परन्तु दोनों पण्डिता और चतुर थीं। दोनों बहन-बहन की भाँति रहती थीं। कभी सौत का भाव नहीं मानती थीं। स्वप्न में भी ईर्ष्या, द्वेष या लड़ाई का विचार मन में नहीं लाती थीं। पति से और परस्पर में पूर्ण प्रेम रखती थीं। सदा सुख और आनन्द से रहीं। कभी दुःख या कष्ट नहीं भोगा। अतएव अब भी स्त्रियों को वैसा ही करना चाहिये।

राजा दशरथ के ३६० रानियाँ थीं। पर रामचन्द्र की माता कौशल्या, जो सबसे बड़ी रानी थीं, कभी किसी सौत से डाह नहीं रखती थीं, और न कभी राजा ही से कुछ कहती थीं। बराबर अपना पातिव्रतधर्म निबाहती थीं।

कुलीन स्त्री को इतनी स्त्रियों से कभी न बोलना चाहिए—वेश्या से, छली से, व्यभिचारिणी (बुरे चाल-

चलनवाली) से, वैरागिनि से, टोना करनेवाली और दुश्शीला से।

जब कभी सुसराल से माता के घर आवे, तो पति के घर का कोई बुराई न करे। इसके सुनने से एक तो माता-पिता को दुःख होता है, दूसरे सुसरालवालों से मन फट जाता है। यदि किसी और ने भी स्त्री के माता-पिता से सुसरालवालों की बुराई आकर कह दी हो, और अब उस स्त्री से पूछा जाय तो स्त्री को उचित है कि कुछ न कहे। नहीं तो सुसराल जाने पर स्त्री ही का नाम लगेगा, और उसे बुरा-भला सहना पड़ेगा। वे लोग स्त्री पर कोप करेंगे और अपना नेह हटा लेंगे।

सुसराल में जाकर कभी पतिप्रेम व अन्य किसी बात के घमण्ड में न आ जाय। वहाँ किसी से वैरभाव न रक्खे। कभी जेठ, देवर या सास-ससुर से अलग होने का विचार न करे; क्योंकि स्त्री के करने से ये अलग न होंगे। जैसे हाथ की उँगली और लकीरें हाथ से अलग नहीं होतीं, उसी प्रकार पति के सम्बन्धी भी अलग न हो सकेंगे। वे सब एक हैं। स्त्री ही उनमें बिरानी है। स्त्री ही अलग हो जायगी। वे सब एक रहेंगे। सो ऐसा बर्ताव करना चाहिये कि स्त्री को भी वे अपने ही में समझने लगें, बिरानी न समझें। इसलिये सास का अपनी माता से

भी अधिक सम्मान करे ; क्योंकि ईश्वर-कृपा से नववधू भी किसी दिन इस दशा को प्राप्त हो ही जायगी। उस समय पछतायगी। जब इसकी बहू इसका मान न करेगी उस समय बहू कैसी बुरी लगेगी! उसी दशा को विचार-कर सास की मान-प्रतिष्ठा करनी उचित है।

सास भी अपनी बहू का लालन-पालन सन्तान से भी अधिक करे, और बहू के अपराधों को क्षमा करती रहे, जिससे बहू के मन में सास का स्नेह और डर बना रहे। सास को उचित नहीं कि बात-बात में बहू को झिड़के, गाली दे, बुरा कहे अथवा सबके सामने उसकी बुराई करे व माइकेवालों को कोसे। सास को अपने बहूपने की दशा स्मरण करके बहू के संग बर्तना चाहिये। जब दोनों ऐसा उचित बर्ताव करेंगी, तब आज-कल की-सी कहा-सुनी, जो घर-घर हो रही है, कभी न होगी। माँ और सास, दोनों इस विषय में ऐसी मूर्ख बन रही हैं कि हँसी आती है। माँ जब अपनी बेटी की सुनती है, तब उसकी सास को बुरा-भला कहती है। पर जब वही अपनी बहू के संग वैसा ही बर्ताव करती है, तब उन बातों को निपट भूल जाती है। यह ऐसी अन्ध-मूर्खता की बात हो रही है, जिससे कोई घर खाली नहीं।

माँ बेटी को सुसराल के लिए बिदा करते समय जो

उपदेश करती हैं, उसका पीछे कुछ ध्यान नहीं रखतीं। अपने टेंटर को नहीं देखतीं, दूसरे की फूली को नाम धरती हैं। बेटी को सुसराल जाते समय माँ का उपदेश यह होना चाहिये कि बेटी! तू अपने बालपने के घर से विदा होकर ऐसे घर जाती है, जहाँ किसी को नहीं जानती, पर वहाँ तुझे सदा रहना पड़ेगा। तुझको चाहिए कि वहाँ तू ऐसा व्यवहार करे कि वे थोड़े ही दिनों में तुझको जान लें, और तू उनकी प्रीतिपात्री बन जाय। सो तू वहाँ जाकर यह करना कि अपने स्वामी तथा समस्त कुटुम्बियों से प्रीतिभाव रखना। थोड़े ही खाने-पीने, वस्त्र-आभूषणों में संतोष मानना। परन्तु पति और उसके नातेदारों को अच्छे भोजन खिलाना।

सुसराल की बुराई व भेद किसी से मत कहना। यहाँ तक कि मुझसे भी मत कहना। पति की दासी होकर रहना और परछाहीं होकर वर्तना। कभी अपनी ओर से कुटुम्ब में विद्रोह मत होने देना। यदि होता हो तो यथाशक्ति उसे रोकना। पति से कभी नन्द, देवर इत्यादि की बुराई करके मन मत फाड़ना। आप दुःख व हानि सह लेना; पर ऐसा मत होने देना।

माँ को भी चाहिए कि जो अपनी बेटी सुसराल की बुराई करे व अपना दुख-दर्द सुनाये, तो उस बुराई को

न सुने। बेटी के दुःख दूर करने का उपाय उत्तम रीति से बनाकर उसको सन्तोष दे, और आप भी, उन बातों का ध्यान करके अपनी बहू के संग वैसा ही बर्ताव रक्खे। सास को अपने बहूपने की दशा का भी इस समय स्मरण करना चाहिये कि मेरी सास भी बिना दोष मेरे कैसे-कैसे नाम धरती थी और चैन नहीं लेने देती थी। उस समय कैसी-कैसी मेरे जी में आती थी। क्या इन बातों का, जो मैं अपनी बहू के संग करती हूँ, इसका मलाल न आता होगा, और वैसे ही विचार यह अपने मन में न विचारती होगी। जिन बातों के लिये अब मैं अपनी बहू के नाम धरती हूँ, इन्हीं के लिये मेरी सास हमारे नाम धरती थी। पर मैं सास का दोष समझकर उसकी बुराई करती थी। इस प्रकार जो यह मेरी बुराई व बचाव करती है, तो क्या दोष है। मुझे अपना बर्ताव ठीक कर लेना चाहिये।

बहू को चाहिये कि जैसा सास कहे, वैसा ही करे। उसके विपरीत न करे। जिसके संग बैठने का मना करे, उसके संग न बैठे। और अकेले में तो किसी के संग न बैठे। यहाँ तक कि बाप, भाई के संग भी अकेली बैठने का शास्त्र में निषेध है; क्योंकि स्त्री और पुरुष का घी और अग्नि का-सा सम्बन्ध है।

यदि अपने से कोई लड़े तो चुपकी हो जाय, बोले नहीं, उत्तर न दे। यदि जेठानी-देवरानी अपनी संतान से अरकसायँ तो भी आप उनकी संतान से न अरकसाय उनको अपनी सन्तान ही का-सा प्यार करे। दूसरे की बुराई न करे, भले ही वह अपनी बुराई करती हो। माता व पिता के घर और सुसराल के लिये यह याद कर ले—

चौपाई

माइबहिन भावज सँग मीती। सहित सनेह करहु यह रीती॥
वैरभाव जो घर में राखत। ताकहँ उत्तम कोउ न भाखत॥
सहनशील निज करहु सुभावा। जो सब नरनारी को भावा॥
मैंके रह प्रसन्न सबका जी। पतिगृह सास ससुर हों राजी॥

अङ्ग-भङ्ग काना बधिर, कूबड़ लंगड़ देखि।
कीजे नहिं उपहास कछु, आपन हित अवरेखि॥

चौपाई

मातु-पिता सम सासु-ससुर में। कीजै भाव जाय पतिपुर में॥
सेवा विधि मरजाद समेता। नारिधर्म कह बुद्धिनिकेता॥
अति आदर कर जेठ जिठानी। बालकसम देखत देवरानी॥
बहिनसमाननन॑दकहँ जानो। शुद्धभाव सबही महँ आनो॥
सबकी सेवा पति के नाता। दरसावहु गुनगुन की बाता॥

जो ससुराल में जाकर इस रीति से नहीं बर्तती, तो उसके लिये यह कहते हैं—

चौपाई

मेंढे पग्र यह रही परावत ; नारिधर्म कछु याहि न आवत ॥

बोलचाल अपनी ऐसी रक्खे कि कोई नाम न धरे। कभी बिना सोचे बात न कहे, और कटु वचन तो कभी न कहे; क्योंकि इसका घाव बहुत ही गहरा होता है। तीर, बर्छी, भाले आदि तो घावों से निकल भी आते हैं, परन्तु कड़वी बात हृदय के गम्भीर घाव से कभी नहीं निकलती। कहा भी है—

नावक शर धनु तीर, काढ़त कढ़त शरीर ते।
कुवचन तीर अधीर, कढ़त न कबहूँ उर गड़े ॥

बिन कही बात अपनी चेरी है ; पर कही हुई बात अपनी स्वामिनी हो जाती है। इसलिये जीभ को सदा अपने वश में रक्खे, समय विचारकर बोले। एकान्त में अपने विचारों को वश में रक्खे, सभा में अवसर पाकर प्रकट करे। यह शस्त्र मनुष्य को ऐसा अद्भुत दिया गया है, जो चलने से कभी घिसता नहीं, वरन् पैना होता है ; अन्य शस्त्र तो चलाने से घिसते और गोंठे होते हैं। सदा प्रिय बोले, क्योंकि इसमें कुछ खर्च नहीं पड़ता। बोलचाल के ये गुर याद रक्खे।

(१) बहुत न बोले।

(२) बिल्कुल चुप भी न रहे।

(३) समय पर न बोलकर फिर पाछे बकना व पछताना दोष गिना गया है।

(४) दो के बीच में कभी न बोले।

(५) बिना पूछे भी न बोल उठे।

(६) बे सोचे-समझे न कह दे।

(७) शीघ्रता से न बोल दे।

(८) ऊटपटाँग न बके।

(९) उलाहने भरी व लगनेवाली बात सभा में कभी न कहे।

(१०) सदा प्रिय, यथार्थ, धर्म और अर्थ से युक्त वचन बोले।

(११) मिथ्या बात, या जिसका कोई विश्वास न करे, कभी न कहे।

(१२) दूसरों को जो बुरी लगे, ऐसी बात भी न कहे।

(१३) पीछे किसी की बुराई व निन्दा न करे।

(१४) सत्य, कोमल, मधुर और हित की बातें कहे।

(१५) अपनी प्रशंसा अपने मुख से आप न करे।

(१६) बातचीत में हठ न करे। इससे मन मैला हो जाता है।

सासुरे में जाकर सास, नंद की चोरी से कोई काम न करना चाहिये। जैसे घर की कोई वस्तु किसी को दे देना

या बेच डालना। जैसा बहुएँ बहुधा करती हैं कि अपने गहने के खो जाने का बहाना बनाकर वे दूसरी स्त्रियों को बेचने को देती हैं, अथवा अपने दुपट्टे व लहँगों का गोटा-किनारी फाड़-काटकर उखाड़ लेतीं और छिपकर बेच डालती हैं। फिर दूसरी वस्तु उनके दाम से मोल मँगवा लेती हैं। इसमें दूनी हानि होती है। एक तो यह कि जो वस्तु छिपकर बेची जाती है, वह आधे दाम की बिकती है, और फिर जो इसी प्रकार मँगाई जाती है, वह दूने दाम पर आती है। इस लेखे रुपये में चार आने का माल रह जाता है। घरवाले जब सुनेंगे, तो उन्हें क्लेश होगा, वे अपने मन में खीझेंगे। फिर कोई गहना जो खो भी जायगा, तो बहू के कहने का विश्वास न होगा, और न वे फिर कभी बहू को मन करके बनवा देंगे। इसलिये कभी ऐसा काम न करे, जिससे घर की हानि भी हो, क्लेश भी हो, और अपना विश्वास भी जाय।

बहुधा स्त्रियाँ ऐसी आती हैं, जो बहू को ऐसी ही सीख देंगी, उनके संग दुःख प्रकट करेंगी, क्षोभ जनावेंगी, प्यारी बनेंगी, काम-काज कर देने को कह-कहकर व कर-करके बहू के मन में घुस बैठेंगी। पर ये ठगिनियाँ बेर की भाँति होती हैं, जो ऊपर से तो बहुत सुन्दर दीखती हैं, पर उनके भीतर गुठली बड़ी कड़ी

और बुरी होती है उनसे सदा बचते रहना चाहिये। और इतनों से तो सदा ही बचे—व्यभिचारिणी लुगाई से, मूर्ख की दवाई से, झूठी मित्रताई से, आपस की लड़ाई से, अधर्म की कमाई से और ईश्वर की विमुखताई से।

यदि कोई कड़वी बात भी अपने हित की कहे, तो उसे अपना हितू जानना चाहिये, जो कुछ वह कहे, सो करना चाहिये; क्योंकि कड़वी औषध बहुत गुणकारी होती है।

जब अपने यहाँ कोई पाहुना आवे, तो उसके सामने कोई ऐसी बात न करे, जो उसके मन को बुरी लगे या वह अपने मन में हमको मूर्ख समझे। कभी किसी के सामने कान, नाक, दाँत आदि न कुरेदने चाहिये। यह काम पास के बैठनेवालों के मन में ग्लानि उपजाता है।

पिता व पति के घर में जो भोजन मिले, उसको मन से, परमेश्वर की प्रार्थना करके, भोजन करे। कभी परोसी थाली पर से न उठे और मन बिगाड़कर भोजन न करे; क्योंकि—

चौपाई

सो अहार उत्तम कहलावे। जो अपने घर में बनि आवे॥

जब अपने पति व अन्य किसी दूसरे जन को भोजन करावे, तो दुःख व चिन्ता पैदा करनेवाली बातें उससे ... । हँसमुख होकर भोजन करावे। जो वस्तु रसोई ..., वह थोड़ी बहुत यथायोग्य सबको दे।

जब किसी के घर भोजन करने को जाय व सबके संग में बैठकर भोजन करे, तो इस प्रकार वर्ते—

(१) सबसे प्रथम भोजन करना आरम्भ या समाप्त न करे।

(२) सब भोजनों को परस्पर मिलाकर भोजन का रंग-रूप न बिगाड़े कि औरों को ग्लानि आवे।

(३) भोजन को कभी न सूँघे, न चबड़-चबड़कर खाय, न उँगली व हाथ को चाटे।

(४) बचे हुए भोजन का लालच न करे।

(५) औरों के आगे के भोजन को न ताके।

(६) गुठली छिलके सामने न डाले, जो भिनकें। उनको किसी गुप्त स्थान में डालना चाहिये।

(७) भोजन इस प्रकार करे कि दूसरे को घृणा न आवे, और न उसे ही घृणा आवे जो उस बचे हुए को खाय।

(८) जब सब जनी भोजन छोड़ें, तो आप भी छोड़ दे।

(९) सबसे पहले आप भोजन करके हाथ न धोवे।

(१०) पान-तम्बाकू को इस भाँति न खाय कि दूसरों को ग्लानि आवे।

(११) अपने कपड़े इत्यादि भोजन में न सान ले, न मुँह या हाथ साने।

आजकल की स्त्रियों में यह एक अवगुण है कि वे शील और गुण तो सीखतीं नहीं; पर गहने को मरी मिटती हैं। गहना शोभा के लिए पहनते हैं, न कि देह पर बोझ लादने के लिए और शोभा को बिगाड़ कुशोभा करने के लिए। स्त्रियाँ बूढ़ी हो जाती हैं; पर गहने का चाव नहीं जाता। मुँह में दाँत नहीं, देह में मांस और रुधिर नहीं, काम में निर्जीव; पर गहना पहनने में युवती से भी अधिक अनुराग। गहने का तो इतना चाव होता है कि कहीं नातेदारी आदि में जाने पर दूसरों तक के गहने माँगकर वे पहन जाती हैं। और, जो नहीं मिलता, तो पीतल, राँगे और काँसे ही के पहन लेती हैं। कुछ नहीं तो पोत ही के बनाकर पहन लेती हैं। यहाँ तक कि खजूरों के बीजों के गजरे इत्यादि बनाकर पहन लेती हैं। गहने से देह चाहे काली ही पड़ जाय, और मैल भी जम जाय, पर उन्हें उतारेंगी नहीं। चाहे दस-बीस और पहना दो। एक-एक गहने के ऊपर चाहे दो-दो, और तीन लाद दो; पर वे नाहीं नहीं करेंगी।

और भी और, मेरी समझ में इनके सोने-चाँदी की बेड़ी-हथकड़ी और गले में तौक तक डाल दो, तो भी वे नाहीं नहीं करेंगी; दुःख न मानेंगी, खुशी रहेंगी। मैंने एक ऐसी का समाचार भी सुना है। एक

पति ने उस स्त्री से कहा कि वह पंसेरी जो रक्खी है, तनिक उठा देना। वह बोली—मुझसे तो इतनी भारी वस्तु नहीं उठती, तुम ही उठा लो। इस बात को उसके पति ने मन में रख लिया, और मुख से उस समय कुछ न कहा। भुलावा देकर एक दिन उसी पंसेरी के टुकड़े करवाकर, उनको सोने में मढ़वाकर, एक हार में लगवा दिया और वह हार अपनी स्त्री को लाकर दिया कि लो, अब सबसे भारी गहना तुमको बनवा दिया है। सोने का ऐसा भारी हार किसी स्त्री के न निकलेगा। तुम बहुत कहा करती थीं कि अमुक स्त्री के पास अमुक गहना बहुत भारी है, अमुक के पास अमुक। सो अब सबसे भारी तुम्हारे ही पास निकलेगा। इतना भारी किसी के न होगा। अब सबमें बड़ी तुम ही रहोगी। यह सुन उस स्त्री ने बड़े ही चाव और हर्ष से वह हार पहन लिया, और दिखाने के लिए कई दिन तक पहने रही, उतारा नहीं। जब कई दिन हो गये, तब उसके पति ने कहा—इस हार को तोलो तो सही, कितना भारी है। उसने तोला, तो वह छः सेर का निकला। तब पति ने हँसकर कहा—बतलाओ तो सही, वह पंसेरी भारी थी या यह हार भारी है, जो गले में कई दिन से डाले फिरती हो?

यह सुन वह स्त्री बड़ी ही लज्जित हुई और खिसियाई कि हाय! इस गहने ने मुझे लजाया! सो बहन! स्त्रियाँ गहना पहनना तो वे बहुत चाहती हैं, पर उनके पहनने के गुण नहीं सीखतीं। गुणवती स्त्री को गहने या शृंगार की कुछ आवश्यकता नहीं है। अपने पति को मोहने के लिए उसके गुण ही शृंगार और गहने हैं।

जो स्त्री धनवती हैं, वे तो बनवा भी लेंगी; पर जिसके धन नहीं है, वह क्या करेगी! कहाँ से बनवावेगी? तो क्या वह कुढ़-कुढ़कर ही मर जाय, अपने पति को छोड़ दे, गहनेवाली स्त्रियों के पास न बैठे, किसी के सम्मुख न आवे, किसी से बातचीत न करे? इस कारण ठिक, त्योहार में नातेदारों के घर न जाय, कि उसके पास गहने नहीं हैं? नहीं, नहीं, उसको अपने मन में भी कभी इस बात का ध्यान या सोच-विचार न करना चाहिये कि मेरे पास गहने नहीं हैं, मैं कैसे जाऊँ? स्त्री को सदा ऐसा शृंगार रखना चाहिये, ऐसे गहने पहनने चाहिये, जो पहने पीछे कभी न उतरें, कभी न बिगड़ें, न घिसें, न टूटें-फूटें। वरन् नित नये चमकते रहें। स्त्री को चाहिये, वह ऐसा शृंगार करे और गहने पहने—

मिस्सी—मिस के छोड़ने की।

पान व मेंहदी—जग में अपनी लाली बनाये रखने की।

काजल–शील का जल आँखों में देने का।
महावर–यह कि वर (पति) महा (बड़ा) है।
बेंदी–बदी को तजने की।
नथ–मन को नाथने की, जिससे बुराई न हो।
नथ का मोती–सबों में मोती की सी आब रखने का।
टीका–कलंक का न लगने देने का, यश का लगाने का।
बन्दनी–पति व गुरुजनों की वन्दना करने की।
पत्ते–पति के अथवा अपनी पत रखने के।
कर्णफूल–कानों से दूसरे की बड़ाई सुनकर फूलने के।
हँसली–सबसे हँसमुख रहने की।
मोहनमाला–सबके मन को मोह लेने की।
हार–अपने पति से सदा हारने का।
बाजूबन्द–पति की आज्ञा में हाथ जोड़े खड़ी रहने के।
बरा–यह समझने के कि पति ने मुझको बरा (विवाहा), जिससे मुझको सुख मिला।
कड़े–किसी से कड़ी न बनने के।
बाँक–किसी से बाँकी-तिरछी न रहने की ; सीधा चाल चलने की।
चूरी–चोरी न करने का।
दुआ–सबके लिये दुआ (आशीर्वाद) करने के।
छल्ले–छल को छोड़ने के।

आरसी—दूसरे पुरुषों व गुरुजनों से आर रखने की।
पायल—सब बड़ी-बूढ़ियों के पाँव लगने की।
पायजेब—ऐसे काम करने की, जिनसे जेब पावे।
बिछुये—अपने पति से व घर में बिछोह न करने के
सब बजने गहने—स्त्री के अच्छे कामों की ध्वनि सबके कानों में पहुँचाने के।

स्त्री के ये आठ अवगुण कहे हैं, उनको तजती रहे—

चौपाई

नारिस्वभाव सत्यकविकहहीं। अवगुन आठ सदाउररहहीं॥
साहस अनृत चपलता माया। भय अविवेकअशौचअदाया॥

अपने गुरुजन तथा पति, सास, ससुर इत्यादि का (जो अपने से आयु में बड़े हों) नाम उनके मान और आदर के कारण कभी न ले। जो अपने से किसी बात में अधिक हो, उसका भी नाम नहीं लेते। और स्वामी का नाम तो, चाहे वह गुण व आयु में छोटा भी हो, कभी नहीं लेते। हाँ, अपने से छोटों का नाम तो ले सकते हैं। ऐसों का नाम भी लिया जाता है, जिनसे आदर से नहीं बोलते।

स्त्री के लिये पति इस लोक और परलोक, दोनों में बड़ी वस्तु है। इससे अधिक उसके लिए कोई अन्य वस्तु नहीं। इसलिये स्त्री को तीर्थस्नान व यात्रा करनी उचित

नहीं। उसको तो पतिसेवा ही तीर्थस्नान, यात्रा, दर्शन सब कुछ है।

यदि किसी स्त्री की ऐसी ही इच्छा हो, तो उसको चाहिये कि कभी अकेली यात्रा को न जाय। सदा घरवालों के सङ्ग जाय। यदि ऐसा हो कि घर में कोई पुरुष न हो, आप ही हो, तो जब तक विश्वासपात्र मनुष्य न मिले, कभी यात्रा के लिए प्रस्थान न करे। यात्रा को जब जाय; तब राह का पूरा खर्च रख ले। सङ्ग-साथ में जाय। राह में कभी अनजाने मनुष्य का विश्वास न करे; क्योंकि बड़े-बड़े ठग और ठगिनियाँ मिलती हैं, जिनके विषय में कभी कुछ सन्देह भी नहीं होता। पर वे ठगी के ऐसे-ऐसे प्रपञ्च रचते हैं कि अन्त को जान तक जाती रहती है [मैंने इसके विषय में दो पुस्तकें 'ठगप्रपञ्च' और 'ठगगोष्ठी' नाम की अलग लिखी हैं। उनमें सविस्तर वृत्तान्त है], पर एक वृत्तान्त यहाँ भी तुझको सुनाती हूँ। जो मैंने न्यू इण्डिया (New India) समाचारपत्र में पढ़ा था, और सन् १८४६ ई० में हुआ था—

एक स्त्री बुलन्दशहर से अपनी सुसराल मथुरा को जाती थी; बहुत गहना-पाता पहने हुए थी। ठगों ने इसको भाँपा और रास्ते में एक बुढ़िया को भेजा, जिसने जाकर यह प्रपञ्च रचा कि बहुत ही फटे कपड़े पहनकर

जाड़े में सिकुड़ी हुई उसी राह पर जा बैठी और फूट-फूट कर रोने-चिल्लाने लगी। उस स्त्री ने इसकी दीन दशा देखकर अपना रथ ठहरवा दिया और इससे वृत्तान्त पूछा। तब बुढ़िया बोली कि मथुरा में मेरी एक बेटी है। उसको बहुत दिन से देखा नहीं। अब वह माँदी बहुत है, और मुझे उसने बुलाया है। उसके देखने को जाती हूँ; प चला नहीं जाता। पास पैसा भी नहीं, जो सवारी का लूँ। ओढ़ने को कपड़े नहीं, जाड़े के मारे मरी जाती हूँ। लड़की वहाँ मर जायगी, और मैं यहाँ। यह सुन उस स्त्री को दया आ गई। उसने अपने रथ में उस बुढ़िया को बिठा लिया। जब सन्ध्या हुई तब उस बुढ़िया ने अपने पास से कुछ लड्डू व मिठाई (नशे के) निकालकर उस स्त्री को खाने को दिये, और उसके पैर दाबने लगी। इतने में उक्त स्त्री को कुछ नशा आने लगा और झट नींद आ गई। ठगिनी ने कुल गहना-पाता उतार गाँठ में बाँधा और उस स्त्री के गले में ताँत की फाँसी डाल उसे मार गई।

सवेरे जब नौकरों ने देखा कि शौच आदि के लिए रथ रोकने की आज्ञा आज अभी तक नहीं हुई, तब उस बुढ़िया को पुकारा। पर वहाँ वह कहाँ, जो उत्तर दे। स्त्री को पुकारा गया; पर वह मर चुकी थी। इस पर पर्दा खोलकर देखा गया, तो

देखा, उस स्त्री के गले में ताँत है और वह मरी पड़ी है।

बस, इसी प्रकार बड़े-बड़े बुद्धिमानों को ठग-ठगिनी धोखा देकर माल ले लेते हैं। जैसे—

(१) स्त्री के सम्मुख नंगे होकर उसे लज्जित कर दिया। उसने आँख मूँदी व फेरी और माल उठा लिया।

(२) रुपया डालता हुआ आगे को चला गया। जब वह रुपया लेने को माल पर से उठी कि दूसरे ठग ने पीछे से माल उठाया और वह चम्पत हुआ।

(३) विष-पान कराकर।

(४) तम्बाकू में कुछ नशीली चीज मिलाकर और बेसुध करके इत्यादि। इसलिये बहुत सावधान रहना चाहिए। अनजाने मनुष्य का कभी विश्वास न करना चाहिए। न दूसरों की दी हुई वस्तु खाय, न अन्य कोई लोभ की बात करे।

यात्रा को जब जाय, तब गहना-पाता कभी पहनकर न जाय, जैसा कि मूर्ख स्त्रियाँ बहुधा पहनकर जाती हैं। इसी से ठग पीछे लग लेते हैं, और अवसर पाकर लूट-मार करते हैं। कभी-कभी तो जान से भी मार डालते हैं। गहने को एक पोटली या सन्दूक में बन्द कराकर अपने संग ले जाय और अपने पास सवारी में रख ले। पर इसमें भी खटका और जोखिम है। सावधानी

अधिक करनी पड़ती है। सबसे अच्छा उपाय यह है कि जहाँ को जाना हो, वहाँ के डाकखाने को अपना गहना-पाता (बीमे का [insured parcel] पार्सल अपने नाम कराकर) भेज दे, और डाकमुंशी को सूचना दे दे कि जब तक हम न आवें, पार्सल को अमानत में (deposit) रक्खे। आप जब पहुँचे, ले ले।

यदि इसमें भी इतना झगड़ा रहे कि पहचान के गवाह माँगे जायँ और वहाँ जानता-पहचानता कोई न हो, अपनी या अपने किसी मनुष्य की तसवीर (photo भेज दे और लिख दे जिसकी यह तसवीर है, उसक दे देना। यह तसवीर डाकखाने के ही द्वारा भेज देनं चाहिए। राहबाट में बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ पड़ती हैं। उनसे सचेत रहे। रात्रि में कभी राह न चले। जो चले तो ऐसे स्थान पर, जहाँ भय न हो। जैसे रेल में। पर वहाँ भी सावधानी परमावश्यक है।

यदि रात्रि में राहबाट भूल जाय और कोई बतानेवाला न मिले, तो इस बात का ध्यान रक्खे कि जिधर गाड़ी की लीक गई हो, या मनुष्यों के पाँव के चिह्न हों, उधर चले। जिधर मनुष्यों का बोल सुनाई देता हो, जिधर से कुत्तों के भूकने का शब्द आ रहा हो या आग जलती हुई देख पड़े, उधर चले। यदि दो राहें ऐसी मिलें

जहाँ ये चिह्न देख पड़ें, तो जो पास जान पड़े, उस पर प्रथम चले। इस क्रिया से राह मिल जायगी।

जब ठिकाने पर पहुँच जाय, तब अपने मेल में ठहरे। जहाँ ठहरे, वहाँ के स्थान को भली भाँति चिह्नित कर ले। भीड़ में न जाय, जब भीड़ छटे, तभी आवे। यानी या तो सबसे पहले या सबसे पीछे हो आवे।

भीड़ में यदि बिछुड़ जाय, तो हड़बड़ाकर, ढूँढ़ती न फिरे, एक स्थान पर बैठ जाय। वहाँ से अपने संगियों को देखती रहे। और ऐसे स्थान पर बैठे, जहाँ से सब निकलते-पैठते हों और आते-जाते देख पड़ें। जो स्थान निकट हो, और राह भी मालूम हो, तो डेरे पर चली आवे। अथवा जो अपनी जान-पहचान का कोई मिल जाय, उससे सँदेशा भेज दे कि मैं यहाँ बैठी हूँ; आकर लिवा जाओ या उसके सङ्ग आप चली जाय, अथवा अपने मनुष्यों को वहाँ बुला भेजे।

स्त्रियों को तीर्थयात्रा में व्यर्थ कष्ट उठाने पड़ते हैं। उसका फल दुःख और निन्दा इत्यादि के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। मेरी समझ में स्त्री सदा पतिव्रता रहकर पतिचरण में लवलीन रहे। इतना तो तुझको बता चुकी। परन्तु थोड़ा-सा अभी और बताना बाकी है। ये शिक्षाएँ स्मरण रखने योग्य हैं—

(१) जो प्रतिष्ठा बेलाग हो, उत्तम वही है।

(२) शोक दूर करने के लिए काम में लगे रहने से उत्तम कोई दूसरा उपाय नहीं।

(३) आलस्य और अपराध विनाश की जड़ हैं।

(४) चाकर के हाथ से स्वामी की आँख अधिक काम करती है।

(५) सांसारिक सुखों से भागता रहे, तो वे स्व हमारे पीछे दौड़ेंगे।

(६) जीवन ऐसा रखना चाहिए कि लोग कहें कोई था।

(७) बुराई करने से बुराई सहना अच्छा।

(८) प्रत्येक जन का स्वत्व पहचाने।

(९) जो भेद कहने योग्य न हो, उसको कभी मुँह से न निकाले।

(१०) जो स्त्री अपने से बड़ी हो, उसके संग हँसी कभी न करे।

(११) यदि कभी किसी का भला होता हो, तो भाँजी न मारे।

(१२) भलाई करनेवाला भलाई भूल जाता है; पर जिसके संग भलाई की जाती है, वह कभी नहीं लता।

(१३) मूर्ख स्त्री की यह बड़ी पहचान है कि वह विना पूछे बोल उठती है।

(१४) कभी किसी को दूसरे के सम्मुख लज्जित न करे।

(१५) पाहुने से कभी कुछ काम न ले, वरन् आप उसका काम कर दे।

(१६) किसी काम व लोभ के लिए अपनी प्रतिष्ठा न घटावे।

(१७) कभी झगड़ा न मोल ले।

(१८) बड़ों की सेवा करे, और छोटों पर कृपा रक्खे।

(१९) जब तक द्रव्य से काम निकले, प्राण को भय में न डाले।

(२०) धन वही उत्तम है, जिससे प्रतिष्ठा बनी रहे।

(२१) समय का एक-एक क्षण भी बहुमूल्य है, इसलिए उसको व्यर्थ न जाने दे, वरन् काम में लावे।

(२२) सन्तोषी सदा सुखी और विजयी होता है।

(२३) घमंड न रखने से प्रतिष्ठा बढ़ती और अभिमान से घटती है।

(२४) चतुर वही है, जो दूसरों को देखकर शिक्षा ग्रहण करे।

(२५) मित्रता का निर्वाह चाहे, तो मित्र से उसकी वस्तु कभी न माँगे।

(२६) जीविका की चिन्ता में ऐसी लिप्त न हो जाय कि ईश्वर को बिसार दे।

(२७) अपने घर की बात दूसरे के घर जाकर कभी न कहे।

(२८) खोटी-कुचाली स्त्रियों से कभी मेल न रक्खे। काम पड़े पर चतुराई से काम निकाल ले।

(२९) कलह एक प्रकार की आग है, जो सहने से दबती, शील से बुझती; पर मूर्खता और क्रोध से सुलगती और भभककर जल उठती है।

(३०) जो शिक्षा औरों को करे, पहले उसे आप कर दिखावे।

(३१) काम पूरा हुए बिना मन का भेद कभी किसी से न कहे।

(३२) कभी किसी के गहने-कपड़े की होड़ न करे; किन्तु गुण की होड़ करे।

(३३) जो औरों की बुराई आकर अपने से करेगी, वह तुम्हारी बुराई दूसरों से जाकर अवश्य करेगी।

(३४) दो की लड़ाई में सदा न्याय की बात करे, पक्षपात न करे अथवा चुप हो जाय।

(३५) कपड़ा कहता है कि जो तू मेरी लाज रक्खेगी, तो मैं तेरी रक्खूँगा।

(३६) पाप करने में जो जी धड़कता व घबड़ाता है। यही लक्षण ईश्वर की ओर से पाप के निषेध का है।

(३७) मेला-ठेला, साँझी-झाँकी और भीड़-भाड़ में फिरने से धर्म में बट्टा लगता है।

(३८) नाई, बारिन, पुरोहितानी इत्यादि के भरोसे कभी सगाई न करे।

(३६) बहू को सास के विषय में यह न समझना चाहिए कि मेरे पति की कमाई खाती है, और सास को बहू के खाने, पीने की सुध और उसमें प्रेम रखना चाहिए, तो दोनों में कभी लड़ाई न होगी।

अब तुझको यह बताकर कि कौन किससे वश होता है, इस विषय को समाप्त करती हूँ—

(१) मित्र सचाई से, (२) शत्रु शीतलता से, (३) कृपण धन से, (४) गुरुजन सेवा से, (५) छोटे क्षमा से, (६) विद्वान् लोग विद्या से, (७) मूर्ख रमणीय कथा से, (८) स्त्री प्यार से, (६) पुरुष सेवा से, (१०) अभिमानी प्रशंसा से, (११) क्रोधी शान्ति से, (१२) अपने और सगे स्नेह से, (१३) पराये उपकार से, (१४) पड़ोसी दया से, (१५) संसार मित्र-भाव से और (१६) स्वामी भक्ति से।

अब रात बहुत हो गई, नींद भी आती है, चल सो

रहें। कल फिर यह कहूँगी कि स्त्री को घर के कामधन्धे किस प्रकार और कैसे करना चाहिए। जो चतुर स्त्रियों से सुना और देखा है, और जो कुछ मेरे वर्ताव में आया है, वह सब कल सुनाऊँगी। उठ, दिये की बत्ती निकाल कर सो रहें। सवेरे उठकर इसका स्मरण कर ले भूलना मत।

घर का काम-धन्धा

अगले दिन रात को फिर दुर्गा जब घर के धन्धे से निश्चिंत हुई, तब अपनी बहन मोहिनी के पास बैठी, और घर के काम-धंधे करने की रीति यों बताने लगी—हे बहन! इसमें बड़ी सुगमता पड़ती है कि समय का बँटवारा कर ले कि फलाने समय में फलाना काम करना और उस समय में इतने काल तक फलाना काम करना होगा। ऐसा करने से गड़बड़झाला नहीं होने पाता। सब काम ठीक समय पर अच्छे हो जाते हैं, और सोचा-बिचारी भी नहीं करनी पड़ती कि कौन-सा काम कब करें। अपनी-अपनी बारी से सब काम होते चले जाते हैं। इसलिए जैसा अपने घर का काम देखे, उसी भाँति समय को बाँट ले। किसी के घर में कोई काम अधिक रहता है, और किसी के घर में कोई। इसलिए

मैं नहीं बता सकती कि किस प्रकार के बाँटने से काम सुभीते से होंगे। स्त्री को चाहिए, जैसा देखे, वैसा ही कर ले। पर तो भी मैं साधारण रीति से समय के बाँटने की विधि कहे देती हूँ। समय को यों बाँटे—

(१) भोर ही उठकर शौच आदि से निबटने, घर की सफाई करने, बासन आदि माँजने में दो घंटे, (२) स्नान-ध्यान एक घण्टा, (३) विद्या की चर्चा तीन घंटे, (४) भोजन बनाना तीन घंटे, (५) सखी-सहेलियों में बैठना एक घंटा, (६) शिल्पविद्या दो घंटे, (७) सन्ध्या का भोजन तीन घंटे, (८) बालशिक्षा और परीक्षा में दो घंटे, (९) नौकरों का काम देखना, घर की धराढकी और घर का हिसाब-किताब दो घंटे और (१०) शयन छः घंटे।

यह मैंने सबके लिए कह दिया है जिनके घर में टहलुये हैं, वे उनके करने का काम आप न करें, उनसे ही काम करावें। इस प्रकार जो समय बचे, उसे दूसरे लाभदायक कामों में लगावें—जैसे विद्याचर्चा, शिल्पविद्या व बालशिक्षा में। और जिनके यहाँ इतना काम नहीं है, वे इसको घटा-बढ़ाकर मनमाना कर लें। जिस प्रकार हो, उतना-उतना समय नियत कर ले, तो सब काम सावधानी से होते चले जायँगे और अड़चन न पड़ने पावेगी यों

सिलसिला न टूटेगा। बहुत-सा समय जो सोचा-विचारी में चला जाता है, वह बच रहेगा। बहन! यह समय बड़ा अमूल्य है। इसके बराबर कोई दूसरी वस्तु महँगी नहीं। संसार-भर की पूँजी और धन एक ओर, और तनिक-सा समय एक ओर। यदि कोई सारी पृथ्वी का धन दे और कहे कि कल की रात का एक पल भर का समय, जो बीत गया है, मुझे ला दो, तो कोई ला सकता है! कभी नहीं। जो समय बीत गया, उसके लिए चाहे एक पृथ्वी के पदार्थ क्या, विश्व-भर का धन मिलाकर दो, पर वह बीता हुआ पल-भर का समय नहीं आवेगा। समय कभी ठहरता नहीं। इसका ऐसा वेग है कि कोई इसको नहीं देख सकता कि कहाँ होकर भाग गया! आँखों के सामने भागा हुआ जाता है; पर देखने में नहीं आता। जो समय तुम्हारे बात करते-करते था, वह बात कही नहीं कि सहस्रों कोस भाग गया, और अब हाथ नहीं आवेगा। इस अमूल्य समय को सोचा-विचारी में कभी न खोना चाहिए; क्योंकि वह समय वृथा जाता है। एक बेर सोच-विचारकर अपना समय बाँट लेना और फिर उसी के अनुसार काम करते रहना चाहिए। सवेरे उठकर शौच आदि जा, हाथ-मुख धो, जैसा हो, वैसा करना चाहिए। जो नौकर हों, तो घर का काम-काज

झारा-बुहारी, खाट, बिछौने आदि उठाना-धरना उनसे करा ले—

पर आप इतना अवश्य करे—

चौपाई

नितउठ देखिलेहु निज धामा। बिगरो बनो होइ जो कामा॥

पीछे आप स्नान करके पढ़ने में लग जाय। पहले अपना कल का पढ़ा हुआ पढ़ जाय, और इसी प्रकार जिनको पढ़ाती हो, उनका भी सुन जाय। फिर अपना आज का नया पाठ पढ़े, और याद कर ले। फिर औरों को करा दे। जो नौकर-चाकर न हों, तो आप सब काम करे। विद्या से निश्चिन्त हो भोजन आदि बनावे। भोजन बनाने में इन बातों का ध्यान रक्खे, जिससे बहुत देर न लगे, और असावधानी न हो—जितनी सामग्री भोजन की लेनी हो, सबको निकालकर एक बेर चौके में रख ले। सब वस्तुओं को पहले याद कर ले कि कुछ भूली तो नहीं, जिसके लिए पीछे उठना पड़े। पहले पकाने और आटे गूँदने के बर्तनों को रक्खे। फिर जितने आग पकड़ने और बटले आदि उतारने के हैं, और कटोरे, थाली, पत्थर और लोहे के जो बर्तन हों, सबको रख ले। ईंधन जितना जरूरी समझे, डाल ले। मसाला, नमक सब कुटा-कुटाया धर ले। जब इन सब वस्तुओं

को निकालकर रख ले, तब आग सुलगाना चाहिए। जब तक आग सुलगे, साग-भाजी जो कुछ हो, उसे बीन-बनार ले। जब आग सुलग जाय, तब दाल व खिचड़ी का अदहन धर दे। जितनी देर में अदहन हो व दाल सीझे, उतनी देर में आटे को गूँद ले। जो और अच्छा चाहे, तो एक या दो घंटे पहले गूँदकर धर ले। इस प्रकार भोजन बनावे कि बीच में न उठना पड़े। भोजन बनाने की रीति भोजन-संस्कार में तुझे बताऊँगी कि कौन से भोजन किस प्रकार बनते हैं। भोजन के संग इस बात का भी ध्यान रहे कि थोड़ी-थोड़ी सामग्री अलग-अलग बर्तनों में, रसोई के पास के घर में या उसी घर में, रखनी चाहिए। इससे यह लाभ है कि यदि दूसरे घर में है, तो कई बेर के आने-जाने में सब वस्तुएँ इकट्ठी होंगी। कदाचित् कोई कुत्ता, बिल्ली उनमें मुँह डाल जाय; क्योंकि खाने-पीने की वस्तु के लिए इनकी बड़ी चौकसी रखना चाहिए। ये तुरन्त ही मुँह डाल देते हैं, और फिर वह वस्तु फेंकनी ही पड़ती है। भोजन बनाने को बैठे, तो पहले साग, तरकारी, चटनी, रायता इत्यादि बनाकर रख ले, पीछे रोटी व पूरी पराँठे बनावे; क्योंकि भोजन करने को यदि कोई बैठना चाहे, तो बैठ सकता है। यदि वे पहले से बनी

हुई नहीं हैं, तो जब तक सारा भोजन न बन चुके, और ये न बना लिए जायँ, स्त्री भोजन नहीं करा सकती। और समस्त भोजन बनने में बहुत देर लगती है। इसलिए पहले इन वस्तुओं ही को बनाकर रख लेना चाहिए।

जब भोजन बन चुके, तो इस प्रकार क्रम से भोजन करावे। पहले बालकों को, नई ब्याही दुलहिन को, बूढ़ों को, गर्भिणी स्त्री को, रोगी को, कन्या को, अतिथि को, भृत्य (चाकर) को। फिर पति को और अन्त में आप। जब भोजन करावे, तो आसन बिछाकर पानी का गिलास रख दे। रकाबी, चमचा, कटोरा, कूँडी इत्यादि सब पास रक्खे, और जो वस्तु जिसमें रखने योग्य हो, उसको उसी में रक्खे। जो भोजन जिसकी रुचि का हो, वही उसको दे। जब भोजन से निपटे, तब अपनी सखी-सहेलियों में बैठकर अच्छी-अच्छी प्यार-प्रीति की बातें करे। बन सके, तो इस अवसर में सास, नंद की कुछ सेवा कर दे। जैसे पाँव दाबना, सिर के जूँ देखना व माथा गूँदना। पर भोजन करके पहले थोड़ा-सा लेट रहे, नहीं तो भोजन पचता नहीं। जब आपस में बैठकर बातें करे, तब मनोहर-मनोहर कहानियाँ, इतिहास, कहावतें, दोहे और नीति की बातें करना अच्छा है। आपस में हँसी-चुहल की भी बातें करे। पर इतना ध्यान रहे कि वे सब चतुराई

की हों। ऐसी न हों, जिनमें गँवारपन पाया जाय, और फिर आपस में लड़ाई या कहा-सुनी होने लगे। सखी-सहेलियों में केवल मन बहलाने को बैठते हैं, जिससे सब दिन के काम-काज से दो घड़ी मन बहल जाय, इसलिए नहीं कि आपस में बैर बँधे। हँसी वहीं तक अच्छी है, जहाँ तक वह हँसी है। पर जहाँ वह खसी होने लगी, वहीं उसको छोड़ देना चाहिए, क्योंकि "लड़ाई का घर हाँसी, और रोग का घर खाँसी" यह कहावत चली आती है।

जब यह मनबहलाव हो चुके, तब जीविका के लिए शिल्पविद्या को हाथ में लेना चाहिए। शिल्पविद्या से जो कुछ प्राप्ति होती है, उस पर केवल स्त्री ही का अधिकार है, पति का नहीं होता। यह बहुत ही उत्तम बात है कि स्त्री आप पैदा करे, और अपने व्यय के लिए अपने पति से कुछ न माँगे। गहना-कपड़ा आप अपने पैदा किये हुए धन से मोल ले, और जो अपने पति के पास कभी रुपये की तंगी हो, तो अपने पास से निकालकर दे दे, जिससे उसे किसी से उधार न लेना पड़े, और घर की पत और साख न जाय। घर का भेद न खुल जाय, और उलटा ब्याज न देना पड़े। अपने पति की इज्जत रह जाय, और लाभ का लाभ हो जाय। जो स्त्री ऐसा करती है,

वह कभी विपत्ति आने पर दुःख नहीं भोगती। कभी रुपये उधार लेने के लिए दूसरों का मुँह नहीं ताकती, और उसका कोई काम पड़ा नहीं रहता, सब सर जाते हैं। बहुधा तो ऐसा देखने में आया है कि स्त्रियाँ चरखा कातती हैं और बहुत हुआ, तो कण्ठी-माला व पोत की जंजीरें पोहती हैं। निदान शिल्पविद्या के ऐसे काम करती हैं, जिनमें पचावट और परिश्रम तो बहुत होता है, पर दाम थोड़े मिलते हैं। महीने भर में डेढ़-दो रुपये से अधिक नहीं मिलता। पर शिल्पविद्या की वे बातें सीखनी चाहिए, जिनमें कम-से-कम चार आने या आठ आने नित्य तो मिला करें।

इस समय तो तुझे और-और बातें बतानी हैं, नहीं तो थोड़ा-सा तुझको इस विद्या का भी हाल सुनाती और बताती कि इस विद्या में से क्या-क्या सीख लेना चाहिए, जिससे जीविका अच्छी हो जाय। अभी तेरी समझ भी ऐसी नहीं है कि थोड़ा समझाने ही से इस विद्या की बातें तेरी समझ में आ जायँ। यह अधिकतर हाथ से कराकर बताने से आती हैं। सो भी, जब कि अच्छी भाँति से माथा पचाया जाता है। तो भी इसकी कुछ-कुछ बातें तुझको किसी दिन बताऊँगी। अब की थोड़े ही दिन ठहरूँगी, इससे पूरी बात न बता सकूँगी।

जब कभी अवसर होगा, तब बताऊँगी। शिल्पविद्या के पीछे सन्ध्या का भोजन उसी प्रकार बनावे, जिस प्रकार सवेरे किया था। इससे छुट्टी पाकर अपने नौकरों का और घर का जो काम-काज बाकी रहा हो, उसे देखे कि कौन-सा काम बिगड़ा हुआ है, और कल किस काम के करने की चिन्ता करनी होगी। यह भी देखे कि नौकरों ने जो काम किया है, वह किस भाँति हुआ है। वह अच्छी तरह हुआ है कि नहीं? और, जो काम कल के लिए चाकरों को बताना हो, वह इस समय बता दे जिससे वे बिना पूछे कल उसको करने लगें। इसके पीछे अपने घर का हिसाब-किताब और धराऊकी जो कुछ करनी हो, वह कर ले। फिर निश्चिन्त होकर बालकों को अपने पास बैठाकर उनसे उनका पाठ पूछे, और जहाँ भूलें वहाँ उनको बता दे। उनको शिक्षा और उपदेश-भरी कहानियाँ सुनावे। इसके पीछे आप सो रहे। छः घंटे का सोना प्राणी के लिए बहुत ठीक है। इससे थोड़े या बहुत में हानि है। फिर जैसा देखे, एक या दो घंटे और कमती-बढ़ती कर ले। सोते समय इस बात की भी सावधानी रक्खे कि कोई द्वार तो खुला नहीं रह गया। जिसमें ताला लगता हो, उसमें ताला लगा देना चाहिए, जिसमें साँकल लगती हो, उसमें साँकल दे देनी चाहिए

और दिया लेकर सब अँधेरी कोठरी व ड्योढ़ी को देख ले कि कोई चोर तो नहीं दुबक रहा।

यह तो नित्य का काम हुआ! अब इनके सिवा जो और काम करने होते हैं, वह भी तुझे बताती हूँ। जब घर की कोई वस्तु निपटने पर आवे, तब उसका कई दिन पहले से प्रबन्ध करे। जिस दिन अच्छी और सस्ती मिले, मँगा ले, जिससे तत्काल न मँगानी पड़े। जिस दिन जो वस्तु आवे, उसी दिन उसे सुधारकर रखवा देना चाहिए। इकट्ठी वस्तु अच्छी तरह सुधरने में आ जाती है, और बेर-बेर का श्रम नहीं रहता। इसी प्रकार जब मसाला आदि आवे तो उसे तभी बीन, फटक और कूटकर रख देना चाहिए। सिवा हल्दी के, जो बहुत दिन तक कुटी हुई रखने से बिगड़ जाती है, दाल को बीन-छान फटककर रखवाना चाहिए। दाल इकट्ठी दलवा लेनी चाहिए। बाजार से अच्छी नहीं आती। नमक को भी पीसकर ही रखना चाहिए, जिससे थोड़े बहुत का भी भय न रहे, और तनिक-तनिक-सा न पीसना पड़े। पर इतना ध्यान रहे कि पिसा नमक बूरे व मैदे के पास न रक्खा जाय।

आटा जब पिसकर आवे, तभी तुलवा और छनवा लेना चाहिए। पर आटे को आठ दिन से अधिक न रक्खे, नहीं तो बिगड़ जाता है। आटे में से जो भूसी

निकले, वह एक बर्तन में भरवा दे। और इसी प्रकार जो गेहूँ, सरसों आदि नाज में से निकलें, उन्हें भी भरवा दे, यों ही रहने देने से एक तो कूड़ा रहता है, दूसरे हानि होती है, फूहरों का-सा घर दीखता है।...

जो अपने, अपनी देवरानी, जेठानी या सास, नंद के बालक हों, उनको स्नान कराना, बाल काढ़ना, मैले वस्त्रों को बदलकर श्वेत, स्वच्छ और उज्ज्वल वस्त्र पहनाना, फटे-पुराने को सी देना, मैलों को धोबी के धुलने को डाल देना। बालकों को ऊपर-नीचे आते-जाते देखते रहना कि कहीं गिर-गिरा न पड़ें या आपस में लड़ न मरें, अथवा ऊधम तो नहीं करते, आपस में गाली तो नहीं देते, पढ़ते हैं कि नहीं ? मारते तो नहीं ! जो बहुत छोटे बालक हों, उनको आग के पास न गड़े व मुड़ेर पर, द्वार पर या बाहर न जाने दे। हर फसल पर उस फसल की वस्तु का ध्यान रखना। जो वस्तुएँ अचार की हों, उनको मँगाकर उसी फसल में अचार डाल देना। जिस दिन अच्छी और सस्ती मिलें, मँगा लेना। नहीं तो फसल के पीछे वह वस्तु बहुत दाम को भी नहीं मिलती। कचरियों के दिन में कचरी सुखा लेना। जिसकी कचरी करनी हों उसी की फसल पर याद रखनी चाहिए। इसी प्रकार की और भी वस्तुएँ गृहस्थ

के घर में रहनी चाहिए—जैसे बड़ी, मुँगौड़ी, पापड़। ये भी अपने समय व अवकाश पाकर करते रहना। अपने घर में सब वस्तुएँ इस प्रकार और इतनी रखनी कि यदि कोई पाहुना आ जाय, तो बाजार-हाट से कोई वस्तु न मँगानी पड़े, क्योंकि कोई-कोई समय ऐसा होता है कि बाजार-हाट बन्द होता है, तो फिर वह वस्तु उस समय कहाँ से आवेगी? और पाहुने के आने का कोई समय नियत नहीं। न-जाने किस समय आ जाय। बहुधा ऐसा होता है कि रात्रि के दस बजे या आधी रात को पाहुना आ जाता है। जो घर में कोई वस्तु उस समय नहीं है, तो कहाँ से अब मिले? किसके घर माँगती फिरे? किसको जगावे? किसकी दूर दूकान से जाकर लावे? इधर पाहुने को मालूम हो, तो वह अपने मन में सकुचे कि मैंने इनको वृथा इतना कष्ट और श्रम दिया। उधर सब कोई जान जायँ कि फलाने के घर से रात्रि को फलानी वस्तु माँगी गई थी। और यदि न मिली, तो पाहुने का, जैसा चाहिए वैसा, आदर-सत्कार न हो सके। इसलिए गृहस्थ को अपने यहाँ वे सब वस्तुएँ, जो नित्य चाहिए, रखनी चाहिए।

जो घर में कोई गऊ या भैंस हो तो उसको नित्य देखती रहे, चाकरों पर भरोसा न करे; क्योंकि "अपना काम महाकाम" होता है।

घर को भी देखती रहे कि कहीं से टूटा-फूटा नहीं है। जहाँ से हो, वहाँ तुरन्त उसकी मरम्मत क… दे। वर्षाऋतु से पहले तो अवश्य करा दे, नहीं गिरने-पड़ने का भय रहता है।

ईंधन भी वर्षाऋतु से पहले ही ले लेना चाहिए क्योंकि वर्षा में एक तो अच्छा नहीं मिलता, दूसरे महँगा मिलता है। कभी-कभी मिलता भी नहीं। वर्षा में अठवारे व पखवारे पीछे जब धूप निकले, और बादल खुला हुआ हो, तब कपड़ों को धूप में डाल देना चाहिए। बिना धूप लगाये उसमें सील आ जाती है। उनमें फफूँदी लग जाती है, वे बिगड़ने लगते हैं, कीड़े लग जाते हैं। ऊनी और रेशमी कपड़ों में कसारी लग जाती है, जो उन्हें कुतर डालती है। इसलिए उनको तो एक अलगनी पर बाँधकर हवा में रक्खे रहे। ऐ… कपड़ों को वर्षाऋतु में बाँधकर कभी न रक्खे। इ… दिनों में जो भभक उत्पन्न हो जाती है, उसी से हानि पहुँचती है। खुले हुए हवादार स्थान में रखने से यह भभक उत्पन्न नहीं होने पाती।

कपड़ों को सदा तह करके सन्दूक आदि में रखना चाहिए। पसीने लगे हुए कपड़ों को भली भाँति सुखा-कर तह करे।

घर की जो बड़ी-बूढ़ी हों, वे बालकों के खिलाने-पिलाने और शिक्षा देने का भार अपने ऊपर लें; क्योंकि उनके लिए यही उत्तम और सुगम काम है। परिश्रम का काम उनको न करना चाहिए।

यदि कोई भोज आदि करना हो, जैसे ज्योनार, पंगत इत्यादि, तो उसकी तैयारी कई दिनों पहले से करनी चाहिए, जिससे उस दिन तक सब सामग्री इकट्ठी हो जाय, और तत्काल कुछ चिन्ता न करनी पड़े। यदि कोई बहुत बड़ा भोज करना हो, तो उसकी चिन्ता और अधिक दिन व कई महीने पहले से करनी चाहिए; क्योंकि थोड़ा-थोड़ा करने से काम सुगम और अच्छा होता है। बहुत चिन्ता भी नहीं करनी पड़ती।

यह भी याद रखने की बात है कि जिस काम को किया जाय, पूरा ही किया जाय। अधूरा काम किसी काम का नहीं होता। जो काम अधूरा रह जाता है, वह फिर पूरा कभी नहीं होता। अधूरे का अधूरा ही पड़ा रहता है। इसलिए जो काम किया जाय, वह पूरा कर देना चाहिए, और मन लगाकर करना चाहिए। जो काम मन लगाकर नहीं होता, बेमन होता है, वह अच्छा नहीं होता। मैंने यह भी देखा है कि गृहस्थ स्त्रियाँ अपनी अल्प बुद्धि से समझती तो हैं नहीं, छोटे-छोटे काम,

जो नौकरों के योग्य हैं, जिनको अपने हाथों से करने में काम थोड़ा-सा ही होता है और समय अधिक लगता है, जो नीच व दासी-कर्म कहलाते हैं, करने लगती हैं और नौकर-चाकर को नहीं रख लेतीं। कहती हैं कि इन नौकरों के देने को इतना कहाँ से लावें। यह उनकी भूल है। प्रथम तो दो या तीन रुपये महीने में नौकर मिल सकता है, जो दिन-भर घर का काम कर सकता है, दूसरे दासी-कर्म अपने हाथ से करने में ओछापन समझा है। यदि वे थोड़ा-सा विचारें, तो उनको ज्ञात होगा कि जिन कामों को वे स्वयं करती हैं, उनको यदि वे नौकर-चाकर से करवावें, और आप उस समय [illegible] का काम करें, तो कितना लाभ हो।

[illegible] है तुझे उत्तम और अधम कामों के नाम गिनाती [illegible] के करने और न करने से गृहस्थ को श्रेष्ठ [illegible] मिलती है। उत्तम काम ये हैं—

[illegible] विद्या पढ़ना और पढ़ाना, (२) सीना [illegible] और कसीदा आदि काढ़ना, (३) चित्र व पुस्तक [illegible] (४) घर की वस्तु लेना-देना व सम्हालना, [illegible] जोखा रखना, (६) गोलह [illegible], बीज निकालना, कलाबत्तन बटना [illegible] ये हैं—

(१) आटा पीसना, (२) बुहारी देना, वर्तन माँजना, (३) वस्त्र धोना, सुखाना व रखना, (४) नाज बीनना, फटकना व दाल दलना, छानना, (५) लीपना, पोतना, चौका लगाना, (६) बालकों को खिलाना इत्यादि।

मैं तुझको घर का काम-धंधा तो बता चुकी। अब कुछ उपदेशमात्र और कहकर समाप्त करती हूँ—

(१) स्त्री को परिश्रमी होना बहुत ही उचित है। परिश्रम को कोई नीच-कर्म नहीं कहता। वरन् परिश्रम से स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है। विपत्तिकाल में इसकी टेंव बड़े काम आती है।

(२) अपने कपड़े अपने हाथ से सिये, दर्जी से न सिलावे; क्योंकि बहुत से कपड़े ऐसे हैं, जिनको लज्जावश दर्जी से सिलाना उचित नहीं।

(३) जो कपड़े व अन्य वस्तु (जैसे अचार, मुरब्बा) धूप लगाने योग्य हों, उनको आठवें-दसवें दिन धूप दिखा देनी चाहिए। विशेषकर वर्षाऋतु में।

(४) फटे हुए कपड़े को सदा सी लेना चाहिए और धोबी को तो बिना सिये कभी फटा कपड़ा न डालना चाहिए।

(५) जो कपड़े मैले, धोबी के भेजने योग्य हों, उनको किसी वस्त्र में बाँधकर रक्खे। फैले कभी न रहने दे।

(६) धोबी के डालने से पहले उनको बही में लिख ले। जब धुलकर आवें, बही के लिखे से मिला ले।

(७) ऊनी, पसमीने और रेशमी कपड़ों की बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। उनमें सदा नीम के सूखे पत्ते, कपूर अथवा इसी हेतु जो एक विशेष कागज होता है, उसको कपड़ों की तह में रक्खे।

(८) वर्षा में ऐसे कपड़ों को बाँधकर कभी न रक्खे। सदा खोलकर खूँटी या अलगनी पर इस प्रकार लटका दे कि उनमें हवा लगती रहे। इससे उनमें कभी कीड़ा या कसारी नहीं लगती।

(६) ऐसे कपड़ों को भी कभी न रक्खे, विशेषकर वर्षाऋतु में। नहीं तो लाहन उठकर तुरन्त गल जाते हैं।

(१०) मिट्टी के तेल से, जो आजकल बहुत प्रचलित हो गया है, सदा सावधान रहे। कहीं वह कपड़े पर गिरने से कपड़े में अग्नि न लगने पावे या वह दीपक में खुला हुआ न जलाया जावे। इससे बहुधा स्त्रियाँ मर गई हैं, और घरों में आग लग गई है।

(११) अधजली लकड़ी को बुझाकर कभी ईंधन के ढेर में न रक्खे। इस कारण कि न जाने उसमें कुछ आग बाकी रह गई हो, तो सारे ईंधन में आग लग जायगी।

(१२) अगर दीमक लग जाती हो, तो कपूर और तम्बाकू को बराबर-बराबर ले, और पीसकर सातवें दिन उस स्थान पर तथा उस वस्तु, किताब, अलमारी व सन्दूक इत्यादि में डाल दिया करे। ऐसा करने से दीमक वहाँ फिर कभी न लगेगी।

व्यय आदि का प्रबन्ध

अधिक परिश्रम करने से इतना लाभ नहीं होता जितना उन कामों को चाकरों से कराने और अपने हाथों से उत्तम कामों को चतुराई के साथ करने में होता है। बहन! अब इसके संग में तुझे यह भी बताये देती हूँ कि घर का खर्च किस रीति से करना चाहिए। इसको नियम के साथ करने से बहुत बचत होती है। जो स्त्री अपने घर का खर्च ऊल जलूल और बेक़ायदे करती है, उसका खर्च तो अधिक होता ही है, और काम उतना नहीं निकलता।

खर्च को अच्छी भाँति करने की यह रीति सबसे उत्तम है कि एक महीने या एक वर्ष-भर के लिए प्रत्येक वस्तु का खाता डाल ले। नाज एक महीने व वर्ष-भर में इतने रुपये का, घी इतने का, मसाला इतना, अमुक वस्तु इतने की और अमुक इतने की इत्यादि।

इस लेखे से जो सारी आमदनी में से
इस भाँति व्यय करे। धर्मखाते में इतन
उत्सव में इतना (यदि कोई विवाह आदि इ
तो वह विवाह तक जुड़ता रहेगा), चाकरों
में इतना, गहने-पाते में इतना, कपड़ों में इतन
टूट-फूट व बनाने में इतना (यदि अपना घर न
किराये में इतना), नातेदारों तथा मेहमान-पा
व्यय के लिए इतना, फुटकर इतना।

अब इसमें जैसा जिसके यहाँ आय-व्यय हो वह
प्रकार अपना लेखा कर सकती है। किसी में अ
किसी में कम इत्यादि। जिसके जैसी आय हो,
उसी प्रकार से इनको नियत कर सकती हैं। सबके लि
एक-सा नियम नहीं हो सकता। पर हाँ, इतना अवश्य
है कि बहुत-से चतुरों की तो यह कहावत है कि आय
का तीसरा हिस्सा (⅓) व्यय किया जाय। दूसरी
तिहाई टिक त्योहार वगैरह के लिए रक्खे और तीसरी
आपत्ति-विपत्ति के लिए रख छोड़े।

लिए यह बात नहीं है। पर जहाँ आय पूरी है, और व्यय अधिक नहीं, वहाँ के लिए यह कहा है कि जो तृतीयांश में पूरा न पड़े, तो अधिक कर ले। पर आधे से अधिक व्यय न करे। और आय से अधिक तो किसी दशा और काल में व्यय न करे। आधा व्यय करे और आधा जोड़ता जाय। न-जाने, किस समय काम पड़े और काम आवे।

जो गृहस्थ उपर्युक्त रीति से नहीं बर्तते, वे सदा ऋणी ही बने रहते हैं, और रात-दिन थुक्काफजीहत में ही उनका जीवन और जन्म जाता है। कभी कोई आकर अपना उधार माँगता है, कभी कोई आकर दस खोटी सुनाता है। कहता है, पहले तो लाकर खर्च डाला और देती बेर छिपे फिरते हैं। कभी कहते हैं, आज देंगे; कभी कहते हैं, कल देंगे। नित्त-नित्त बहाने बताते हैं कि अभी खर्च नहीं आया। तब नहीं सोचा कि यह सब जो हम इसके यहाँ से लिये जाते हैं, कहाँ से देंगे। उस समय तो खा बैठे। अब देते समय प्राण निकलते हैं। नित्त फिर जाते हैं; पर यहाँ कुछ चिन्ता ही नहीं कि कौन आता है। इस प्रकार घर पर आकर जिनका उधार चाहता है, वे नित्त फजीहत करते हैं। लोग हँसते और नाम धरते हैं। फिर कोई उधार भी नहीं देता।

इसलिए गृहस्थ को अपने घर का व्यय इस री
करना चाहिये कि कभी उधार न लेना पड़े। विवाह,
उत्सव में सब काम अपने घर में से ही चल जायँ। प्र
वस्तु के खाने डालने से यह ज्ञात और प्रतीत होता र
है कि किस मास में किस वस्तु में क्या उठा। अधि
उठा या कम ? यदि एक महीने में, किसी काम में अधि
उठ गया, तो उसकी त्रुटि दूसरे महीने में निकाल देनी
चाहिए। यदि एक महीने में न निकल सके, तो दो-
तीन महीने में निकाल ले। और जो किसी महीने में
किसी खाने में बचत रहे, तो उसमें अधिक व्यय न कर
डाले। अधिक व्यय होने के तो सौ अवसर आयेंगे;
पर थोड़ा उठने का कदाचित् ही कोई अवसर होगा।
जैसे खाते डालने से व्यय अधिक नहीं होने पाता, इसी
प्रकार अच्छा प्रबन्ध रखने से बचत भी बहुत हो जाती
है। जिन स्त्रियों का प्रबन्ध अच्छा है, वे कहती हैं, छोटे-
छोटे व्यय रोकने से उतनी बचत नहीं होती, जितनी
अच्छा प्रबन्ध करने और रखने से होती है।

"फुटी-फुटी ताल भरे" और "कन-कन जोरे मन जुरे"। सो इसी प्रकार घर का व्यय है कि जो एक-एक पैसा दस वस्तुओं में बचे, तो सहज में ढाई आने हो जायँ। पर यदि इन्हीं दस वस्तुओं में एक-एक पैसा अधिक उड़ जाय, तो ढाई आना अधिक व्यय हो जाता है। इस प्रकार पाँच आने का अन्तर हो जाता है। जो नित्यप्रति ऐसा ही हो तो १०) महीने का लेखा जुड़ता है, और वर्ष-भर में १२०) का अन्तर जा पड़ता है। एक-एक पैसा तो कुछ नहीं जान पड़ा; पर अन्त में १२०) जुड़ गये। इसलिए प्रत्येक वस्तु में बचत करनी चाहिये, तो सहज में बड़ी बचत निकल आवेगी। यथा—

कौड़ी-कौड़ी जोरि के, धनी होत धनवान।
अक्षर-अक्षर के पढ़े, पण्डित होत सुजान॥

जब देखे कि मुझको अपने किसी लड़के, लड़की या अन्य किसी का कोई ठिक या विवाह करना है, तो उसका प्रबन्ध बहुत दिन पहले से करना चाहिए। उसका व्यय अपने वित्त के अनुसार करे। यह न करे कि एक ही का हो रहे और मर मिटे। उधार आदि लेकर धूमधाम से कर डाले, और पीछे धूल उड़वावे। उधार लेकर गृहस्थ कभी कोई काम न करे। उधार गृहस्थ का वैरी है, सदा

इसलिए गृहस्थ को अपने घर का व्यय इस रीति से करना चाहिये कि कभी उधार न लेना पड़े। विवाह, ठिक, उत्सव में सब काम अपने घर में से ही चल जायँ। प्रत्येक वस्तु के खाते डालने से यह ज्ञात और प्रतीत होता रहता है कि किस मास में किस वस्तु में क्या उठा। अधिक उठा या कम? यदि एक महीने में, किसी काम में अधिक उठ गया, तो उसकी त्रुटि दूसरे महीने में निकाल देनी चाहिए। यदि एक महीने में न निकल सके, तो दो-तीन महीने में निकाल ले। और जो किसी महीने में किसी खाते में बचत रहे, तो उसमें अधिक व्यय न कर डाले। अधिक व्यय होने के तो सौ अवसर आवेंगे; पर थोड़ा उठने का कदाचित् ही कोई अवसर होगा। जैसे खाते डालने से व्यय अधिक नहीं होने पाता, इसी प्रकार अच्छा प्रबन्ध रखने से बचत भी बहुत हो जाती है। जिन स्त्रियों का प्रबन्ध अच्छा है, वे कहती हैं, छोटे-छोटे व्यय रोकने से उतनी बचत नहीं होती, जितनी अच्छा प्रबन्ध करने और रखने से होती है।

सब व्यय अच्छी तरह सोच-विचार करके नियत कर ले, और उनमें से थोड़ी-सी बचत करे, तो एक ढेर लग जाय। काम उतना ही हो, और बचत की बचत निकल आवे। यह कहावत तो बहुत दिनों से चली आती है कि

"फुही-फुही ताल भरे" और "कन-कन जोरे मन जुरे
सो इसी प्रकार घर का व्यय है कि जो एक-एक
दस वस्तुओं में बचे, तो सहज में ढाई आने
जायँ। पर यदि इन्हीं दस वस्तुओं में एक-एक
अधिक उड़ जाय, तो ढाई आना अधिक व्यय हो ज
है। इस प्रकार पाँच आने का अन्तर हो जाता
जो नित्यप्रति ऐसा ही हो तो १०) महीने का ले
जुड़ता है, और वर्ष-भर में १२०) का अन्तर
पड़ता है। एक-एक पैसा तो कुछ नहीं जान पड़
पर अन्त में १२०) जुड़ गये। इसलिए प्रत्येक वस्तु
बचत करनी चाहिये, तो सहज में बड़ी बचत नि
आवेगी। यथा—

कौड़ी-कौड़ी जोरि के, धनी होत धनवान।
अक्षर-अक्षर के पढ़े, पण्डित होत सुजान॥

जब देखे कि मुझको अपने किसी लड़के, लड़की
अन्य किसी का कोई ठिक या विवाह करना है, तो उस
प्रबन्ध बहुत दिन पहले से करना चाहिए। उसका
अपने वित्त के अनुसार करे। यह न कर कि एक
का हो रहे और मर मिटे। उधार आदि लेकर धूम

उसकी जड़ काटता रहता है, गृहस्थ को जमने नहीं देता। काम करते समय यह स्मरण रक्खे—

अपनी पहुँच विचार के, करतब करिये दौर।
ते ते पाँव पसारिये, जेती लाँबी सौर॥
कारज वाही को सरै, करै जो समय निहार।
कबहुँ न हारै खेल जो, खेले दाँव विचार॥

इतनी बातों से मनुष्य को ऋण लेना पड़ता है—

[१] अपनी सामर्थ्य से अधिक व्यय कर देने से।

[२] तिक-त्योहार में अधिक व्यय करने से।

[३] ठीक प्रबन्ध न रखकर आय-व्यय का कुछ ध्यान न रखने से।

[४] किसी की साक्षी (जामिन) होकर उसके पलटे आप देने से। इस ऋण में इतने दोष होते हैं—

[क] ऋणी बनना और कहलाना।
(ख) ब्याज देना।
[ग] अपमान और निन्दा सहनी।
[घ] झूठ बोलने का अभ्यास होना।
[ङ] ऋण देनेवाले से टलना।
[च] बेदियानती।
[छ] कुटुम्ब परिवार पर विपत्ति बुलाना इत्यादि।

लेना यद्यपि लोग सुगम बतलाते हैं, तथापि मैं

तो इसके लेने को भी कठिन ही कहती हूँ ; क्योंकि जिससे ऋण लेना चाहते हैं, उससे प्रथम तो माँगना पड़ता है, उसकी लल्लो-पत्तो करनी पड़ती है। इस पर भी कभी आज और कभी कल देने का वह बहाना करता है। दस झूठी प्रशंसाएँ करनी पड़ती हैं, तब कहीं ऋण का डौल बैठता है। पर चुकाना तो इसका बहुत ही कठिन है, जैसे पहाड़ का चढ़ना। सो ऋण में कोई गुण नहीं, अवगुण ही अवगुण है। यदि अपने किसी इष्टमित्र या सम्बन्धी ही से ऋण लें, तो भी बुराई ही है ; क्योंकि इस ऋण के कारण राह-रीति और प्यार-प्रीति में बट्टा लग जाता है, मनों में अन्तर पड़ जाता है। अरबी भाषा में एक कहावत है—"अलकर्ज़ मिकराज़ुल मुहब्बत" (القرض مقراض المحبت) अर्थात् ऋण प्रीति की कतरनी है। इस देश में भी कहावत है कि यदि तू बैरी चाहता है, तो किसी को धन दे दे, और फिर उससे माँग। वही तेरा बैरी हो जायगा। सो इस ऋण को कभी कोई न ले। परन्तु इस देश में तो दो लाख, इक्कीस सहस्र (२,२१,०००) मनुष्यों का व्यापार ही ऋण देना है, जो महाजन कहलाते हैं।

यदि देखें कि ऋण लिये बिना काम ही नहीं चलता (क्योंकि बहुधा ऐसी दशा और समय गृहस्थ के लिये

का आ गया, जिसके किये बिना बनती नहीं) तो उस समय ऋण लेकर काम निकाल लेने में कुछ चिन्ता भी नहीं।

गृहस्थों के सैकड़ों काम इस रीति से भी चलते हैं कि महीने-दो-महीने या वर्ष-भर को उधार ले ले। जब रकम आ जाय तब पहले चुका दे, अथवा व्यय को कम कर करके धीरे-धीरे चुकाता रहे। यह नहीं कि उधार लेकर कार्य तो कर लिया; पर उधार चुकाने की कुछ चिन्ता नहीं। जो स्त्री उधार लेकर निश्चिन्त हो जावेगी, वह सदा ऋण में डूबी रहेगी। ब्याज ही देते-देते पिण्ड न छूटेगा; क्योंकि ब्याज और भाड़ा घोड़े की दौड़ दौड़ते हैं। जितने वेग से समय चलता है, उतने ही वेग से ये चलते हैं। यह इस कारण कि ये तो समयरूपी घोड़े पर ही सवार हैं। ब्याज और भाड़ा तो नित्त का नित्त ही निकाल देना अच्छा होता है, और जो ऐसा न बन पड़े, तो महीने के महीने तो अवश्य ही निकाल देना चाहिये। इसके सिवा मूल ऋण के निपटाने की चिन्ता और करनी चाहिये। इसका भी मासिक या छमाही कुछ नियम कर दे कि लिया, हाथ के हाथ पकड़ा दिया, जो गया सो नहीं। बोझ जितना हल्का होता है, उतना ही सुभीता पड़ता जाता है। यह न ठाने कि सब-का-सब एक ही समय में चुका दूंगी। थोड़ा-थोड़ा करके मालूम भी नहीं

होता, और सहज ही में निबट जाता है। किसी ने सत्य उपदेश किया है—

जड़ कबहूँ नहिं काटिये, काहू की मनधार।
पापरु ऋन की जड़ कटी, यही भलो निरधार॥

यदि ऋण से उऋण होना चाहे तो इन नियमों का पालन करे।

(१) जो ऋण सम्पत्ति (जायदाद) व गहनों पर हो अर्थात् वे गहने जो गिरवी रक्खे हों, तो उनको तुरन्त बेचकर रुपया चुका दे। बेचने में गिरवी रखने से अधिक लाभ होता है।

(२) ब्याज को कभी न बढ़ने दे। नियत समय पर अवश्य ही चुकाता रहे, और कुछ मूल में भी देता जाय।

(३) व्यर्थ व्यय को घटाना, वरन् तुरन्त रोक देना चाहिये।

(४) फुटकर व्ययों का पूरा-पूरा प्रबन्ध कर देना चाहिये—जैसे पान, तम्बाकू, चाट, शराब, मेले, तमाशे में जाना इत्यादि, जिनके बिना किसी काम की हानि नहीं होती।

(५) आय-व्यय का लेखा रखना और कौड़ी कौड़ी का लेखा लिखते जाना, फिर देखना कि कौन

(६) उधार कोई वस्तु न मँगानी, न किसी से उचापत रखनी वरन् रोकड़ मँगाना।

(७) हाट-बाट में बहुत न जाना ; क्योंकि ऐसे स्थान में जाकर कुछ-न-कुछ मोल लेना ही पड़ता है। वस्तु देखकर जी चल आता है।

(८) आलस्य को त्याग मेहनती होना।

(९) नाहीं करना सीखना ; क्योंकि यह भी एक लाभकारी वस्तु है। लज्जा संकोच के मारे जो माँगने को आता है, उससे नाहीं नहीं कर सकते; देना ही पड़ता है। पर पीछे उससे पटता है नहीं। इसलिये यदि नाहीं करने की टेंव होगी, तो वह न देना पड़ेगा और यही लाभ होगा। जो किसी का उधार लेकर फिर नहीं चुकाते, उनकी साख जाती रहती है, उनको कोई पतियाता नहीं और न दूसरी बेर उनको कोई देता है। यही कहावत होती है—

फेर न ह्वै है कपट से, बनज किये व्यापार।
जैसे हाँडी काठ की, चढ़ै न दूजी बार॥

और न अधिक ब्याज पर उधार लेना अच्छा; क्योंकि लेने समय तो इसका कुछ विचार नहीं रहता; पर देने समय छाती फटती है। मूल से भी अधिक ब्याज हो जाता है, और तब बेईमानी सूझती है। इसलिये पहले ही से इसका विचार कर लेना चाहिये। जो अधिक

ब्याज पर लेती-देती हैं, वे दोनों बेईमान होती हैं, अधिक ब्याज देनेवालों का रुपया कभी पटता नहीं, अधिकतर बट्टे खाते जाता है, और यह कहावत होती है—

रहे न कौड़ी पाप की, ज्यों आवै त्यों जाय।
लाखन को धन पायकै, मरे न कफ्फन पाय॥

ऐसी ही एक स्त्री का समाचार मैं तुझको सुनाती हूँ। एक समय एक ठगिनी स्त्री एक ऐसी ही स्त्री के पास से ५०), १०) सैकड़े ब्याज पर ले गई, और ५) ब्याज के पहले ही दे गई। दूसरे दिन आकर एक रुपया और देकर उन ५) को भी ले गई। वह स्त्री अपने मन में बड़ी प्रसन्न हुई कि यह असामी चोखी है जो ब्याज पहले ही दे जाय। इसका लेन-देन खरा है। तीसरे दिन आकर एक टका देकर उस रुपये को भी ले गई और महीनों मुँह न दिखाया। तब तो वह स्त्री लगी उसे खोजने; पर उसका पता कहाँ! वह तो ठगिनी थी। कुछ असामी थोड़े ही थी। तब तो वह स्त्री मन-ही-मन पछताकर यह दोहा कहने लगी—

पाँच पचासै ले गयो, पाँचै ले गयो एक।
टका एक को ले गयो, ताहीं को तू पेख॥

इसलिये अधिक ब्याज पर लेना-देना दोनों बुरे हैं। और लिखकर रुपया देना भी बुरा है। बहुत सी स्त्रियाँ

बहू-बेटियों से छिपकर उधार ले जाती हैं, और उनको ठगती रहती हैं। ब्याज के लालच में आकर जो कुछ उनके पास सास-ननँद की चोरी चकारी से जुड़ता है, वह सब इन ठगिनियों से ठगा बैठती हैं, और वे ठगिनियाँ साफ पचा जाती हैं। वे झट कह देती हैं—हमें कब दिया था? हम तो जानती भी नहीं। हमारा झूठा नाम लगाती हैं। कुछ बहू-बेटियाँ लाज के मारे प्रकट नहं करतीं। जो घरवालों को मालूम हुआ, तो हाय-हाय मचेगी और बुरी-भली सुननी पड़ेगी, इसलिये ऐसियों को देना ही भला नहीं। वे चाहे जितनी बातें बनायें और मिलायें, कभी उनके धोखे और लालच में आकर मत दो। और न किसी रसायनी आदि के लालच में आ जाओ कि फलाने बाबाजी चाँदी का सोना कर देते हैं। चलो, हम भी अपना गहना ले चलें और सोने का करा लावें। जो बाबाजी ऐसे ही होते, तो घर बैठे ही न पुजते, घर-घर भीख क्यों माँगते फिरते? कभी किसी ऐसी स्त्री या बैरागी के छल में मत आओ।

अपने चाकरों की तनख्वाह को भी एक प्रकार का उधार ही समझो। कभी दूसरे महीने के लिये मत चढ़ाओ। जिस महीने की तलब हो, उसी के अन्त में चुका दो। इसमें दो लाभ हैं। एक तो यह कि बोझ नहीं चढ़ता।

दूसरे यह कि नौकरों को चोरी की टेंव नहीं पड़ने पाती। चाकर भूखा रहने और तनख्वाह न मिलने से चोरी सीख जाता है। इसलिये कभी किसी चाकर की तनख्वाह दूसरे महीने को मत चढ़ाओ। और अपने चाकरों को तनख्वाह औरों से आठ आने या एक रुपया अधिक दो। इससे एक तो चाकर काम को मन लगाकर करता है; क्योंकि वह जानता है, यहाँ से जो छूटूँगा, तो मुझे इतनी तनख्वाह न मिलेगी, और दूसरे यह कि पूरी तनख्वाह पाने से चोरी करने को उसका मन न ललचायगा। नौकर के चोरी करने से वस्तु में बरकत नहीं रहती। जब दीखती है, तब उठी ही सी दीखती है। मैं इस समय तुझको यह भी बताना आवश्यक समझती हूँ कि चाकर कैसा मनुष्य रखना चाहिये। उसमें ये गुण होने चाहिये—

(१) विश्वासपात्र हो, (२) चाल-चलन का अच्छा हो, (३) परिश्रमी हो, (४) दीन हो, (५) उत्तर देनेवाला न हो, (६) झूठ बोलनेवाला न हो, (७) यहाँ की बात वहाँ और वहाँ की यहाँ न कहता हो, (८) बेअदब न हो, (९) चोर न हो, (१०) ज्वारी न हो, (११) स्वामिभक्त हो, (१२) [illegible]

चाकर के सङ्ग अनुचित कदापि न करना चाहिये। उसके दिल को थामे रहे। नौकर को थोड़ी-थोड़ी बात पर बेर-बेर झिड़के नहीं, और क्रोध न करे। जब वह अपराध करे, तब अकेले में उसे समझा दे या ताड़ना कर दे; पर सबके सम्मुख ऐसा न करे। पुराने नौकर को जहाँ तक हो, न निकाले और नौकर जल्दी जल्दी न बदले।

चटोरपन से भी अधिक व्यय होता है, कभी पूरा नहीं पड़ता। गृहस्थ की बहू-बेटियों को चटोरपन में बहुत ही दुःख भोगना पड़ता है। वे सदा नङ्गी-बूची ही रहती हैं। कभी शरीर पर न अच्छा कपड़ा होता है, और न गहना-पाता।

चटोरपन तो तब सूझना चाहिये, जब पेटदास और बीबी जीभ के स्वाद से कुछ उबरे। चटोरी स्त्रियों को यहाँ तक देखा और सुना है कि गहना-पाता, हाट-हवेली सब बेचकर खा गई और अन्त को भिखारिन हो बैठीं। कहा है—

जीभ न जाके बस रहे, सो नारी मतिहीन।
धन लज्जा आरोग्य त्यों, करै प्रतिष्ठा छीन॥
आपनी दुखी निज को करै, नारि चटोरी जोय।
झूठ, डाह, कपटादि सब, औगुन ताके होय॥

गृहस्थ की लाजलाज गहने और कपड़े ही से है
चाहे घर में धन बहुत न भी हो; पर सौ-पचास रुप
का टूम-छल्ला और हुरमत-आबरू का कपड़ा अवश्य हो
जो दस में जाकर बैठे, तो भिखारिन-सी तो न लगे
पर जो चटोरिनें होती हैं, वे सदा भूखी और दरिद्रि
ही रहती देखी हैं; क्योंकि किसी ने सच कहा है-
"चटोरी जीभ धन को नहीं देख सकती और उस
आगे कुछ नहीं ठहरता।" गृहस्थ स्त्रियाँ जब कोई ती
त्योहार आता है, तब तो ऐसी वस्तु खाने-पीने की अ
लेती हैं, पर नित्य और सदा नहीं खातीं; क्योंकि ख
के आगे कुआँ और खाई तक भी निबट जाती हैं
चटोरपन गृहस्थ को निर्धन कर देता है, और निर्धन
कोई बात नहीं पूछता। जिस पर बीतती है वही भोग
है। सम्पत्ति में हजार संगी हो जाते हैं, विपत्ति में
दूर भागते हैं। किसी का वाक्य है कि "वन में फिर
बाघ और हाथी के मुख में पड़ना। वृक्ष के नीचे निव
करना, फल खाकर जीना, घास पर सोना, छाल अ
पत्ते पहनकर अङ्गरक्षा करना अच्छा है; परन्तु नि
होकर बन्धुवर्गों में रहना अच्छा नहीं।" इसलिये स
धन को व्यर्थ व्यय करके निर्धन न हो बैठे। परन्तु

धन से तो धनहीन होना ही अच्छा। इसलिये कोई काम ऐसा न करे, जिससे विपत्ति आवे; क्योंकि उस समय लोगों की यह रीति होती है—

यद्यपि अपनो होय तउ, दुख में करत न सीर।
ज्यों दुखती अँगुरी निकट, दूसरि ताहि न पीर॥

घर की सामग्री कम-से-कम एक महीने की मँगाकर रख लेनी चाहिये। इकट्ठी आने से बरकत होती है। और जो फसल पर नाज व दूसरी वस्तुएँ ली जायँ, तो और भी बरकत होती है, और सस्ती मिल जाती है। बाजार से आई हुई वस्तु को तोलना चाहिये। जितनी घटे, वह मँगानी चाहिये; क्योंकि प्रथम तो बनिया ही स्याना होता है, और फिर "चोर के भाई गठकटे" चाकर होते हैं। एक रुपये में चौदह आने का लाते हैं। सेर-दो-सेर राह में ही निकालकर रख आते हैं। वस्तु जब मँगवाई जाय, तब दो-चार के यहाँ से भाव पुछवाकर मँगवानी चाहिये। एक ही के भाव पर न मँगवा लेना चाहिये, और न किसी से कर्ज मँगानी चाहिये। कर्ज में कुछ तो पैसे ही बाजार के भाव से कम मिलता है, दूसरे ध्यान नहीं रहता कि क्या उठा और मोदी ने कितने का कितना लिख लिया। जब मँगावें, तब नकद दाम देकर मँगवावें। इसमें एक तो वस्तु भाव भगा

से देख-भालकर आती है, दूसरे सस्ती आती है; क्यों
कहा है—"तुरत दान महाकल्यान।"

जो वस्तु थोड़ी-सी भी बचे, उसको उठाकर उस
स्थान पर रख देना। पर एक वस्तु को सात जगह
रखना चाहिए। एक वस्तु को एक ही स्थान में रख
ठीक है; क्योंकि इस प्रकार करने से कोई वस्तु फैली
बिखरी नहीं रहती, और मूसे-बिल्ली के मुँह नहीं पड़
पाती, जिसमें हानि हुआ करती है। छोटी-छोटी व
भी सैंतकर रखनी चाहिए। जैसे—लकड़ियों के कोयले
जो जाड़े के दिनों में तापने के काम आवेंगे, और दा
देकर मोल मँगवाने न पड़ेंगे। आटे की भूसी, दाल
छिलके और चूनी, नाज की फटकन, सेहूँ-सरसों
सैंतकर रखने से गोवर बहुत सुगमता से आ जा
है, अर्थात् अहीर, घोसी या पड़ोसी, जिसके यहाँ
गोवर मँगाना हो, उनके यहाँ इनको भेजे, तो वे गो
देने में आनाकानी न करेंगे। नहीं तो लीपने के लि
गोवर माँगने को घूमना पड़ेगा, और दूसरों का एहस
उठाना होगा। यदि गोवर की भी आवश्यकता न प
तो ये चीजें थोड़े दामों को बिक भी जाती हैं। गा
भैंसवाले अहीर, घोसी, गद्दी आदि चूनी, भू
आदि को और कबूतरवाले सेहूँ, सरसों आदि को मे

ले जाते हैं। इनके पैसे से गोबर आदि आ जायगा; नहीं तो पास से पैसा खर्चना पड़ेगा। पड़ोसी बेर-बेर अपनी वस्तु देने में सकुचेगा। यदि सैंतकर न रक्खोगी, तो यों ही फेक दोगी, जैसे बहुधा स्त्रियाँ फेक देती हैं। पर थोड़े से प्रबन्ध और सावधानी से सहज में एक काम निकल जायगा, और किसी का एहसान न उठाना पड़ेगा। खरबूजे, तरबूज, काशीफल, इनके बीजों को रख लेना चाहिए। मींगी छीलकर सौ काम में आ जाती हैं—जन्माष्टमी को पाग बनाने में व लड्डुओं में डालने में। नहीं तो बिसाहनी पड़ेंगी। तरबूज के सफेद गूदे को छील उसका अचार डाल लेना चाहिए। नहीं तो वृथा फेकना पड़ेगा। खरबूजे, जिनका छिलका कड़ा हो, उनके टुकड़े करके ऊपर से मोटा-मोटा छिलका चक्कू से उतार ले और धूप में सुखा ले। इनकी कचरी हो जाती हैं। घी में तलकर नमक-मिर्च मिलाकर खाने से बहुत जायकेदार होती हैं। बिना दाम ये वस्तुएँ काम में आ जाती हैं। नहीं तो यों ही फेक दी जाती हैं। पर चतुर स्त्रियाँ ऐसा नहीं करतीं। वे ऐसी-ऐसी भी वस्तुओं से कुछ-न-कुछ काम ले ही लेती हैं, जिनको मूर्ख स्त्रियाँ व्यर्थ जानकर फेक देती हैं। जैसे आम की गुठली आदि।

मैंने अपने पड़ोस में एक स्त्री को एक दिन देखा

कि उसने पक्के आमों का रस निचोड़कर तो अलग
लिया। फिर गुठली और छिलके जो बचे, उनको प
में धो, गरम मसाले में बघार देकर नमक, मिर्च, मस
डाल एक प्रकार की कढ़ी बना ली। मैंने भी
चक्खा; बहुत स्वादिष्ट थी। मैंने उसकी बुद्धि की
सराहना की। जो स्त्रियाँ मूर्ख होती हैं, वे यों ही
देती हैं। उस दिन से देखकर मैं भी अब नहीं फेंक
चावलों के साथ खाने को कढ़ी बना लेती हूँ।
साथ चावलों का स्वाद बहुत अच्छा लगता है।

उसको मैंने यह करते भी देखा कि जब कभी
तीज त्योहार होता, तो वह आप सामग्री बहुत
करती और कभी-कभी न भी करती। घर में
ऐसी ही थी, सटरपटर करके काम चलाती थी;
कोई बात अपनी चतुराई से ऐसी नहीं होने देती
कि कोई कुछ दोष धर सके। उसी थोड़ी-सी साम
से सबको इस प्रकार भेजती कि कोई नहीं कहत
थोड़ी आई। वह यह करती थी कि इसका
आया, उसके भेजा; उसका आया, इसके भेजा।
इस चतुराई के संग कि कभी किसी ने न पहच
उसकी क्या चतुराई थी कि एक वस्तु इसके घर की
दूसरी दूसरे के यहाँ की धरी। इसी प्रकार चार-प

से चार-पाँच प्रकार की थाली बना दी और एक आध अपने यहाँ की रख दी, जिससे कोई पहचान न सके। मैं उसकी यह चतुराई देखकर बड़े अचम्भे में रही, और मन ही मन उसकी सराहना किया करती। जब कभी वह मेले में जाती, तो खाने-पीने की वस्तुएँ घर से बनाकर ले जाती। वह कहती कि मेले में वस्तुएँ अच्छी नहीं मिलतीं, और उनके दाम दूने देने होते हैं। जो घर में नहीं बन सकता था, उसे बाजार से मँगवा लेती थी। बाकी सब घर में तैयार कर लेती थी। अपनी आमदनी में से सदा आधा उठाती, आधा जोड़ती और यह कहा करती थी कि गृहस्थ को सदा चींटी और कुक्कुटी (मुर्गी) की भाँति रहना चाहिए। चींटी समय पर प्रत्येक आवश्यक वस्तु को जोड़कर घर में रख लेती है। जैसे वैशाख और कार्तिक में खेतों में से नाज ला-लाकर छः-छः महीने के खाने को इकट्ठा कर लेती है, और फिर वर्षाकाल तथा शीतऋतु में चैन से बैठकर खाती है। ऐसा नहीं होने देती कि नाज कटने के समय, ज अन्न खेतों में मिल सकता है, आलस्य कर जाय रि पीछे कुसमय में ढूँढ़ती फिरे अथवा भूखी मरे। र्गी की रीति यह कि खाती जाती है और पीछे भी तनी जाती है, साथ ही अपने बच्चों को भी सिखाती

जाती है। इसी प्रकार गृहस्थ स्त्री को अपने बालबच्चों को खिलाते-पिलाते हुए थोड़ा-थोड़ा-सा पीछे भी डालते जाना चाहिए, जो किसी समय काम आवेगा। इस पर मुझे एक छोटी-सी कहानी भी याद आ गई, सुनाती हूँ—

एक बेर जाड़े की ऋतु में एक टिड्डा शहद की मक्खियों के छत्ते के पास गया, और कहने लगा—थोड़ा-सा शहद मुझे भी दो। मक्खियाँ बोलीं—अब तुम भूख के मारे क्यों ठिठरे जाते हो? गरमी में क्या करते रहे, जो अब यह कष्ट भाग रहे हो? हमने पहले ही सोच लिया था कि आगे जाड़े के दिन आवेंगे, और उस समय भोजन की सामग्री के मिलने में बड़े-बड़े कष्ट होंगे। फिर भी किसी समय वह न मिल सकेगी। इसीलिए सोचकर पहले ही से कष्ट और परिश्रम करके यह शहद, इस समय के भोजनों को, इकट्ठा कर लिया था; और अब बैठे आनन्द से खाती हूँ। तुमको हमने देखा था कि आनन्द से उस समय निश्चिन्त फिरते थे। सो अब उसका फल भोगो। भूख का मारा वह टिड्डा दो-चार घंटे में मर गया। जोड़ने और न जोड़नेवाले में यही अन्तर होता है। लोगों को जोड़ने के लिए सबसे सहज उपाय यह है कि बचे हुए धन का गहना बनवा लेते हैं।

रोकड़ के तो उठ जाने का डर भी रहता है ; पर गहना-पाता जो बन जाता है, फिर वह नहीं उठता। प्रतिष्ठा की प्रतिष्ठा और पूँजी की पूँजी हो जाती है।

परन्तु मेरी सम्मति इस प्रकार जोड़ने की नहीं है ; क्योंकि इस रीति से जो तुमने १) बचाया, तो तुम्हारे पास ।।) ही जुड़ेंगे, ।।) बट्टेखाते जायँगे। जैसे १) की चाँदी मोल लेने में -) बदलाई का और =) कम-से-कम गढ़ाई के देने पड़ते हैं। वर्ष-भर में =) भर चाँदी घिस जाती है, और कम-से-कम -) ब्याज का टोटा रहता है। इस लेखे से १) में ।=) का टोटा रहता है। अब वर्ष-भर पीछे, जब इसको फिर सुनार को दिया, तो उसने)॥ तो टाँके का,)॥ बदलाई का और =) गढ़ाई के फिर लिये और ') भर बनाकर दी। अब देख, १।=) तो पहले लगे। और ≡) अब लगे, अर्थात् सब १॥-) लगे। तब ।।।-) भर चाँदी हाथ रही, क्योंकि १) भर में से =) भर घिसकर और -) भर दो बेर के टाँके में, कुल ≡) भर कम हो गई।* इसलिए मेरी अनुमति नहीं है कि गहने बनाना धन-संचय का

* यह लेखा पहले का है। आजकल कुछ दिनों से चाँदी बहुत सस्ती हो गई है। इसलिए बट्टा नहीं लगता ; बल्कि १) में १ तोले से अधिक चाँदी आ जाती है।—ले०

ठीक उपाय मान लिया जाय। हाँ, पुराने विचार से यह ठीक है; परन्तु अब के विचारानुसार रुपये को कम्पनियों में लगा दे, जिनमें बिना परिश्रम के औरों से अधिक ब्याज पड़ जाता है। गहने में यह एक और दोष है कि जब कभी रुपये की आवश्यकता हो, तब उलटा इस पर और ब्याज देना पड़ता है।

यदि तुझको समस्त भारतवर्ष का लेखा बताऊँ कि धनवानेवालों को इन्हीं गहने-पाता में कितने रुपये का घाटा पड़ता है, तो मैं समझती हूँ, तू काँप जायगी। यह घाटा इतना है कि इससे एक राज्य मोल ले लिया जाय। सुन! इस भारतवर्ष में चार लाख एक सहस्र (४,०१०००) सुनार हैं, जो गहना गढ़ते हैं। यदि इनकी छः-छः रुपये मासिक भी आमदनी मान ली जाय तो वर्ष-भर के दो करोड़, अट्ठासी लाख, बहत्तर सहस्र रुपये (२,८८,७२,००० रु०) होते हैं। समस्त भारत-वर्ष में २३ करोड़ रुपया गहने-पाते में लगा हुआ है। यदि रुपये में दो आना-भर की घिसाई और छीज मान ली जाय, तो तीन करोड़ के लगभग हो जाता है, जो व्यर्थ ही जाता है, और जिसके जाने का किसी को भी कुछ विचार नहीं होता। यदि यही तेईस करोड़ रुपया, जो गहने में लगा हुआ है, बारह रुपये सैंकड़े साल के ब्याज

पर कम्पनियों में लगाया जाय, तो पौने तीन करोड़ रुपये मिलते हैं। अब तीन और पौने तीन को जोड़ो, तो पौने छः करोड़ रुपये हुए। पौने छः करोड़ और तीन करोड़ पौने नौ करोड़ रुपये गहने-पाते के बहाने से नष्ट हो जाते हैं। जो स्त्रियाँ चतुर होती हैं, वे घर का प्रबन्ध इस प्रकार से करती हैं कि थोड़े ही दिनों में वे धनवानों की गिन्ती में हो जातीं और सदा आनन्द से रहती हैं। ऐसी स्त्रियाँ घर करनेवाली, गृहदक्ष, चतुर आदि के नाम से भूषित होती हैं। इस लोक में भी बड़ाई पाती हैं और धन से धर्म करके अपना परलोक भी सुधार लेती हैं। मैं तुमको एक ऐसी ही स्त्री की कथा और सुनाये देती हूँ। एक लकड़हारी स्त्री ऐसी धनवान् हो गई कि राजा तक उसके घर आने लगा। रात्रि तो बहुत हो गई, पर आज जितना मैंने तुमसे कहा है, उसका सार इसमें आ जायगा और तू भली भाँति जान जायगी कि चतुर स्त्रियाँ घर कैसे चलाती हैं। ले सुन। किसी नगर में एक राजा था। उसकी स्त्री का नाम सुविद्या था। वह बड़ी चतुर, पण्डित, गृहकार्य-प्रबन्ध और व्यय करने में महानिपुण थी। जब उसके पुत्र का जन्म हुआ, ...ने पण्डितों को बुलाकर ग्रह आदि का विचार ...ने पुत्र को बड़ा तेजस्वी, प्रतापी, ऐश्वर्यवान

इत्यादि गुणोंवाला बताया। राजा को सुनकर विस्म
हुआ। वह कहने लगा—क्या इस समय संसार में दूस
का जन्म न हुआ होगा। यह विचार अपने मन में रख
समय पाकर देश-देश को दूत भेजे कि जो मनुष्य इसी लग्न
और मुहूर्त में उत्पन्न हुआ हो, उसको खोजकर लाओ
दूत ढूँढ़ते-ढूँढ़ते किसी एक महादरिद्री लकड़हारे क
लाये। राजा ने पण्डितों की सभा करके पूछा—इ
मनुष्य का भी जन्म इसी लग्न में हुआ है, जिस
राजकुमार का। फिर यह ऐसा क्यों है। उन्होंने भाँति
भाँति के उत्तर दिये; परन्तु राजा को संतोष न हुआ
इसी सोच-विचार में वह रानी सुविद्या के राजभवन
चला गया। रानी ने यथोचित आदर-सत्कार कर
हाव-भाव-कटाक्ष से सदैव की भाँति राजा के मन
प्रसन्न करना चाहा। पर राजा को उदासीन और किस
विचार में निमग्न पाया। वह कारण पूछने लगी। रा
ने टालटूल की; पर रानी ने हठ करके पूछ ही लिया
राजा ने सब वृत्तान्त कह सुनाया। रानी ने उत्त
दिया—यह तो अति सुगम बात है। उसके घर
उसकी स्त्री मूर्ख और फूहर होगी, जिस कारण व
निर्धन रहता है। ऐसा उत्तर रानी के मुख से सुनक
राजा को क्रोध आ गया कि इस रानी को अपने

गृहदक्षता का गर्व है कि मेरा राजपाट भी सब इसी के बुद्धिबल से है। ऐसा सोच राजा ने रानी को देश-निकाला दे दिया। इसमें कोई सन्देह न करे, रानों की ऐसी ही दशा होती है। नीति का वाक्य है—

राजा, जोगी, अग्नि, जल, इनकी उलटी रीति।
जो इनके निदरे बसें, थोड़ी पालैं प्रीति॥

रानी ने भी ठान ली कि अब चलकर उसी लकड़हारे के यहाँ रहूँगी, और राजा को अपने वचन का परिचय दूँगी। ऐसा विचार वह उसी लकड़हारे के घर चल दी। जब वहाँ पहुँची, तो उससे निवेदन कर कहने लगी कि हे पिता! तू मुझे अपने यहाँ रख ले। तेरी टहल कर दिया करूँगी। जो कुछ मिलता जुलता, रूखा-सूखा होगा, खा लिया करूँगी। यह कहते-कहते उसके संग भट से लकड़ी बिनवाने लग गई। लकड़हारा बोला—हम आप एकादशी करते हैं। जिस दिन लकड़ियाँ बिक जाती हैं, उस दिन आधी-परधी रोटी मिल भी जाती है। जिस दिन नहीं बिकतीं, उस दिन तो घर के सभी भी व्यास्म ही करते हैं। तब रानी ने गिड़गिड़ाकर कहा—जो कुछ मेरे भाग्य का होगा, वह मुझे भी जायगा। इस पर लकड़हारे को कुछ दया सी आ .न में विचारकर कह दिया—अच्छा, ऐसे हम

रहते हैं, वैसे ही तू भी हमारे सङ्ग दुखी-सुखी रह। परमेश्वर तेरे भाग्य का भी टुकड़ा भेजेगा। क्या जाने तेरे भाग्य से मुझे ही लहना हो। यह चतुर तो थी ही, एक बोझ उसी लकड़हारे की बराबर थोड़ी ही देर में बीन लिया। और दिन भी उसको चार पैसे की ही लकड़ियाँ मिलती थीं, आज उससे दूनी हो गईं। जब वह लकड़ी रखकर चला, तो यह भी सिर पर लकड़ी रखकर चल दी। उस लकड़हारे की स्त्री का स्वभाव बहुत ही क्रूर था। रात-दिन घर में क्लेश और कलह रखती थी। उसका नाम भी कुबुद्धि था। दूर ही से दूसरी स्त्री को संग आते देखकर बोली—आज इतनी देर लगा दी! मैं तो भूखी बैठी हूँ, बाल-बच्चे अलग प्राण खाये जाते हैं। वह मन में कुछ और भी सन्देह करने लगी। सुबिद्या तुरन्त ताड़ गई। कहने लगी—माता! आज और दिन से दूनी लकड़ी भी तो आई हैं। इसी कारण देर लग गई। मेरे पिता ने मुझ पर दया करके जीवदान दिया है, और तेरी सेवा-टहल करने को मुझ पुत्री को लाया है। उस पर क्रोध मत कर। इस देर होने का कारण मैं हूँ। इस प्रकार मीठे-मीठे वचन कहकर उसे शान्त किया, और उन लकड़ियों के तीन गट्ठे बनाकर बाप-बेटों के सिर पर रख दिये कि बेच लाओ।

और दिन तो चार पैसे की लकड़ी बिकती थी, आज वे ही दस पैसे की बिकीं, क्योंकि तीन बोझ थे। उस दिन छः पैसे का तो भोजन मँगवाया, और चार पैसे बचा रक्खे। दूसरे दिन इस सुघिया ने उसके दोनों लड़कों को भी पिता के संग बहला-फुसलाकर, एक-एक पैसे का लालच दे, लकड़ी बीनने और बेचने को भेजा और आप एक पड़ोसिन के यहाँ जाकर, उसे अपनी बिनती से मोहकर, उसके यहाँ आटा पीसने की युक्ति लगा ली। यह लकड़हारा पकी हुई रोटी लाता था। उस दिन भी जब एक-एक पैसा देकर चार पैसे बच रहे, और घर में भोजन बनाने से सबका पेट उसी में भर गया, जिसमें और दिन भूखे रहते थे, तब उन बचे हुए पैसों की इसने रुई मँगाई, और उसे अपनी पड़ोसिन के खाली चर्खे से कात-कातकर सूत बेचा। इसी प्रकार महीने-बीस दिन करने से इसके पास एक रुपया हो गया।

अब इसने क्या किया कि लकड़हारे को एक कुल्हाड़ी मोल दिलवा दी। बोली—बीनने से तो ईंधन थोड़ा आता है। इस कुल्हाड़ी से काट काटकर अच्छी मोटी-मोटी लकड़ी लाया करो, जो अधिक दामों की बिकें। बाकी दामों की सुई, पेचक और कुछ कपड़ा मँगवा लिया। उस पर आप टोपियाँ काढ़ने लगी। उधर

दस-बीस घरों से मेल-मिलाप बढ़ा लिया। जब कोई वस्तु चाहिए माँग लावे, काम निकालकर दे आवे। किसी के लड़के की टोपी सी दे, और किसी का कुर्ता। खाँसी और दस्तों की औषध बनाकर रख ली, और सबको बाँटने लगी। इससे तो यह सबकी बहुत ही प्यारी बन गई। और इसकी बड़ाई होने लगी। लकड़ी अब पाँच-छः आने की नित्त बिकने लगी। दो-दो तीन-तीन आने की टोपियाँ भी बिकने लगीं। थोड़े ही दिनों में दस-पाँच रुपये जुड़ गये।

अब इसने चूल्हे-आगे के बर्तन खरीद लिये और अपना मकान भी कुछ सुधारा कि बाहर से आनेवाले को बैठने का स्थान हो गया।

आप भी टोपियाँ आदि बनाती और पड़ोसिनों की लड़कियों को भी बनाना सिखाती थी। इसके बने हुए रूमाल, दुपट्टे, चिकनें इत्यादि अधिक-अधिक मूल्य को अब बिकने लगे। जब कुछ और धन एकत्र हुआ, तो इसने अपने धर्मपिता को दो गधे मोल ले दिये, और कहा—अब लकड़ी इन पर लादकर लाया करो, और बेचो मत, इकट्ठी करते जाओ। जब वर्षा होगी, तब बेचेंगे, जिससे दाम अधिक मिलेंगे। और लिये-लिये भी बेचने को मत फिरो। एक टाल कर लो। वहाँ बैठे-बैठे वर्षा में

बेचा करना। श्रव तो ला-लाकर केवल जोड़ते जाओ। लकड़हारे ने सोचा, बात तो अच्छी है। जब पेट भरकर खाना मिलने लगा, तो कुबुद्धि भी प्रसन्न रहने लगी, और मन में विचारने लगी कि एक यह भी स्त्री है, जो ऐसी चतुर है कि जब से हमारे यहाँ आई है, क्या से क्या हो गया, और एक मैं हूँ कि नित्त कलह रखती थी। जिस दिन से यह आई है, उस दिन से हमारे घर में लड़ाई का कोई अब नाम भी नहीं जानता। ऐसे-ऐसे विचार करके थोड़े ही दिनों में कुबुद्धि भी बुद्धिमती हो गई। जब इस लकड़हारे के यहाँ इतना हो गया, तब सुविद्या ने अपना और वैभव फैलाया। वह क्या था कि अब स्त्रियों और बालकों की दवाई करने लगी। रानी तो थी ही; सब जानती ही थी। इससे यह नगर भर में प्रसिद्ध होने लगी, और घर-घर से बुलावे आने लगे। एक तो इसकी दवाई बहुत अच्छी थी, दूसरे बोलचाल, रहन-सहन, शील-स्वभाव, दया-नम्रता आदि बातें ऐसी थीं कि मन हर लेती थीं। जिसके यहाँ एक बेर हो आई, उसके यहाँ से सदा को रीति-भाँति जुड़ गई। तीज-त्योहार कोई दिन ऐसा नहीं, जब उनके यहाँ से कुछ न आवे। अब तो इसका घर सब प्रकार से भरा-पुरा रहने लगा। एक बात और की कि पड़ोस की लड़कियाँ

को अपने पास ले बैठे और उनको पढ़ाया करे। उनके संग अपने दोनों भाइयों को भी पढ़ा लिया, और थोड़ा-सा लेखा-जोखा अपने पिता को भी सिखा दिया। नगर में इसका ऐसा नाम हुआ कि भले घर की बहू-बेटियों के यहाँ भी यह जाने लगी। कुछ मासिक वेतन भी दो-चार बड़े-बड़े घरों से पाने लगी। सेठ-साहूकारों के घरों में आने-जाने से इसकी प्रतीति और भरोसा बढ़ गया, यदि इसको १०० या ५० रुपये की आवश्यकता हो, तो मिलने लगी।

जब इसका ऐसा हाल हो गया, तब इसने दो-चार साहूकारों से कह-सुनकर अपने नाम का माल उनके रुपये से भरवा और उन्हीं से एक भरोसे का गुमाश्ता नौकर रखवाकर अपने पिता को उसके संग किया कि इसको ले जाकर दूसरे देशों में बेच आओ, और जो कुछ वस्तु उन देशों में सस्ती हो, सो इसके पलटे में भरते लाना। यह कह उनको तो वहाँ रवाना किया और भाइयों से कहा कि अब तुम सेठ-साहूकारों और भले मनुष्यों में बैठते-उठते हो। अब तुम्हें इस प्रकार रहना-सहना चाहिये कि कोई अपने मन में तुमसे ग्लानि न करे, पास बैठने और बैठाने में सकुचे नहीं। सो यह करना चाहिये कि प्रथम तो रहने का घर अच्छा-सा बनाना चाहिये, जिसमें किसी उच्चकुल की बहू-बेटी आवे, तो अच्छी तरह बैठे-उठे।

इसलिये प्रथम फलाने साहूकार की हवेली भाड़े पर ले लो। उनसे हमसे रीति-भाँति भी अधिक है और एक दिन बात चलने पर उन्होंने कहा भी था कि तुम हमारी हवेली ले लो, खाली पड़ी है। सो यों तो नहीं लेना चाहिए। ये भाड़े किसी के मकान में रहने से स्वामी का दबाव तनिक अधिक रहता है। इसलिये भाड़े पर लेना ठीक है। हाँ, हमारे लिये भाड़ा औरों से कम हो जायगा। यह विचारकर उस हवेली को भाड़े पर ले लिया, और उसी में रहने लगे। दूसरी बात उसने यह कही कि हमारा धन्धा सदा से लकड़ी का है। यद्यपि हैं हम ब्राह्मण, पर जो धन्धा है, उसे न छोड़ना चाहिये। मैं बताऊँ सो करो। इस टाल में तो लाभ थोड़ा होता है, और लकड़ी बेचनेवाले व टालवाले ही कहलाते हैं। तुम कुछ मिस्तरी रख लो और साखू, शीशम, आम, नीम इत्यादि के बड़े-बड़े पेड़ मोल ले-लेकर उनकी कुर्सी, मेज, सन्दूक वग़ैरह कारीगरी की चीजें बनवाओ। रुपया जितना चाहिये, कारख़ाने के लिये उधार ले लेंगे। नदी के तीर से या किसी बड़े वन से काट-काटकर अच्छी लकड़ी मँगवाओ, जिनकी ये वस्तुएँ सुन्दर बन सकें। यह विचार उसने एक साहूकार से दो सहस्र रुपये उधार देने को कहा। उसने भी इनकी उपमी मान और चालचलन भी

समझकर बेखटके रुपये दे दिये। इन रुपयों से
ने लकड़ी मोल लेकर वे वस्तुएँ बनवाईं, जो दुगुने-
ने दाम की बिकीं। उधर लकड़हारा माल को दुगुने,
ने मूल्य पर बेचकर और उसके रुपये से भाँति-भाँति
वस्तुएँ लादकर आया। वे वस्तुएँ हाथोंहाथ यहाँ
ँ, दूने, चौगुने दामों पर उसी दम बिक गईं।
से इनको पचगुना, छगुना लाभ हुआ। जो रुपया
ने से आया, उसको सुबिया ने घर में न आने
।। उसी समय जिस जिसका रुपया लिया था, वह
-दाम और कौड़ी-ब्याज समेत चुका दिया। जो
, उसको अपने घर में धरा।

अब तो थोड़े ही दिनों में दस-बीस सहस्र की पूँजी
घर हो गई। दूसरों से भी उधार लेने की कुछ
रयकता न रही। पर सुबिया ने सोचा, अभी अपने
के रुपयों से व्यवहार करना अच्छा नहीं। एक बेर
इसी प्रकार अपने पिता को भेज दूँ। अब की जब
हो तब उसके पीछे फिर उधार न लेंगे। ऐसा
कर एक-दो महीने पीछे फिर अपने पिता और उसी
रने को पहले के बराबर साहूकारों से माल भरवाकर
ा दिया।

अब तो सेठ-साहूकारों में इनकी बड़ी साख हो गई

थी। सबने वे कहे-सुने भर दिया। इधर इसने किसी ब्राह्मण के अच्छे कुल में अपने भाइयों के विवाह की सट्ट लगाई, और तुरन्त दोनोंकी सगाई करके चट्ट विवाह कर लिया; क्योंकि अब तो बहुत-से इन्हें अपनी-अपनी बेटी देना चाहते थे। जब इसका लकड़हारा पिता परदेश से वापस आया, और पहले से भी और अधिक लाभ हुआ, तब तो इन्होंने हुण्डीकी कोठियाँ खोल दीं, दूसरे नगरों में आढ़तें खोलीं और सेठ बन बैठे। सुविद्या के सुप्रबन्ध से वही दरिद्र जगत्‌सेठ की पदवी पा गया।

सुविद्या ने देखा, अब अवसर है कि राजा को अपने वचन का परिचय दिलाऊँ कि मेरा कहना सत्य था या असत्य। यह विचार वह अपने धर्मपिता से बोली—

अब तुम जगत्‌सेठ कहलाते हो, देश-देश की अलभ्य वस्तुएँ तुम्हारे यहाँ आती हैं। कुछ अच्छी-अच्छी वस्तुएँ लेकर राजा से भेंट करनी चाहिये। यह हमारा धर्म है कि अपने देश के राजा को प्रसन्न रक्खें। अब तक तो हम लोग किसी गिनती में न थे, सो कुछ चिन्ता न थी; पर अब बड़े हो गये हैं। न-जाने, किस समय काम पड़े। इस कारण तुम फलाने-फलाने कामदार से मिलो। फिर पीछे उनके द्वारा राजा से तुम्हारा मिलाप हो जायगा।

और भोजन करके वह अत्यन्त प्रसन्न और आश्चर्य में हुआ; क्योंकि जब से रानी सुविया इसके यहाँ से चली गई थी, इसके यहाँ भी ये बातें न थीं। प्रसन्न होकर पूछने लगा—कहो जगत्सेठ! तुम्हारे सन्तान क्या है? उसने उत्तर दिया, महाराजाधिराज! आपकी कृपा से दो पुत्र हैं, और एक धर्मपुत्री। वे सब आपके दर्शन की अभिलाषा में बैठे हैं। राजा ने कहा—उनको बुलाओ। यह सुन दोनों लड़कों ने आकर प्रणाम किया, और राजा ने जो पूछा, उसका यथोचित उत्तर दिया, जिससे राजा बहुत प्रसन्न हुआ; क्योंकि सुविया ने इनको पहले ही से सब सिखा-पढ़ा दिया था कि राजाओं से यों बोलते-चालते हैं। जब राजा ने पुत्री के लिए पूछा, तो जगत्सेठ ने कहा—महाराज! वह उस कोठरी में है! आप वहाँ पधारकर उसको कृतार्थ कीजिये। ज्यों ही राजा उठकर वहाँ गया, त्यों ही सुविया ने उठकर, साष्टांग दण्डवत् कर अति आदर और सत्कार किया। राजा को उसकी सूरत देखकर रानी सुविया का स्मरण हुआ कि यह तो उसी की अनुहार जान पड़ती है। पर यह जगत्सेठ की बेटी बनती है; यह क्योंकर होगी? हाँ, एक बात अचरज है कि इसकी आयु सुविया से अवश्य मिलती है, और जगत्सेठ की आयु तो इसके बेटे के बराबर

होती है। बेटी आप से छोटी होनी चाहिए, न कि की आयु की-सी। यह कदापि इसकी बेटी नहीं। अवश्य कुछ भेद है। राजा इसी सोच-विचार में था सुविद्या राजा के चरणों में गिर पड़ी, और कहने —आप सन्देह न करिये। मैं इस जगत्सेठ की पुत्री हूँ। मैं तो आप ही की दासी हूँ, और यह सब वचन का परिचय देने और सत्य करने को किया यह वही लकड़हारा है, और मैं वही रानी सुविद्या। दासी का अपराध क्षमा कीजिये, और अपनी सेवा ण कीजिये। इतने दिन आपके विरह में बड़े कष्ट के नीति और धर्म को पालकर काटे हैं। राजा ने यह मन में बहुत लज्जा मानी, रानी को घर ले गया, उस जगत्सेठ को अपना आधा राज्य दे दिया। न ! इसलिये जो स्त्रियाँ ऐसी होती हैं, घर का इस भाँति करती हैं, जैसा इस रानी ने किया, वे सुख और नाम पाती हैं, जैसा रानी सुविद्या का आज तक चला आता है। वह यदि ऐसी चतुर न , तो वन में भटक-भटककर ही भूखों मर जाती। ! प्रबन्ध के विषय में तुझको बता तो मैं बहुत कुछ हूँ, तो भी कुछ संक्षेप से प्रबन्ध के गुर और बताना ी हूँ। जैसे—

(१) आय-व्यय का लेखा ब्योरेवार रखना चाहिये।

(२) आय से व्यय भरसक कभी, किसी दशा में, अधिक न होने दे।

(३) उधार कभी न मँगावे। सदा दाम देकर मँगावे।

(४) सस्ता समझकर कभी किसी गैरजरूरी या व्यर्थ चीज को न खरीदे।

(५) आगे के लाभ पर व आवश्यकता से अधिक मोल न ले।

(६) उस वस्तु को घर से बाहर न जाने दे, जिसको बाहर से घर में नहीं ला सकते।

(७) कम से कम $\frac{1}{10}$ से $\frac{1}{3}$ तक आय का हिस्सा सदा बचावे। यदि हो सके, तो तिहाई से आधा तक बचावे।

(८) गहनों में घुँघरू या बाजा न डलवावे। इनमें टाँका अधिक लगता है, टूटकर गिर पड़ते हैं और घिसते भी अधिक हैं।

(९) दुहरे-तिहरे गहने न पहनने चाहिये। इससे वे बहुत ही शीघ्र घिसते और टूट पड़ते हैं। शरीर भी घिसने से मैला होता है।

(१०) बाहर के मनुष्य के सामने कभी गहने-पत्ते या रुपये-पैसे की धराढकी न करे। किन्तु उसे ऐसे स्थान में और इस प्रकार रक्खे कि किसी की नजर

ड़ते * ही ज्ञात न हो जाय। ऐसे स्थान पर किसी मनुष्य को जाने भी न दे।

(११) गहने पत्ते व रुपये-पैसे को कभी बिना तोले और गिने न रक्खे।

(१२) सोने से पहले घर को भीतर-बाहर से भली भाँति देख ले, और ताला-कुण्डी जहाँ लगता हो या लगाना हो, लगाकर सोवे।

(१३) व्यर्थ वस्तु मोल न ले, और ली हुई को बिगड़ने न दे। इससे कंजूसी का दोष नहीं आवेगा। कंजूस वह है जो जरूरी वस्तु को भी नहीं लेता, और ली हुई को काम में नहीं लाता, किन्तु वृथा कष्ट उठाता है।

(१४) गहने-कपड़े जो नित्य के पहनने के हों, उनको तो ऊपर रक्खे, बाकी को सुरक्षित स्थान में अच्छी तरह रख दे। मूसे, दीमक, कसारी इत्यादि न काट डालें, इसकी सावधानी रक्खे।

(१५) घर की प्रत्येक वस्तु को सुरक्षित रक्खे।

(१६) तनिक-तनिक-सी वस्तु के खो जाने को

* जैसे दीवार में धरा है; पर सब दीवार तो लिपी हुई नहीं है, उतनी ही लीप दी, जिसमें माल रख दिया है। अथवा वह स्थान कुल दीवार से कुछ उभरा हुआ या नीचा है, इत्यादि ऐसे स्थान पर दृष्टि पड़ते ही भेद प्रकट हो जाता है।—ले०

हानि और थोड़े-थोड़े-से भी बचाने को लाभ समझना चाहिये।

(१७) जो वस्तु किसी के यहाँ से माँगकर आई हो, उसको बहुत सावधानी से रखना चाहिये, और क-हो जाने के पीछे तुरंत ही पहुँचा देना चाहिये।

(१८) धनी बनना चाहे, तो व्यर्थ के काम ं पैसा न खर्चे।

(१९) अधिक कमाने से नहीं, किन्तु कमाये हुए की रक्षा करने से धनी होता है।

(२०) आलसी, रोगी और चोर मनुष्य को नौकर न रक्खे।

(२१) वर्ष के आरम्भ में एक बेर सबके लिये जितने-जितने कपड़े उचित समझे कि साल-भर को ठी: होंगे, बनवा दे। बेर-बेर न खरीदे, न बनवावे। बन सके, तो दर्जी को घर पर ही बुलाकर सिलवा ले। अपने सामने ही छाँट-ब्योंत करा दे, बिना ब्योंते दर्जी के घर को कपड़ा न दे।

आज इतना बताने ही में समय बहुत बीत गया। मा, चाची, भावज सब सो रही हैं। हम-तुम दो ही बैठी हैं। चल, हम भी सो रहें। कल फिर देखा जायगा।

स्त्रीसुबोधिनी

द्वितीय भाग

भोजनसंस्कार

अगले दिन जब दुर्गा ने घर के धन्धे से छुटकारा पाया, तब मोहिनी को संग ले बैठी और बोली—
न ! अब तुझको मैं सब प्रकार के भोजन बनाने की धि बताती हूँ । इसको यों तो सभी स्त्रियाँ जानती ऐसी स्त्री इस देश में कोई न होगी, जो भोजन ना न जानती हो । यह काम इस देश में स्त्रियों पर क्खा गया है, और बहुत-से पुरुष तो इसी प्रयोजन त्री ब्याहते हैं कि हमको भोजन बनाने का सुभीता जायगा, अपने हाथ से न बनाना पड़ेगा ।
यों तो सभी स्त्रियाँ इसको जानती हैं; पर जिस प्रकार जानना चाहिये, वैसे नहीं जानतीं । यह विद्या बहुत है । इसको सूपविद्या कहते हैं, और यह स्त्रियों के ने योग्य है । चाहे आप बनावे, चाहे दूसरों से बनवावे । आप जानती होगी, तब तो दूसरे से भी अपनी देख-

रेख में अच्छा बनवा लेगी; नहीं तो दूसरों के हाथों से भी वही बुरा, भला, कच्चा, पक्का, जला, झुलसा पल्ले पड़ेगा।

भोजन बनाने का भार स्त्रियों पर ही रहना अच्छा है। इस कारण कि ये आठ पहर घर ही में रहती हैं। जब स्त्रियाँ चतुर होती थीं, तब तो इस देश के बराबर य विद्या कहीं नहीं थी। 'छप्पन भोग' और 'छत्तीस व्यंजन अब तक प्रसिद्ध चले आते हैं। एक-एक वस्तु में अनेक प्रका की सामग्री बनाती थीं। पर अब बनाना कठिन हो गय है। क्योंकि स्त्रियाँ क्रियाहीन हैं। इस विद्या को जानतं ही नहीं। नहीं तो एक-एक अन्न से वे-वे पदार्थ बनने थे कि बस, कुछ कहा नहीं जाता। जीभ ही ने चखा और जीभ ही ने जाना, कहने में कुछ नहीं आ सकता।

स्त्री को यह विद्या अवश्य ही सीखनी चाहिये, नहीं तो भूखी ही मर जायगी। बहुत-से घर तो ऐसे होते हैं, जहाँ नौकर-चाकर तो रख नहीं सकते, बस, मोल ला-लाकर बाजार से खाते हैं, जिससे दाम तो अधिक देने पड़ते हैं, और काम कुछ भी नहीं सरता।

यदि स्त्री भोजन बनाना जानती है, तो यह दुःख फिर नहीं रहता कि बाजार से लाने में दूने दाम उठाने पड़ें। उतने ही दामों में उससे ड्योढ़ा-दूना भोजन घर में बन सकता है।

भोजन बनाने की विधि तनिक पीछे से बताऊँगी। पहले थोड़ी-सी बातें, जिनका ध्यान भोजन बनाने में रखना चाहिये, बताती हूँ।

सुन्दर भोजन इतने सकारों सहित होना चाहिये—उसमें स्वरूप, सफाई, स्वाद और सुगन्ध अच्छे होने चाहिये। इनके होने से भोजन में रुचि उत्पन्न होती है, और इनके न होने से उसी भोजन में अरुचि और ग्लानि हो आती है। भोजन बनाने में चार बातों का ध्यान रक्खे—(१) रसोइये को मैला-कुचैला न रहना चाहिये। स्वच्छ और पवित्र हो। कुरूप भी न हो। कोई संक्रामक (छूत का या उड़कर लगनेवाला) रोग उसके न हो। जैसे खाज, कोढ़ या गरमी। (२) जिन वस्तुओं का भोजन बनावे, उनको पहले बीन-फटककर सुथरा कर ले। कूड़ा, कर्कट, बाल, मिट्टी न रहने दे। (३) जिन पात्रों में भोजन रक्खे, वे बहुत अच्छी तरह से मँजे-धुले हों। मैले-कुचैले न हों। (४) रसोई का स्थान भी बहुत ही स्वच्छ, सुथरा और पवित्र हो।

भोजन बनाने में व भोजन के स्थान में कोई बात ग्लानि की न करे। भोजनों को एक में मिलने न दे। जैसे मीठे को नमकीन में या नमकीन को मीठे में। न एक भोजन के सने हुए पात्र में दूसरा भोजन धरे, जब

तक उसे घुलवा, मँजवा न डाले। ऐसा करने से एक तो स्वाद बिगड़ जाता है, दूसरे कुछ स्वरूप भी और हो जाता है। नमक, मसाला भी थोड़ा या बहुत न पड़ने पावे, वरन् यथारुचि होना चाहिये। भोजन कहीं से कच्चा भी न रहना चाहिये, और न कहीं से जल जाना चाहिये, वरन् खूब सिक जाना चाहिये। खटाई की वस्तु को सदा पत्थर, काँच, मिट्टी व फूल इत्यादि के बासन में रखना चाहिये। ताँबे, काँसे और पीतल के बासन में कभी न रक्खे। नहीं तो वह खराब हो जाती है।

गरमियों में भोजन सदा ठंडा करके रक्खे। वर्षाऋतु में वायु के स्थान में रक्खे व किसी ऐसी वस्तु से ढककर रक्खे, जिसमें होकर वायु आती रहे। जैसे कपड़ा, डलिया, टोकरी। इस ऋतु में दाबने से भोजन बहुत ही शीघ्र बिगड़ व बुस जाता है। पर जाड़ों के दिनों में भोजन को दाबकर रक्खे; नहीं तो तुरन्त ठंडा होकर कड़ा और सूखा-सा हो जाता है। इस बात का ध्यान रहे कि भोजन को खुला हुआ कभी न रक्खे। जब रक्खे तब किसी-न-किसी चीज से ढककर रक्खे। कभी दूसरे स्थान को भोजन खुला हुआ न ले जाय, और न ऐसे स्थान में होकर दूसरे स्थान को ले जाय, जहाँ बीच में अपवित्र स्थान पड़े। अपवित्र मनुष्य के हाथ भी भोजन

न भेजे। इन बातों से खानेवाले को अरुचि और ग्लानि हो जाती है। ये ऊपरी बातें तो बता चुकी, अब इनकी विधि बताऊँगी।

भोजन इतने प्रकार के हैं, प्रथम खाने की रीति से छः प्रकार के। जैसे स्वाद के लेखे से छः रस हो गये हैं, वैसे ही ये हैं—

(१) पेय (जो पीकर खाया जाय), जैसे दूध आदि।
(२) लेह्य(जो चाटा जाय), जैसे चटनी, सोंठ इत्यादि।
(३) चोष्य (जो चूसकर खाया जाय), जैसे आम, अनार, ईख इत्यादि।
(४) चर्व्य (जो चाब-चाबकर खाया जाय), जैसे दाल, सेव इत्यादि।
(५) भक्ष्य (जो निगलकर खाया जाय), जैसे खीर, मोहनभोग इत्यादि।
(६) भोज्य (जो राँध-राँधकर भोजन किया जाय), जैसे दाल, रोटी इत्यादि।

अब बनाने की रीति से इतने प्रकार हैं—

(१) निखरा या पक्का—इसमें सब प्रकार के भोजन आ गये, जो घी व तेल से पकाकर बनते हैं, जैसे पकवान आदि।
(२) सखरा या कच्चा—इसमें वे सब भोजन हैं, जो

चुटिये के लड्डू—सेर पीछे आध पाव घी मैदा में डालकर सूखी मसले, और गुनगुने पानी से उसनकर उसकी छटाँक-छटाँक भर की मुठिया बना ले। फिर घी में उतार ले। पीछे उन्हें कूटकर छान ले, और जो कड़ाही का बचा हुआ घी है, उसी में इसे उसन ले। पर घी बराबर से अधिक न हो जाय। बराबर का बूरा डालकर खूब मिला ले, और मेवा व कन्द डालकर लड्डू बना ले।

मेथी के लड्डू—इसके बीज को लेकर एक अठवारे तक पानी में भिगोये। जब भीग जायँ, तब दसवें दिन खूब ममलकर कई पानी से धो डाले। जब धुल जायँ, तब सुखा ले। फिर चक्की में पीसकर इसके आटे में आधा गेहूँ का आटा मिलाकर घी के साथ भून ले, और बूरा डालकर लड्डू बाँध ले।

कँगनी के लड्डू—इसको दलकर खूब फटक ले। इस पर से छिलका बहुत उतरता है। अथवा ओखली में पानी डालकर इसको खूब कूट ले और फटककर ऐसा साफ कर ले कि भीतर की मींगी निकल आवे। फिर इसका आटा पीसे। चाहे निरा इसी का आटा चाहे आधा इसका और आधा गेहूँ का मिलाकर घी में भून ले और बूरा डालकर लड्डू बाँध ले। चाहे पागकर बाँधे। ये पहले अच्छे होते हैं

इससे मैल-मिट्टी फूलकर झाग हो आवेंगे। इन झागों को पोनी से उतार-उतारकर किसी बर्तन में रखती जाय, और एक टोकरे में कपड़ा बिछाकर इस खाँड़ के पानी को निथारने के लिये किसी बर्तन के ऊपर टिखटी रखकर धर दे। सब मैल जब पोना से ले चुके, तब मन पीछे सवा सेर दूध और ढाई सेर पानी मिलाकर फिर खाँड़ की कड़ाही में ऊँचे से डाले। इससे बाकी सब मैल ऊपर आ जायगा। उसे भी पोनी से निथार ले। अब इस पानी को भी उसी प्रकार टोकरे में छान ले। फिर उसकी चाशनी कर ले। पर यह चाशनी भी कई भाँति की होती है। जैसे एक तार, दो तार, तीन तार और साढ़े तीन तार की। तारों की पहचान उँगलियों पर होती है। उँगलियों में चाशनी लगाकर चिपकावे, और देखे कि कितने तार उसमें होते हैं। जितने तार छूटें, उतने ही तार की चाशनी कहलाती है। किसी पदार्थ के बनाने के लिये एक तार और किसी के लिये दो या तीन तार की चाशनी होती है। जिसके लिये जितने तार की चाशनी चाहिये, उसको उसी के संग बताया जायगा। जो झाग बचे हैं, उनको भी खाँड़ ही की भाँति निथारकर चोखा कर ले।

पहले लड्डू बनाने की रीति कहती हूँ। लड्डू इतने

बेसन के लड्डू—बेसन के बराबर घी लेकर कड़ाही में चढ़ा दे, और धीमी-धीमी आग से भूने। जब भुन जाय, कचा न रहे, और जलने पर आवे (भुने की पहचान यह है कि उसमें से सुगंधि आने लगेगी, कच्चे में से सुगंधि नहीं आवेगी, और जलते हुए की सुगंधि जले की-सी आवेगी) तब उसको उतार ठंडा कर ले। सवाया या ड्योढ़ा बूरा मिलावे। पर कहीं गरम में न मिला दे। बूरे और बेसन को एकरस करके मेवा डाल, लड्डू बाँध ले।

इसी तरह चने के लड्डू बनते हैं, अर्थात् खिले हुए चनों के छिलके उतारकर बहुत ही महीन पीस ले और इसी भाँति भून ले। पर बहुत ही धीमी आग से भूने; क्योंकि यह तनिक ही देर में तेज आग से जल जाता और काला पड़कर बिगड़ जाता है। बूरा मिलाकर उसी प्रकार बना ले।

सूजी या मगद के लड्डू—सूजी के बराबर घी कड़ाही में चढ़ाकर मन्दी-मन्दी आग से भूने। कोंचा से चलाता जाय। जब उसका रंग कुछ बदलने पर आवे, बादामी होने लगे और उसमें से भुनने की सुगंधि उठने लगे, तब उतार, ठंडा करके, सवाया बूरा डालकर मिलावे। फिर मेवा डालकर लड्डू बाँध ले।

बाकी चूरमे के, तिल के, गुड़धानी के और मुरमुरों के लड्डू रहे। उनका बनाना तो कुछ कठिन नहीं। चूरमे के तो पूरी, रोटी या बाटी को महीन मलकर बूरा व गुड़ मिलाकर बाँध लेते हैं। बाकी तीन के लिये गुड़ व बूरे की चाशनी करके इनको उसमें मिला बाँध लेते हैं।

चाशनी एक और तरह की भी होती है, जिसकी लौज वा चकती बनती है। जैसे लड्डू की चाशनी बनाते हैं, वैसे ही इसको बनाते हैं। उसमें तो तार देखते हैं, इसमें यह देखते हैं कि डालने से जमती है या नहीं।

हलवा मोहनभोग—यह इतनी चीजों का बनता है—(१) सूजी, (२) मैदा, (३) आटा, (४) कद्दू, (५) गाजर, (६) काशीफल, (७) आम इत्यादि। सूजी, मैदा और आटे में बराबर से तनिक ही कम घी डालने से अच्छा बनता है। परन्तु यथाशक्ति या यथारुचि भी डालकर बनाते हैं। पर अच्छा वही है, जो खाने में मुँह में चिपके नहीं।

सूजी के बराबर घी डालकर कड़ाही में उसे भून ले। जब भुन जाय, तब सूजी से तिगुना खौलता हुआ गरम पानी या दूध उसमें डाल दे, और सूजी से ड्योढ़ा बूरा डालकर चला दे। ऊपर से कतरी हुई मेवा डाल दे।

दूसरी रीति—मैदा व सूजी एक सेर; मिसरी दो

सेर, घी एक सेर, बादाम छिला पाव-भर, पिस्ते कत
हुए आध पाव, किशमिश आध पाव, गुलाबजल चा
तोले। पहले मिसरी की चाशनी कर ले, और मूसल
पर अलग रख ले। फिर मैदा और घी को कड़ाही में
चढ़ाकर मद्धिम आँच से भूने और कोंचे से चलाता रहे।
जब मैदे में कुछ-कुछ सुर्खी आ जाय, तब बादाम छिला
और कतरा हुआ डाल दे। जब थोड़ी देर पीछे बादाम
में भी सुर्खी आ जाय, तब चाशनी डालकर कोंचे से
चलाता रहे। थोड़ी देर पीछे पिस्ता और किशमिश भी
डाल दे, और गुलाबजल के छींटे देता रहे। जब हलवा
गाढ़ा हो जाय तो उतार ले। यदि केसरिया करना चाहे
तो एक सेर मैदा के हलवे में एक तोला केसर पीसकर उस
समय, जब चाशनी डाले, डाल दे।

गाजर का हलवा—मोटी-मोटी गाजर ले। उनको
ऊपर से खूब छील डाले। बीच की लकड़ी भी निका
दे। कतरे करके उबाल ले, और फिर घी में भूने
कोंचे से कुचलता रहे। जब एक-सा हो जाय, तब
चूरा डालकर चलाता रहे, और किशमिश डालकर
उतार ले।

दूसरी रीति—छिली हुई गाजर को कद्दूकस में कस
] इन कसी हुई गाजरों को कलई की देगची में

कर, ऊपर से मुँह बन्दकर, फिर आटे से बन्द कर दें,
र कोयले की आग पर रखकर गला ले। जब गल
य, तब उतार ले। इसको कलछी या हाथ से मसल कर
ीन कर ले। फिर घी में भूनकर और मिसरी डालकर
व मिला ले। मेवा, जो डालना चाहे डाल दे, परन्तु
शमिश अवश्य ही डाले।

काशीफल को दोनों ओर से छीलकर और बीज
कालकर टुकड़े कर ले। चौड़े मुँह के बटले में पानी
कर उसके मुँह पर कपड़ा बाँधे, और आग पर रखकर
टुकड़ों को उस बँधे हुए कपड़े पर रख दे। किसी
सन या सरपोश से इनको ढक दे, जिससे भाप लगकर
दी सीज जायँ। जब सीज जायँ, उतार ले। कांशी-
त से दूनी मिसरी लेकर उसकी एक तार की चाशनी
ले। इस चाशनी में उस सीजे हुए कद्दू को डालकर
दी आग पर कोंचे से चला-चलाकर पाव घंटे तक
ावे। एक सेर कद्दू के लिये चार माशे केसर, डेढ़
ले पानी में चार घंटे पहले से भिगो रक्खे। अब इस
ी को इसमें डाल दे। फिर मन्दी-मन्दी आग से
कर हलवा तैयार कर ले।

आम का हलवा—मीठे आमों का रस तीन सेर,
ई एक सेर, गौ का घी आध सेर, गौ का दूध एक

सेर, शहद पाव-भर, बहमन दोनों, सोंठ, सेमल की मूसली एक-एक तोले, बादाम छिले हुए चार तोले, सालममिसरी चार तोले, सिंघाड़े का आटा चार तोले, पीपल छः माशे, खोलनजान छः माशे, कतरे हुए पिस्ते चार तोले।

पहले बादाम, पिस्ता और सिंघाड़े को घी में भून ले। फिर आम का रस, खाँड़, शहद और दूध को कलई के बर्तन में मन्दी आग पर पका ले, और तब बाकी वस्तुएँ को डालकर हलवा बना ले।

पूरी—ये कई प्रकार की होती हैं। फीकी, मीठी, नमकीन, मैदा की पूरनपूरी, लुचुई, नागौरी इत्यादि। पहली चार तो तू जानती है, पूरनपूरी और नागौरी पूरी बनाने की रीतियाँ ये हैं।

पूरी का आटा जो गूँदने में तनिक ढीला रक्खा जाता है, तो घी बहुत और कड़ा रक्खा जाता है, तो कम लगता है। पूरी की लोई को दो प्रकार से बेलकर कड़ाही में डालते हैं—(१) परोथन लगाकर, (२) घी के हाथ से बेलकर। पिछली रीति अच्छी है।

नागौरी पूरी—पाँच सेर मैदे में डेढ़ सेर घी, डेढ़ छटाँक नमक और एक छटाँक अजवाइन डालकर गुनगुने पानी में उसनकर, लोई बेलकर, घी में सेककर उतार ले।

पूरनपूरी—चने की दाल को उबालकर उसमें आधा गुड़ डाल दे। जो पानी बहुत हो, तो पहले ही निकाल डाले। फिर दोनों को सिलबट्टे से महीन पीस ले। पीछे उसमें इलायची, गोला डालकर और आटे की लोई बनाकर कचौरी की भाँति भरकर बेल ले और कड़ाही या तवे पर सेक ले। गरम-गरम ही में घी डालकर खाय। बहुत स्वादिष्ट लगती हैं। ये सखरी (कच्ची रसोई) भी मानी जाती हैं। परन्तु पूरी के नाम के कारण यहाँ बता दिया है। नहीं तो रोटी में बताते।

कचौरी—यह भी एक प्रकार की पूरी है। परन्तु इसके भीतर पिट्ठी इत्यादि कुछ भरा जाता है, इसलिये इसका नाम कचौरी हो गया है। इसके भीतर इतनी वस्तुएँ भरी जाती हैं—(१) उड़द की पिट्ठी, (२) आलू की पिट्ठी, (३) मुनी पिट्ठी और (४) वेसन की पिट्ठी। कचौरी दो प्रकार की होती हैं—(१) खस्ता और (२) सादी। इनको कोई-कोई बेड़ई भी कहते हैं। इसकी पिट्ठी जितनी अच्छी होगी, उतना ही अच्छा स्वाद इसका होगा। पिट्ठी अच्छी तब होगी जब दाल खूब धुली हुई और महीन पिसी हो। उसमें मसाला भी अच्छा महीन पिसा हुआ हो। मसाला यह है—धनिया, मिर्च और गरम मसाला। जब पिट्ठी को लोई में भरे, तब

हींग के पानी के हाथ से भरे तो कचौरी बहुत फूलती है। हींग का पानी यों बनाते हैं—१ माशे हींग पाव भर पानी में घोलकर मिट्टी के बासन में रख ले। पहले इस पानी में हाथ बोर ले, तब पिट्ठी को तोड़े, और लोई में भर दे।

आलू की पिट्ठी यों बनाते हैं—आलुओं को उबालकर छील ले, और खूब महीन पीस ले। इसमें पिसे मसाले के संग थोड़ा-सा पिसा हुआ अमचूर और डाल दे, तो स्वाद और भी अच्छा हो जाता है।

भूनी पिट्ठी यों बनाते हैं—उड़द की पिट्ठी को घी डालकर कड़ाही में भून लेते हैं। फिर मसाला मिलाकर लोई में भरते हैं।

बेसन की मीठी पिट्ठी—बेसन में इतना मीठा डालकर उसन ले कि बहुत पतला न हो जाय, और मीठा भी कम-ज्यादा न हो जावे।

कचौरी का आटा—यह पूरी के आटे से तनिक ही ढीला रहता है। सादी कचौरी में तो कुछ कठिनता नहीं है, तू बनाती ही है। खस्ता कचौरी बनाना तुमको नहीं आता, सो बनाये देती हूँ। इसको भी फीकी और नमकीन, दोनों प्रकार की बनाते हैं; नमकीन अच्छी होती है। ये कई दिनों तक नहीं बिगड़तीं

रीति

पाँच सेर मैदे में सेर भर घी, आध सेर तिल्ली का
, दो सेर गुनगुना पानी और पौन पाव पिसा नमक
लकर तीनों को उसन ले। पर हाथों में तेल लगा
तब लोई तोड़े। सवा सेर उड़द की पिट्ठी महीन
सकर उसमें ये मसाले महीन कूटकर डाले—सोंठ,
निया, मिर्च छटाँक-छटाँक भर, लौंग और जीरा तोला-
ला भर। पहले पिट्ठी को कड़ाही में घी डालकर
व भून ले। हींग के पानी के हाथ से भरती जाय,
र हाथ से चिपटा कर-करके कड़ाही में छोड़ती
य। जब खूब मन्दी आग पर सिककर लाल हो
यँ, तब पोने से उतार ले। जो कम खस्ता बनानी
तो घी और तेल मैदा में कम डाले। चकले से बेल-
र भी कड़ाही में छोड़ सकते हैं; पर हाथ की बढ़ाई हुई
च्छी होती हैं।

परौंठे—इसके फीना, टिकड़ा, ढेबरा, उलेटा, कटोरा,
लेटा इत्यादि कई नाम हैं।

इसमें घी कम भी लगता है, और पूरियों से दुगुना,
तिगुना भी लग जाता है। जैसा चाहे वैसा बना ले।
आटे को मलाई या दूध में गूँदने से अच्छे बनते हैं
और बहुत ही खस्ता हो जाते हैं। या इस भाँति बना

ले कि लोई की पूरियाँ वेलकर और घी अच्छी भाँति उन पर लगाकर तह जमा ले। फिर इन सबकी चार तहें करके लोई बना ले, और वेल डाले। फिर घी का पर्त पहले की भाँति लगा दे, और चार तहें करके लोई बना ले। इसी भाँति जितनी वेर करेगी, उतने ही खजले के से पर्त हो जायँगे। अब इसको कड़ाही या तवे पर डालकर थोड़ा-थोड़ा घी कलछी से ऊपर-नीचे डाले, और खूब सेक ले। कच्चा न रहने दे; क्योंकि इसके सिकने में तनिक देर लगती है। सादा बनाना चाहे, तो एक वा दो पर्त ही लगाकर सेक ले। इसी प्रयोजन से इसको निकाला गया है कि थोड़ा घी लगे और निखरा गिना जाय, सखरा न होने पावे।

पुआ—यह मीठा होता है। छोटे को पुआ और बड़े को मालपुआ कहते हैं। नानखताई भी इसी का भेद है, परन्तु जो नमकीन भी इसमें गिनी जायँ (जो पकौड़ी कहलाती हैं) तो फिर कई प्रकार हो जाते हैं। जैसे बेसन की, मूँग की, मोठ की, पोदीना की, मेथी की, पान की, पालक की, पोई की, कनकौआ की, अरवी के पत्ते की, रतालू के पत्ते की, मूली के पत्ते की, बथुआ की, काशी-फल के फूल की, मूली की इत्यादि।

मीठे पुए में सौंफ डाल देने से अच्छा स्वाद होता है,

और फूलते भी अच्छे हैं। इसके फेन को जितना हाथ से अधिक मथा जायगा, उतने ही पुए फूलेंगे। पुओं की रीति तो जानती ही है। मालपुओं की इस प्रकार है। आध पाव सौंफ को ढाई पाव पानी में औटाकर छान ले। उस पानी को पाँच सेर गुड़ या बूरे में घोल-कर छान ले। फिर आठ सेर मैदा और सेर भर दही को इस मीठे पानी में घोलकर खूब मथ ले। पर इसका ध्यान रक्खे कि गुड़ या बूरे में पानी इतना डाले, जो आठ सेर ही मैदा को हो।

तई (जो चौड़ी कड़ाही-सी होती है) में घी चढ़ा-कर कुल्हड़े या लोटे में इस घोल को भरकर फैलाता हुआ डाले। उलट-पलटकर खूब सेक ले; क्योंकि बहुधा ये कच्चे रह जाते हैं, और पोने या थापी से निचोड़कर रखता जाय।

नानखताई—मैदा, घी और बूरा इनको बराबर लेकर उसन ले। पानी न डाले। थोड़ा-सा समुद्रफेन भी, सेर पीछे तीन माशे के हिसाब से, डाल दे। इसकी गोल लोई बाँध-बाँधकर आधे-आधे दो टुकड़े कर ले। पक्के कोयले सुलगाकर तीन ईंटें रख ले। एक पात्र में कोयले और अलग सुलगा रक्खे। एक थाली में कागज जमा-कर कुछ थोड़ी-थोड़ी दूर पर इन आधे टुकड़ों को बराबर

रखती जाय। फिर थाली को तीनों ईंटों के ऊपर रं
कर सुलगे हुए कोयलों का पात्र इस थाली के ऊपर र
दे। इससे सिककर जब ये बादामी रंग की हो जायं
तब निकाल ले, और दूसरी थाली कोयलों पर रख
को पहले से तैयार रक्खे। इसी भाँति करती जाय
सिक जाने की पहचान यह है कि जब नानखताई का रं
बादामी होकर नानखताई खिल जाय, तो जान ले वि
सिक गई।

पकौड़ी—इसमें भी फेन को जितना अधिक मथा
जायगा, उतनी ही अधिक फूलेंगी। जितना पतला फेन
होगा, उतना ही अधिक घी लगेगा, और स्वाद होगा।
यहाँ तक कि बराबर से भी अधिक घी लग जायगा।

पहले बेसन की पकौड़ी बताती हूँ। बेसन अच्छा
महीन लेकर पिसा हुआ नमक, मिर्च और अजवाइन
डालकर पतला फेन कर ले। जितना फेन को मथेगी,
उतनी ही पोली बनेंगी। पीछे कड़ाही में घी या कड़वा
तेल चढ़ाकर जब उसका बोलना बन्द हो जाय, तब
पकौड़ियाँ तोड़-तोड़कर उतार ले। जो इस फेन में
पोदीना तथा मेथी बीन-बनारकर डाल दे, तो और
स्वाद हो जायगा। और जो पोई, पालक, पान, मूली
पत्ते, कनकौओ के पत्ते लेकर दोनों ओर से बेसन

में खूब लपेटकर, घी में उतार ले, तो इनकी भी पकौड़ी बन जायँगी।

अरुई व रतालू के पत्तों की पकौड़ी यों होती हैं कि इनका फेन गाढ़ा रहता है, और पत्तों में लपेटकर, डोरे से बाँधकर, घी में पूरी की भाँति उतारी जाती हैं। इनकी रसेदार भाजी भी इस रीति से बनती है कि गरम मसाले को घी में डालकर और इन पकौड़ियों के कतले करके व साबित ही उसमें छौंककर पानी डाल देते हैं। फिर नमक, मिर्च और मसाला डाल देते हैं। थोड़ी देर में जब पानी पक जाता है; तब उतार लेते हैं।

काशीफल के फूल की पकौड़ी—इसका वेसन न गाढ़ा, न पतला, वरन् बीच का रहता है। एक फूल को वेसन में लपेटकर दूसरे फूल के भीतर रखते हैं। फिर तीसरे फूल को लपेटकर इसके भीतर रखते हैं। फिर तीनों फूलों को वेसन में लपेटकर घी या तेल में पूरी की भाँति उतार लेते हैं।

मूली व बथुआ की पकौड़ी—इनकी रीति यह है कि मूली के कतले कर या बथुए के साग को बीन-बनाकर उबाल ले। जब उबल जाय, तब निचोड़ डाले। पीछे सिलबट्टे से पीस डाले। इतना महीन पीसे कि गुद्दी न रहने पावे। इसमें खिले चने का वेसन और गरम मसाला

व नमक मिलावे। अब इसकी गोलियाँ बाँधकर पूरी की भाँति मन्दी आग से सेककर उतार ले।

केले की फली को लेकर उबाल ले और छील डाले। पीछे खूब मथ ले। खिले चने का आटा, गरम मसाला और नमक मिलाकर पहले ही प्रकार से पूरी की भाँति उतार ले।

चन्द्रसेनी (जिनको लखनऊ में बैंगनी बोलते हैं)—ये बैंगनी आलू और काशीफल की बनती हैं। इस प्रकार कि बेसन में नमक, मसाला डालकर तनिक गाढ़ा फेन कर ले, और इनके टुकड़े इस बेसन में लपेट-लपेटकर, पकौड़ियों की भाँति, घी या तेल में उतार ले।

चीला—ये दो प्रकार के, मीठे और नमकीन होते हैं। मीठे इस प्रकार से बनते हैं कि गेहूँ के आटे में गुड़ व बूरा मिलाकर बनाते हैं। इसका फेन भी पुओं की भाँति पतला रहता है। इसका फेन भी जितना मथा जायगा, उतने ही अच्छे चीले होंगे।

नमकीन दो प्रकार के होते हैं। एक बेसन के और दूसरे पिट्ठी के। पर पिट्ठी भी दो प्रकार की होती है। एक दाल को पानी में भिगोकर छिलके धोकर पीसते हैं। और सूखी दाल का आटा पीसकर पानी में बेसन की भाँति घोलकर मथ लेते हैं। पिट्ठी मूँग और मोठ, दो ही

की होती है। तवे या कड़ाही में पहले थोड़ा-सा घी डालकर सबमें फैला दे। पीछे थोड़ा-सा फेन (पिट्ठी, आटे या बेसन का, जिसके बनने हों) उसमें डालकर हाथ से पतला-पतला फैलाती जाय, और ऊपर से जो पिट्ठी उतरे, उसको उतारती जाय। पानी के हाथ से सबको एक-सा करती जाय। जब सब एक हो जाय, तब एक हाथ सब पर फेर दे, जिससे सब बराबर हो जाय। पर इस काम में फुर्ती करनी चाहिये। देर न लगानी चाहिये। इसके पीछे अब कलछी में ताया हुआ घी लेकर चीले के किनारों पर डालती जाय, ताकि घी चीले और तवे के बीच में चला जाय। थोड़ा-थोड़ा-सा घी चीले के ऊपर भी सब पर लगा दे, और पतले कौने से इस चीले को उलटकर दूसरी ओर से तवे या कड़ाही पर डाल दे। फिर थोड़ा-सा घी किनारों पर डाल दे; ताकि दोनों के बीच में जा रहे। इस भाँति एक-दो बेर करे, और ऊपर की ओर से भली भाँति सेंके; क्योंकि इधर कचे रह जाने का भय रहता है। परन् लोही इत्यादि वस्तु ऊपर से रखकर सेंके, तो कचे रह जाने का डर न रहेगा।

बड़े—ये मूँग और उड़द, दोनों की पिट्ठी के होते हैं। पर उड़द के अधिक होते हैं, और सुस्वाद भी होते हैं। बड़े एक तो साधारण होते हैं, जो पिट्ठी की लोई बना-

नहीं खाती। चाहे वह उससे ऊँच हो या नीच। और कहीं-कहीं तो इसमें भी विचार और भेद है। बहुत से केवल गौड़ ब्राह्मण ही की बनाई खाते हैं, अन्य ब्राह्मण की—जैसे गौतम, सारस्वत, कान्यकुब्ज इत्यादि की—नहीं। कोई-कोई केवल कान्यकुब्ज ही के हाथ की बनाई खाते हैं—जैसे पूर्व के श्रीवास्तव व अन्य कायस्थ। कोई-कोई अपनी स्त्री तक के हाथ की बनाई को भी नहीं खाते, अपने ही हाथ की बनाई खाते हैं। इस चौके की रसोई ही ने हम लोगों का खान-पान एक नहीं होने दिया, नहीं तो सबका एक ही है, जैसे पक्की या निखरी सबकी सब कोई खाता है। यहाँ तक कि लोधे, जाट, गूजर की बनाई हुई पूरी ब्राह्मण खाते हैं।

इस खान-पान और सखरे-निखरे के भेद का मूल कारण कुछ भी हो, परन्तु अब कोई सिद्धान्त ज्ञात नहीं होता। किसी ने किसी प्रकार का सखरा माना है, किसी ने किसी प्रकार का। जैसे कोई-कोई जब तक दाल में नमक न पड़े तब तक उसको सखरा नहीं मानते। वैसे भड़भूँजे के दाल-भात तक को कोई सखरा नहीं मानते। जैसे धान की खील, बौहरी (जो उबालकर भूनते हैं), परमल (जो ज्वार, मक्का इत्यादि को उबालकर बनाये जाते हैं), चने (जो हल्दी का पानी मिलाकर भूने

सकता है। जाड़ों में आठ पहर में आटा बदले, तब होगा।

डबलरोटी और पावरोटी—यह अँगरेजी भोजन है। इसका हम लोगों में अभी तक कम प्रचार है। इनके बनाने में झगड़े भी बहुत करने पड़ते हैं, इसलिए इनको छोड़े देती हूँ।

अंगा तो जानती ही है कि कड़ा आटा गूँदकर मोटे-मोटे रोटी की भाँति बिना तवे के आग पर सेंके जाते हैं; पर जो छोटी-छोटी बनाई जाती हैं, वे अंगा-करी कहलाती हैं, जो ऐसे ही कड़े आटे की बनती हैं। उनको मट्ठे (जो छाछ में बनाई जाती हैं) की भाँति गूँदकर कोयलों पर सेंकते हैं। यह अंगों से स्वादिष्ट होती हैं।

दाल—कई नाज की होती है; मूँग, उरद, अरहर, मटर, चना, मसूर, मोठ इत्यादि की। दाल छिलके की और धुली हुई, दो प्रकार की होती है। धुली हुई भी दो प्रकार की होती है—(१) तुरन्त पानी में डालकर, भीग जाय और फूल आवे, तब उसका छिलका पानी में धोकर अलग कर लेते हैं, (२) तेल-पानी का हाथ [illegible] गरम-गरम ढककर रख देते हैं, और सबेरे धूप में [illegible] देते हैं। [illegible] मसलकर छिलका अलग हो जाता है, तब

उसको ओखली में डालकर मूसल से कूट लेते हैं। तब छिलका बिलकुल उतर जाता है। यही प्रकार अच्छा भी है; क्योंकि इसमें स्वाद भी अच्छा रहता है, और पकाने में मोंधापन आ जाता है।

उड़द की दाल—पानी में भिगो और धोकर छिलका उतारकर रख ले। एक बटले में अदहन औंटा ले, और उतार ले। दूसरे एक बटले में (सेर भर दाल के लिए एक छटाँक) घी में गरम मसाले का बघार दे, और उस अदहन को उसमें उलट दे, दाल को डाल दे। पानी इतना डाले कि दाल से एक अंगुल ऊँचा रहे। ऊपर से टके भर नमक डाल दे। जब गल जाय, तब उतारकर नीचे अंगारों पर रख दे। जो घी अधिक डालना हो, तो पाव-भर दही व मलाई डाल दे। नहीं तो सादी बना ले। ये मसाले कूटकर डाल दे—सोंठ और धनिया पैसे-पैसे भर, दालचीनी छदाम-भर, दो इलायची बड़ी (कूटकर), कालीमिर्च जितनी खाय; राई और जीरे का बघार पीछे से और दे दे। जो इसकी बादी दूर करना चाहे, तो पचीस दाने कड़ अर्थात् कुसुम के बीजों की एक पोटली (कपड़े की) बाँधकर राँधते समय डाल दे, पीछे निकाल ले।

सर्व रीति—उड़द की दाल को धोकर छिलके उतार

पानी देकर खमीर तैयार कर ले । जो जाड़ा हो, तो इस आटे को गरम स्थान में रक्खे, और जो गरमी हो, तो ठंडी जगह में रक्खे । दो घंटे पीछे, जब खमीर तैयार हो जाय, तब लोई तोड़-तोड़ सूखी मैदा से लपेट-कर बना-बनाकर रखता जाय । पीछे इस लोई को हाथ से बढ़ा-बढ़ाकर, आध अंगुल से कुछ कम मोटी रखकर, तवे पर डाल दे । जब कुछ सिक जाय, तब फिर उलट-कर दूसरी तरफ से डाल दे । इसी भाँति सेक ले । जब बादामी रंग रोटी का हो जाय, तब उतारकर अंगारों पर चारों तरफ से सेक ले । जब सिक जाय अर्थात् पूरी की भाँति फूल जाय, तब उठाकर कपड़े से पोंछ डाले, और घी से चुपड़कर रख दे । खमीर के बनाने की रीति यों है कि छटाँक-भर औटे हुए दूध में, जब वह ठंडा हो जाय, छः माशे बताशे और तीन माशे कुटी हुई सौंफ, आध पाव गेहूँ के आटे में सबको गूँद ले । थोड़ी देर तक हथेली से खूब गूँदता रहे । पीछे कपड़े या बर्तन में रख दे । चार पहर पीछे इस आटे के भीतर का आटा ले ले । ऊपर का कुछ नोचकर छोड़ दे और थोड़ा-सा आटा और दूध और लेकर इसमें और गूँद डाले । इसको भी चार पहर तक रक्खा रहने दे । बस, खमीर तैयार हो गया । यह गरमी के मौसम में

जाते हैं), घुघुरे के लड्डू (जिनमें भड़भूँजे के घर का पानी पड़ता है), नमक, मिर्च की पीली दाल (यह भी पानी पड़कर बनती है)। कोई सिद्धान्त आजकल इस सबके का समझ में नहीं आता; पर प्रचार के अनुसार मान लिया जाता है। अब इस थोथे झगड़े को छोड़कर तुझको बनाने की रीति बताती हूँ। इसमें सबसे पहले रोटी है।

रोटी—सबसे अच्छी गेहूँ के आटे की होती है। पर बाजरा, मक्का, ज्वार, जौ, उड़द, चना इत्यादि की भी बनाते हैं। यह कई प्रकार से बनती है जैसे पनफती, चकले-वेलन की, खमीरी, डबलरोटी, पावरोटी। आटे को जितना माड़ा जायगा, और लोच दिया जायगा, उसकी रोटी उतनी ही अच्छी होगी।

पनफती—(हथपई) उसे कहते हैं, जो परोथन लगाये बिना केवल पानी के हाथ से पोई जाती है। दूसरी को परोथन लगाकर चकले-वेलन से बनाते हैं।

खमीरी—एक सेर गेहूँ के आटे या मैदे में एक छटाँक रोटी का खमीर या बताशों का मामूली खमीर या जलबियों का खमीर डालकर पाव-भर पानी में भिगोकर रख दे। जब थोड़ी देर हो जाय, तब ठंडे पानी में इस आटे को गूँद ले। पर आध सेर या पाँच-छः छटाँक

उसको ओखली में डालकर मूसल से कूट लेते हैं। तब छिलका बिलकुल उतर जाता है। यही प्रकार अच्छा भी है; क्योंकि इसमें स्वाद भी अच्छा रहता है, और पकाने में सोंधापन आ जाता है।

उड़द की दाल--पानी में भिगो और धोकर छिलका उतारकर रख ले। एक बटले में अदहन औटा ले, और उतार ले। दूसरे एक बटले में (सेर-भर दाल के लिए एक छटाँक) घी में गरम मसाले का बघार दे, और उस अदहन को उसमें उलट दे, दाल को डाल दे। पानी इतना डाले कि दाल से एक अंगुल ऊँचा रहे। ऊपर से टके भर नमक डाल दे। जब गल जाय, तब उतारकर नीचे अंगारों पर रख दे। जो घी अधिक डालना हो, तो पाव-भर दही व मलाई डाल दे। नहीं तो सादी चना ले। ये मसाले कूटकर डाल दे—सोंठ और धनिया पैसे-पैसे भर, दालचीनी छदाम-भर, दो इलायची बड़ी (कूटकर), कालीमिर्च जितनी खाय, राई और जीरे का बघार पीछे से और दे दे। जो इसकी बादी दूर करना चाहे, तो पचीस दाने कड़ अर्थात् कुसुम के बीजों की एक पोटली (कपड़े की) बाँधकर राँधते समय डाल दे, पीछे निकाल ले।

दूसरी रीति—उड़द की दाल को धोकर छिलके उतार

सकता है। जाड़ों में आठ पहर में आटा बदले, तब होगा।

डबलरोटी और पावरोटी—यह अँगरेजी भोजन है। इसका हम लोगों में अभी तक कम प्रचार है। इनके बनाने में झगड़े भी बहुत करने पड़ते हैं, इसलिए इनको छोड़े देती हूँ।

अंगा तो जानती ही है कि कड़ा आटा गूँदकर मोटे-मोटे रोटी की भाँति बिना तवे के आग पर सेंके जाते हैं; पर जो छोटी-छोटी बनाई जाती हैं, वे अंगाकरी कहलाती हैं, जो ऐसे ही कड़े आटे की बनती हैं। उनको मट्ठे (जो छाछ में बनाई जाती हैं) की भाँति गूँदकर कोयलों पर सेंकते हैं। यह अंगों से स्वादिष्ट होती हैं।

दाल—कई नाज की होती है। मूँग, उड़द, अरहर, मटर, चना, मसूर, मोठ इत्यादि की। दाल छिलके की और धुली हुई, दो प्रकार की होती है। धुली हुई भी दो प्रकार की होती है—(१) तुरन्त पानी में डालकर, भीग जाय और फूल आवे, तब उसका छिलका पानी में धोकर अलग कर लेते हैं. (२) तेल-पानी का हाथ लगाकर रात-भर ढककर रख देते हैं, और सवेरे धूप में सुखाते हैं। तब मलकर छिलका अलग हो जाता है, तब

दे। अब दाल तैयार हो गई। इस समय घी को खूब गरम करके इलायची और जीरा उसमें डालकर दाल को बघार दे, और खूब चला दे।

मूँग की दाल भी इसी भाँति की होती है, जैसे उड़द की। परन्तु उसमें कभी-कभी पालक या मेथी का साग भी डाल देते हैं। इसमें सोंठ नहीं डालते। बाकी मसाले, धनिया इत्यादि डालते हैं। इसमें हींग और जीरे की छौंक मुख्य कर देते हैं।

. मूँग की दाल—मुगली जाफरानी। सेर-भर धुली हुई दाल ले। धनिया बिना छिलके की दो तोले ले। मिर्च जितनी खाय। डेढ़ सेर पानी में पीसकर कलई-दार बर्तन में आग पर चढ़ा दे। मन्दी-मन्दी आग लगने दे। जब पानी दाल के बराबर हो जाय, तब आग पर से उतार ले, और आध घंटे तक मुँह बन्द करके अंगारों पर रक्खी रहने दे। जब कुछ गाढ़ी हो जाय, तब उसको कलछी से खूब घोट डाले। आध पाव छिले हुए बादाम को पानी में पीस-छानकर, सवा सेर कच्चे दूध में मिलाकर, दाल में डाल दे, और खूब कलछी से चलावे। पीछे से इसमें पाव-भर मलाई और डाल दे। इसको भी खूब घोट दे। नमक इस समय ठीक कर ले। एक दूसरे बर्तन में तीन पाव घी, खूब गरम करके, तीन माशे

ले। पहले पानी गरम कर रक्खे। एक बटले में घी चढ़ा-
कर, पानी में पिसी हल्दी, धनिया और लाल मिर्च भू
ले। जब मसाला भुन जाय अर्थात् हल्दी की हल्दाइँध
जाती रहे, तब दाल डाल दे। दाल से एक अंगुल ऊँचा
पानी रक्खे। नमक रुचि अनुसार डालकर ढक दे। जब
दाल गल जाय, तब उतारकर अंगारों पर रख दे। अब
इसमें सोंठ, दालचीनी, कालीमिर्च और इलायची पीसकर
डाल दे और कलछी से मिला दे।

उड़द की धुली हुई दाल आध सेर, अदरख कटी हुई
दो तोले, मलाई आध सेर, केसर तीन माशे, नमक और
मिर्च जितना चाहिए, जीरा चार माशे, इलायची छोटी दो
माशे, बादाम छिले हुए आध पाव। डेढ़ सेर पानी में
धनिया-मिर्च पीसकर मिला दे, और आग पर चढ़ा दे।
जब पानी उबलने लगे, तब उसमें दाल डाल दे। आध
घंटे में, जब पानी दाल के बराबर आ जाय, तब उसमें
अदरख और नमक डाल दे। आग को नीचे से निकाल
ले। इस समय के लिए केसर और बादाम को पहले
ही से पीस-छानकर तैयार रक्खे, जिसमें मलाई मिला-
कर और थोड़ा गरम करके तुरन्त उस समय डाले, जब
आँच निकले, और आध घंटे तक उसको मुँह बन्द
करके अंगारों या कोयलों की आग पर रक्खा रहने

माँड़ को पसा दे। फिर थोड़ा-सा घी डालकर अंगारों पर रख दे। इसका ध्यान रहे कि पानी पसाकर सब निकाल दें, बिलकुल रहने न दें। अंगारों पर रखकर पतले को दो-तीन बेर खूब हिला दे। यदि दो-तीन बूँद गुलाब या केवड़े का इत्र डाल दे, तो बहुत ही अच्छी सुगन्धि हो जायगी। जो नमकीन बनाना चाहे, तो थोड़ा-सा नमक डाल दे।

केसरिया भात—चावलों को धोकर अदहन में चढ़ा दे। सेर-भर में छः माशे केसर पीसकर डाल दे और बूरा भी। फिर गरम मसाले की छौंक दे। थोड़ी-सी जावित्री और खटाई भी डाल दे।

मीठे चावल—पाव भर अच्छे चोखे धुले चावल ले। उनमें उतना ही घी, उतना ही बूरा, उतना ही दूध और उतना ही पानी डालकर चूल्हे पर चढ़ा दे, और धीमी आग से पकावे। एक-एक चावल खिल जायगा।

मीठे केसरिया—एक सेर अच्छे महीन चावल लेकर तीन बार पानी में धो डाले। डेढ़ सेर पानी में डेढ़ तोला हरसिंहार की डण्डी और एक तोला केसर पीस ले, और सेर-भर मिसरी की चाशनी, जैसे मुरब्बे की करते हैं, कर ले। पाव-भर घी पतले में चढ़ाकर बीस

परन्तु चावल और बाजरे का बहुधा होता है। बा
को थोड़े-से पानी में डालकर ओखली में मूसल से कु
कूटते हैं। यहाँ तक कि उसके भीतर की मींगी निक
आती है। बाजरा जितना कुटेगा, उतना ही अच्छा भा
होगा। सावाँ इत्यादि का भी भात कूटकर ही बना
हैं। इसका कूटना और भी कठिन है। उसमें बहुत
छिलके होते हैं, जो बहुत देर में उतरते हैं। मुख्य भात
चावल का ही कहलाता है। चावल जितना महीन,
लम्बा और पुराना होता है उतना ही अच्छा भात
बनता है। बहुत-से चावलों में महक होती है। चावल
के भी कई व्यञ्जन बनते हैं। भात, खिचड़ी, तहरी, खीर
इत्यादि। भात भी कई प्रकार का होता है। जैसे सादा
केसरिया, नमकीन, मीठा। मुसलमान लोग इसी में मांस
डालकर पुलाव बनाते हैं। चावलों को चीन-फटकक
फिटकरी के पानी से तीन बेर धो डाले। पानी को सू
औटा ले और चावल उसमें डाल दे। पानी को चावलों से
छः-सात अंगुल, वरन् दस अंगुल ऊंचा रहने दे। पानी
चावलों से तिगुना होना चाहिए। इसमें थोड़ी-सी सोंठ
या अदरक कूटकर डाल दे। इससे चावलों की बादी
निकल जाती है। जब चावलों में एक कनी रहे, तब
कपड़े से बटले का मुख बाँधकर और उलटा करके

अंगारों पर रखकर मुँह ढंककर रख दे। एक घंटे पीछे उतार ले। इसी भाँति उड़द की दाल की बना ले। प उसमें दम देते समय अदरख को कतरकर और डाल दे

खीर—यह चावल और दूध की बनती है। इसको 'तस्मई' भी कहते हैं. इसमें चावल और दूध उम्दा होने चाहिए। निपनिया दूध को लेकर मन्दी आग से औटावे जब चौथाई दूध जल जाय, तब उसमें चावल (जो पहले से धुले और घी में भुने तैयार रहने चाहिए) सेर पीछे छटाँक के हिसाब से डाल देने चाहिए। कतरा हुआ गोला, छिला और कतरा हुआ बादाम, धुली हुई किश मिश डाल देनी चाहिए। सेर पीछे पाव-भर बूरा डालना चाहिए। कोई-कोई इसमें घी भी डाल देते हैं।

गर्म खीर अच्छी नहीं लगती, ठंडी स्वादिष्ट होती है ठंडी होने पर गुलाब या केवड़े का जल डाल दे, तो और भी अच्छी हो जाती है।

इसको कोई निखरी और कोई सखरी मानते हैं। प अधिकतर लोग भुने चावलों की खीर को निखरी और घी में बे भुने को सखरी मानते हैं। कोई-कोई मखाने डालकर खीर बनाते हैं। कोई-कोई चावलों के बदले मखाने डालकर बनाते और उसको फलाहार में समझते हैं

मुसलमान खीर को कम पकाते हैं, परन्तु वे चावलों

खिचड़ी बिना मसाले की अच्छी नहीं बनती। सादी खिचड़ी के बनाने में तो कुछ बात नहीं है, तू जानती ही है।

भुनी खिचड़ी—इस प्रकार बनाते हैं कि धुली मूँग की दाल और चावलों को घी में भून ले। पीछे निकालकर गरम मसाले से छौंक, नमक-मसाला डाल, अदहन का पानी एक अंगुल ऊँचा भर दे, और ढक दे। पीछे थोड़ा-सा घी और डालकर अंगारों पर रख दे। सब खिल जायगी।

दूसरी रीति—सेर-भर चावल और आधसेर धुली मूँग की दाल ले। आध सेर घी, तीन तोले नमक, चार माशे कालीमिर्च, छः छः माशे लौंग और दालचीनी, चार माशे जीरा। पहले दाल और चावल को खूब धो डाले। पीछे पानी को किसी चौड़े मुँह के बासन में आग पर चढ़ावे, दाल और चावलों को चलनी में भरकर इस बासन के मुँह पर रख दे। आध घंटे तक रक्खी रहने दे। फिर उतार ले। अब दो तोले घी और एक-एक माशे लौंग और इलायची तथा डेढ़ पाव पानी में बघार देकर अलग रख दे। पीछे और घी डालकर हींग की बघार दे, और इसमें उस खिचड़ी, जिसे नमक और कुटे हुए मसाले को डालकर कलछी से खूब उलट-पलट करके भून ले। पीछे

तहरी—यह कई प्रकार की होती है—(१) चावल-बड़ी की, (२) चावल-मुँगौड़ी की, (३) चावल-आलू की, (४) चावल-चूट (हरे छिले हुए चने) की इत्यादि। इसमें भी चावल महीन और पुराने होने चाहिए। मुँगौड़ियों या बड़ियों को कुछ फोड़कर और घी को बटले में डालकर भून ले। पीछे भुनी हुई मुँगौड़ी या बड़ी को चावलों के संग गरम पानी में चढ़ा दे और आग पर रख दे। जब पानी जलने पर आ जाय, तब नमक-मसाला डालकर अंगारों पर रख दे, आध घंटे पीछे उतार ले।

बड़ी या मुँगौड़ी या चनौरी—पहले इसके कि मैं इनके पकाने की रीति बताऊँ, इनके बनाने की क्रिया बताती हूँ। बड़ी उड़द की दाल की, मुँगौड़ी मूँग की दाल की और चनौरी चने की दाल की होती हैं। ये ताजी और सूखी दो प्रकार की होती हैं।

दाल लेकर रात को पानी में भिगो दे। जब फूलकर भीग जाय, तब उसको धोकर उसका छिलका उतार ले, और ऐसा धोवे कि निरी दाल निकल आवे, सब छिलके दूर हो जायँ। अब इसकी महीन पिट्ठी सिलबट्टे पर पीस ले। जब पिट्ठी पिस जाय, तब इसमें मसाला महीन कूटकर डाल दे। चाहे तेज, चाहे मन्दा, जैसा

का आटा पीसकर दूध में डालकर खीर की भाँति पका लेते हैं, जिसे वह 'फीरनी' कहते हैं।

छेने की खीर—दो सेर दूध कड़ाही में औटावे। एक उफान जब आ जाय, तब उसमें छटाँक-भर खट्टा दही या दूसरी कोई खटाई डाल दे, और खूब मिला दे। इससे दूध फट जायगा। जब सब दूध फट जाय, तब कपड़े में छान-कर पानी निकाल दे, और कपड़े में लटका दे। पानी निकलकर जो कपड़े में बच रहे, वही छेना कहलाता है। अब चाशनी तैयार करनी चाहिए। पाव-भर चाशनी में, जब वह खूब गरम हो, छेना डालकर खूब चला दे, और आध घंटे तक ढका रहने दे। फिर दो सेर दूध कड़ाही में चढ़ावे, और जब अधऔटा अर्थात् आधा दूध जल जाय, तब उसमें यह छेना डाल दे। पर यह ध्यान रहे कि दूध औटते में मलाई न पड़ने पावे, न किनारों पर वह जमने पावे। इसलिए काँचे से खूब चलाती रहे। और छेना खीर में सब एकदम से न डाल दे, थोड़ा-थोड़ा करके डालती जाय और चलाती रहे। अब इसमें कतरे हुए पिस्ते एक तोला, छिले और कतरे बादाम एक तोला, किशमिश छः माशे, छोटी इलायची का चूरा छः माशे डालकर मिला दे। जब थोड़ा गरम रहे, तब एक छटाँक गुलाबजल डालकर मिला दे। यह बंगाल का भोजन है।

तहरी—यह कई प्रकार की होती है—(१) चावल-बड़ी की, (२) चावल-मुँगौड़ी की, (३) चावल-आलू की, (४) चावल-चूट (हरे छिले हुए चने) की इत्यादि। इसमें भी चावल महीन और पुराने होने चाहिए। मुँगौड़ियों या बड़ियों को कुछ फोड़कर और घी को बटले में डालकर भून ले। पीछे भुनी हुई मुँगौड़ी या बड़ी को चावलों के संग गरम पानी में चढ़ा दे और आग पर रख दे। जब पानी जलने पर आ जाय, तब नमक-मसाला डालकर अंगारों पर रख दे, आध घंटे पीछे उतार ले।

बड़ी या मुँगौड़ी या चनौरी—पहले इसके कि मैं इनके पकाने की रीति बताऊँ, इनके बनाने की क्रिया बताती हूँ। बड़ी उड़द की दाल की, मुँगौड़ी मूँग की दाल की और चनौरी चने की दाल की होती हैं। ये ताजी और सूखी दो प्रकार की होती हैं।

दाल लेकर रात को पानी में भिगो दे। जब फूलकर भीग जाय, तब उसको धोकर उसका छिलका उतार ले, और ऐसा धोये कि निरी दाल निकल आवे, सब छिलके दूर हो जायँ। अब इसकी महीन पिट्ठी सिलबट्टे पर पीस ले। जब पिट्ठी पिस जाय, तब इसमें मसाला महीन कूटकर डाल दे। चाहे तेज, चाहे मन्दा जैसा

खाना हो। मसाला यह है—धनिया, मिर्च (उड़द की पिट्ठी में सोंठ और तेजपात और डाले), हींग, जीरा सफेद, लौंग और इलायची। पिट्ठी जितनी हाथ से पानी डाल-डालकर धई या फेंटी जायगी, बड़ी मुँगौड़ी उतनी ही हलकी और फूली हुई होंगी। जब इस भाँति पिट्ठी तैयार हो जाय, तब चटाई या सिरकी पर इसकी बड़ी या मुँगौड़ी तोड़ दे और धूप में सुखा ले। जब बिलकुल सूख जायँ, तो उतारकर रख ले। ताजी पिट्ठी की मुँगौड़ी अच्छी होती हैं; पर बड़ियों की पिट्ठी को बहुधा खट्टी करके बनाते हैं, अर्थात् पिट्ठी को पीसकर एक रात-भर (और कोई-कोई एक रात और एक दिन) रक्खी रहने देते हैं। इतने ही में खट्टी हो जाती है। फिर बड़ी तोड़ते हैं। तीन दिन से अधिक पिट्ठी को नहीं रखते, सो भी जाड़ों में। गरमियों में एक दिन में ही उतनी खट्टी हो जाती है। वर्षाऋतु में पिट्ठी शीघ्र ही खट्टी पड़ जाती है; इसलिए इस ऋतु में बड़ी-मुँगौड़ी नहीं बनाते। एक यह भी कारण है कि इस ऋतु में बादलों के कारण सूखने का भी अवसर नहीं मिलता, इसलिए सड़-घुस जाती हैं।

चनौरी को चने की दाल भिगोकर और उसकी पिट्ठी पीसकर मुँगौड़ी की भाँति तोड़कर बना लेते हैं।

अब इनके राँधने की क्रिया यह है कि इनको लोढ़ी से तोड़कर कुछ महीन कर ले, एक बटले में कुछ घी डालकर आग पर रख दे, और हौले-हौले भून डाले। जब भुन जायँ और कच्ची न रहें तब पानी डालकर मसाला और नमक डाल दे, और आग ही पर रक्खा रहने दे। जब गल जायँ, तब जाने कि पक चुकीं और उतार ले।

टटकी मुँगौड़ी—यह मूँग की पिट्ठी की बहुधा बनती हैं, विशेषकर रोगी के लिए (भले-चंगे मनुष्य के लिए भी कुछ निषेध नहीं है)। बनाने की रीति यह है—(१) या तो पिट्ठी को महीन पीस, मसाला इत्यादि मिलाकर कड़ाही में घी चढ़ा, पूरी की भाँति तल ले, अथवा (२) एक बटले में पानी भरकर आग पर चढ़ा दे। ऊपर से गाढ़े का कपड़ा मुँह पर बाँध दे। जब पानी खौल उठे, तब छोटी-छोटी बड़ी इस कपड़े पर तोड़ती जाय। आग को नीचे से जलने दे। ये बड़ियाँ पानी की भाप से सिकती जायँगी। उनको उतारती जाय। दूसरी और तोड़ दे। जब यह सिक जायँ, तब इनको उतार ले। फिर और तोड़ दे। जब तक सब न हो चुकें, इसी प्रकार करती जाय। बटला व तसला जितने चौड़े मुँह का होगा, उतनी ही इस कार्य में शीघ्रता होगी।

माँड़िया—यह अरहर की दाल के पानी का बनता

और चावलों के संग खाया जाता है। बनाने का तरीका यह है कि अरहर की दाल को पकने के लिए आग पर चढ़ा दे; पर पानी तनिक अधिक रक्खे। जब दाल दो-तिहाई गल जाय, तब उसमें से पानी निकाल ले, और दाल को अलग कर ले। दाल को तो नमक, घी, डालकर अंगारों पर दम देकर (ऊपर एक कटोरे में पानी भरकर रख दे) बहुत ही मन्दी आग से गला ले। फिर मिर्च, मसाला और डाल दे। एक एक खिल जायगी।

इस पानी को अब घी में (जितना डालना चाहे) गरम मसाले की बघार देकर छौंक दे। मिर्च, मसाला, खटाई और डाल दे। कोई-कोई इसमें चावलों का माँड़ भी डाल देते हैं। कोई थोड़ा-सा बेसन मिला देते हैं, तब बघारते हैं। कोई-कोई इसमें खटाई अधिक डालते हैं, और थोड़ा-सा बेसन भी मिलाकर डालते हैं।

कढ़ी—यह बहुधा तो बेसन की बनती है; पर कोई-कोई मूँग की दाल की पिट्ठी को भी बनाती हैं। इसमें पकौड़ी या बेसन की टेंटी भी डालती हैं। यह जितनी पकाई जाती है, उतनी ही अच्छी होती है। पहले पकौड़ी या टेंटी बनाकर तैयार रखिये। पीछे मट्ठे में बेसन या मूँग की पिट्ठी को घोल ले। कड़ाही में घी डालकर जीरे की छौंक दे। जब छौंक तैयार हो जाय, तब इस

मट्ठे के घोल को इस कड़ाही में डाल दे। जब मट्ठे में वेसन इत्यादि घोले, तब उसमें नमक, मसाला भी पीसकर डाल दे। पकौड़ी बनाना तो तुझको पहले बता चुकी हूँ। टेंटी इस भाँति बनाते हैं कि वेसन को थोड़ा-सा नमक डालकर बहुत कड़ा माड़ ले, और उनकी टेंटियाँ बना ले। इन टेंटियों को बटले या कड़ाही में कुछ घी डालकर आग पर भून ले, और कढ़ी में डाल दे।

मूँग की पिट्ठी की कढ़ी—जो बनाई जाती है, उसमें वेसन की पकौड़ी नहीं डालते। मूँग की पिट्ठी ही के मुँगौड़े डाले जाते हैं।

झोर या झोल—यह भी एक प्रकार की कढ़ी ही है। परन्तु मथुरा के चौवों में इसको झोर कहते हैं। इसी के एक प्रकार का गुजरातियों में ओसावन, महाराष्ट्रों में कढ और ओसवालों में माँड़िया कहते हैं। परन्तु यह कढ़ी से बहुत ही पतला बनाया जाता है। चौवों के प्रत्येक भोज में झोर अवश्य होता है। क्रिया वही कढ़ी की है; परन्तु इसका घोल बहुत ही पतला रक्खा जाता है। यहाँ तक कि चौवों में कहावत है—"दमड़ी को तोर (दही का पानी) और भर कठौता झोर।" यह इतना स्वादिष्ट होता है कि इसके विषय में कहावत है—"खुर-

घुटमुण्डा * तबला चोर, खाय पकौड़ी माँगे झोर।' इस घोल को निरा पानी-सा रक्खे, और मिर्च-मसाला खूब दे। जब तक इक्कीस उफान न आवें, तब तक यह अच्छा नहीं बनता। कम उफान भी देते हैं; पर स्वाद भी उतना ही कम रहता है। यह भोजन चौबे लोगों का है, क्योंकि वे ही इसको ठीक बनाते हैं।

चौबे लोग आलू का भी झोर बनाते हैं। वह भी बहुत स्वादिष्ट बनता है; परन्तु वह निरे आलुओं ही का बनता है। बेसन या पिट्ठी नहीं डाली जाती। आलुओं के साग में छगुना या अठगुना पानी डालकर उफान देते हैं। और आलुओं को घोटकर पानी में मिला देते हैं। इसमें नमक, मिर्च और गरम मसाले की छौंक अच्छी होनी चाहिए। विशेषकर लौंग अधिक डाली जाय।

यह झोर आम की गुठलियों का भी बनता है। यथा आम का रस निकालकर छिलके और गुठलियों को पानी में धो डाले, और नमक, मिर्च, मसाला डालकर

* यह कहावत किसी मुसलमान के विषय में है कि उसका सिर घुटमुण्ड था। उसको किसी संयोग से किसी चौबे के यहाँ भोजनों में झोर खाने को मिला। वह उसको इतना स्वादिष्ट लगा कि सिवा झोर के और कोई भोजन उसने न माँगा।—ले॰

गरम मसाले की छौंक देकर दो-तीन उफान से भोर की भाँति पका ले। परन्तु इसको मिट्टी की हाँडी में बनावे। पीतल या काँसे के वर्तन में कभी न बनावे; क्योंकि उनमें यह पितला जाता है, और कड़ाही में काला पड़ जाता है। यह चावलों के संग खाने में बहुत स्वादिष्ट लगता है।

सेंवई—इनको तू जानती ही है कि सावन के महीने में हर कोई बनाती है। परन्तु इनके राँधने और बनाने की क्रिया इस प्रकार होनी चाहिए, जो अति श्रेष्ठ है; क्योंकि जैसे अब पकाई जाती हैं, उस प्रकार वे कच्ची और गरिष्ठ होती हैं—(१) सेंवई को पूरीकी भाँति घी में उतार ले। खाँड व बूरे की चाशनी करके पाग ले। पीछे पानी में उबाल ले, और बूरा डालकर खाय। कभी कच्ची न रहेंगी, न गरिष्ठ होंगी। (२) सेंवई कई प्रकार से बनती हैं; यह तुझको फिर कभी बताऊँगी; क्योंकि अभी तुझको बहुत व्यञ्जन बताने हैं।

(३) फलाहार

यहाँ से अब तुझको फलाहार, जिसको साकाहार भी कहते हैं, बनाना बतलाती हूँ। इनका अर्थ तो है फल का व साग का भोजन; परन्तु ऐसे कई प्रकार के भोजन हैं, जो इनमें गिने जाते हैं। जैसे दूध के सब भोजन

और कूटू, सिंघाड़ा, पसई, सावाँ, कँगनी इत्यादि के पदार्थ। फलाहार में सेंधा (लाहौरी) नमक, काली-मिर्च और सफेद ज़ीरा डालते हैं। दूसरा मसाला नहीं।

दूध के इतने भोजन बन सकते हैं— दूध, दही, रबड़ी, खोआ, शिखरन, रायता, पेड़ा, बर्फ़ी, खीर, सुर्चन इत्यादि। कूटू के भोजन—पूरी, फुलौरी, हलवा।

सिंघाड़े के भोजन—उबले हुए सिंघाड़े, साग, पिटौर, हलवा, पूरी इत्यादि। इनकी विधि यह है—

दूध—खालिस निपनिया दूध लेकर, बराबर का पानी मिलाकर, मन्दी आग पर सवेरे से साँझ तक मिट्टी की हाँडी में औटावे। चलाती रहे, मलाई न पड़ने पावे। उसमें चिरौंजी, गोला, बादाम और मिसरी डाल दे। जब पानी सब जल जाय, और दूध भी आधा रह जाय, तब उतार ले। थोड़ा गुलाब व केवड़ा डाल दे। मथुराजी के पास जो गोकुल है, वहाँ के मन्दिरों में यह दूध बहुत ही अच्छा बनाया जाता है, जो लोटी के नाम से प्रसिद्ध है।

दही—निपनिया दूध लेकर औटावे। जब आठवाँ हिस्सा जल जाय, तब उतार ले। औटते में मलाई इसमें भी न पड़ने दे। बराबर कलछी से चलाती रहे। जब कुछ ही गरम रहे, तब दही (निचुड़े हुए) का जामन देकर हाँडी (कोरी हो, तो बहुत ही अच्छा) में जमा

दे। जाड़े हों, तो हाँडी के नीचे थोड़ी-सी भूभल रख दे। गरमी हो, तो ठंडे स्थान में रक्खे। वर्षाऋतु में हवादार जगह में रक्खे। यदि जाड़ों में दही न जमे, तो थोड़ी-सी भूभल हाँडी के नीचे और रख दे। गरमी हो, तो रुपया डाल दे। वड़ के दूध के छींटे दे दे। जंगली अंजीर या ढाँक का हरा पत्ता डाल दे, तो थोड़ी ही देर में जम जायगा। जामन* ऐसा होना चाहिए कि दही मीठा हो। उसको कपड़े में लटकाकर निचोड़ डाले; क्योंकि जामन में जितना कम पानी होगा, उतना ही दही गाढ़ा जमेगा। बिलारी का दही प्रसिद्ध है कि छः-छः महीने तक नहीं बिगड़ता। यदि दूध अच्छा औंटा हो, जामन अच्छा हो, और कोरे मिट्टी के बर्तन में दही जमाया जाय, तो कई दिन तक अच्छा बना रह सकता है।

चार प्रकार का दही एक ही हाँडी में जम जाय। इसकी यह रीति है कि एक मिट्टी का बर्तन बहुत ही चौड़े मुँह का (जैसे हलवाइयों के दही जमाने के तौले या कूँड़े होते हैं) बनवावे। इसके बीच में चीरे की भाँति खाँचा रक्खा जाय, जैसा कि आगे चित्र में है। यह खाँचा एक जौ गहरा और पाव जौ चौड़ा रहना चाहिए! फिर टीन का

* सहेजा अथवा जमानेवाला।

एक चौफाँका इस प्रकार का इतना ऊँचा, जितना कि यह दही जमाने का बासन हो, बनवावे। उस चौड़े मुँह के मिट्टी के बासन में इसको ऐसा रक्खे कि उसमें ठीक आ जाय। एक ओर फीका, दूसरी ओर मीठा,

मयज़ीरा | फीका
नमकीन | मीठा

तीसरी ओर नमकीन, और चौथी ओर मय भुने जीरे के दूध अलग-अलग भरे और जामन देकर जमावे, जैसा कि चित्र में है। जब दही जमने पर आ जाय और कुछ ही ढीला रहे, तब इस टीन के चौफाँके को ऊपर से निकाल ले, और दही को जमने दे। जब जम जाय, तब एक ही में से चार भाँति का दही खिला सकती हो, और यह ज्ञात न होगा कि यह कैसे जमाया गया है।

रबड़ी—इसमें लच्छे जितने अधिक पड़ेंगे, उतनी ही अच्छी बनेगी। लच्छे अधिक डालने की रीति यह है कि जब दूध औंटे, और उसमें उफान आवे, तब उस उफान को कोंचे से कड़ाही के किनारों पर चिपकाती जाय। इन्हीं के लच्छे हो जायँगे। जब सब दूध निबट चुके, केवल $\frac{1}{4}$ भाग बच रहे, तभी उतार ले। उसमें लौंग और बड़ी इलायची पीसकर गरम ही में डाल दे, मीठा भी डाल दे, फिर खूब चलाकर ठंढी कर ले।

पेड़े—इसका मावा या खोया गौ या भैंस के दूध का होना चाहिए। कहीं भेड़-बकरी का दूध न मिल जाय। मावा जितना कड़ा भूना जायगा, पेड़े उतने ही अच्छे होंगे और जो मावा भूनते में घी डाल दिया जाय, और उसी में भूना जाय, तो और भी अच्छे होंगे। मावा भूनते में लौंग, इलायची पीसकर डाल देनी चाहिए। बूरा मिलाते समय कन्द भी पीसकर मिला दे। मथुराजी के और डिबाई, जिला बुलन्दशहर के पेड़े प्रसिद्ध हैं।

बर्फी—इसमें जितना मावा अधिक डाला जायगा, उतनी ही अच्छी बर्फी होगी। इसमें चाशनी की पहचान भी है। यह हलवाई के यहाँ ही अच्छी बन सकती है। अनूपशहर, अतरौली, जयपुर और मथुराजी की बर्फी और कलाकन्द अच्छा होता है।

कूटू—इसकी पूरी और फुलौरी बनती हैं। पूरी से फुलौरी अच्छी बनती हैं। आलू, काशीफल, अरवी या केवल आटे ही की बना ले। इस प्रकार कि आलू या अरवी को तो पहले उबाल ले। पीछे छीलकर बनार ले। काशीफल को चाहे कच्चा ही बनार ले। अब कूटू के आटे को पानी में, सेंधानमक डालकर और कालीमिर्च पीसकर घोल ले और खूब मथ डाले। जितना मथे, उतना ही अच्छा। इस फेन में आलू, अरवी या काशीफल के

टुकड़े को लपेट-लपेटकर कड़ाही में चढ़े हुए घी में उतार ले। पूरी का आटा कड़ा गुँदता है।

सिंघाड़ा—इसका पिटौर अच्छा बनता है। इस प्रकार कि आटे की लेही पकावे। इस लेही को परात या थाली में एक जौ के बराबर मोटी चौरस जमा दे। पीछे उसको शकरपारे की भाँति चाकू से काट ले। दही को कपड़े में छानकर मट्ठा-सा कर ले या टटकी छाँछ लेकर उसमें नमक, मिर्च और भुना जीरा पीसकर डाल दे, और मिला ले। फिर इन कतलों को डालकर आध घंटे पड़ा रहने दे।

शीरा—सिंघाड़ा के आटे का शीरा भी बनता है। इस प्रकार कि गुड़ को या बूरे को, जिसमें बनाना हो, पानी में घोलकर छान ले और सिंघाड़े के आटे को इसमें मिलाकर पका ले। परन्तु यह पतला बनता है। इसमें घोटने की चतुराई है कि गुठले न पड़ने पावें; क्योंकि इकट्ठा आटा डालने से गुठले पड़ना बहुत सम्भव है। इसलिए थोड़ा-थोड़ा आटा डाला जाय और चला दिया जाय।

अरवी—ये चार भाँति की बनती हैं। (१) रसेदार, (२) नरम खुश्क, (३) भुर्ता, (४) तली हुई। ये गरिष्ट बहुत होती हैं; परन्तु अजवाइन इनको अच्छी भाँति पचा देती है। अथवा अरवी के पानी को

जितना सुखा ले, उतनी ही जल्दी ये पचती हैं। अजवाइन इनका मुख्य मसाला है।

(१) मोटी-मोटी अरवी लेकर छील डाले। उनको अजवाइन की छौंक देकर छौंक ले। फिर उनमें मसाला डालकर पानी बराबर का डाल दे। जब सीझ जायँ, तब उतार ले।

(२) नई हों, तो छील ले। यदि पुरानी हों, तो उबाल ले, पीछे छीले। अजवाइन की बघार देकर इनको घी में भून ले। जब भुन जायँ, तब मिर्च, मसाला और नमक डाल दे, और गल जायँ, तब उतार ले।

(३) मोटी-मोटी अरवी लेकर भूभल में दाबकर भुर्ता कर ले (पर यह पकी अरवियों का होता है) और छीलकर मथ ले। उसमें पिसा हुआ गरम मसाला, धनिया, नमक, मिर्च इत्यादि मिलाकर घी में छौंक ले।

(४) प्रसिद्ध है कि ये अरवी वृन्दावन में मौनीदास की टट्टियों (राधाष्टमी पर) में अच्छी बनती हैं। रीति यह है कि मोटी-मोटी अरवी लेकर उबाल ले। उनका छिलका उतारकर नमक मिले हुए मट्ठे में तीन या चार दिन भिगो रक्खे, ताकि उनमें मट्ठा भिद जाय। चौथे-पाँचवें दिन निकालकर फरफरी करके घी में पूरी की

भाँति तलकर उतार ले । थोड़ा नमक और कालीमिर्च पीसकर इनमें लगा दे ।

शिखरन—मीठा और टटका चक्का दही लेकर कपड़े में बाँधकर निचुड़ने दे । जब पानी निचुड़ जाय, तब उसको कपड़े में से निकालकर पत्थर या काँच के पात्र में रक्खे । उसमें मिसरी, कालीमिर्च, बड़ी इलायची पीसकर मिलावे । कोई-कोई थोड़ा-सा कच्चा दूध और ताया हुआ घी भी इसमें डाल देते हैं ।

खुर्चन—यह मथुराजी में अच्छी बनती है और गुसाईं पेड़ेवाले की दूकान की प्रसिद्ध है । यद्यपि अब और दूकानों पर भी बनती है, और रुपये की ऽ१॥ तक आती है । दूर-दूर तक मथुरा से जाती है । तथापि सूखने से उसका वह स्वाद नहीं रहता । बनने के बाद, तीन-चार दिन तक ही स्वाद रहता है । पीछे बहुत ही कम हो जाता है । इसकी रीति यह है—

मैंने जैसे तुझको रबड़ी में लच्छे डालने की विधि बतलाई, उसी भाँति दूध के लच्छे बना ले । पीछे इन लच्छों को कड़ाही में डालकर आग पर फिर भूने । पर इस बात का ध्यान रक्खे कि लच्छों को टूटने न दे । जब ये लच्छे खूब भुन जायँ, अर्थात् उनकी नमी जाती रहे, और सूखे से जान पड़ें (पर यह भी न हो कि

बेलकुल जला ही दे, या भूनते-भूनते सूखे कर डाले। नहीं, थोड़ी-सी नमी जरूर रहने दे), तब उनमें पिसा हुआ कन्द, पिसी हुई इलायची डाल दे। थोड़ा-सा गुलाब व केवड़े के इतर की दो-चार बूँदें भी डाल दे।

कच्चे सिंघाड़े की पूरियाँ—छील और तराश कर धूप में सुखा दे। जब कुछ खुश्क हो जायँ, तब उनको पीस ले, और कपड़े में रखकर खूब निचोड़ ले, ताकि पानी सब निकल जाय। उसको फिर धूप में सुखावे। जब कुछ और खुश्क हो जायँ, तब फिर सिलबट्टे से पिट्ठी की भाँति महीन पीस ले, और थोड़ा-सा सिंघाड़े का खुश्क आटा मिलाकर अथवा उन पर बुरककर घी में पूरियाँ उतार ले। ये बहुत स्वादिष्ट होती हैं।

(४) चबेना

बहुत-से तो भाड़ पर भुनकर बनते हैं, जो भुरजी की दूकान पर बिकते हैं। जैसा पहले बता चुकी हूँ। पर बहुत-से घर में भी बनाये जाते हैं; जैसे चने व मूँग की दाल अथवा मूँग, मोठ व तली हुई मसूर, सेव, कचरी इत्यादि।

मूँग, चने की दाल व मसूर को मोटी-मोटी ले ले। घुनी हुई निकाल दे। जाड़ों में छः पहर और गरमी में दो पहर पानी में भिगो रक्खे। मिट्टी की नाँद में डाल-

बिलकुल जला ही दे, या भूनने-भूनते सूखे कर डाले। नहीं, थोड़ी-सी नमी जरूर रहने दे), तब उनमें पिसा हुआ कन्द, पिसी हुई इलायची डाल दे। थोड़ा-सा गुलाब व केवड़े के इतर की दो-चार बूँदें भी डाल दे।

कच्चे सिंघाड़े की पूरियाँ—छील और तराश कर धूप में सुखा दे। जब कुछ खुश्क हो जायँ, तब उनको पीस ले, और कपड़े में रखकर खूब निचोड़ ले, ताकि पानी सब निकल जाय। उसको फिर धूप में सुखावे। जब कुछ और खुश्क हो जायँ, तब फिर सिलबट्टे से पिट्ठी की भाँति महीन पीस ले, और थोड़ा-सा सिंघाड़े का सूखा आटा मिलाकर अथवा उन पर बुरककर घी में पूरियाँ उतार ले। ये बहुत स्वादिष्ट होती हैं।

(४) चबेना

बहुत-से तो भाड़ पर भुनकर बनते हैं, जो भुरजी की दूकान पर बिकते हैं। जैसा पहले बता चुका हूँ। पर बहुत-से घर में भी बनाये जाते हैं; जैसे चने व मूँग की दाल अथवा मूँग, मोठ व तली हुई मसूर, मेवे, इत्यादि।

मूँग, चने की दाल व मसूर को मोटी-मोटी ... भुनी हुई निकाल दे। जाड़ों में छः पहर और गर्मी में दो पहर पानी में भिगो रक्खें। मिट्टी की नाँद में

कर दस अंगुल ऊपर तक पानी भर दे। जब फूल जाय, तब एक मोटे कपड़े पर, पानी निचोड़-निचोड़कर, रखता जाय। फिर एक कपड़े से इसको रगड़कर तनिक फरीं कर ले। पीछे घी को कड़ाही में चढ़ा दे। जब घी खूब खोल चुके, तब इस भीगी हुई दाल या मसूर को हाथ से फैलाता हुआ कड़ाही में डाले। एक ही जगह इकट्ठा न डाल दे, और पोनी से उसको उछाल दे। जब तल-तलकर ऊपर आ जाय, तब पोनी में लेकर और घी को निचोड़कर एक परात या थाल में रखता जाय। इसी भाँति सबको तल ले। इसमें से कुछ कड़ाही के नी[illegible] तलने में रह जाती है, जो टर्रा होती है, उसको निकाल कर अलग रखती जाय। (यह समोसों के काम आते हैं, जो पीछे बताऊँगी।) इसमें नमक, कालीमिर्च महीन पीसकर और छिड़ककर मिला दे। तनिक सा पिसा हुआ महीन अमचूर मिला दे। चने की दाल को अक्सर अधिक तलते हैं, और मूँग-मोठ को कम।

सेव—अच्छे तो पेंच में बनते हैं; क्योंकि बहुत पतले होते हैं। पतले ही घी अधिक सोखते हैं, और उतने ही [illegible] होते हैं। इनकी रीति कठिन नहीं है। थोड़ा-[illegible] [illegible]न डालकर बेसन को तनिक कड़ा सान ले और कड़ाही में घी चढ़ाकर पोनी में बेसन की लोई रखकर

हाथ से झाड़ती जाय, तो नीचे को सेव गिरते जायँगे। जब सब गिर जायँ, तब लकड़ी से उछाल दे और सिकने पर दूसरी पोनी से निकाल ले। परन्तु इस बात का ध्यान रक्खे कि कड़ाही के ऊपर एक चौकोनी टिखटी रखकर पोनी से छाँटे, नहीं तो कढ़ाही के किनारे पर से पोनी के टूट जाने का भय रहेगा और हाथ गरम घी में जा पड़ेगा। सानते समय बेसन में नमक, पिसी हुई मिर्च, हल्दी इत्यादि डाल दे। दाल-सेव आगरे के प्रसिद्ध हैं।

कचरी—देहली से छिली हुई साबित बहुत अच्छी आती हैं। उनको लेकर खाली कड़ाही को आग पर रखकर मन्दी आग से खूब भूनती जाय। हाथ में कपड़ा ले ले, उससे चलाती रहे, जिसमें हाथ न झुलसे और न कचरी जलें। खूब भुन जायँ तब उन पर कलछी या डोई से थोड़ा-थोड़ा-सा घी डालना शुरू करे, और कोंचे से चलाती जाय। ज्यों-ज्यों घी पड़ेगा, कचरी फूलती आवेंगी। जब सब फूल जायँ, तब उतारकर पीसा हुआ नमक मिला दे। घी में जो पूरी की भाँति तलते हैं, वे अच्छी नहीं होतीं, क्योंकि फूलती नहीं हैं। इसी प्रकार अन्य कचरियों को तले। जो देहली की कचरी न मिलें, तो इस प्रकार करे कि कातिक के महीने में जब कचरी अधपकी हों, बड़ी-बड़ी लेकर छील डाले, और उनको

करेलों को लेकर नमक लगाकर थोड़ी देर रख छोड़े। पीछे हाथों से मसलकर निचोड़ डाले। कड़वा पानी निकल जायगा। पीछे चाकू से कतरकर धूप में सुखा ले। जब आवश्यकता हो, कचरी की भाँति भून ले।

काशीफल, तरबूज, खरबूजा, पेठा इत्यादि के बीजों को छीलकर, मींगी निकालकर, कचरी की भाँति भूने। नमक-कालीमिर्च मिला दे। चाहे थोड़ा-सा चूक या पिसा अमचूर छिड़क दे।

पिस्ते और सेम के बीजों को भी इसी प्रकार काम में लाते हैं। इनमें चूक या अमचूर (बहुत ही महीन पिसा, छना) अवश्य ही लगाना चाहिये।

पापड़—सेर भर उड़द के आटे में छटाँक-भर लोटका सज्जी पीसकर डाले। छटाँक-भर नमक, गरम मसाला, कालीमिर्च, जीरा डालकर सान ले, और ओखली में मूसलों से खूब कूटे (जितना कूटोगी, उतने ही खस्ता होंगे)। पीछे लोई तोड़कर, तेल के हाथ से चकले पर बेलन से बेलकर, तनिक धूप में सुखा ले। इनको शकरपारे की भाँति कतर ले, तो मिरचौनी हो जायगी। इनको घी में तल ले। यदि लोटका सज्जी अच्छी न मिले, तो सवा तोले सोडा डाल दे।

तिलपुँगौड़ी—उड़द की दाल की पिट्ठी को खूब

खूब मिला दे, और थोड़ी देर में उतार ले। पत्तों के अनेक प्रकार के और भी साग हैं, परन्तु अभी बहुत कुछ भोजन के विषय में बताना है। इसलिये अधिक नहीं बता सकती।

भाजी इतने-प्रकार की होती हैं—(१) कन्द की, (२) मूल की, (३) फल की, (४) फूल की।

जिमीकन्द—यह कई प्रकार से बनता है। लोग अपनी-अपनी रीति को अच्छा और सुगम बताते हैं। परन्तु सुगम वही है, जिसमें खुजली न रहे, और घी कम लगे; क्योंकि इसमें घी ही मुख्य है। बराबर तक का घी, बरन् सवाया-ड्योढ़ा तक लग जाता है। सेर-आध सेर तो इसको हर कोई बना लेता है; पर मनों बनाने की क्रिया किसी को नहीं मालूम। वह मैं बताऊँगी। इसके चेंप में खुजली होती है। यदि किसी प्रकार चेंप को दूर कर दिया जाय, तो खुजली न रहेगी।

(१) हाथ में घी या तेल चुपड़कर इसके छिल को चाकू से छील डाले, और कतले कर ले। पूरी की भाँति कड़ाही में घी चढ़ाकर उतार ले, इसको सुगम रीति कहते हैं।

(२) कपरौटी करके भाड़ में भुर्ता करा ले, तो बहुत ही अच्छा। ऊपर का छिलका छील डाले, और

नमक, मिर्च, धनिया, आँवले, गरम मसाला मिलाकर जितने घी में चाहे, छौंक ले।

(३) हाथों में घी या तेल चुपड़कर चाकू से छील ले, और छोटे-छोटे कतले करके उनमें पिसा नमक खूब मिला दे, और एक परात में टेढ़ा करके धूप में रख दे। दो घंटे तक रक्खा रहने दे। सब चेंप निकलकर परात में तले को आ जायगी। उसको फेंक दे। अब इनको तनिक धोकर साधारण भाँति से मसाला डालकर छौंक ले। खुजली न रहेगी। इसी रीति से मर्नो बना लो।

(४) इसकी चटनी भी बनती है, वह चटनी में बताऊँगी।

शकरकन्द—इनको उबालकर छील डाले। फिर मथकर नमक, मिर्च, मसाला मिलाकर छौंक ले। इसको निरी उबालकर भी खाते हैं।

आलू—यह ऐसी भाजी है कि इसके बराबर दूसरी कोई भाजी बर्तने में नहीं आती। पृथ्वी के प्रत्येक देश में और बारहों महीने खाई जाती है। यह केवल नमक-मिर्च से भी बन जाती है, और घी-मसालों से भी बनती है।

इसके कई प्रकार हैं—(१) साधारण, (२) रसेदार,

(३) भुर्त्ता, (४) दम, (५) अन्य साग के सा
जैसे आलू-मेथी या आलू-पालक ।

(१) साधारण—एक सेर कच्चे आलू को छील ले,
और बनार ले। आधी छटाँक धनिया, पैसे-भर हल्दी और
अपने खाने के अनुसार लाल मिर्च पीस ले। जितन
हो, उतने में पाँच रत्ती हींग और दस लौंग की ब
देकर मसाले को भून ले। जब हलदाइँध जाती रहे,
आलू और यह मसाला डाल दे—काला जीरा ती
माशे, बड़ी इलायची तीन माशे, कालीमिर्च छः माशे
मुवाफ़िक का पानी और छटाँक-भर नमक डालकर पकने
दे। गलने पर उतार ले।

(२) रसेदार—इन्हीं में जो पानी अधिक डाल दे,
तो रसेदार बन जायँगे।

(३) भुर्त्ता—इसको भुर्त्ते में बताऊँगी।

(४) दम—बड़े-बड़े एक सेर आलू लेकर ऊपर
कच्चा ही छील डाले, और दस-दस पाँच-पाँच छेद करके
यह मसाला मिला दे—धनिया दो तोले, कालीमिर्च
पाँच माशे, छोटी इलायची और दालचीनी चार-चार
माशे, लौंग दो माशे, बूरा छः माशे, दही पाव भर,
पक्की इमली छः माशे अथवा एक नींबू। बटले में चार-
भर घी डालकर थोड़ा-सा तेजपात डाल दे। जब

रम हो जाय, तब आलुओं को मसाले सहित इसमें ाल दे, और खूब भूनकर थोड़ा-सा पानी डाल मुँह न्द कर दे। जब आलू गल जायँ और पानी सूखने गे, तब उतार ले। यह बंगाली भोजन है। आग मन्दी गानी चाहिए।

(२) मूल में गाजर, मूली, रतालू, शलजम त्यादि हैं।

मूली का ज़ीरा—मूली को कद्दूकश में कसकर निचोड़ डाले। फिर इसमें भुना ज़ीरा, नमक, काली-मिर्च पीसकर डाल दे। थोड़ा-सा नींबू निचोड़ दे तो हुत ही स्वादिष्ट और पाचक होता है।

मूली की भुजिया अच्छी बनती है। इसे आगे भुजिया के प्रकरण में बताऊँगी। इसके चन्दे भी बनते हैं। मूली के कतले करके उबाल ले। ठंडे करके उनको कूटकर खूब निचोड़ डाले कि खार निकल जाय। पीछे नमक, मिर्च, मसाला डालकर अजवाइन में छौंक ले।

गाजर—छिली और महीन कतरी हुई एक सेर गाजर ले। तीन छटाँक घी को ज़ीरे से बघारकर उसमें डाल दे और कलछी या कोंचे से उलट-पलट करती रहे। थोड़ी देर पीछे इसमें नमक-मिर्च डाल दे और ऊपर से पाव-भर चका दही डालकर ढक दे।

जब गाजर गल जाय, तब पोदीना और धनिया हरा या सूखा चार माशे, पिसा हुआ गरम मसाला डालकर आग पर से उतार ले।

रतालू को छीलकर और कतले करके धो डाले। घी में गरम मसाले की बघार देकर इन कतलों को डाल दे। ऊपर से थोड़ा-सा दही, पानी, नमक, मिर्च, मसाला इत्यादि डाल दे। जब गल जायँ, तब उतार ले।

अरवी—एक सेर मोटी अरवी लेकर छील डाले। फिर धनिया दो तोले, हल्दी छः माशे, लाल मिर्च पानी में खूब महीन पीस ले। बटले में पाव-भर घी चढ़ाकर जीरे की छौंक दे, और पिसे हुए मसाले को इसमें भूने। जब भुन चुके, तब डेढ़ सेर पानी डाल दे। जब पानी में एक उबाल आ जाए, तब अरवी और नमक, घी इसमें डाल दे। जब आधा पानी रह जाय, तब आग पर से उतार ले, और अंगारों पर रख दे। एक घंटे तक रक्खा रहने दे। जब आधा पानी और कम हो जाय, तब दो तोले नींबू का रस और चार माशे पिसा हुआ गरम मसाला डालकर थोड़ी देर तक रक्खा रहने दे। पीछे उतार ले।

(२) साकाहार में इसकी क्रिया बता चुकी हूँ। यह कॉर के महीने तक तो कच्ची छीलकर अच्छी बनती है।

कातिक-अगहन से इसका छिलका उबालकर अच्छा उतरता है। इसका भुर्ता भी होता है। यह अलग बताऊँगी।

(३) फल—इसमें अनेक फल हैं, जिनके नाम गिनाना भी कठिन है।

कद्दू—सेर भर छिला हुआ कद्दू ले। उसके टुकड़े करके रख ले। धनिया दो तोले, मिर्च और हल्दी पाँच-पाँच माशे पानी में पीस ले। तीन छटाँक घी बटले में चढ़ाकर गरम मसाले और दो माशे जीरे से बघार दे। फिर पिसे हुए मसाले को उसमें भून ले। फिर कद्दू के टुकड़े डालकर उलट-पलट कर दे। फिर डेढ़ छटाँक पानी और नमक डालकर ढक दे। मन्दी आग देती रहे। जब कद्दू गल जाय और पानी सूख जाय, तब दो तोले पोदीना कूटकर डाल दे, और कुछ मिनटों तक कलछी से चलाती रहे। पीछे उतार ले।

बैंगन—एक सेर बैंगनों को लेकर एक-एक अंगुल के टुकड़े कर ले। पाव-भर घी को बटले में चढ़ाकर जीरे का बघार दे, और फिर इन पिसे हुए मसालों को इसमें भून ले—हल्दी छः माशे, धनिया दो तोले, लाल मिर्च दो तोले। ऊपर से पाव-भर दही डाल दे। इसके पीछे बैंगन डालकर डेढ़ पाव पानी और ऊपर से डाल दे। आध घंटे तक पकावे। जब गल जाय तब डेढ़

तोले कतरा हुआ हरा पोदीना और चार माशे पिसा हुआ गरम मसाला डालकर खूब चला दे, और नमक डालकर उतार ले।

(२) बैंगनों को छील डाले। मोटी पूरी के बराबर लम्बे-लम्बे टुकड़े कर ले। नमक पीसकर इनमें मिला दे। आध घंटे के पीछे इनको कपड़े में रखकर निचोड़ डाले। पीछे कड़ाही में घी चढ़ाकर इनको पूरी की भाँति उतार ले, इनमें पिसी हुई कालीमिर्च मिला दे।

(३) साबित बैंगन को छील और चाकू से फाँक सी कर उसमें कुटा मसाला भर दे। घी में गरम मसाले की छौंक देकर इन मसाले-भरे हुए बैंगनों को डाल दे। ऊपर से कटोरे में भरकर पानी रख दे। पानी बैंगनों में न डालें। मन्दी-मन्दी आग लगने दे। दो-चार बेर कलछी से चला दे, ताकि जल न जायँ। सीझने और गलने पर उतार लें। भुर्ते का-सा स्वाद होता है।

बैंगन और कद्दू साथ-साथ आध-आध सेर दोनों लेकर पहले छील डाले। फिर हल्दी पाँच माशे और धनिया लाल मिर्च दो-दो तोले पीस ले। तीन छटाँक घी में जीरे को बघार दे, और पीसे हुए मसाले को भून ले। अब इसमें पाव-भर दही आध सेर पानी में मिला-कर और नमक डाल दे। ऊपर से बैंगन और कद्दू डाल

दे। मन्दी आग देती रहे। जब बैंगन और कद्दू गल जायँ और पानी बहुत ही थोड़ा बाकी रह जाय, तब दो तोला हरा पोदीना बनाकर इसमें डाल दे। थोड़ी देर आग पर और रक्खा रहने दे, फिर उतार ले।

केले की फली—इनको कच्ची छीलकर और उबालकर, दोनों भाँति बनाते हैं। खादर के केले की फली अथवा बहुत कच्ची अच्छी नहीं बनती। अधपकी फली अच्छी बनती है। एक सेर छिली हुई फलियों के लिए आधी छटाँक धनिया, डेढ़-डेढ़ तोला हल्दी और लाल मिर्च पीस ले। छटाँक-भर से लेकर पाव-भर तक घी पतीले में डालकर चूल्हे पर चढ़ा दे। पाँच रत्ती हींग और दस लौंगें उसमें भूनकर डाल दे। पिसा हुआ मसाला भी डाल दे। जब हल्दी की हल्दाईंध जाती रहे तब कतलों को निचोड़कर डाल दे। जब भुन जायँ तब ऊपर से थोड़ा-सा पानी और ये मसाले डाल दे—नमक छटाँक-भर, सोंठ डेढ़ तोले, लौंग, जीरा, इलायची तीन-तीन माशे, जायफल, जावित्री इनके आधे-आधे। थोड़ी देर ढक दे। खटाई जितनी खाय, डाल ले और मन्दी आग से पकावे।

(२) अथवा यों करे कि फलियों को उबालकर छील डाले। फिर उनकी पकौड़ी बनाकर, जैसे पहले

बता चुकी हूँ, बना ले। पीछे गरम मसाले को घी में छौंककर और हल्दी, मिर्च, मसाला डालकर रसेदार बना ले।

करेले ऐसे ले, जो पके न हों। ऊपर से चाकू से छील ले। चाकू से पेट चीर दे। इनमें पिसा हुआ नमक भरकर थोड़ी देर रख दे। जब नमक भिद जाय, तब दोनों हाथों से खूब मसल डाले, और जितना पानी निकले, निकाल डाले और निचोड़कर रख दे। सौंफ, धनिया, नमक बराबर, उनसे आधी-आधी लाल मिर्च, अमचूर और आँवले ले। पाँचवें हिस्से का जीरा। सबको कूटकर इनमें भर दे। घी में हींग और जीरे का बघार देकर करेलों को इनमें भून ले। जब भुन जायँ, तब कुछ पानी डालकर ढक दे। जब पानी जल जाय और करेले सीझ जायँ, उतार ले। भुनते समय कलछी से चलाती रहे।

ढेंडस वा टिंडे—ये साबित भी बनते हैं और कतले करके भी। इनको भी पके हुए न ले; किंतु कच्चे लेकर छील डाले। या तो करेले की भाँति मसाला भरकर बना ले या कतले करके हल्दी, मिर्च, धनिया डाल दे। हींग में छौंक ले। जब गल जायँ, तब उतार ले।

भिंडी—ये साबित अच्छी बनती हैं। दही इसमें

मुख्य है। जहाँ-तक हो सके, सूखी रक्खे। चिपकाहट न रहने दे। इनके दोनों सिरों को काट डालते हैं। चाहे कतले करके बना ले, चाहे साबित। जो साबित बनानी हो, तो चाकू से फाँक कर-करके इनमें कुटा हुआ मसाला भर दे। घी में हींग की बघार देकर इनको डाल दे, और थोड़ा-सा पानी डालकर कलछी से उलट-पलटकर भून ले। पीछे थोड़ा-सा दही डालकर चला दे। ऊपर से कटोरा-भर पानी रख दे, और मन्दी आग से सीझने दे। जब गल जायँ, तब उतार ले।

(२) कच्ची साबित भिंडी एक सेर ले। पाव-भर घी में भून ले, और निकालकर अलग रख ले। छः माशे हल्दी, दो-दो तोले धनिया और लाल मिर्च पानी में पीस ले। घी में जीरे की बघार देकर मसाले को इसमें भून ले। अब भिंडी, नमक और थोड़ा-सा पानी डालकर पका ले। इसमें पिसा हुआ तीन तोले अमचूर डाल दे, और छः माशे पिसा हुआ गरम मसाला। जब गल जाय और पानी सूख जाय, तब उतार ले।

(३) फूल में कचनार और गोभी आदि ही मुख्य हैं। वैसे तो सन, सेमल आदि अनेक हैं।

गोभी (१) ताजा फूल गोभी एक सेर, घी और दूध पाव-पाव भर, कालीमिर्च तीन माशे, नमक-मिर्च

अन्दाज का। पहले फूल को उबलते हुए पानी में डाल दे। जब गल जाय तब निकालकर, कपड़े में लपेटकर अलग रख दे। जब पानी कपड़े में सोख जाय, तब एक सेर तोल ले। अब बटले में गोभी को डालकर कलछी से खूब महीन कर ले। फिर आग पर रखकर दूध डाल दे; और कलछी से चलाती रहे। जब दूध मिल जाय, तब पिसा हुआ नमक और मिर्च इसमें डाल दे, और घी डालकर खूब चला दे। थोड़ी देर पीछे उतार ले।

(२) एक सेर गोभी ले। आधी छटाँक धनिया, छः माशे हल्दी, मिर्च (जितनी चाहे) पानी में महीन पीस ले। पाव-भर घी में जीरे की बघार देकर इन पिसे हुए मसाले को भून ले।

अब फूल गोभी की डंडियों को अलग-अलग करके डालती और कलछी से चलाती जाय। पीछे से एक सेर पानी डाल दे और बीस मिनट तक पका ले। जब पानी सोख जाय, तब दो-दो तोले अदरख और हरी धनिया काटकर इसमें डाल दे, और चला दे। ऊपर से ढक दे। पीछे गरम मसाला पिसा हुआ छः माशे डाल-कर और मिला दे। थोड़ी देर पीछे उतार ले।

(३) इसके फूल ही की भाजी होती है। पर इसकी डंडी की भी, जो नरम-नरम होती है, इसके साथ

काट लेते हैं। जो कड़ी होती हैं, उनका छिलका उतारकर भीतर से गूदा निकाल लेती हैं। गोभी को धोकर रख ले। घी में हींग और गरम मसाले की बघार देकर गोभी को उसमें डाल दे। धनिया, नमक और मिर्च पीसकर इसमें डाल दे। मुँह बन्द कर थोड़ी देर तक आग पर रक्खा रहने दे। इसी में सीझ जायगी।

कचनार की बन्द कलियों को लेकर उनके डंठल तोड़ डाले। फिर उनको गरम पानी में जोश दे। जब गल जायँ, तब उतारकर और ठंडा करके निचोड़ डाले, ताकि पानी न रहने पावे। पीछे इनको खूब हाथ से मसलकर या पीसकर बारीक कर ले। फिर हींग की छौंक देकर इनको छौंक ले। नमक, मिर्च और मसाला डाल दे। थोड़ा-सा दही भी अवश्य डाले।

भुजिया—मेथी, मूली, पालक, सरसों, राई इत्यादि की बनती हैं। हींग की छौंक इसमें मुख्य है। साग को बीन-छाँटकर और बनाकर छौंक देते हैं। नमक, मिर्च और पानी डालकर ढक दे। जब पानी जल जाय, तब उतार ले। परन्तु सरसों, राई और मूली को पहले उबालकर और ठंडी करके जितनी फूटकर निचोड़ डाले कि खार निकल जावे, उतनी ही अच्छी होती है। मूली में अजवाइन की छौंक दी जाती है।

भुर्ता—एक सेर आलू को छीलकर पानी में डालते जाय। पीछे उनके कतले कर ले, और पिसा हुआ नमक उनमें मल दे। थोड़ी देर पीछे जब कतले नरम हो जायँ तब कपड़े में रखकर निचोड़ डाले। घी कड़ाही में चढ़ाकर इनको पूरी की भाँति उतार ले, और पीछे इनको घी में गरम मसाले की बघार देकर और हल्दी धनिया, मिर्च इत्यादि को घी में भूनकर उसमें आलू डाल दे। पानी डालकर नमक डाल दे। पीछे उतार ले। यह भी एक प्रकार का भुर्ता है।

(२) बड़े-बड़े आलू एक सेर ले। उनको छील-कर पानी में डाल दे। पीछे उबलते हुए पानी में डाले। जब गलने लगें, तब उतार ले, और पानी निकालकर परात में ठंढे कर ले। जब कुछ खुरक हो जायँ, तब दो-दो टुकड़े कर ले। अब कड़ाही में घी चढ़ाकर इन आलुओं को पूरी की भाँति उतार ले, और पिसा हुआ नमक-मिर्च इनमें मिला दे।

(३) एक सेर आलू छिले हुए ले, जिनको छील-छीलकर पानी में डालती गई हो। पीछे बहुत-सा पानी उबाल, उसमें इन आलुओं को तेज आँच से उबाल ले। अब इनका सब पानी निकाल डाले, और कलछी से तोड़ डाले। इनमें दो तोले पिसा अमचूर, नमक और

मिर्च के साथ मिला दे। अब पाव-भर घी को जीरे और इलायची से बघारकर आलू डाल दे, और कलछी से खूब मिला दे। जब खूब भुन जायँ और कच्चे न रहें, तब आठ माशे पिसा हुआ गरम मसाला और थोड़ा-सा पोदीना (यदि हरा हो, तो बहुत ही अच्छा) और दो तोले पिसी हुई केसर डालकर खूब मिला दे। थोड़ी देर पीछे बटले को उतार ले।

(४) बड़े-बड़े आलू भाड़ में भुनवा ले। छिलका उतारकर नमक, मिर्च, अमचूर और धनिया पिसी हुई मिलाकर घी को हींग से बघार देकर भून ले।

बैंगन—मारू का भुर्ता अच्छा होता है। इसका भुर्ता भाड़ में ही अच्छा होता है। पर जहाँ भाड़ न हो, वहाँ यह बहुत सुगम रीति है कि जिधर को बैंगन का डंटल होता है, उस ओर को तनिक-सा गहरा छेद चाकू से करके उसमें तनिक-सी हींग और घी भर दे, और बन्द कर दे। सींक से बीस या पचीस छेद सब बैंगन में करके अंगार के ऊपर औंधा करके रख दे। थोड़ी ही देर में भुर्ता हो जायगा। यदि चारों ओर एक या दो अंगारे और रख दे, तो बहुत ही शीघ्र हो जायगा। इसके बाद इसको छीलकर मथ डाले, और खूब महीन मसाला—धनिया, मिर्च और नमक—मिलाकर रख ले।

घी में हींग या जीरे की छौंक देकर, इसको उसमें डालकर कलछी से खूब चला दे। यदि थोड़ा-सा पिसा अमचूर डाल दे, तो स्वाद अधिक हो जाता है। करेले और कद्दू इत्यादि का भी भुर्ता होता है।

दूध की तरकारी—भैंस के दूध को आग पर चढ़ाकर औटे, और चलाती रहे। मलाई न पड़ने दे। जब खूब औट जाय, तब उसमें खट्टा दही डालकर जोरा देती रहे। इससे दूध फट जायगा। इस फटे हुए दूध को छानकर और कपड़े में बाँधकर लटका दे। जब पानी सब निचुड़ जाय और लोंदा-सा बँध जाय, तब उसको चाकू से काट-काटकर धीमी आँचसे घी में तल ले। पीछे घी में हल्दी, मिर्च और मसाला भूनकर इन तले हुए टुकड़ों को भी भून ले। थोड़े-से मेथी के पत्ते डाल दे। अन्दाज का नमक डालकर पानी डाल दे, और पकने दे। जब कुछ पानी जल जाय, तब उतार ले, पानी सब न जला दे, नहीं तो चमचोड़ हो जायगी।

नमक का साग—साँभर नमक की बड़ी-बड़ी कंकड़ी लेकर थूहर के दूध में भिगो दे। जब खूब भीग जायँ, तो दूध को पोंछ डाले, और घी में बघार देकर और सागों की भाँति मसाला डालकर छौंक दे। इसमें अब तक ऊपर से और नमक न डाला जायगा, नमक का स्वाद ही

न आवेगा। इसलिए और सागों की भाँति इसमें नमक ऊपर से और डालना चाहिये।

रायता—यह दो प्रकार का बनता है। (१) मीठा और (२) नमकीन। मीठा रायता नुकती, बूँदी, बताशे और किशमिश का बनता है। नुकती आदि का रायता बनाना तो कुछ कठिन नहीं, तू जानती है। परन्तु बताशों का रायता सुनकर तुझे आश्चर्य होगा कि वे क्योंकर दही में साबित रह सकते हैं। सो ले, उसकी सहज क्रिया तुझको बताती हूँ—बताशों को लेकर गरम घी में डाल दे; परन्तु न इतने गरम में डाले कि गल जायँ, न इतने कम गरम में कि घी उनमें भिदे नहीं। घी को आग पर रखकर खरा कर ले। पीछे उतारकर नीचे रख ले। उसमें बताशे डाले, और फिर पौनी से निकाल ले। इन बताशों को दही में डाल दो, कभी नहीं गलेंगे। दही को मथ और छानकर मीठा मिला ले, और बताशे डाल दे। रायता हो गया।

नमकीन—बथुआ, काशीफल, ककड़ी, कद्दू, बैंगन, आलू, गाजर, मूली, कचनार की कली आदि का बनता है। नमकीन रायते में भुना जीरा और धुँगार मुख्य हैं। जीरे को नमक-मिर्च के साथ न पीसे। अलग पीसकर रक्खे। जितना चाहे, रुचि के अनुसार डाल ले। हींग

और राई की धुँगार इस प्रकार देते हैं कि जिस बरतन में रायता बनाना चाहे उसको खूब साफ कर ले। पर वह छोटे मुँह का होना चाहिये।

आग के अंगारे पर थोड़ी-सी राई या हींग रखकर थोड़ा-सा घी डाल दे, और इस धुले हुए बरतन को उसके ऊपर औंधा रख दे। जब जाने कि हींग या राई जल चुकी होगी, तब उठा ले, और उठाते ही तत्काल मट्ठे या पानी में घुला हुआ दही इसमें डालकर मुँह ढक दे, ताकि धुआँ न निकलने पावे। पीछे इसमें जिस चीज का रायता बनाना चाहे, मिला दे। नमक, मिर्च और भुना जीरा पिसा हुआ, मुवाफिक से डालकर रायता बना ले।

ककड़ी को छीलकर कद्दूकस में महीन कसके निचोड़ डाले, और कच्चा ही डाल दे।

गाजर और कद्दू को कसकर तनिक जोश दे ले, तब डाले।

कद्दू का बहुत ही अच्छा रायता इस प्रकार बनता है कि कच्चा कद्दू लेकर उसको छील डाले। फिर कद्दू-कस में कस ले, फिर तनिक जोश दे ले, और निचोड़ डाले। दूध को खूब औंटाकर, उसमें दही का जामन देकर, इस कसे हुए कद्दू को इस दूध में डालकर

रात को दही जमा दे। सवेरे इस दही को रई से चला दे। फिर नमक, मिर्च और भुना हुआ जीरा अटकल का डाल दे, तो अत्युत्तम बनेगा। बथुआ, काशीफल, कचनार की कलियों को उबालकर और निचोड़कर खूब महीन मथ ले, तब डाले। आलू, बैंगन आदि को भी उबालकर और मथकर डाले।

यह क्रिया तो मैंने तुझको उन भोजनों की बताई, जो नित्यप्रति तत्काल बनते हैं। अब अचार, मुरब्बा और चटनी इत्यादि, जो एक ही बेर बनाकर रख दिये जाते हैं और महीनों तथा बरसों काम में आते हैं, उनकी क्रिया बताती हूँ।

अचार प्रायः प्रत्येक वस्तु का पड़ सकता है, और मुरब्बा भी। परन्तु तुझको केवल मुख्य-मुख्य वस्तुओं को, जो नित्यप्रति के काम में आती हैं, बताकर इस विषय को समाप्त करती हूँ; क्योंकि यह बहुत बढ़ गया।

अचार अनेक प्रकार के और अनेक रीति से पड़ते हैं। उनमें से कुछ तुझको बताये देती हूँ; क्योंकि अचार कितने ही प्रकार के होते हैं। अचार का गुर यह है कि जितना अधिक नमक इसमें डाला जायगा, उतने ही दिन तक अचार ठहरेगा। जितना कम नमक डालेगा, उतना ही जल्दी गल जायगा। अचार इतने प्रकार के होते हैं—

(१) पानी का अचार। जैसे गाजर, गट्ठे, लसोड़े इत्यादि।

(२) तेल का अचार। जैसे आम, लसोड़े इत्यादि

(३) तेल-पानी का। पानी के अचार में ऊपर से तेल भर देना।

(४) केवल नमक का। जैसे नींबू, अदरख, टेंटी, बैगन इत्यादि।

(५) सिरके का। जैसे सहँजने की फली, हरे बाँस के कल्ले और आम इत्यादि।

(६) मीठा-नमकीन। जैसे नींबू का।

(७) रूक्कनाना का। जैसे मिर्च इत्यादि।

(१) पानी के अचार में राई मुख्य है। इसी से खटाई आती है। गाजर, गट्ठे आदि को छीलकर व लसोड़ों के डंठल तोड़कर उबाल ले। ठंडा करके नमक, मिर्च, राई. और हल्दी को पानी में खूब पीसकर व से पानी में घोल ले, और मिट्टी के बर्तन में भर ऊपर से बारह अंगुल मसाले का पानी भर दे। धूप दो-तीन दिन तक रख दे। पर जाड़ों के दिनों में छः या सात दिन तक रक्खे तब उठेगा। (अर्थात् खट्टा हो जायगा और नमक भिद जायगा) उठे पीछे काम में लावे।

(२) आम का अचार, तेल का—ऐसे गदर आम

ले, जिन पर एक या दो पानी पेड़ पर ही पड़ गये हों, उनको धोकर चाकू से चौफाँक कर ले। फाँकों को जुड़ा रहने दे। अलग न होने दे। आधी गुठली निकाल डाले, आधी रहने दे। चाहे सब निकाल डाले। यह मसाला कूटकर, तेल में भोकर उनमें भर-भरकर जिस बरतन में डालना चाहे, चुनती जाय। यह मसाला पाँच सेर आम का है—पाव सेर मेथी के बीज, ढाई छटाँक पिसी हल्दी, पाँच-पाँच छटाँक सौंफ, धनिया, ढाई छटाँक लाल मिर्च, पाँच छटाँक मोटे-पीले कच्चे चने, ढाई पाव नमक, ढाई छटाँक राई। अचार के लिए बरतन चीनी या पत्थर या मिट्टी का (चिकना) होना चाहिए। सँकरे मुँह का हो। आमों में मसाला भरकर चार या पाँच दिन तक धूप और ओस में रक्खा रहने दे। पीछे चोखा कड़वा तेल (सरसों का, जिसमें मिलावट न हो) घड़े में भर दे, और चार अंगुल ऊँचा तेल रहने दे। महीने-पंद्रह दिन पीछे जब तेल कुछ सोख जाय, तब थोड़ा-सा फिर भर दे, ताकि ऊपर तक भरा रहे। कि फूदी न पड़ने पावे।

आम का सूखा अचार—अच्छे आम, जैसे पहले बता चुकी हूँ, लेकर अलग-अलग चार फाँकें कर ले; गुठली निकाल डाले। दस सेर फाँकों में सवा सेर

नमक मिलाकर दो घंटे तक रक्खा रहने दे। फिर मामूली सवा सेर मसाला जौकुट कर, आठ सेर चोखे कड़वे तेल में सान ले, और नमक लगी हुई फाँकों में नमक-सहित मिलाकर चिकने या चीनी के बरतन में भर दे। पीछे धूप में रख दे। और दो दिन पीछे ढाई सेर तेल कड़वा चोखा और डाल दे। लसोड़ों का अचार इस भाँति डालते हैं कि पहले उनको उबालकर पानी का अचार डालते हैं। जब पानी का अचार तैयार हो जाता है, तब लसोड़ों को निकालकर तेल में डाल देते हैं। इसी भाँति गाजर, गट्ठे आदि का डाल ले।

(३) तेल-पानी का अचार—टेंटी, लसोड़ों इत्यादि का। पानी का अचार डालकर जब तैयार हो जाय, तब पानी के ऊपर चार अंगुल कड़वा तेल भर दे।

(४) ढाई सेर गदर आमों को लेकर चौफाँका काट ले, ऐसे कि फाँकें अलग-अलग हो जायँ। इनको धोकर और निचोड़कर भर दे, और पाँचों नमक इस रीति से कूटकर डाल दे कि काला, सेंधा और खारी नमक छटाँक-छटाँक भर, साँभर डेढ़ पाव और काँच को आधी छटाँक। फाँकों में नमक छिड़ककर धूप में रख दे। नित्य खूब हिला दिया करे। पानी जो निकले,

से निकलने दे; पर फेंके नहीं। उसी पानी में यह
साला कूटकर मिला दे—राई, हल्दी, धनिया एक-एक
टाँक, सौंफ डेढ़ छटाँक, जीरा, सोंठ, काली मिर्च,
ोटी हड़ आधी-आधी छटाँक, लौंग, पीपल, बड़ी
लायची, अजवाइन, मिर्च, काला जीरा, सूखा पोदीना
ाव-पाव छटाँक, भूनी हींग पैसे-भर, जायफल छः
ाशे; जावित्री तीन माशे, दालचीनी छः माशे, केसर
ीन माशे, छोटी इलायची छः माशे, मेथी एक तोला
ौर जवाखार नौ माशे। इन सबको मिलाकर, चीनी,
त्थर या मिट्टी के चिकने बरतन में भरकर और मुँह
ाँधकर रख दे। आठ-दस दिन पीछे खाने लगे।

आम की अचारी—ढाई सेर आमों को छीलकर
दे की फाँकें उतार ले, और उनमें यह मसाला कूटकर
ा दे – सोंठ, पीपल, मिर्च छटाँक-छटाँक भर, धनिया
 छटाँक, जीरा आधी छटाँक, लौंग एक तोला,
ला जीरा डेढ़ तोले, भूनी हुई हींग छः माशे, बड़ी
ायची एक छटाँक, कच्चा सुहागा पाव छटाँक, छोटी
ायची छः माशे, जवाखार पाव छटाँक, सेंधा नमक
क छटाँक, काला नमक एक छटाँक और साँभर नमक
न छटाँक। आठ-दस दिन तक धूप में रखकर खूब
ला दिया करे, तैयार हो जायगी।

करेले का अचार—जिस प्रकार भाजी के लिये करेले बनाते हैं, उसी प्रकार छीलकर निचोड़ डाले। साबित करेलों को बीच में से चीर दे। पर करेले छोटे-छोटे ले। उनमें यह मसाला बहुत महीन पीसकर भर दे। और डोरे से बाँधती जाय। यह मसाला पाँच सेर के लिए है—पोदीना, बड़ी इलायची, काली मिर्च, धनिया, आँवले, अमलमेथी, काला नमक आधी-आधी छटाँक, पीपल, लौंग, एक-एक तोला, दालचीनी, जावित्री, सफेद जीरा, काला जीरा, जवाखार, शीतलचीनी, छः-छः माशे, हींग पाँच माशे, मिसरी छटाँक-भर और साँभर आध सेर। इन मसालों को पहले कूटे। फिर नींबू या आमों के रस में चटनी की भाँति पीसकर, करेलों में भरकर डोरा लपेट दे, और ऊपर से नींबू या आम का रस और डाल दे।

नींबू का अचार—यह कई तरह का पड़ता है। इनमें अजवाइन डालना मुख्य है—(१) साबित, (२) मसाला भरकर, (३) चौफाँका, (४) आधे-आधे। जितने नींबू डालने हों, उनमें से आधों का रस निकाल ले, आँधों की फाँक कर ले। पर नींबू कार्त्तिक का अच्छा ठहरता है। और सावन-भादों का कम।

मसाले के नींबू—साबित नींबू लेकर चौफाँका क

ले। पर नीचे से फाँकों को जुड़ा रहने दे। अलग न होने दे। इनमें आम की अचारी का मसाला कूटकर भर दे। ऊपर से वह निकाला हुआ रस डाल दे। आठ-दस दिनों तक नित्य हिला दिया करे। पीछे महीने-पन्द्रह दिनों में हिला दिया करे।

अदरख—इसको छीलकर पतले और लम्बे टुकड़े कर ले। उनमें नमक, अजवाइन और नींबू का रस डालकर रख दे। दस-पाँच दिन में तैयार हो जायगा।

टेंटी—इनको पहले उठा ले, जैसा कि कचरियों में बता चुकी हूँ। पीछे धनिया, राई, हल्दी, मिर्च इत्यादि कूटकर तेल में भोकर इनमें मिला दे।

हड़ का अचार—एक सेर बड़ी-बड़ी मोटी हड़ ले। पत्थर या काठ के बरतन में नींबू के रस में सात दिन तक भिगो रक्खे। चार अंगुल ऊपर तक नींबू का रस भर दे। आठवें दिन लेकर महीन, पैने चाकू से उनकी गुठली निकाल डाले। पर हड़ टूटने न दे। साबित रक्खे। पीछे यह मसाला उनमें महीन कूट-पीसकर भर दे, और डोरे से लपेट-लपेटकर अमृतबान व चीनी के बरतन में चुन-चुनकर रख दे। नींबू का रस, जो भिगोने से बचा है, ऊपर से डाल दे। यह हड़ बहुत पाचक होती है। मसाला—सोंठ, कालीमिर्च, पीपल,

सौंफ, धनिया, फूला सुहागा एक-एक तोला, हींग छः माशे, भुना हुआ जीरा नव तोले, काला जीरा और जवाखार छः-छः तोले, चीत नव तोले, पाँचों नमक चौदह तोले, पोदीना छः तोले, दालचीनी छः तोले, पत्रज तीन तोले, बड़ी इलायची के दाने छः तोले, जरइरक दो तोले। इस मसाले को नींबू के रस या चूक में सानकर हड़ों में भरे।

छोटी हड़ों का अचार—इनको ऐसी ले कि न छोटी, न बहुत बड़ी। एक सेर को तीन दिन तक पानी में भिगो दे। नित्य पानी बदल दिया करे। चौथे दिन पानी में से निकाल फरेरी कर ले। पीछे सेर भर नींबू का रस, पाँचों नमक तीन-तीन तोले, भुना सुहागा एक तोला, गुलाबी सज्जी छः तोले, जवाखार नव तोले, सोंठ, काली मिर्च, पीपल एक-एक तोला, दालचीनी तीन तोले, चीत छः तोले, हींग छः माशे, काला जीरा छः तोले, सफेद भुना जीरा नव तोले, सौंफ, धनिया एक एक तोला और लौंग छः तोले। इनको महीन कूट-छानकर नींबू के रस में मिलाकर हड़ों में मिला दे। फिर बरतन में भरकर धूप में रख दे।

नींबू—मावित लेकर चौफाँके चीर ले। उनमें कुटा हुआ मसाला भर-भरकर, एक चिकने बरतन में चुनते जाय। जब सब चुनकर भर जायँ, तब ऊपर से थोड़े

से नीबुओं का रस निचोड़कर आग जलाकर बरतन को चूल्हे पर रख दे। मन्दी-मन्दी आग लगने दे। जब एक उफान आ जाय, तब बरतन को नीचे उतार ले, और एक रात-दिन तक ठंडा होने दे। पीछे इनको निकालकर अचार के बरतन में भरकर रख ले। स्वाद भी अच्छा हो जायगा। ऐसे अचार में कभी फफूँदी नहीं लगती, चाहे जितने वर्ष रक्खा रहे। और एक दिन ही में तुरन्त तैयार भी हो जाता है। जिस दिन डालो, उसी दिन से खाने लगो।

बताशे का अचार—शहद लेकर उसमें थोड़ा चूक मिलावे। जब खूब मिल जाय, तब उसमें बताशे लपेटे। (पानी कुछ न डाले) जब बताशों में खूब लग जाय, उस वक्त उन पर खूब बारीक पिसी हुई काली मिर्च छिड़क दे अथवा शहद और चूक में पहले से मिला दे।

आक के पत्तों का अचार—आक के अधपके पत्ते ले। ऐसे, जो पीले होने लगे हों, निरे पीले या निरे हरे न ले। इन पत्तों को खौलते हुए पानी में डालकर थोड़ी देर तक ढके रक्खे। फिर निकालकर पोंछ ले, और फरेरे कर डाले। फिर नीचे लिखा मसाला दरदरा पीसकर और उसमें सिरका (अच्छा तो यह है

कि सिरके का गुग्रत्तर हो) मिलाकर पत्तों पर छिड़क दे और दोनों ओर लगाकर, धूप में रख तनिक करेरे कर ले। पीछे अचारी में भरकर रख दे—सौंफ, सोंठ, धनिया बारह-बारह भाग, हींग तीन भाग, बड़ी इलायची पाँच भाग, छोटी इलायची एक भाग, काला जीरा एक भाग, सफ़ेद भुना जीरा दो भाग, दालचीनी छः भाग, काली मिर्च आठ भाग, पीपल तीन भाग, पोदीना दो भाग, लौंग एक भाग, जावित्री छः भाग, जायफल चार भाग, साँभर नमक नब्बे भाग।

(५) सिरके में नमक डालकर, जिस चीज का अचार डालना चाहे, डाल ले। वही अचार है। सहँजने की कच्ची फली काटकर डाल दे। बाँस के कच्चे कुले या मूली के कतले करके डाल दे।

पके हुए टपके आम, हरी मिर्च, अदरख इत्यादि जो चाहे सो डाल दे। थोड़े दिन में वे ही सिरके का अचार हो जायँगे।

(६) साबित नींबू लेकर उनमें सेर पीछे पाव-भर गुड़ और पाव-भर नमक डालकर किसी बरतन में भर दे। नित्य हिला दिया करे। एक महीने में बहुत अच्छा अचार हो जायगा।

(७) अर्कनाना का—यह भी सिरके का बनता है। पर बना-बनाया पसारियों की दूकान पर बिकता है। वहाँ से लाकर इसमें अचार डाल दे।

मिर्च—बड़ी-बड़ी हरी मिर्च लेकर चाकू से उनका पेट चीर दे, और खलबलाते हुए पानी में डाल थोड़ी देर तक ढक दे। फिर निकालकर तनिक फरफरी कर ले। इनमें मसाला भरकर डोरे से बाँध दे। बोतल में भरकर ऊपर से अर्कनाना भर दे, और नमक डाल दे।

भसीड़े—इनको कमलककड़ी भी कहते हैं। मोटे-मोटे सफेद लेकर छील डाले, और कतले करके जोश दे ले। फिर फरेरे करे। पीछे बोतल आदि में भरकर सेर पीछे आठ तोले साँभर, तीन तोले लाल मिर्च, छः तोले लौंग और दो माशे हींग पीसकर डाल दे। उसके ऊपर अर्कनाना भर दे।

मुरब्बा—यह भी बहुत-सी वस्तुओं का डाला जाता है। पर मुख्य-मुख्य की रीति तुझे बताये देती हूँ। जैसे—

आम का—दो सेर अच्छे गूदेदार आम ले, जिनमें रेसा या तुस न हो। छिलका छीलकर सीपी से साफ कर ले, और गुठली के ऊपर से तेज चाकू से गूदे की

फाँक साबित उतार ले। इनको काँटे से गोद दे। फिर थोड़े-से मिसरी के पानी में उबाल ले, और निचोड़कर फरफरी कर ले। अब तीन सेर बूरे या मिसरी की चाशनी करके इन फाँकों को उसमें डाल दे। ऊपर से कूटकर कालीमिर्च और बड़ी या छोटी इलायची छिड़क दे। चाशनी की पहचान यह है कि जब तार उठने लगे, तब जान ले कि हो गई।

आँवलों का—चैत के पके हुए आँवले ले। जहाँ तक हो, बड़े-बड़े और ऐसे ले कि नीचे गिरकर जिनमें चोट न लग गई हो। उनको तीन या चार दिन तक पानी में पड़े रहने दे। पीछे एक या दो दिन तक मट्ठे में पड़े रहने दे। अथवा पहले ही पानी और मट्ठा, दोनों मिलाकर इनको डाले। फिर निकालकर धो डाले, और लोहे के काँटों से खूब गोद दे। पीछे चाशनी करके आम की भाँति डाल दे।

नींबू, करौंदा, कमरख, इमली इत्यादि अन्य खट्टी वस्तुओं का भी मुरब्बा पड़ता है। उनमें खटाई नाम को भी नहीं रहती। परन्तु उनकी खटाई दूर करने के लिए अलग-अलग विधियाँ हैं। इनमें आम और आँवलों से सवाई चाशनी पड़ती है।

नींबू का मुरब्बा—जो डालना चाहे, तो पके नींबुओं

को लेकर झसा से छील डाले, और काँटे ले खूब गोद डाले। पीछे उनको मिट्टी की हाँडी में पानी भरकर आग पर रक्खे। इस पानी में सेर-भर नींबू पीछे एक तोला खरी और बेगुझी कलई डालकर जोश दे। तीन मर्तबे इसी प्रकार जोश दे। फिर चखकर देखे कि कुछ खटाई बाकी तो नहीं है। जो बाकी हो तो एक जोश उसी भाँति फिर दे। जब खटाई न रहे, तब उतारकर खूब निचोड़ डाले, और तनिक फरफरे करके चाशनी में डाल दे। मुरब्बा बन गया। कोई पहचान नहीं सकता कि नींबू का है या नहीं।

सेब, अनन्नास, बिही आदि को भी ऊपर से छील-कर और उबालकर बनावे। पर पहले काँटों से खूब गोदकर आम या आँवलों की भाँति डाल देते हैं।

अदरख की मोटी-मोटी गाँठें लेकर गरम पानी में हलका जोश दे। फिर ठंडे पानी से धो डाले, और छिलका छील डाले। काँटे से गोद दे। चाशनी करके इन पर डाले, और दो या तीन दिन तक ढककर रख दे। फिर चाशनी गरम करे, और इन पर डाले। दो-तीन दिन तक फिर ढक दे। इसी प्रकार तीन या चार बेर करे पीछे अचारी में भरकर रख दे।

अब अन्त में तुझको कुछ फुटकर भोजन की सामग्री और बताती हूँ—जैसे चटनी, समोसे, गुझिया, पानी इत्यादि

किसी अमृतवान व चीनी आदि के वर्तन में भर दे।

सूखी चटनी—धनिया दो तोला, सूखा पोदीना एक तोला, हींग दो माशे, सोंठ एक माशा, इलायची छः माशे, काला जीरा दो माशे, सफेद जीरा दो माशे, काली मिर्च दो माशे, लाल मिर्च छः माशे, अदरख दो तोला, चूक एक तोला, नींबू का रस दो तोला, अनारदाना दो तोला, दालचीनी छः माशे सबको कूट-पीसकर अदरख और नींबू के रस में भिगोवे। चूक मिलाकर सुखा ले। फिर पीसकर रख ले। जब खानी हो, नींबू के रस व पानी में घोल ले, चटनी तैयार हो जायगी।

जिमीकन्द की चटनी—कच्चा जिमीकन्द लेकर ऊपर से छील डाले। उसके टुकड़े कर, उसी के बराबर भुने हुए खिलवाँ चनों का आटा मिला, नमक, मिर्च, मसाला डालकर पीस ले। खुजली या किनकिनाहट नाम को भी न रहेगी।

आम की चटनी—सेर-भर आम को छीलकर गूदा उतार ले, और यह मसाला छोड़कर खूब महीन पीस ले—साँभर और सेंधा नमक छटाँक-छटाँक-भर, अदरख छटाँक-भर, लौंग दो माशे, लाल मिर्च एक तोला, काली मिर्च एक तोला, धनिया एक तोला, जायफल,

जावित्री, दालचीनी तीन-तीन माशे, सूखा पोदीना एक तोला, नींबू का रस छटाँक-भर।

अमलतास की चटनी—एक छटाँक अमलतास को पावभर नींबू के रस में दो दिन-रात भिगो रक्खे। पीछे छानकर साफ कर ले, एक छटाँक मुनक्का, नव-नव माशे सोंठ, जीरा सफेद, बड़ी इलायची, दालचीनी, पीपल, एक तोला काली मिर्च, तीन तोला नमक सेंधा या काला और तीन माशे भूनी हींग डालकर पीस ले, पीछे धूप में रख दे। बू बिलकुल न रहेगी। रात को सोते समय या खाने के संग खाने से सुबह दस्त साफ आवेगा।

दूसरी रीति— अमलतास को गुलाबजल में दो-दिन-रात तक भिगो दे। पीछे रुई लगाकर टपका ले। इसमें दो तोले शीरखिस्त मिला दे, और ऊपर का मसाला मिला दे, तो बू न रहेगी।

समोसे—इनको तिकोना भी कहते हैं। ये कई प्रकार के बनते हैं (इन्हीं में गुझियाँ भी हैं) एक मीठे और दूसरे नमकीन। मीठों में मावा (खोया) व बूरा मिलाकर पूर भरते हैं या चिरचन (बेरों की गुठली का चून) बूरा मिलाकर भरते हैं।

नमकीन आलू और दाल के बनते हैं।

आलू उबालकर छील ले, और पीस डाले। उसमें

नमक, मिर्च, गरम मसाला, अमचूर पीसकर मिला दे अथवा दरीदाल, जो तलते में कड़ाही के तले में रह जाती है (जैसा कि पहले मैं बता चुकी हूँ), सिलबट्टे पर पीस ले। उसमें नमक, मिर्च, मसाला, अमचूर मिलाकर भर दे, और गुझियों की भाँति घी में तल ले।

पपड़ी—इनको यों बनाते हैं कि मैदा को लेकर मोयन ालकर सान ले, और पूरी की भाँति बेल डाले। इसके े टुकड़े कर ले। इनको गाजर की भाँति करके यह र भरकर गोंठ दे, तो तिकोना बन जायगा। इनको ोंठ-गोंठकर पहले रख ले। फिर तल ले या बनाती जाय ौर तलती जाय।

गुझियों को भी इसी भाँति बनाते हैं। पर उसकी पड़ी साबित रहती है, टुकड़े नहीं होते। गोंठन अच्छी ागनी चाहिए, जिसमें तलते में खुल न जाय; नहीं तो ुझियाँ बिगड़ जाती हैं।

नारियल की बर्फी—यह कच्चे नारियल की अच्छी नती है। पर जो गोला सूखा हो, तो चाकू से ऊपर के ाले छिलके को पहले छीलकर साफ कर ले। पिसा हुआ ाध सेर नारियल ले। इसमें आध सेर खोया डालकर । पीछे इसमें एक तोला पिसी इलायची मिलाकर पानी में डालकर, खूब मिला दे, और थाली

में घी चुपड़कर उसमें बर्फी जमाकर चाकू से काट ले।

बादाम की बर्फी—बादामों को फोड़कर मींगी को गरम पानी में भिगोकर छील डाले। यह और नारियल की एक ही भाँति बनती हैं। भेद केवल इतना ही है कि बादाम की पिट्ठी पहले घी में भुनती है, पीछे खोये के संग भूनी जाती है। पीछे आधी छटाँक घी डालकर चाशनी में मिलाकर जमा देते हैं। इसकी अन्दाज यों है कि बादाम की गिरी एक सेर, खोया आध सेर, घी दो छटाँक, चाशनी आध सेर, छोटी इलायची का चूरा तीन माशे।

कुलफी—दूध को खूब औटाकर और मिसरी मिलाकर गुलाब या केवड़े के इतर के बूँद डाल दे। टीन की कुलफियों में भरकर, ऊपर से ढकन बन्द करके आटे से खूब बन्द कर दे, और एक बरतन में चुनकर रख दे। ऊपर और नीचे बरफ भर दे। दो घंटे पीछे निकाल ले।

सोंठ—पकी इमली या अमचूर को भिगो दे। पीछे इसमें बूरा, नमक, काली मिर्च, जीरा मिलाकर घोल ले। धोकर किशमिश, छुहारे के टुकड़े, सोंठ के बताए हुए बर्क मिला दे। खटाई, मिठाई, नमक, मिर्च सब का स्वाद बराबर रहे, कम-ज्यादा न हो जावे। मीठा तनिक ही अधिक रहे।

प्याज का लच्छा—प्याज को बारीक तराश ले; फिर उसको चूने के पानी में थोड़ी देर तक डाल दे। जब उसमें बू न रहे, तब निकालकर निचोड़ डाले। पीछे नींबू का रस निचोड़े, और नमक, मिर्च, मसाला पिसा हुआ मिला ले। बू नाम को न रहेगी।

नमकीन पानी—यह पोदीना, भुने जीरे और भुनी अमिया का इस प्रकार बनता है कि पोदीना, जीरा, नमक, मिर्च, खटाई, भुनी हींग सबको पीसकर पानी में छान ले। जो पोदीने का बनाना चाहे, तो पोदीना अधिक और जो जीरे का बनाना चाहे, तो जीरा अधिक रक्खे। जीरे को भूनकर डाले। अमिया का बनाना चाहे, तो उसका भुर्ता करके पानी में घोल ले, ऊपर के मसाले पीसकर डाल दे, और कपड़े में छान ले।

चाय—खौलते हुए पानी में चाय को डालकर दो मिनट तक आग पर रक्खा रहने दे। पीछे उतार ले। यह सबसे उत्तम और सहज रीति है।

काफ़ी—इसको कड़ाही या तवे में डालकर, आग पर रखकर, इतना भून ले कि भूरी स्याही लिये हुए हो जाय। इससे हलकी होकर सुगन्धित हो जाती है। फिर इसको खरल में कूटकर चूर्ण-सी कर ले, और भरकर रख छोड़े। जब चाहे, तब इसमें से लेकर इस रीति से

तैयार कर ले जिसमें कि पहले ठंडे पानी में डालकर निथार ले, महीन भाग निकल जाय, जो बाकी रहे, उसको चाय की भाँति बना ले।

बहन! अब तुझको बहुत बता चुकी। यद्यपि पूरी रीति से तो नहीं, पर काम के योग्य बता दिया। मुझको कुछ मांस, मछली के भोजन बनाने की क्रिया भी आती है; परन्तु वह सबका भोजन नहीं है। इसलिये उसे नहीं बताया, छोड़ दिया।

सीना-पिरोना

बहन मोहिनी, अब तक मैंने घर के काम-धन्धे बताये; अब तुझे कुछ इसी के संग सीना-पिरोना भी बताती हूँ।

माता को चाहिये कि अपनी पुत्रियों को गुड़ियाँ खिलाते समय ही से इस उत्तम काम को सिखलावे। पहले आप सी करके उनको दिखावे। फिर उसी को उधेड़कर उनसे सिलवावें, जिससे वे उन्हें डोरे के चिह्नों से देखकर सी लें। जब इस भाँति कुछ हाथ सध जाय, तब पुराने कपड़ों में से काट-काटकर आप दे दें, और लड़कियों से सिलवावें। फिर पीछे फटे-पुराने कपड़े उनको दे दें, जिनमें से वे आप काटकर सीवें। इसके

याद उनको, पुराने कपड़ों में से टोपियाँ, कुर्ते, थैले व इसी भाँति के सहज सिलाई के कपड़े, जिनकी सिलाई सीधी और लम्बी हो, सीने को दें। जब सीना आ जाय, तब तुरपना बतावें। जब तुरपने में हाथ जम जाय, तब नये कपड़े सीने को दें, जो सीधी सिलाई के हों। जैसे रजाई, सौर, गद्दा, दोहर और दुपट्टे, चद्दर इत्यादि। जब उनकी सिलाई अच्छी भाँति आ जाय, तब उनको कपड़े का काटना बतावें। सीना-पिरोना कई भाँति का है। सीना अलग है और पिरोना अलग। सीना इतने प्रकार का है—(१) साधारण, जैसे अँगरखे, कुर्ते, पाजामे, दुपट्टे, चोली, दामन और बटुए, (२) जाली पर काढ़ना, (३) रेशम, डोरे व कलाबत्तू का काम करना, (४) सुजनी का काम करना, (५) सलमे-सितारे का काम करना, (६) कटाव का काम करना। इसी भाँति के और काम करना।

पिरोने से अभिप्राय है डोरे को पिरोकर कोई काम करना। जैसे मोजे व दस्ताने बुनना, फीता, बेल, कमरबन्द, बटुए की डोरी गूँदना, बटुए की भाँति गहने गुद लेना। जैसे माला, कण्ठी, बाजू, पहुँची व गुलूबन्द इत्यादि। फूलों की माला, हार या अन्य गहने बनाना इत्यादि। इसके सिवा सीने-पिरोने के संग-गोखरू

मोड़ना, चम्पा या किरन बनाना, उल्टा या उल्टू करना आदि भी है।

अब तुझे इनकी कुछ रीति भी बताती हूँ। सीने के लिये बहुत-सी वस्तुएँ नहीं चाहिये। केवल सुई, धागा, कतरनी, बेड़ा और एक गज, इतने ही से काम हो जाता है।

सुई को दायें हाथ के अँगूठे और बीच की उँगली से थामते हैं, और तर्जनी (अर्थात् अँगूठे और बीच की उँगली की बीचवाली उँगली) से सुई को दाबकर चलाते हैं। अनामिका अर्थात् कन्नी और बीच की उँगली की बीचवाली उँगली में बेड़ा पहनते हैं। कोई-कोई बीच की ही उँगली में पहन लेती हैं।

कपड़े में होकर जो सुई नहीं निकलने आती, तो इस बेड़े से सुई को आगे को दबाकर निकाल देते हैं, बिना इसके सुई का हाथ में छिद जाना सम्भव और सहज है। यह बेड़ा एक छोटी पीतल या ताँबे की टोपी-सी होती है जो उँगली के पहले पोर को ढक सकती है। इसमें बहुत खाँटे (छेद) होते हैं, जिससे दाबने के समय सुई उनमें जम जाती है, फिसलने का डर नहीं रहता, और उँगली में सुई के कारण ठेक भी नहीं पड़ने पाती। कोई-कोई इस बेड़े का काम नाखून की पीठ से लेती

हैं। सुई और डोरा कपड़े के अनुसार लिया जाता है। गजी, गाढ़ा, लुंगी, रेजा, धोतर, इनके कपड़े सीने में चर्खे के कते हुए डोरे काम में लाने चाहिये, और सुई भी मोटी लेनी चाहिये। लंकलाट, इंचमार, साटन, डचल जीन, कमीज की छींट, इनके सीने में रील का डोरा लगाना चाहिये। और सुई भी तनिक महीन लेनी चाहिये। खासा, मलमल, अद्धी, चिकन और जाली, इनको पेचक से सीना चाहिये, और सुई और भी महीन होनी चाहिये। गोटा, गोखरू, ठप्पा आदि को धाने या बहुत ही महीन पेचक और सुई से सीना चाहिये।

सिलाई कई भाँति की होती है। जब कपड़े के दो टुकड़ों के छोर मिलाकर सीते हैं, जैसे अँगरखे या कुर्ते के खड़ा करने में, तो उसे पिसूजना कहते हैं। जब इसी को गोल करके भीतर की ओर उलटकर सीते हैं, तब उसे उलटना या तुरपना कहते हैं। यह दो प्रकार का है—एक तो गोल, जो पिसूज की सिलाई के बराबर ही तुरपी जाती है, और दूसरी चौड़ी जिसे अमलपत्ती कहते हैं, जो पिसूज से थोड़ी-सी दूर पर जाकर तुरपी जाती है। वह भी दो भाँति की है—एक तो वह, जिसमें दोनों सिरे एक ही ओर को उलटे जाते हैं, और दूसरी वह, जिसमें पिसूज की दोनों ओर को एक-एक छोर उलटा जाता है।

तीसरी सिलाई बखिया की होती है। जो इस प्रकार की जाती है कि जहाँ से सुई चुभोकर निकाली, वहाँ से फिर पीछे को ले जाकर आधी दूर पर चुभोई, और पहले के बराबर दूर पर जा निकाली। फिर पीछे को लाकर जहाँ से पहली सुई निकाली थी; उसी छेद में इसको पिरोकर उतनी ही दूर पर जा निकाली। इसी भाँति करती रहे, तो ऊपर की सिलाई एक दूसरी के बराबर चली जायगी, और नीचे की ओर दुहरी होती जायगी। जैसे—

बखिया भी दो प्रकार की होती है। एक साधारण जैसी अभी बताई, और दूसरी काँटेदार। जैसे—
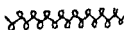
इसमें लहरिया जो पड़ती है, वह नीचे को भीतर की ओर रहती है। और दो ओर बखिया हो जाती है। इसको आगे में और खुलासा करके बताऊँगी। एक तेपची की सीमन और होती है। इनके सिवा एक जाली की सीमन होती है। वह बहुत मजबूत डोरे से सिलती है, और काँटेदार बखिया की भाँति होती है। जहाँ यह सिलती है, वह उस कपड़े के दोनों छोरों को उलटकर तुरप देते हैं, जिससे यह चमकने लगती है। जैसे—

साधारण सीने में तो पिसूजने और तुरपने ही का काम पड़ता है, पर गोट या मग़ज़ी टाँकने में बखिया का। जहाँ फ़लीता लगाना होता है, वहाँ भी बखिया ही लगाते हैं। फलीता लाल, काले, नीले व पीले रंग का डोरा होता है, जो मग़ज़ी व संजाफ़ के किनारे पर लगता है।

संजाफ़ और गोट दो भाँति की लगाते हैं। एक सुदरेब, जो सीधे कपड़े में से सीधी पट्टी कतरकर बन जाती है; दूसरी औरेब, जो दो प्रकार से कतरी जाती है। एक तो इस प्रकार से कि कपड़े में से ठेढ़ी काट ली। जैसे यह—
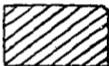
फिर सब कतरें एक साथ सीकर लम्बी गोट कर ली। दूसरी को औरेबी थैला बनाकर कतरते हैं, जिसमें टुकड़े नहीं जोड़ने पड़ते, किन्तु एक लम्बी सीधी धजीर उतरती चली आती है। उसके सीने की रीति यह है—

कपड़े को अर्ज़ से मोड़कर, दोनों छोर मिलाकर, आधा कर ले, और बखिया की सीमन दे दे। अब नापकर इसको फिर आधा करे, और इस आधे के बराबर कपड़े के लम्बाव में से नापकर चिह्न कर दे। यहाँ से फिर एक

शिकन मोड़कर वहाँ तक डाल दे, जहाँ से अर्ज का आधा करके सिलाई की थी। जैसे— अब इस शिकन पर से कतरनी से काट ले, तो ऐसी सूरत हो जायगी— । फिर इसी रीति से दूसरे छोर पर कर ले, तो ऐसी सूरत हो जायगी— । इसको फिर जितनी चौड़ी गोट या मगजी चाहे, उतनी ही एक सिरे पर मोड़कर दूसरे को सी दे, तो दूसरी तरफ को भी, थैली सिल जाने पर, उतना ही सिरा बच रहेगा, और थैली की सूरत यह हो जायगी— । फिर इसको कतरनी से काट ले, तो एक लम्बी धज्जी हो जायगी। दोहरा करके और सिलाई को भीतर की ओर करके गोट हो जायगी या मगजी। ऐसे इकहरी गोट और संजाफ नहीं आवेगी।
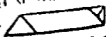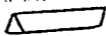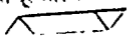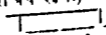
गुलनी में भी बखिया ही करनी होती है, जो तीन प्रकार की है—(१) एक तो बेमगज की, जिसमें दो [illegible] नहीं होती है या दो नहीं केवल कपड़े ही की [illegible] है [illegible] नहीं होती। उसी में फूल-पत्ते बखिया द्वारा [illegible] लेते हैं; (२) दूसरे मगजी की अर्थात् जिसमें [illegible] या दूसरे रंग का [illegible] फूल पत्ते [illegible]

हैं, जैसी कि मेरठ में टोपियाँ बनती हैं। इसके बनाने की रीति यह है कि जैसी फूल-पत्ती व बेल डालनी चाहो, वैसी ही छाप लो या पेंसिल से काढ़ लो, और उस पर दुहरी बखिया कर दो। इतना बीच छोड़कर करो, जितना मोटा फलीता भरना चाहो। फूल को गोल या नोकदार जैसा चाहो, वैसा रख लो। जब सब सीमन दे चुको, तब एक मोटे तकुए की सुई लेकर उसमें जैसे रंग का फलीता चाहो, पुह लो, और फिर नीचे के कपड़े की तह में (जो कुछ भिरभिरा-सा होना चाहिए) चुभोकर भर दो ; क्योंकि यह दुहरे कपड़े की सिलाई है। फूल में कई-कई बेर फलीता भरो, जिससे बखिये का बीच अच्छी तरह से भर जाय, और खाली न रहे। धारी जितनी भरपूर भर जायगी, उतनी शोभा अधिक होगी। (३) तीसरा प्रकार यह है कि इकहरे कपड़े पर ही बखिया काँटेदार कर देते हैं, जिस प्रकार कि लखनऊ में टोपियाँ बनती हैं। गोट लगाने की दो रीतियाँ हैं। एक तो दुहरी लगती है और वह भी दो प्रकार से। (१) दुहरे कपड़े में, (२) इकहरे कपड़े में।

दुहरे कपड़े में इसके लगाने की रीति यह है कि जिन कपड़ों में लगाना चाहो, उनके दोनों छोरों को उलट लो, और बराबर मिला लो। सीमन भीतर की ओर

करके गोट को भी दुहरा कर लो। दोनों कपड़ों के दोनों छोर और गोट के दोनों छोर मिला लो। पर गोट को कपड़ों की तह के बीच में भीतर की ओर कर लो, फिर बखिया से सिलाई कर दो। दोनों कपड़ों को उलटने पर गोट सीधी निकल आवेगी, और सिलाई भीतर को चली जायगी। इकहरे कपड़ों में यों लगाते हैं कि गोट को पहले की भाँति उलटकर दोनों छोरों को कपड़े के साथ बखिया से सीते और फिर उसे तुरप देते हैं।

दूसरी इकहरी गोट जो लगती है, उसे यों लगाते हैं। गोट को उलटकर, सीमन ऊपर की ओर करके जिस कपड़े पर लगानी हो, उसके सिरे में से गोट की चौड़ाई का पौन लेकर जिधर लगाना चाहो, सी दो--चाहे चिमूज से, चाहे बखिया से। फिर उस कपड़े की दूसरी ओर को उसी छोर में गोट को उलटकर, जिसमें सिलाई बीच में हो जाय, तुरप दो।

संजाफ भी दो प्रकार से लगाते हैं। एक तो इकहरी गोट की भाँति, दूसरी उसी संजाफ में से मगजी या गोट भी निकाल ली जाती है। दुहरी गोट की भाँति और बाकी रहती है, उसे संजाफ के तौर पर लगा देते हैं। संजाफ की मगजी में लाल व काला फलीता भी लगा देते, और उस पर बखिया कर देते हैं।

गोट व मगजी में कोने निकालने पड़ते हैं। उनकी
रीति है कि जब यह सिलती-सिलती कोने पर आ
य, तब गोट या मगजी को, जो उलटी हुई रही है,
उलटकर चौड़ाव की लंग से सिंघाड़े की भाँति सी
, और फिर सुई की नोक से उलटकर कोना निकाल
। यहाँ अब चौतरह गोट हो जायगी, उसको कपड़े
कोनों में गोट की भाँति टाँक ले। चार-पाँच टाँके
बूत लगा दे। जब कपड़ा उलटकर सीधा किया
यगा, तब कोना निकल आवेगा। जहाँ कहीं चुन्नट
या चीन डालना हो, जैसी कमीज या दामन में,
की यह रीति है कि पहले एक मजबूत डोरे में सी
, और सिलवट अर्थात् चीन जितनी लम्बी रखनी
हो, उतने डोरे में एक गाँठ दे दो। इस चुन्नट को
थ से एक-सी कर लो, जिसमें थोड़ी या बहुत न रहे।
र सधे हाथ से इसमें बखिये की सीमन दे दो। पीछे
पर कफ, गोट व नेफा लगा लो। अब तुझको
ड़ों के टुकड़ों के नाम बताती हूँ।
अँगरखे में छः कली होती हैं। एक पीछे और दो
गे। एक पर्दा व चाक, दो बाँहें (आस्तीन), दो
लें, दो चौबगले, एक गरेबान, जो गरदन पर एक
ी-सी लगती है और एक कमर-पट्टी।

अँगरखे के ब्योंतने की रीति यह है कि जितनी चौड़ी कमर हो, उतना कपड़ा अर्ज में से नापकर और उसी में पर्दे के लिए दो व ढाई गिरह (अथवा कम-जियादे, जैसी दशा हो) और बढ़ाकर फाड़ ले। चौड़ाव में से पर्दे का कपड़ा छोड़, बाकी के दो बराबर टुकड़े कर ले। फिर जिसमें पर्दा छोड़ा है, उस आधे को पर्दा छोड़-कर दो टुकड़े और कर ले। ये दोनों आगा हो जायँगे, और वह एक पीछा। एक आगे में पर्दा रह जायगा, जिसके काटने की यह रीति है कि उस पर शिकन डाल-कर कतर ले—इस भाँति कि ये दो टुक अलग-अलग हो जायँ। अ तो पर्दा हो जायगा, और इ बायें हाथ का आगा हो जायगा। उ को जितनी नीची चोली रखना चाहे, नीचा नाप-कर कतर ले। बायें हाथ के आगे में से उ की सूरत का थोड़ा-सा कतर डाले। जैसी इ की सूरत है। जितनी नीची चोली रक्खे, उतना अँगरखे के निचाव में से बढ़ाकर कली ब्योंत ले। इसकी रीति यह है कि कपड़े के लम्बाव में से टेढ़े दो कोनों की ओर थोड़ा-थोड़ा-सा छोड़कर टेढ़ी ओर से इस भाँति कतर ले। इसके माने की भी

यही रीति है कि पहले दो-दो कली अलग-अलग पिसूज ले, फिर इनको 'पीछे' में एक-एक ओर जोड़ दे। इसके पीछे दायें हाथ को इ जोड़े, और फिर एक कली और जोड़ दे। बायें हाथ को एक आगा जोड़ दे, और फिर एक कली जोड़ दे। इसके पीछे अब पर्दा जोड़ दे। पर्दे में से थोड़ा-सा दूज के चन्द्रमा की भाँति गला कतर ले। बीच की दो-दो कलियों के ऊपर चौबगले लगा दे, जिनकी सूरत ऐसी होती है— (▽)
पर ये चीनदार अँगरखे में नहीं लगते। उसमें इस जगह चुन्नट पड़ती है। इन चौबगलों के ऊपर बगलें लगती हैं, जिनकी सूरत ऐसी होती है, जिससे चौबगलों में ठीक सिल जावें। अब बाँह सी (◆) दे। बाँह को चीरकर बगल की नोक गोलाई तक सी देते हैं। बाँहों के मुड्ढे छाँटकर जोड़ते हैं। 'पीछे' के ऊपर गरेबान जोड़ते हैं।

अचकन में एक बालाबर बायें हाथ को और जोड़ा जाता है। अखीर की कलियाँ भी इसी में आ जाती हैं, अलग नहीं जुड़तीं। पर अचकन दो भाँति की होती हैं। एक गोल पर्दे की। दूसरी सीधे पर्दे की।

कुर्ते में केवल चार ही कलियाँ होती हैं, और एक आगा एक पीछा और बाहें। इसमें आगे में से गला फटता है।

कन्धों की ओर को सुलाव रहता है। इसमें कलियाँ निचाव से उतनी ही छोटी रहती हैं, जितने बाँहों के खलीते होते हैं। मुड्ढे तनिक चौड़े रहते हैं। मुड्ढे उनको कहते हैं, जो तुरपाई कन्धे और गरदन के बीच तक होती है। अँगरखे में ये बहुत पतले रहते हैं।

चोगा—इसमें एक पीछा, दो आगा, छः कलियाँ और दो बाँहें होती हैं। पर्दा नहीं होता। इसके सीने की रीति वही है, जो अँगरखे की। भेद इतना ही है कि इसके दोनों सिरों पर एक-एक कली रहती है, जो उतनी लंबी होती है, जितना नीचा गरेबान लगता है; उतना ही निचाव में से घटा देते हैं।

पाजामे दो भाँति के होते हैं। एक सुदरेच, दूसरा औरेबी। औरेबी पाजामे के सीने की वही रीति है, जैसी औरेब गोट के थैले की। भेद केवल इतना ही है कि उसमें गोट की चौड़ाई को छोड़कर सीते हैं, इसमें नहीं छोड़ते।

जब थैला सिल जाय, तो कतरते इस रीति से हैं—जितना पायँचा रखना चाहे, उतना उ को दोनों ओर से नापकर जितना नीचा आसन रखना चाहे, उतना-उतना दोनों सिरों पर क नापे। फिर उ औं काटकर एक उ से दूसरे उ तक

यों टेढ़ा काट दे । इससे अ और इ दोनों अलग हो जायँगे। फिर क दोनों को मिलाकर सी दे, तो यह सूरत हो जायगी । फिर इसका नेफा उलट-कर भीतर को सी दे, और मोहरी पर गोट दुहरी करके, इकहरे कपड़े की रीति से, लगा दे।

सुदरेव—पाजामे की रीति यह है कि उसके आसन में एक मियानी और जोड़नी पड़ती है; जिन्हें चार कलियों से सीकर इस प्रकार कर लेते हैं—

ये कलियाँ आसन की लम्बाई के बराबर होती हैं। बाकी इसको ऑरेब के आँट की भाँति ही सुदरेव कपड़े में से काटते हैं। इन कलियों के बीच में एक चौखूँटा आसन भी सिलता है।

कुर्ता—यह बाँहदार, आधी बाँह या बिना बाँह की होती है। इसको कोई-कोई फतोही, सलूका या नीम आस्तीन इत्यादि भी कहते हैं। इसमें आगा, पीछा और दो चौबगले पड़ते हैं। आगा-पीछा फाड़कर चौब-गलों को कलियों की जगह सी देते हैं। पर स्त्रियों के लिए इसको अगाड़ी से छाती के नीचे तक पर्दे की

गोलाई की भाँति दोनों तरफ से छाँटकर भी सीते हैं, और बिना काटे भी सीते हैं।

दामन—जिसको लहँगा भी कहते हैं। यह बहुत सहज है। इसमें कली और पाट ही होते हैं, जिनका सीना बहुत ही सुगम है। इसमें एक ओर को नीचे गोट या मगजी लगती और संजाफ टकती है। ऊपर की ओर को चीन डालकर नेफा लगा लेते हैं, और गरदन को भी नेफे के संग ही उसमें भीतर को करते हुए सीते हैं, जिससे संग ही संग टँकता जाता है, नहीं तो पीछे कठिनाई पड़ती है।

चोली के कई नाम हैं—अँगिया, कञ्चुकी, केंचुली इत्यादि। यह प्रत्येक देश और जाति में अलग-अलग भाँति की होती है, और इतनी प्रकार की हो गई है कि उनका यदि पूरा वर्णन किया जाय तो एक पुस्तक अलग ही बन जाय। इस झगड़े को छोड़कर यहाँ पर केवल उसी प्रकार की चोली का सीना बताऊँगी, जो पश्चिमोत्तर देश की उच्च जातियों (ब्राह्मण, बनियों इत्यादि) में प्रचलित है। चोली का अच्छा या बुरा होना उसकी सिलाई और अङ्ग में ठीक या बेठीक बैठने से होता है। अर्थात् जो अङ्ग में ठीक भिचकर आ जाय वह अच्छी, और जो कहीं से ढीली या तङ्ग हो, अथवा

झोल देने लगे, वह ठीक नहीं। इसलिये प्रथम यह देखना चाहिये कि बाँह और वह स्थान, जिसमें स्तन रहते हैं, अङ्ग में ठीक हैं, या नहीं। बाँह कन्धे से चार-चार अंगुल आगे तक और खूब चुस्त रहनी चाहिये। पीठ में पीछे, जहाँ तनी बँधती हैं, चारों तनियों के बीच में पान की-सी आकृति बन जाना चाहिये। ऊपर की तनी आपस में और नीचे की आपस में बँधने पर मिल जानी चाहिए।

गोटे को भी दो भाँति से टाँकते हैं। एक तो इस भाँति कि पहले एक तरफ से सी दिया, और फिर दूसरी ओर को। उसकी सीमन यों लगती है कि जहाँ गोटे के सिरे का डोरा होता है, उसी के बराबर सींते चले जाते हैं। दूसरी काँटेदार होती है। दोनों सिरे एक ही सीमन में आ जाते हैं। इसकी सीमन काँटेदार बखिया की-सी होती है, जिसको पहले बता चुकी हूँ।

गोखरू, पट्टा व लचका भी इसी भाँति टँकता है। पर कोई-कोई ऐसा भी करती हैं कि गोखरू को, जो बहुधा पट्टे के बराबर ही टँका करता है, दोनों को एक ही साथ एक ही बेर में एक ही डोरे से सीं लेती हैं, और फिर पट्टे की दूसरी ओर एक सिलाई और कर देती हैं। गोटे व गोखरू को बहुत तानकर न लगाना

चाहिये, और न कहीं से ढीला रहने देना चाहिये; किन्तु बराबर इकसार लगाना चाहिये।

बहन, अब आगे बनाने को जी नहीं करता। देह अकड़ी जाती है, अँगड़ाई आती है, और आलस्य भरा आता है। आँखें भी मुँदी जाती हैं। सोने की बेला हो गई।

शिल्पविद्या

चौथे दिन जब दुर्गा को कोई काम करने को नहीं रहा, सबसे निबट चुकी, तब मोहिनी उससे बोली—बहन, अब कल की भाँति फिर बता। इस पर दुर्गा बोली—अच्छा, आज तुझे शिल्पविद्या बताऊँगी। पर इसके विषय में यदि कहा जाय, तो विस्तार बहुत बढ़ेगा, और अंत न आवेगा; क्योंकि जो थोड़ा-सा भी कहूँगी, तो भी कई दिन लग जायँगे। इसलिये कुछ थोड़ा-सा कहकर तुझको इसका ज्ञान कराये देती हूँ। यह बड़ी विस्तीर्ण विद्या है, और इसमें लक्ष्मी का निवास है। जब इस देश की शिल्प उन्नति पर थी, तब यहाँ लक्ष्मी का निवास था। जब से यह सोई, तभी से लक्ष्मी इसको छोड़ अन्य शिल्पज्ञ देशों को चली गई—जैसे इंगलैंड, फ्रांस, जर्मन इत्यादि देशों को। वे इसी के

कारण ऐसे धनवान् बन बैठे, और यह देश दारिद्रय के हस्तगत हो गया।

अब तो इस विद्या की ऐसी अवनति हुई है कि लोग बहुधा इसके अर्थ को भी नहीं जानते। इसका अर्थ केवल संगतराशी ही समझते हैं; पर यह उनका दोष नहीं, समय का प्रभाव है। इस शिल्पविद्या में अनेक कार्य मिले हुए हैं, जो तुझको अब ज्ञात होंगे। इस देश की शिल्पविद्या इस हीन दशा में भी बहुतों से अच्छी है। पर विलायत की कारीगरी ने, जो कलों द्वारा होती है, इसको बेकल कर रक्खा है।

इस देश में चौदह विद्याएँ और चौंसठ कलाएँ प्रसिद्ध हैं। चौदह विद्याएँ चतुराई की बातों से और चौंसठ कलाएँ हस्तक्रिया अर्थात् शिल्प से सम्बन्ध रखती हैं। अब इनका जानना तो एक ओर रहा, इनके नाम भी कोई नहीं जानता कि ये हैं कौन-कौन-सी। बड़ी खोज से इनका पता चल पाया है। पर उनके विषय में भी मतभेद है। कोई चार वेद, चार दर्शन और छः वेदांगों अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष, मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र और पुराण को चौदह विद्या मानता है, और कोई मीमांसा, न्याय,

रँगकर पहनना । अंग में सुगन्धि आदि लगाना ।

(१०) मणिभूमिनिर्माण=ग्रीष्मऋतु में शरीर ठंडा होने के लिये मरकतमणि आदि से आँगन पूरना ।

(११) उदकवाद्य=जलतरंग आदि बजाना ।

(१२) उदकाघात=जल में तैरना ।

(१३) चित्रांगयोग=पति की इच्छा रतिरङ्ग की हो; पर अपनी न हो, तो इन्द्रियों की शिथिलता दर्शाना ।

(१४) माल्यग्रंथन=माला व हार बनाना ।

(१५) शेखरापीडयोजन=केशों में गूँथने व टाँकने के लिये वेणी व पुष्पगुच्छ इत्यादि बनाना ।

(१६) नेपथ्ययोग=वेष बदलना ।

(१७) कर्णपत्रभङ्ग=कानों में पहनने के लिये हाथी-दाँत, शंख, माणिक तथा अन्य वस्तुओं के पुष्प व बुन्दे इत्यादि बनाना ।

(१८) गन्धादियुक्ति=अंग में सुगंधि आदि लगाना ।

(१९) भूषणयुक्ति=भूषणों को यथास्थान शोभा-युक्त पहनना । यह नहीं कि अनाप-शनाप वे शोभा भी पहन लेना, जैसा कि अब पहनती हैं ।

(२०) इन्द्रजाल=कौतुक दिखाना ।

(२१) कौचुमारादयोग=कृत्रिम सौन्दर्य दर्शाना, जिससे पति को अत्यन्त मोह उत्पन्न हो । जैसा कि

आजकल पारसियों और गोराङ्गियों में प्रचलित है।

(२२) हस्तलाघव=काम करने की हथौटी।

(२३) विचित्रशाकप्रदयोग=अनेक प्रकार के शाक बनाने की क्रिया और दक्षता।

(२४) पानकरसरागासवयोग=पीने के पने, चटनी, आसव इत्यादि बनाना।

(२५) सूचीवानकर्म=सीना-पिरोना।

(२६) सूत्रक्रीड़ा=भरत-कला जैसे रंगपलटा, मोर-पंजा इत्यादि डोरे से बनाना अथवा जैसे मदारी करते हैं कि कपड़े में अँगूठी इत्यादि कोई वस्तु बाँध दें, और बिना गाँठ खोले क्रिया से उस वस्तु को निकाल लें।

(२७) प्रहेलिका=पहेली व गूढ़ अर्थ पूछना।

(२८) प्रतिमाला=तत्कालीन उत्तर देने में दक्षता। अन्ताक्षरी, दोहे, चौपाई आदि कविता कहना।

(२६) दुर्वचन वाक्चातुरी=ऐसे शब्द यथा-समय प्रयोग करे कि दूसरे को बोलने से बन्द कर दे।

(३०) पुस्तक-वाचन=इस भाँति पुस्तक बाँचना कि सुननेवाले को रुचि हो, और वह प्रीति माने।

(३१) नाटकाख्यायिकाप्रदर्शन = नाटक और [illegible] (कहानी) जानना।

(३२) समस्या=काव्य-रचना करना।

(३३) पट्टिकावेत्र-वाणविकल्प=कुर्सी इत्यादि बुनना।

(३४) तत्तकमणि वा तर्कूकर्म=एक में से दूसरे को खींचना, जैसे प्रसव समय बालक को।

(३५) तत्तण=घर को शय्या, कुर्सी, मेज, दीपक इत्यादि से शोभायुक्त सजाना।

(३६) वास्तुविद्या=घर के पदार्थों का प्रबन्ध और रक्षा।

(३७) रूप्यतत्त्वपरीक्षा=चाँदी सोने का खराखोटा जान लेना।

(३८) धातुवाद=धातु (जिनके बरतन बनते हैं) के स्वभाव और प्रकृति आदि का पहचानना, जिससे धोखा न खा बैठे।

(३९) मणिरागज्ञान } =मणियों व नगों को रखकर
(४०) आकरज्ञान } अधिक शोभायमान बनाना
तथा उनकी पहचान का ज्ञान। (१) सच्चे हीरे की यह पहचान है कि कागज में छेद करके उस छेद को हीरे में से देखे। जो एक ही छेद देखे, तब तो हीरा सच्चा, नहीं तो झूठा है। (२) हीरे के नीचे उँगली रखकर देखने से जो उँगली की रेखा देख पड़े, तब तो झूठा है, यदि न दीखे तो सच्चा।

(४१) वृक्षायुर्वेद=घर में जो पौधे लगाये जाते हैं, उनको किस समय बोवे, कैसे सींचे और कैसे रक्षा करे।

(४२) मेष, कुक्कुट, लावकयुद्धविधि=भेड़ा, मुर्गा और तीतर, बटेर इत्यादि की लड़ाई की बातें जानना।

(४३) शुकसारिकालापन=तोता, मैना आदि को पालकर पढ़ाना।

(४४) उत्सादन=संवाहन अर्थात् पति के पाँव दबाना। श्वेत बालों को खिजाब लगाकर काले करना।

(४५) केशमार्जन=बालों में सुगन्धि आदि लेपन करना।

(४६) अक्षरमुष्टिकाकथन=थोड़े अक्षर या शब्दों में अधिक अर्थ प्रकट करना।

(४७) म्लेच्छ-भाषा=अन्य देशों की भाषाओं का ज्ञान, जो म्लेच्छ-देश के नाम से प्रसिद्ध हैं।

(४८) देश-भाषा=देशान्तर की भाषा जानना और स्वदेशी भाषा में प्रवीण होना।

(४९) पुष्पशकटिका=पुष्प के निमित्त (कारण से) पति के अधीन होना या पति को अधीन करना।

(५०) धारणमातृका=धारणाशक्ति को बढ़ाना अथवा

चाहे जिस वस्तु को तोल लेना। जैसे हाथी, पर्वत इत्यादि।

(५१) यन्त्रमातृका=गाड़ी आदि अन्य यन्त्रों के उपयोग को जानना या साँचे इत्यादि ढालना।

(५२) संवाद्यकर्म=मिलकर गीत-गान करने की क्रिया या विद्या।

(५३) मानसकाव्य=मन में सोचा हुआ दोहा इत्यादि बता देना या चाहे जिस विषय पर तत्काल नवीन कविता रचना।

(५४) कोषछन्दोविज्ञान=कोष और छन्द का ज्ञान होना।

(५५) क्रियाविकल्प=सिद्ध किये हुए पदार्थ कैसे हैं, अथवा किसी पदार्थ में विष आदि मिला हो, तो उसे बहुत से पदार्थों में से पहचान लेना, और यह जानना कि कौन-सा पदार्थ कितने समय तक अच्छा बना रह सकता है, बिगड़ता नहीं।

(५६) छलितयोग=छल की युक्तियों को जानना कि ठगाई में न आवे अथवा वेष बदलना कि कोई पहचान न सके।

(५७) वस्तुगोपन=गुप्त या गड़ी हुई वस्तु को पहचान लेना कि यहाँ गड़ी हुई है; अथवा ऐसे वस्त्र पहने कि लज्जा न जाती रहे, अथवा कई वस्त्र पहने रहे,

क्योंकि इन्हीं से तुमको प्रयोजन पड़ेगा। चित्र में
के रंग बनाना बहुत कठिन है। इसलिए उनको बता
व्यर्थ होगा। इसके सिवा यह भी है कि चित्रों में भ
के लिए विलायती बना हुआ रंग बहुत अच्छा बिकता
है, वही काम में लाना चाहिए। बिकता तो पंसारियों
के यहाँ कपड़े रँगने का भी रंग है; पर कपड़े रँगने की
जो रीति इस देश में पुरानी प्रचलित है, वह तुमको
बताती हूँ। रंग इतने प्रकार के मुख्य हैं—(१) काला
बुर्रा, (२) नीला, (३) सुरमई, (४) फालसई,
(५) आबी, (६) आसमानी, (७) सब्ज़ कपासी,
(८) लाजवर्दी, (९) नाफरमानी, (१०) लाल,
(११) गुलेनार, (१२) कुसुम्बी, (१३) गुलाबी,
(१४) बसन्ती, (१५) केसरिया, (१६) नारंगी,
(१७) कपासी, (१८) अगवानी, (१९) बादामी,
(२०) अमउवा, (२१) अमउवा किशमिशी,
(२२) ऊदा, (२३) अंगूरी, (२४) पिस्तई,
(२५) जीलानी, (२६) जंगाली, (२७) जमुरदी,
(२८) सब्ज, (२९) धानी, (३०) सब्ज़ काही,
(३१) सरदई, (३२) शरबती, (३३) साबरी,
(३४) तूसी, (३५) अब्बासी, (३६) उन्नाबी,
(३७) फाखतई, (३८) खाकी, (३९) [illegible]

(४०) काही, (४१) कासनी, (४२) काकरेजी, (४३) काफूरी, (४४) करंजवी, (४५) दूधिया करंजवी, (४६) कोकई, (४७) मूँगिया, (४८) चप, (४६) कोच और (५०) चन्दनी । इनमें वे सब प्रकार हैं, जो कपड़ों को डोरे से बाँध-बाँधकर भी रँगते हैं, जिनके नाम चुनरी, लहरिया, धनक, पौमचा इत्यादि हैं।

इन वस्तुओं से रंग इस प्रकार बनते हैं—

पीला—हल्दी, हरसिंगार की डंठी, केसर, टेसू के फूल, पीली मिट्टी इत्यादि से।

काला—माजू, कसीस और लोहे इत्यादि से।

नीला—लील, लाजवर्दी की पुड़िया इत्यादि से।

लाल—पतंग, कुसुम, आल, सिंगरफ, लाख, हिर मिजी, गेरू, मेहँदी, कत्था, मजीठ, महावर इत्यादि से

जंगाली—तूतिया, नीलाथोथा इत्यादि से।

इनके सिवा रँगने के काम में इतनी वस्तु और भी आती हैं—आँवला, बबूल की फली, बबूल और बेर क बकल, तुन, काकड़ासिंगी, हड़, अनारका छिलका इत्यादि

चूना—सज्जी रंग को काटने और अमचूर, खट्टा नींबू फिटकरी, सुहागा इत्यादि रंग को गहरा करने के प्रयो जन से बर्ते जाते हैं। कभी-कभी यों भी करते हैं कि

कन्द या तूल (हरी व लाल), बानात इत्यादि का रंग काटकर भी कपड़े रँगते हैं।

कपड़े चार प्रकार के होते हैं—सूती, ऊनी, सनी और रेशमी। ऊनी और रेशमी कपड़ों का रँगना सहज नहीं, कठिन और बड़ी सावधानी का है। इसलिए तुझको केवल सूती कपड़े रँगने की क्रिया अब बताती हूँ।

जब कपड़े को रँगे, तो पहले यह देख ले कि कपड़ा अच्छी तरह धुला हुआ है या नहीं। दाग़-धब्बा तो नहीं लगा है, अथवा मैला तो नहीं है। कपड़ा जितना अच्छा धुला होगा, उतना ही रंग चोखा चढ़ेगा। रँगने से पहले कपड़े पर कस चढ़ाना होता है। सूती कपड़े पर हर्रा, माजूफल, अनार की छाल या कसीस का ऊनी कपड़े पर शंखद्राव या नौसादर का और रेशमी कपड़े पर फिटकरी, कत्था या अनार की छाल का कस चढ़ाया जाता है।

रंग को गहरा करने के लिए खटाई का या फिटकरी का बोर देते हैं, पर रंग बदलने के लिए लोहे का कट लगाते हैं, जो इस प्रकार से बनता है कि लोहे के दो सेर चूर्ण में पन्द्रह सेर पानी डालकर मिट्टी के बरतन में भर दे। दस-पन्द्रह दिन में पानी का रंग काला-सा हो जायगा। यही कट कहलाता है। ऊपर रंग की जो-जो

वस्तुएँ बताई हैं, उनका रंग इस प्रकार से बनाते या निक
लते हैं—(१) पीसकर, जैसे सिंगरफ, हिरमिज
केसर, गेरू, हल्दी, तूतिया इत्यादि को, (२) रेन
बनाने या टपकाने से, जैसे कुसुम, श्राल, पतंग, तु
इत्यादि को, (३) औंटाने से जैसे हरसिंगार की डंठ
बबूल या बेर का बकल, (४) पानी में भिगोने से, जै
मेहँदी, टेसू के फूल, लाख, महावर (श्यालता), कत्थ
आँवला, बबूल की फली इत्यादि, (५) खमीर उठा
से, जैसे लील इत्यादि। इन पाँचों प्रकारों में से रे
काटना तू नहीं जानती, सो बताये देती हूँ। जिसक
रेनी बनानी हो, उसको कूटकर महीन कर ले. पर कुसु
को अधिक कूटने की कुछ आवश्यकता नहीं। श्राल औ
पतंग ही अधिकतर कूटे जाते हैं।

चार पायों की एक टिखटी लो। उसमें एक कपा
चारों कोनों से ऐसा बाँधो, जो नीचे को हाथ भर, या
अधिक लटका रहे कि झोली-सी बन जाय। इस
नीचे एक नाँद या कोई दूसरा बरतन रख दो जिसमें रे
टपकाना चाहो। इस झोली में उस वस्तु को, जिसक
रेनी काटना चाहो, भर दो। ऊपर से पानी डालने जाओ
फिर थोड़ी पिसी सज्जी (सेर-भर रंग में आधी छटाँक
डाल दो। पानी रंगदार हो-होकर टपकता रहेगा। ज

पानी बेरंग का आने लगे, तब जान लो कि रेनी कट चुकी। अब टपकाने की आवश्यकता नहीं।

लील का खमीर इस प्रकार उठाते हैं—

सेर-भर पवाँर के बीज भाड़ में भुनवाकर दाल-सी दल डाले, इसी के बराबर इसमें लील डाले, जो गट्टी बनी हुई बिकती है। इन दोनों को किसी मिट्टी के बरतन में भर दे, और उसमें इतना पानी डाल दे कि लील से एक अंगुल ऊपर तक हो जाय।

एक सप्ताह या दस दिन तक रक्खा रहने दे। पर दिन में चार-पाँच बार लकड़ी से खूब चला दिया करे। यही खमीर कहलाता है। इसकी पहचान यह है कि जब बीज और लील आपस में घुल-मिलकर एक हो जावें और अत्यन्त दुर्गंधि देने लगें, तब जान ले कि खमीर उठ आया। इसकी और भी क्रियाएँ हैं उनको छोड़े देती हूँ।

जो किसी कपड़े से रंग काटना हो, तो यों करे कि पानी किसी धातु के बरतन में औटावे, और कपड़े को (जिसका रंग काटना चाहे) इसमें डाल दे कि कपड़े से ऊपर पानी हो जाय। इसमें थोड़ी-सी फिटकरी और डाल दे और औटाता रहे। रंग कट-कटकर पानी में आ जायगा। कपड़ा रंग कटने से और रंग का हो जाता है; पर केवल कच्चा ही रंग कट सकता है। पक्के

ग नहीं कढ़ सकते। कपड़ा जब रँगे, तो उसमें पानी
ा हिसाब भली भाँति देख ले। प्रथम जितना रंग
पड़े में देना चाहे, उतना रंग पानी में मिला दे।
लका देना चाहे तो थोड़ा, गहरा रँगना हो तो पूरा।
र पानी भी इतना होना चाहिये कि कपड़ा भली भाँति
डूब जाय, वरन् कपड़े से चार अंगुल पानी ऊपर रहे।

कपड़े को भी पानी में इस प्रकार डाले कि सब कपड़े
पर एक-सा रंग आ जाय। धब्बे न पड़ने पावें या कहीं
थोड़ा और कहीं बहुत रंग न चढ़ जाय, और कहीं कोरा
न रह जाय। महीन कपड़े में थोड़ा रंग और पानी लगता
है। गाढ़े कपड़े में अधिक लगता है। जब कपड़ा रँग
चुके, तब सबसे पिछले डोब में या तो पिसी फिटकरी या
अमचूर का भीगा हुआ पानी या नींबू वा खट्टे का रस
पानी में मिलाकर एक डोब दे दे कि रंग और खिल उठे,
और पक्का भी हो जाय। यदि कलप देना चाहे, तो थोड़ा
सा कलप भी पिछले डोब के पानी में खूब घोलकर कपड़े
को उसमें डोब दे, और निचोड़ डाले। जो रंग कच्चे
हैं, उनमें रँगकर कपड़े को छाया में, और जो पक्के हैं,
उनको चाहे तो धूप में भी सुखा सकते हैं। पर कच्चे
को धूप में कभी नहीं सुखाते; क्योंकि कच्चा धूप में
फीका पड़ जाता है।

कलप के बनाने की विधि यह है कि चावल पीसकर या गेहूँ के आटे को सोलहगुने पानी में घोलकर गाढ़े कपड़े में छान ले। पीछे आग पर लेई-सी पका ले, पर बहुत गाढ़ी न होने दे, पतली ही रक्खे।

कपड़े को जब पानी में रँगने के लिये डोवे तो खोलकर डोवे; पर रँगने में डोबने से पहले उसको एक बेर निरे पानी में डोबकर निचोड़ डाले। फिर रंग में डोवे, इससे धब्बे नहीं पड़ते। किसी-किसी रंग में तो एक ही रंग से रँगना होता है; पर बहुत-से रंग ऐसे हैं, जो कई-कई रंग से मिलकर रँगे जाते हैं। इसलिये कपड़े को पारी-पारी से कई रंगों में डोब देना होता है। इसकी रीति यों है कि पहले एक रंग के पानी में डोब देकर निचोड़ डाले और सुखा ले, फिर दूसरे में डुबावे और निचोड़कर सुखा ले। इसी प्रकार अन्त तक करे। यह न करे कि एक रंग में रँग लिया, और गीला ही फिर दूसरे रंग के पानी में डोब दिया। गीला डोब देने से रंग अच्छा नहीं चढ़ता। तुमको रँगने के सम्बन्ध की आवश्यक बातें तो बता चुकी। अब रँगने की विधि बताती हूँ कि किस रंग को किस भाँति रँगते हैं।

(१) आबी—थोड़े-से कच्चे नील को पीसकर, बहुत से पानी में मिलाकर कपड़ा रँग ले, फिर निचोड़ डाले

और सुखा ले। यह बहुत ही हलका रंग है, जैसा निर्मल पानी का होता है।

(२) आसमानी—जितने रंग में आबी रँगा जाता है, उससे चौगुने में आसमानी रँगा जाता है। पर आसमानी भी हलका और गहरा, दो प्रकार का होता है। जो गहरा करना चाहे, तो इतना ही या इससे आधा लाल पानी में और घोलकर दूसरा डोब अथवा तीसरा डोब और दे दे। हलका रखना चाहे, तो लाल थोड़ा कर दे। यह नीले बादल के सदृश होता है।

(३) जमुरुँदी—अनार का छिलका और मजीठ बराबर लेकर रात को पानी में भिगो दे। सवेरे औटा-कर दोनों का रंग एक संग ही निकाल ले। कपड़े को फिटकरी के पानी में पहले तर कर ले। पीछे लील के पानी में डोब दे। इसके बाद मजीठ और अनार के पानी में डोब देकर सुखा ले।

(४) सब्जा—पहले कपड़े को पके लील के पानी में डोब दे। फिर हल्दी के जोश दिये हुए पानी में उसको थोड़ी देर तक पड़ा रहने दे। पीछे निरे पानी से धो डाले। सबसे पीछे फिटकरी के पानी में डोब दे।

(५) सरदई—हरी बानात का रंग काटकर सरदई अच्छा रँगा जाता है। जो बानात न मिले, तो मँगिया

या काही कन्द का रंग काटकर रँगे। यही रीति है।

(६) अब्बासी—पहले लील के हलके पानी में डोब दे। फिर कुसुम के पानी में डोब दे। पीछे नींबू की तुरशी पानी में डालकर डोब दे।

(७) सब्ज काही—पहले हल्दी के पानी में रँगे। फिर हल्दी के औटाये हुए पानी में डोबदे। इसके पीछे काकड़ासिंगी के जोश दिये हुए पानी में रँगे। इसके पीछे फिटकरी के पानी में रँगे।

(८) काही—रात को अनार के छिलके भिगो दे। पहले कपड़े को लील के पानी में डुबावे। फिर पानी से धो डाले। इसके पीछे अनार के पानी में डोब दे। पीछे फिटकरी के पानी में धो डाले। कलप लगाना चाहे, तो कलप दे दे।

दूसरा तरीका यह है कि पाव-भर झड़बेरी की जड़ को सवा सेर पानी में रात को भिगोकर सवेरे औटा ले, और छान ले। इसमें थोड़ा-सा कसीस (हीरा-कसीस नहीं) पीसकर मिला दे। फिर कपड़ों को रँग ले। जितना कसीस दिया जायगा, उतना ही गहरा रंग आवेगा।

(९) कासनी—दो तोले लील को तीन सेर पानी में डालकर कपड़े को पहले उसमें रँगकर सुखा ले। पीछे कुसुम के फूलों के रंग में रँग दे। (जो रेनी काश

बंद बनाया जाता है) और खूब रंग चूसने दे। पीछे खटाई के पानी में धो डाले। कलप देना हो, तो कलप भी इसी पानी में डाल दे।

(१०) कोकई—कपड़े को पहले हलके लील के पानी में रँग ले। पीछे कुसुम के फूलों के दूसरे पानी में रँगकर खटाई के पानी में रँग ले।

(११) नाफरमानी—पहले लील के पानी में हलका लीला करे, फिर कुसुम के दूसरे रंग में रँग ले। पीछे कुसुम की गाद में डोब दे। फिर इसी गाद के पानी में खटाई का पानी देकर रँग ले।

(१२) लीला—पक्के लील को पानी में घोलकर कपड़े को रँग ले। थोड़ा लील डालोगे, कम रंग आवेगा; बहुत लील दोगे, गहरा रंग आवेगा। इसके पीछे दूध या मेंहदी के पत्तों के रंग में रँग दे, तो लील की दुर्गन्धि जाती रहेगी।

लील के खमीर में रँगने से भी रंग अच्छा होता है।

(१३) पीला—हल्दी को पीस के उसमें थोड़ी-सी सज्जी मिला दे। पीछे कपड़े को उसमें रँग ले। फिर पानी डाल-डालकर कई बार मल-मलकर धो डाले।

जब हल्दी की गन्ध जाती रहे, तब फिटकरी के पानी में डोब देकर सुखा ले।

२—हरसिंगार के फूलों को (जो पंसारी के यहाँ विकते हैं) पानी में औटावे, और छानकर तनिक-सा चूना डाल दे। कपड़े को इसमें रँग ले। पीछे फिटकरी के पानी में डोब देकर सुखा ले।

(१४) केसरिया—मजीठ को पानी में औटाकर रंग निकाल ले। अनार के छिलके और हरसिंगार की डंडी को संग-संग औटाकर छान ले। कपड़े को पहले फिटकरी के पानी में डुबो ले। पीछे इन दोनों रंगों के पानी को एक संग मिलाकर कपड़े को रँग ले।

(१५) नारंजी—हरसिंगार के फूलों को पानी में औटा ले। इसमें कपड़े को रँगे। पीछे कुसुम के दूसरे पानी में रँगकर खटाई के पानी में रँग ले।

(१६) कपासी—दो भाँति का होता है (१) बहुत ही थोड़ा, अर्थात् इतना कि जिससे कपड़े पर रंग नाम-मात्र ही को आवे। थोड़े-से लील को पानी में घोलकर कपड़ा रँग ले; पर रात को टेसू के फूल भिगो रक्खे। उनका रंग इस समय निथारकर तनिक-सा चूना डालकर फिर निथार ले। अब इसमें लील के रँगे हुए कपड़े को रँगे। जब रंग चढ़ जाय, तब खटाई के

पानी में डोव दे। पड़ने ही बदलकर कपासी हो जायगा।

दूसरे के रँगने की भी यही रीति है। पर उसमें लील का रंग कपड़े पर नहीं चढ़ाते। सफेद कपड़े ही को टेसू के रंग में रँगते हैं।

(१७) कपूरी—हरसिंगार के फूलों के रंग में कपड़े को रँग के खटाई के पानी में धो डाले, तो कपूरी हो जायगा।

(१८) अंगूरी—टेसू के औंटाये हुए पानी में कपड़ा रँगे। फिर बहुत ही हलका लील का रंग दे। पीछे खटाई के पानी में डोब देकर सुखा ले।

(१९) शरबती—तीन भाग हरसिंगार के फूलों का रंग, एक भाग कुसुम का रंग (जो रेनी बनाने के पीछे निकाला जाता है) मिलाकर रँग ले।

(२०) बादामी—पाव भर तुन के चावलों को सेर भर पानी में औंटा ले। पहले गेरू में कपड़े को रँग ले। पीछे रुचि के अनुसार तुन के पानी में डालकर डोब दे।

(२१) गुलाबी—कुसुम की थोड़ी-सी गाद को पानी में मिलाकर कपड़े को रँग ले।

(२२) लाल—इसमें कुसुम की गाद गुलाबी से चौगुनी या दुगुनी देकर रँगना चाहिए। पीछे खटाई के पानी में डोब देकर सुखा ले।

(२३) गुलेनार—पहले कपड़े को कुसुम के फूलों

के दूसरे रंग में डोब ले। पीछे गाद के पानी के रंग में रँगे। फिर इसी गाद के पानी में थोड़ी सी हल्दी पीसकर मिला दे, और कपड़े को उसमें रँगे। पीछे खटाई के पानी में डोब दे।

(२४) पिस्तई—पहले कपड़े को पक्के नील के पानी में बहुत हलका रँगे। फिर हल्दी के पानी में एक डोब देकर पानी से धो डाले। अब इसको दही के टपकाये हुए पानी में थोड़ी देर भिगो दे, जिसमें हल्दी की गंध जाती रहे। इसके पीछे खटाई के पानी में धो डाले। कलप देना चाहे, तो इसी पानी में वह भी घोल दे।

दूसरा तरीका यह है कि पहले कपड़े को हल्दी में रँगे, फिर साबुन के पानी में पीछे नींबू की खटाई देके सुखा ले।

(२५) जंगारी—कपड़े में पहले हलका-सा चूने के पानी का डोब दे ले। पीछे जंगार के पानी में रँगे, जो जंगार न मिले तो तूतिया के पानी में रँगे।

(२६) तूसी—बबूल की छाल पाव-भर और कायफल छः तोले रात को पानी में भिगोकर सवेरे औंटा ले। कपड़े को पहले फिटकरी के पानी में डोब देकर सुखा ले, फिर छाल और कायफल के रंग में रँगे। फिर दो तोले कसीस इसी रंग में मिलाकर दो डोब देकर सुखा ले।

(२७) उन्नावी—पहले कपड़े को हड़ के पानी में रँगे। फिर दो तोले कट के पानी में रँगे। फिर छटाँक भर पतंग के औटाये हुए पानी में डोब दे। फिर दो तोले फिटकरी के पानी में डोब देकर सुखा ले।

(२८) फाखतई—दो मारी और बड़े-बड़े माजूफलों का चूर्ण करके पानी में भिगो दे। तीन घंटे पीछे पीस डाले। इसको पानी में घोलकर कपड़े को इसमें रँगे। पीछे कट को इसमें डालकर दूसरा डोब दे दे।

(२९) फीरोजई—पहले कपड़े में चूने का हलका अस्तर दे ले। फिर तूतिया के पानी में रँगकर सुखाती जाय। जब तूतिया के पानी में डोब दे, तभी निचोड़कर सुखा लिया करे। पाँच या छः दफे में फीरोजई हो जायगा।

(३०) काकरेजी—पतंग पाव-भर, महावर दो दाम, हिरमिजी और माजूफल एक-एक दाम। इन सबको डेढ़ सेर पानी में औटाकर छान ले। इसमें रँगने से काकरेजी हो जायगा।

(३१) करंजवी—पाव भर अनार के छिलके और इतने ही आँवले पानी में औटाकर और छानकर निकाल ले। इसमें कपड़े को पहले रँगे, फिर सुखाकर और दो माजूफलों को पीसकर उनके पानी में रँगे। पीछे काले कत्थे के पानी में रँगे। अब इसको डेढ़ तोले फिटकरी

के पानी में डोब देकर निचोड़ डाले और सुखा ले

(३२) किशमिशी—कपड़े को पहले हड़ के पानी में डोब दे। फिर कट के पानी में। इसके पीछे हल्दी के पानी में, फिर कुसुम के उस पानी में जो रेनी के पीछे निकलता है। अब अनार के छिलकों के पानी में डोब देकर फिटकरी के पानी में धो डाले, पर ध्यान रहे कि जब डोब दिया जाय, सुखाकर दिया जाय।

(३३) अद्भुत दुरंगा—सीप और मूँगे की भस्म और सफेद गोंद, इन सबको बहुत महीन पीसकर गुड़ और पानी के साथ खूब औटावे। जब औट जाय, तब उतारकर खरल करे। वायरलेट या महीन मलमल लेकर उसके एक तरफ इस रंग का लेप करे। जब सूख जाय, तब पहले पक्के रंग में इस कपड़े को डोब दे। जब सूख जाय, तब दूसरे कच्चे रंग में डोब दे। जैसे लील का रंग पक्का है। पहले उसमें, फिर कुसुम में डोवे, जो कच्चा है, तो एक ओर आबी और दूसरी ओर नाफरमानी हो जायगा। अथवा पहले लील में रँगकर और गुलनार हल्दी में डोब दिया जाय, तो एक ओर पीला और दूसरी ओर हरा रंग दिखाई देगा।

यह तो मैंने तुझे सूती कपड़े रँगने की रीति बताई। ऊनी और रेशमी कपड़े रँगना कठिन है, और उनमें

बिगड़ने का भी डर रहता है। इसलिए जो मनुष्य इस क्रिया में चतुर और दक्ष हो, उसी से रँगवावे।

कपड़ों के धब्बे छुड़ाना

लहू का धब्बा—नमक के पानी में धो डालने से जाता रहता है।

फलों के रस के दाग, मेहँदी के रंग का व लील का दाग — पानी में कबूतर की बीट औटाकर धोवें। लील का दाग ताजे दूध को गरम करके धो डाले।

स्याही का दाग—पुराने सिर्के को पानी में गरम करके धो डाले।

चिकनाई का दाग छुड़ाने की तरकीब—नमक और चूना पीसकर पहले मले। फिर इसी को पानी में घोलकर धो डाले। घी की चिकनाई पर तेल और तेल की चिकनाई पर घी लगाकर रख दे; पीछे पानी में इस कपड़े को डालकर औटा ले, तो छूट जायगा।

पशमीने की चिकनाई—जौ की भूसी को पानी में औटाकर धोवे। फिर गन्धक का धुआँ दे। साफ हो जायगा।

रेशमी कपड़े की चिकनाई—सूखा चूना और नमक पीसकर उस पर डाले। पीछे अलसी पीसकर उस पर डाले, और इतनी देर रहने दे कि वह सब चिकनाई को सोख ले।

सब भाँति के दाग—ऊँट की मेंगनी को पीसकर पा
में घोले, और उसमें कपड़े को भिगो दे। एक दिन-रा
पड़ा रहने दे। दूसरे दिन धो डाले। हींग और साबु
के पानी से धो डाले। सब दाग छूट जायँगे।

चित्रकारी

यह विद्या भी स्त्रियों के लिए बहुत ही उपयोग
और उपकारी है। पूर्व समय में इस विद्या में भ
स्त्रियों ने बड़ी निपुणता प्राप्त की थी। तूने ऊषा क
सखी चित्रलेखा का वृत्तान्त सुना ही है कि जब ऊ
ने स्वप्न में अनिरुद्ध को देखा, और सबेरे उसका ना
न बता सकी कि किसको उसने स्वप्न में देखा था, त
उसकी सखी चित्रलेखा ने सब मनुष्यों के चित्र लि
लिखकर ऊषा को दिखाये कि इनमें से किसको तू
स्वप्न में देखा है? जब अनिरुद्ध का चित्र सामने
खींचा तो ऊषा ने झट पहचान लिया कि यही पुरु
था। फिर उसका पता लग गया कि वह श्रीकृष्ण
का पौत्र है। आजकल के बड़े-बड़े चित्रकार देख-देख चि
खींचते हैं; पर ऊषा की सखी ने सहस्रों कोस पर बैठे
हुए बात-की-बात में चित्र खींचे थे। यह तो बहुत बड़ी
दूर असम्भव-सी बात है। पर अब भी ऐसे-ऐसे

चतुर चितेरे हैं कि देखने-देखते बात-की-बात में एक मनुष्य का क्या, जनसमूह का चित्र यों ही खींच देते हैं। कोई-कोई तो ऐसे होते हैं कि रंगभूमि में नाटक करते-करते बाजे की ताल पर खड़िया या लेखनी से दर्शकों में से चाहे जिसका चित्र खींच देते हैं, और उसी खड़िया से ताल भी देते जाते हैं तथा नाट्य भी करते जाते हैं। ताल को नहीं बिगड़ने देते, और तीन-चार बार ऐसा करके चित्र पूरा कर देते हैं।

बहुत-से चित्रकारों के चित्र तो लाखों ही रुपयों के बिकते हैं। ई० मिसानियर नाम के चित्रकार का एक चित्र ४,४८,०००) रुपये को और दूसरा १,५०,०००) रुपये को बिका था। रैफ़ेल-कृत "सिस्टिन म्याडोना" नामक चित्र १०,८०,०००) रुपये का बिका था। यह चित्र पृथ्वी-भर में सबसे बढ़कर है (देखो सरस्वती भाग ३, संख्या १०)। स्त्रियों से चित्रकारी का सम्बन्ध पुरुषों की अपेक्षा अधिकतर है, क्योंकि तू देखती है, स्त्रियाँ दिवाली, अहोई अष्टमी, सलूनो, देवोत्थान इत्यादि त्योहारों पर अपने-अपने घर में 'लिखना' काढ़ती हैं या विवाहोत्सव में घर का चित्र बना-बनाकर सजाती हैं। यह क्या है? उसी चित्रकारी का अंग तो है। परन्तु अब नाममात्र को रह गया है। मैंने देखा है, ग्राम तक की स्त्रियाँ इनको

काढ़ती हैं; पर बुराई यह हो गई है कि काढ़ना किसी को नहीं आता। चतुर स्त्रियाँ तो कुछ काढ़ भी लेती हैं पर वे भी इतना भोंड़ा कि चित्रकार घृणा से नाक-भौं सिकोड़कर उन्हें देखता भी नहीं। इसी कारण तुझको इस विषय में कुछ बताना चाहती हूँ।

विषय तो बहुत ही सूक्ष्म है, बिना अभ्यास के नहीं आ सकता; परन्तु इसके कुछ स्थूल विषय तुझको बताये देती हूँ जिससे तुझको चित्रकारी का ज्ञानमात्र हो जाय।

यह विद्या द्वितीय ईश्वरता के तुल्य है; क्योंकि इसमें कागज या भीत पर आकृति बनाकर या मिट्टी की मूर्ति बनाकर जीवित देह के चिह्न दर्शा दिये जाते हैं।

चित्रकारी कई प्रकार की है—(१) जो यन्त्र द्वारा खिंचती है, वह फ़ोटोग्राफ़ी कहलाती है, (२) चित्र का चित्र खिंचता है, (३) अपने सामने बिठाकर चित्रपट पर आकृति खींचते हैं, (४) पत्थर या मिट्टी की ऐसी मूर्ति बनाते हैं, जो ठीक अनुहार हो जाती है, (५) कल्पना से चित्र बना लिया जाता है, (६) बेल, बूटा, फूल, वृक्ष, पशु, पक्षी इत्यादि के कल्पित चित्र, परन्तु यथार्थ बनाये जाते हैं।

इनमें से पाँचवाँ और छठा प्रकार तनिक सुगम है।

और इन्हीं का स्त्रियों को अपने घर, कोठे इत्यादि को शोभित करने के लिए अधिकतर प्रयोजन पड़ता है। तुझको वही बताती हूँ; क्योंकि पहले चार प्रकार तो प्रायः जीविका के निमित्त हैं, और बहुत परिश्रम से आते हैं। यों तो परिश्रम इनमें भी करना पड़ता है। महीनों और वर्षों के अभ्यास से कुछ भान होता है। मैंने देखा है कि स्त्रियाँ जो पुरुष या स्त्री के चित्र भीत पर खींचती हैं, वे बहुत ही बेढंगे होते हैं। कोई तो मस्तक पेट से भी बड़ा, कोई नाक माथे से बड़ी, कोई कान आँखों से भी छोटे और पैर हाथों से छोटे बना देती हैं, अर्थात् अंगों का जो ठीक-ठीक परस्पर संबंध है; उसका कुछ ध्यान नहीं रखतीं। इसी से अत्यन्त घृणोत्पादक मूर्ति बना देती हैं।

चित्र खींचने के छः अंग हैं—(१) तरह-तरह के रंग बनाना, (२) देह के अंगों का प्रमाण जानना, (३) भाव और लावण्य प्रविष्ट करना, (४) तादृश अर्थात् निपट वैसी ही छवि बनाना, (५) पीछी अर्थात् खींचने की कूची या लेखनी बनाना, (६) चित्र का आकार। पहले इसके विषय में ही तुझको बताती हूँ। पर हाँ, इससे पूर्व जो और बताना चाहिये, वह भूल गई। वह यह है कि चित्रकार को अपनी कूची अर्थात् चित्र

खींचने की क़लम बहुत ही अच्छी रखनी चाहिये। यह बालों की बनी हुई होनी चाहिये। कूची ऊँट, गिलहरी इत्यादि के बालों की होनी चाहिये, जो बनी-बनाई बिकती हैं।

भीत पर चित्र काढ़ने के योग्य कूची तो घोड़े के बालों से भी बन सकती हैं। सुअर के बालों की भी बनाते हैं। परन्तु उसका छूना निषिद्ध माना गया है। इसलिये घोड़ों के बालों की ही अच्छी।

भीत, जिस पर चित्र काढ़ा जाय, बहुत चिकनी और श्वेत होनी चाहिये। रंग अच्छे बने हुए होने चाहिये। रंग बनाने की रीति तनिक पीछे बताऊँगी। पहले चित्र खींचने के नियम बताती हूँ। मनुष्य-देह के चित्र खींचने के नियम इसलिये नियत किये गये हैं कि चित्र सुडौल और सुघड़ खिंचे और देख पड़े। बेढब न खिंच जाय। मनुष्य का चित्र खींचने में बड़े-बड़े चित्रकारों में बहुत मतभेद है। किसी विशेष मनुष्य का चित्र खींचकर आकृति मिलाना तो बहुत ही कठिन बात है। मैं तुझको केवल मनुष्यमात्र की देह का सुडौल चित्र खींचना बताती हूँ, ध्यान से सुन।

जितना बड़ा चित्र खींचना चाहे, उसके आठ भाग बराबर के करे, इस प्रकार—

१
१
१ सिर
२
३
४
५
६
७
८

०
१
२
३
४
५
६
७
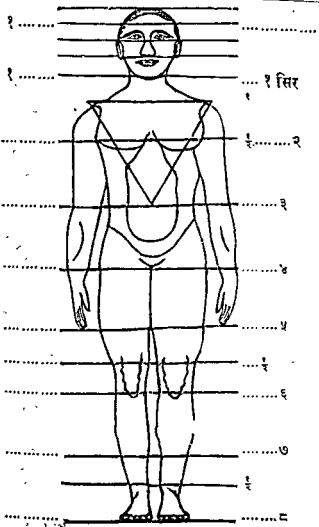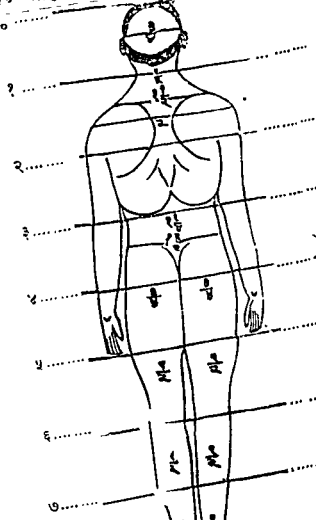
चित्र नं० १ को देखो

सिर की लम्बाई, अर्थात् तालू से ठोढ़ी की जड़ तक १ भाग

ठोढ़ी की जड़ से छाती के सिरे, अर्थात् हँसली की हड्डी तक ... ½ भाग
छाती की हड्डी के ऊपर के सिरे से नीचे के सिरे तक ... ½ भाग } १ भाग

छाती की हड्डी के नीचे से नाभि के ऊपर तक.... १ भाग

नाभि से उस स्थान तक, जहाँ टाँगें धड़ में जुड़ी हैं १ भाग

टाँगों के जोड़ से जाँघों के बीच तक... १ भाग

जाघों के बीच से घुटनों के नीचे तक.... १ भाग

घुटनों के नीचे से टखनों के ऊपर तक.. १½ भाग

टखनों के ऊपर से एँड़ी के नीचे तक .. ½ भाग

कुल जोड़ = भाग

इस प्रकार से, जैसा कि मैं तुझको, देख, चित्र काढ़कर बताती हूँ, जिससे तू भली भाँति समझ ले कि कहाँ से कहाँ तक। ले देख, तेरे आगे यह चित्र खिंच रहा है—(१) यह तो सामने का चित्र है, (२) पीठ-पीछे का इस प्रकार होगा। उसकी चौड़ाई का लेखा यों रखना चाहिए—

चित्र नं० २ को देखो

कानों से ऊपर सिर की अधिक से अधिक चौड़ाई ½ भाग

गरदन की चौड़ाई .... ½ भाग

धड़ की चौड़ाई, जहाँ बाँहें जुड़ी हुई हैं.... १$\frac{१}{२}$ भाग
धड़ की चौड़ाई और कन्धों को मिलाकर.... २ भाग
कमर की चौड़ाई .... १$\frac{१}{४}$ भाग
कूलों से ऊपर की चौड़ाई.... .... १$\frac{१}{२}$ भाग
जाँघों के बीच की चौड़ाई.... .... $\frac{३}{४}$ भाग
घुटनों के ऊपर की चौड़ाई.... .... $\frac{१}{२}$ भाग
पिंडली की चौड़ाई .... $\frac{१}{२}$ भाग
टखने की चौड़ाई .... $\frac{१}{६}$ भाग

लम्बाई-चौड़ाई का लेखा तुझको बता दिया, अब तुझको मुख का लेखा-जोखा बताती हूँ।

चित्र नं० ३ को देखो

जितना लम्बा मस्तक बनाना हो, उतनी लम्बी एक सीधी लकीर खींचो। जैसे, देख, मैं तुझको खींचकर बताती भी जाती हूँ—अ-आ अब इसके चार बराबर के भाग इस प्रकार करो—अ क, क ख, ख ग और ग आ। क तक बाल होंगे, ख से ग तक लम्बी नाक होगी; और ग से आ तक के बीच में मुख और ठोड़ी होगी, जिसका और हिसाब आगे बताऊँगी।

अब दूसरे भाग अर्थात् क-ख के दो बराबर के टुकड़े करो, जो च पर इस भाँति होंगे। अब च को बीच मान-कर और परकार का एक सिरा टेककर, दूसरे सिरे को

क
२
३
च
४
५
ख
ध
ग
त
छ
ब
प
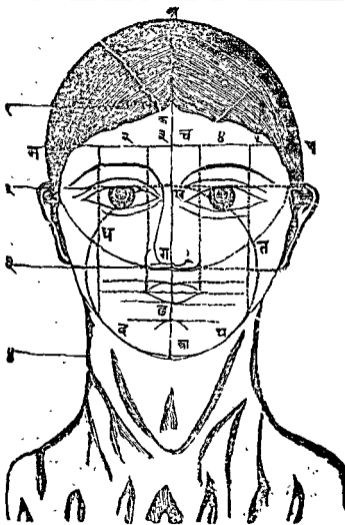
ग तक बढ़ाकर इस प्रकार एक गोला खींच दो। जैसा
अ प ग म है।

फिर ग को बीच मानकर और आ तक परकार बढ़ा-
कर दूसरा गोला त थ द ध खींचो। यह गोला लकी
में जाकर ख पर मिलेगा। अब दोनों गोलों के बीच
जो खाँचे रह गये, उनको ऐसी रीति से गोल लकीरों से
मिला दो कि सब मिलकर एक बहुत बड़ा सुडौल
अएंडाकार बन जाय। जैसा कि इस चित्र में मोटी लकीर
से दिखलाया गया है।

च बिन्दु में होकर एक आड़ी-सीधी लकीर ऐसी
खींचो, जो चार कोने प-म और अ-ग लकीरों के
आपस में करने से बनें। वे कोने बराबर के हों। प-
लकीर के पाँच बराबर के भाग करो। आँखें दूसरे टुकड़े
और चौथे टुकड़े के नीचे, उस लकीर के नीचे जो ख ग
ोकर निकला है, बनाई जायँगी।

अब अ-आ लकीर के चौथे टुकड़े ग-आ के दो बराबर
भाग करो। यहाँ पर अ-आ लकीर ढ में कटेगी, वह
चे के होठ की जड़ होगी।

न दो टुकड़ों में से ऊपर के टुकड़े के अर्थात् ग-ढ के
बराबर के टुकड़े करो। पहले टुकड़े में नाक की
े ऊपर के होठ तक जो जगह होती है, वह होगी।

दूसरे में ऊपर का होठ, जो थोड़ा पतला बनना चाहिए, और तीसरे में नीचे का होठ होगा।

कान और नाक बराबर लंबे होते हैं।

कानों के ऊपर का चेहरा अपने और सब भागों से चौड़ा होता है, और जैसा कि मैं ऊपर बता चुकी हूँ, इस चौड़ाई के पाँचवें भाग के बराबर आँखें होती हैं।

दोनों आँखों के बीच में एक आँख की लंबाई की बराबर दूरी होती है। यदि अ-आ लकीर के बराबर-बराबर ऐसे फासले से आँखों के कोए छूता हुई दो लकीरें खींची जायँ, तो नाक की चौड़ाई, जो एक नथने से दूसरे नथने तक होती है, निकल आवेगी। मुख नाक की चौड़ाई से तनिक ही अधिक चौड़ा होता है। इसमें तुझे बहुत-सा बखेड़ा मालूम पड़ेगा; परन्तु झगड़ा कुछ नहीं है। यह इसलिए तुझको बता दिया है कि कान, नाक, आँख, मुख इत्यादि का आपस में क्या-क्या सम्बन्ध रखना चाहिए।

जब अभ्यास कर लेगी, तब इतने आडम्बर की कुछ आवश्यकता नहीं। अभ्यास करते-करते संबंध आप ज्ञात हो जायगा कि कौन कितना बड़ा या छोटा रहना चाहिए।

अब गरदन से आगे का लेखा बताती हूँ। गरदन आधे (½) सिर के बराबर चौड़ी होनी चाहिए। कन्धे से

कन्धे तक दो सिर के बराबर चौड़ाई होती है, और इसी कारण यदि नाभि से कन्धों को दो लकीरें खींची जायँ, और एक तीसरी लकीर से मिला दी जायँ, तो एक ऐसा तिकोनिया बन जायगा, जिसकी तीनों भुजा और कोने बराबर के होंगे। जैसा चित्र नं० १ में खींचकर बताती हूँ।

बग़लों के बीच में डेढ़ भाग सिर के बराबर चौड़ाई होती है। कमर सवा सिर के बराबर चौड़ी होती है। जाँघ ऊपर पौन सिर के बराबर होती है।

घुटनों के ऊपर चौड़ाई आधे सिर के बराबर और घुटनों के नीचे आधे सिर से थोड़ी कम होती है। पिंडली की चौड़ाई सवा दो नाक के बराबर होती है।

टखने के ऊपर पैर एक नाक के बराबर चौड़ा होता है। जैसा चित्र नं० २ के नापने से तुझको ज्ञात हो सकता है।

नेत्र इस प्रकार से रखना चाहिए कि वे आँख की पूरी लंबाई के अर्थात् एक सिरे से दूसरे सिरे तक हों। जैसे अ-क चित्र नं० ४ के तीन भाग बराबर के करने चाहिए। जैसे ख ग घ। बीच के भाग के बराबर पुतली की चौड़ाई होती है, जैसी यह खींचकर दिखाती हूँ। इसी प्रकार जो एकाक्षी चित्र में खींची जाय अर्थात् एक ओर

चित्र आँख सामने से
चित्र नं० ४

चित्र आँख बगलाऊ से
चित्र नं० ५
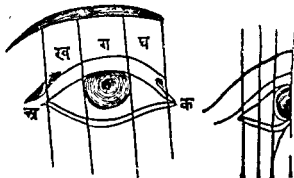
से आँख खींची जाय, उसमें भी पुतली तिहाई के बराबर रहती है। आँख का चित्र बहुत विचित्र और कठिन है। सहस्रों प्रकार से खिंचता है, और चित्र का मुख्य अंग है।

अब तुमको मुख का लेखा बताती हूँ। पहले बता चुकी हूँ कि ऊपर का होंठ नीचे के होंठ से कुछ कम चौड़ा बनाना चाहिए। प्रत्येक मनुष्य का नीचे का होंठ ऊपर के होंठ से अधिक चौड़ा होता है।

सामने के मुख की लंबाई का लेखा यों है कि मुख के चार बराबर के भाग होते हैं। बीच की लकीर होठों के बीच में होगी। बीच के दो भाग वे होंगे, जहाँ पर

चित्र मुख नं० ६

ऊपर और नीचे के दोनों होठ खूब भरे हुए और मोटे होते हैं, और इधर-उधर वे भाग वे होंगे, जहाँ पर दोनों होट पतले होते हैं। जैसे देख, इस चित्र में (चित्र नं० ६) हाथों की लंबाई समस्त देह की लंबाई का जहाँ पाँचवाँ भाग हो, वहाँ तक होनी चाहिए। जैसे चित्र नं० १ में मैंने खींची है।

अभी तुझको इतना ही बताती हूँ कि तू इसका अभ्यास कर ले। अब की जब फिर आऊँगी, तब इस विषय में विशेष बतलाऊँगी।

फुटकर

ये तो दो बड़े विषय तुझको बताये। अब कुछ फुटकर बातें बताती हूँ।

(१) ताँबे या पीतल के बरतन साफ करना—थोड़ा-सा शोरे का तेजाब किसी वस्तु से बरतन पर मलकर पानी से धो डाले; पर तेजाब में हाथ न लगने पावे, नहीं तो घाव हो जायगा।

(२) ताँबे के बरतन पर क़लई करना—जिस बरतन

पर कलई करनी हो, उसे पहले ईंटोरे से खूब माँजे। खटाई का पानी डालती जाय। जब मैल बिलकुल छूट जाय और बरतन चमकने लगे, तब आग पर रखकर इतना अधिक गरम करे कि राँगा डालने से गल जाय। अब राँगा डालकर और उसमें पिसा हुआ नौसादर डालकर, जहाँ तक कलई करना चाहे, कपड़े से खूब रगड़ दे, पीछे उतार ले।

(३) काँच पर कलई करना—जितना बड़ा काँच हो, उतना ही बड़ा सीसे की पन्नी का ताव ले। इसको थाली पर फैलाकर और उस पर पारा डालकर कपड़े की पोटली से रगड़ दे कि सबमें एक-सा हो जाय। इसके ऊपर काँच को एक ओर से सरका दे, और पीछे पन्नी-सहित उठा ले। यह पन्नी काँच पर जम जायगी, और मुख दीखने लगेगा।

(४) बरतनों पर चाँदी का पानी चढ़ाना—चाँदी के पाँच वर्क, भुनी फिटकरी पन्द्रह रत्ती, नौसादर पन्द्रह रत्ती, सेंधा नमक पन्द्रह रत्ती, तीनों को खरल करके किसी शीशी में भर ले। जिस बरतन पर चाँदी चढ़ाना चाहे, उसे पहले खूब माँजकर चमका ले। पीछे इस शीशी के चूर्ण को खूब मल दे। चाँदी का रंग चढ़ जायगा। परन्तु यह कच्चा है। थोड़े दिनों ही रहेगा।

दूसरा तरीका यह है कि शोरे का साफ तेजाब ले। उसमें चाँदी के वर्क डाले, और गला ले। अच्छा हो, जो तनिक आग पर इस तेजाब के बरतन को रखकर गरम कर ले; क्योंकि इससे शीघ्र घुल जाता है। फिर दो सेर पानी में एक छटाँक नमक घोले, और उस तेजाब में, जिसमें चाँदी पड़ी है, डाले। इस क्रिया से चाँदी उज्ज्वल दही सी पेंदे में बैठ जायगी। अब धीरे-धीरे ऊपर के पानी को निथार ले, और दो-तीन बार पानी डाल-डालकर इस चाँदी के चूरे को धो डाले। फिर इस चूरे में सायानाइड ऑफ् पुटाश[१] डालकर हिला दे। जब तक इस चाँदी का फिर पानी-सा न बन जाय, थोड़ा-थोड़ा इस औषध को डाल-डालकर हिलाती रहे। जब पानी बन जाय, तब इसमें कुछ साफ पानी मिला दे। यहाँ तक कि एक तोला चाँदी में एक बोतल अर्क बना ले। फिर थोड़ी साफ खरिया मिट्टी, कलई चूना और नौसादर लेकर, पानी में घोलकर, एक बोतल में भर ले। अब इस खरिया मिट्टी के पानी को उस चाँदी के

१—यह औषध डाक्टरों की दुकान पर मिलेगी। परन्तु इसको बड़ी सावधानी से बर्तना चाहिये। इसलिये कि यह विष है। इस के न चखा जाय अथवा किसी और स्थान पर गिरे कि न कट जाय।—सं०

पानी में डालकर हिलावे और सूँघे। यदि तीक्ष्ण गंध आवे, तो जाने अच्छा बन गया। नहीं तो उसमें चूना और नौसादर का पानी थोड़ा-सा और डाले। इस प्रकार चाँदी का अर्क जब बन जाय, तब उसे एक शीशी में रख छोड़े। जब आवश्यकता हो, तब ताँबे या पीतल के बरतन में उसे मले। एक बार मलकर सुखा ले। फिर दूसरी बार मले, तो चाँदी का पानी चढ़ जायगा। जब यह पानी बरतन से कुछ घिस जाय तब फिर इसी भाँति चढ़ा ले। ताँबे और पीतल के गहनों पर चढ़ाने में यह बहुत काम आता है।

(५) नथ या बाली के मोती उजालना—मोतियों को चावलों के पानी में दो-चार घंटे पड़ा रहने दे। पीछे उसे पानी से धो डाले, साफ उज्ज्वल हो जायँगे।

(६) फूलों का गुच्छा—जिस बरतन में गुलदस्ते को रखना हो, उसमें लकड़ी के कोयलों को कूटकर भर दे। ऊपर से पानी भर दे। फूलों की डंडी को कोयलों में गड़ी रहने दें। यदि फूल एक दिन ठहरते, तो इस प्रकार से एक सप्ताह तक टटके बने रहेंगे।

(७) काँच और चीनी के टूटे बरतन जोड़ना—काला गन्दाबिरोजा दो भाग, इण्डिया रबर एक भाग, दोनों को धीमी आँच पर पिघलाकर खूब मिला लो

स्त्रीसुबोधिनी

तृतीय भाग

गर्भाधान

पाँचवें दिन दुर्गा काम-काज करके जल्दी फुरसत पा गई। अपनी बहन मोहिनी को भावज के शयन-भवन में ले जाकर और इस दिन अपनी भावजों को भी अपने पास बिठाकर इस प्रकार से समझाने लगी कि बहन ! अब तुझको कुछ बातें गर्भ के विषय में बताती हूँ। इन्हें स्त्रियों को जरूर जानना चाहिये; क्योंकि इनके जानने से सन्तान में बड़े-बड़े गुण और न जानने से बड़े-बड़े अवगुण उत्पन्न हो जाते हैं। पूर्वकाल की स्त्रियाँ इस विषय से ऐसी अभिज्ञ होती थीं कि वे जैसे गुण, स्वरूप और स्वभाव की सन्तान चाहती थीं, उत्पन्न कर लेती थीं। यह बात उनकी सामर्थ्य में थी। पर आजकल की स्त्रियाँ इस विषय से निपट अजान हैं। तभी तो अच्छे-अच्छे माता-पिताओं के कुसन्तान और स्वरूपवती माता के महाकुरूप बालक जन्म लेते हैं।

गरम-गरम टूटे बरतनों के किनारों पर लगाकर दोनों सिरे आपस में जोड़ दो, और ठंडा होने दो। जब ठंडा हो जाय, तब जो मसाला किनारों से इधर-उधर लग गया है, चाकू से छुटा दो।

दूसरा तरीका—चपड़ा लाख दो भाग और तारपीन का तेल एक भाग लेकर मंदी आँच से खूब पिघलाकर मिला लो, और काम में लाओ। सरदी और गरमी का इस मसाले पर कुछ असर नहीं होता।

काँच में पीतल इत्यादि की वस्तु जोड़ना (जैसे लैम्प में पीतल का फूल)—राल तीन भाग, कास्टिक सोडा एक भाग, पानी पाँच भाग। इन तीनों को आग पर रखकर खूब उबाल लो। साबुन-सा हो जायगा। इनमें इन सबका आधा भाग फुका हुआ मम्मा मिलाकर खूब रगड़ो। इसको लैम्प के मुँह पर लगाकर पीतल का फूल जमा दो, और धूप में सुखा लो।

दूसरा तरीका—बबूल के गोंद को पानी में उबालकर गाढ़ा कर लो। पीछे उसमें पारे की खाक मिलाकर मस्त कर लो, और काम में लाओ। यह सूखता तो दो-तीन दिन में है, पर मजबूत पत्थर के बराबर हो जाता है।

कल गाभि को देर में सोने से आज सभी में आँख आती है, सो अब अधिक नहीं बनाया जाता।

स्त्रीसुबोधिनी

तृतीय भाग

गर्भाधान

पाँचवें दिन दुर्गा काम-काज करके जल्दी फुरसत पा गई। अपनी बहन मोहिनी को भावज के शयन-भवन में ले जाकर और इस दिन अपनी भावजों को भी अपने पास बिठाकर इस प्रकार से समझाने लगी कि बहन! अब तुमको कुछ बातें गर्भ के विषय में बताती हूँ। इन्हें स्त्रियों को जरूर जानना चाहिये; क्योंकि इनके जानने से सन्तान में बड़े-बड़े गुण और न जानने से बड़े-बड़े अवगुण उत्पन्न हो जाते हैं। पूर्वकाल की स्त्रियाँ इस विषय से ऐसी अभिज्ञ होती थीं ... वे ... गुण, स्वरूप और स्वभाव की सन्तान ... कर लेती थीं। यह बात उनकी ... में थी ... आजकल की स्त्रियाँ इस विषय ... तभी तो अच्छे-अच्छे माता-[illegible] स्वरूपवती माता के ...

आचार-विचार (जो गर्भाधान से पूर्व तथा उस समय किये जायँ और गर्भावस्था तक बराबर रहें), ऋतुकाल (अर्थात् स्त्री के कौन से रजदर्शन में और कौन-सी तिथि या किस दिन गर्भाधान होना चाहिए)। पहले तुमको यह बताती हूँ कि गर्भाधान कब हो सकता है और किस प्रकार से होना चाहिए। बहन ! जो स्त्रियाँ बड़ी हो जाती हैं, वे महीने में एक बार स्त्रीधर्म से होती हैं, जिसे 'अलग बैठना' या 'छूनी होना' या कपड़ों से होना' या 'नहाने को होना' कहते हैं। इसका कोई नियत समय नहीं है कि कितनी अवस्था में हो। गरम देशों में जल्दी और ठंडे देशों में देर को होता है। इस देश में, जो गरम है, बारह-चौदह वर्ष की अवस्था में रजोदर्शन हो जाता है, किसी को इससे तनिक पहले, किसी को इससे तनिक पीछे भी होता है। सीधी लड़की को अधिक अवस्था में और भोगवृत्तिवाली को जल्दी होता है। तीस वर्ष से पैंतालीस वर्ष की आयु तक रहता है। कहीं-कहीं ठंडे देशों में तीस वर्ष की आयु में प्रथम ही होता है, और कहीं-कहीं इससे कुछ पूर्व भी हो जाता है। जैसे यहाँ इस देश में प्रतिमास होता है, वैसे ठंडे देशों में कभी-कभी दो-दो और तीन-तीन महीने में एक ही बार होता है। महीने-महीने नहीं होता। पर ठीक समय

इसका अट्ठाइस दिन का है। कोई स्त्री इक्कीस दिन ही में हो जाती है। तू देखा करती है कि मा और भावज चार दिन तक किसी काम में हाथ नहीं लगातीं, न किसी को छूती हैं। अलग बैठी रहती हैं। इसी से मेरे कहने का प्रयोजन है। इसी को 'स्त्रीधर्म', 'रजस्वला', ''ऋतु होना', 'ऋतुकाल' अथवा 'रजोदर्शन' कहते हैं।

जो स्त्री नीरोग होती है, वह ठीक एक महीने में रजस्वला होती है। उसकी पहचान यह है कि पाँच दिन तक मैला रुधिर बहे और कोई दर्द आदि न हो। रुधिर कम या बहुत न निकले। रुधिर निकलने से चित्त प्रसन्न होता जाय, और रुधिर इस प्रकार का हो कि वस्त्र को धोने पर रंग न लगा रहे। थक्का उसका न जमे, जैसे और रुधिर का जम जाता है; क्योंकि वास्तव में वह रुधिर नहीं है, यद्यपि उसके सदृश रूप-रंग में है। इसी से तो इसको रज कहते हैं।

जिस स्त्री का रज जमता है, उसके पीड़ा भी अवश्य होती है, और गर्भ भी उसके नहीं रह सकता। जो रंग फीका या पीला हो, और रज थोड़ा या बहुत हो, तो भी गर्भ न रहेगा।

जब रज में कुछ विकार होता है, तो महीने-महीने उसका रंग बदलता रहता है। कभी काला, कभी लाल और

कभी हरापन लिये हुए होता है । यह रजोदर्शन तीस वर्ष तक रहता है, अर्थात् जब से प्रथम हुआ था, उस समय से तीस वर्ष तक होता है । यों भी कहते हैं कि पहलौठी की सन्तान की आयु जब सत्ताईस वर्ष की हो जाती है, उसके पीछे नहीं होता । यह सामान्य समय है । विशेष का कुछ नियम नहीं । जब यह रज समाप्त होने को होता है, तब स्त्री को ये लक्षण प्रतीत होते हैं—(१) स्त्री मोटी होती चली जाती है, (२) मांस में हाड़ छिप जाते हैं, (३) ठोढ़ी मुड़ आती है, (४) मेद मक्खन-सा शरीर में आ जाता है, (५) रज अधिक होता है, मानो गर्भस्राव हो गया है । यह समय स्त्री को दुःखदायक है। इस रज की समाप्ति में बहुत-से रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

गर्भ रहने से भी रज बन्द हो जाता है । इसी कारण तुझको वृद्धावस्था में गर्भ और रजसमाप्ति की पहचान बताती हूँ । समाप्ति में तो ऊपर के बताये हुए लक्षण होते हैं; परन्तु गर्भ में इसके विरुद्ध अर्थात् देह लटती जाती है, केवल पेट ही मोटा हो जाता है और नाक व ठोढ़ी सिकुड़ती जाती है । मुख सूखता जाता है । पर ये बातें रजसमाप्ति में नहीं होतीं ।

जिस स्त्री के कोई रोग हो जाता है, अथवा यही रोग है, तो वह महीने से कमती-बढ़ती में भी स्त्रीधर्म से

ती है। ऐसी दशा में उपाय करना चाहिए। कमती
न में हो जाने में तो कोई डर नहीं, पर अधिक दिन
हो जाने में गरमी बढ़ जाती है। ऐसी दशा निर्बलता
या भीतर रुधिर के सूख जाने से या देह में रुधिर
म होने से होती है। इसलिए पुष्टि और बल देनेवाली
था रुधिर को तर करनेवाली औषध खावे।

कोई-कोई स्त्री जन्म-भर स्त्रीधर्म से नहीं होती। वे
ाँझ व पुष्पवन्ध्या कहलाती हैं। उनके गर्भ कभी नहीं
हेगा, और न ऐसी की कोई औषध हो सकती है।

जो स्त्री अपने महीने के महीने स्त्रीधर्म से होती रहे,
उसको चाहिए कि उन चारों दिनों में बड़ी सावधानी
से रहे; क्योंकि यह रजोदर्शन ही गर्भ रहने का कारण
होता है, जिसमें बालक उत्पन्न होता है। इन चार दिनों
में अञ्जन या काजल न लगावे। उबटना न मले।
नदी या तालाब में स्नान न करे। दिन में न सोवे।
आग न छुवे। रस्सी न बटे। दाँत न माँजे। मांस न
खाय। आकाश के नक्षत्रों को न देखे। हँसे नहीं।
घर का काम-धन्धा न करे। दौड़े नहीं। जो स्त्री इन
चार दिनों में सावधानी से नहीं रहती, उसके देह में
भी दुःख उत्पन्न हो जाते हैं, और उसके गर्भ में भी
भंग पड़ जाती है। बालक का स्वभाव, सूरत, देह,

अंग सब इन्हीं चार दिनों की सावधानी के अनुसार विशेषकर होते हैं। जैसे विचार, काम और सुख-दुःख से स्त्री रहेगी, वैसे ही गुण उसके बालक में आकर पड़ेंगे। इसका लेखा तसवीर खींचनेवाले काँच का-सा है। जैसी परछाहीं उस पर पड़ती है, वैसी ही तसवीर खिंच जाती है। इसी भाँति स्त्री का हाल है। जो स्त्री इन दिनों में रोती है, उसके बालक के नेत्र विकृत होते हैं। जो अपने नख काटती है, उसकी सन्तान कुनखी होती है। तेल या उबटना लगाने से कोढ़ी, अञ्जन या काजल लगाने से अन्धी, दिन में सोने से बहुत सोनेवाली, दौड़ने से चञ्चल और हँसने से काले दाँत, तालू, होंठवाली होती है। अति बोलने से बकी, तीव्र शब्द सुनने से बहरी और स्नान से सूखे शरीर की सन्तान होती है।

रजस्वला स्त्री को चाहिए कि ठंढ से बचे। स्नान न करे। ठंढी वायु में न रहे। जाड़ों में ठंढे पानी में हाथ-पाँव न दे; वरन् पूरे गरम कपड़े पहने। आजकल की नाईं न करे कि एक कंबल ही में जाड़े काट दे। इन्हीं कारणों से हमारे यहाँ शास्त्रों ने उसके लिए एकांतवास का विधान रक्खा है। वह इस प्रकार से करना उचित है कि रजोदर्शन से तीन दिन तक स्त्री एकान्त और अँधेरे में कुशशय्या पर बैठी या लेटी रहे। किसी को न देखे। न कुछ काम

करे। भोजन खीर का करे। मिट्टी या ताँबे के बरतन में अथवा अपने दोनों हाथों के चुल्लू में पानी पिये।

चौथे दिन जब स्नान करके शुद्ध हो, तब स्त्री निर्मल वस्त्र धारण करे। सुगन्धि लगावे। शृङ्गार करे। पति का दर्शन करे। अथवा अपना ही मुख अपनी आरसी या दर्पण में देखे, अथवा किसी गुरुजन या श्रेष्ठ, विद्वान्, तेजस्वी, प्रतापी पुरुष का मुखावलोकन करे या ध्यान धरे।

रजोदर्शन से चौथे, छठे, आठवें, दसवें, बारहवें और चौदहवें दिन के गर्भ में पुत्र और बाकी दिनों में पुत्री होती है। रजोदर्शन से सोलह दिन तक सन्तान हो सकती है, अर्थात् गर्भाधान हो सकता है। सत्रहवें दिन गर्भ नहीं रहता। रजोदर्शन से जितने दिन पीछे गर्भाधान किया जाता है, उतनी ही श्रेष्ठ सन्तान होती है। यहाँ तक कि सोलहवें दिन की सन्तान अत्यन्त गुणवाली होती है। कारण यह है कि दिन-दिन रज अधिक शुद्ध होता चला जाता है। कहते हैं, सोलहवें दिन की सन्तान राजा के-से गुणोंवाली हो सकती है।

पहले चार दिनों में सहवास करने से गर्भ नहीं रहता। उलटा और रोग हो जाता है। पति की आयु क्षीण होती है। स्त्री के रोग हो जाते हैं। गर्भ ठहरता नहीं, क्योंकि जैसे नदी के प्रवाह में बीज नहीं जमता, वैसे ही

रज-प्रवाह में गर्भ स्थिर नहीं रहता । यदि रह भी जाता है, तो प्रथम दिवस का तो होते ही मर जाता है तथा दूसरे और तीसरे दिवस का सौर में मर जाता है। इसी कारण इन चार दिनों में एकान्तवास की विधि रक्खी है कि स्त्री को अपने पति का मुख तक न देखना चाहिये।

स्त्री जब चौथे दिन स्नान करके शुद्ध हो, पति भी उसका उसके पास हो (अर्थात् परदेश आदि न गया हो) और स्त्री-पुरुष दोनों की सन्तानोत्पत्ति की इच्छा हो, तो वे उस दिन की रात्रि को इच्छापूर्वक शास्त्रोक्त विधि से गर्भाधान करें । इस प्रकार कि एक महीने पूर्व से दोनों ब्रह्मचर्य से रहें । और यह तो बहुत ही श्रेष्ठ है कि पहले की सन्तानोत्पत्ति से इस गर्भाधान तक दोनों ने कभी प्रसंग न किया हो, जैसा कि न करना चाहिये। जब ऐसी इच्छा हो तो पुरुष सन्ध्या को घी में भूने चावल और दूध और घी में बनी हुई खीर का और स्त्री उड़द का भोजन करे । यदि पति या पत्नी दोनों वस्तुओं का भोजन करें, तो और भी अच्छा । दोनों तैल * मर्दन करें । हल्दी, जौ का आटा, केसर इत्यादि

* तैल—कफ और वायु के कोप को रोकता है, धातुओं को पुष्ट करता है। शरीर के रंग को शुद्ध करता है और बल देता है। वात को दूर करता है। कफ और मेदा को शुद्ध करता है।

से उबटना करें। कान में तेल डालें। नमक का भो
न करें। केसरिया बागा पहनें। वह दिन, जिसको र
को ऐसा करने की इच्छा हो, अष्टमी, अमावास्या
पौर्णमासी न हो। एकादशी या त्रयोदशी भी न
रजोदर्शन से युग्म (जुफत) दिन हों। समय र
का तीसरा पहर हो; क्योंकि शास्त्र में इसी का वि
है। अन्य समय गर्भाधान के लिये यथासाध्य व
किये हैं। उस रात्रि को घटा या मेघ भी न हों। आ
निर्मल और स्वच्छ हो। स्त्री-पुरुष दोनों में परस्पर
हो और दोनों का चित्त भी प्रसन्न हो। कोई रोग
में न हो।

शयनभवन चित्र इत्यादि से सुसज्जित हो। उस
अच्छे-अच्छे पुरुषों का ध्यान रहा हो। विचार
अच्छे-अच्छे रहे हों। कुविचारों ने मन में प्रवेश न
हो। गर्भाधान के समय भी अच्छे-अच्छे पुरुष

हल्दी त्वचा के रोगों को दूर करती है। इसी कारण विव
यह रीति अब तक प्रचलित है। यह वैद्यक शास्त्रोक्त है; व
विवाह में जो रीति पलकाचार की है, वह गर्भाधान का आ
है; क्योंकि रात्रि में इसी कारण पाणिग्रहण होता है (
कभी नहीं) कि वर-कन्या यथाविधि ब्रह्मचर्य करके रा
गर्भाधान करते थे। जिनको अब हलद-तैल कहते हैं,
करते हैं और पलकाचार नाम रक्खा है।—ले०

ध्यान और विचार हो। जिस खास आदमी की आकृति और स्वभाव की सन्तान उत्पन्न करनी हो उसी का ध्यान विशेष रहना उचित है। जब तक प्रसव न हो ले तब तक बराबर उसी का ध्यान करती रहे, और जैसे गुणवाली सन्तान उत्पन्न होने की भावना हो, वैसे ही विचार बराबर करती रहे। कभी कोई दूसरा विचार और भाँति का या विपरीत (उलटा) न करे; क्योंकि सन्तान का देहमात्र माता ही के रुधिर अर्थात् रज से बनकर पोषण होता है, पिता का तो केवल वीर्यमात्र ही होता है।

तू देखती है कि जो वस्तु जिस क्षेत्र या पृथ्वी में उत्पन्न होती है, उसको अन्य पृथ्वी में बोने से वैसे गुण-स्वभाव या रूप-रंग नहीं रहते। दो-एक बार के उलट-पलट से सब बातें बिलकुल बदल जाती हैं। मैंने देखा है कि लखनऊ के खरबूजों का बीज मैंने अपने यहाँ बोया। पहली बार तो रूप-रंग कुछ वैसा ही रहा, कुछ ही अन्तर पड़ा; पर गुण अर्थात् उनका वह स्वाद सबमें न रहा। कोई कोई तो मीठे, बाकी सब फीके हो गये। दूसरी बार जो इनके बीज बोये, तो बहुत ही अन्तर हो गया और तीसरी बार में तो बिलकुल बदल गया। कुछ भी बात लखनऊ की-सी न रही। कारण यह था कि उस बीज में अब अपना गुण कुछ नहीं रहा था। ...ी का

गुण आ गया था। यही बात स्त्री-पुरुष की है।
का गर्भ पृथ्वी और पिता का वीर्य बीज है, स
फल है। जैसे अच्छे वृक्ष और पृथ्वी में अच्छा
और बुरे में बुरा लगता है, वैसे ही माता-पित
अनुसार सन्तान होती है।

माता के गर्भ में सन्तान की देह नौ महीने तक
ही के रज से बनती रहती है, और मांस, रुधिर,
(चर्बी), मज्जा (हड्डी की मींग), हृदय (दिल),
(जिगर), प्लीहा (तिल्ली), गुर्दा इत्यादि वि
माता के रज से बनते हैं। इसी कारण ये मातृज क
हैं। पर हाँ, सन्तान के ये अंग अर्थात् दाढ़ी, मूँछ,
हड्डी, लहू बहनेवाली नाड़ी, संधिबन्धननाड़ी, रसव
नाड़ी और शुक्र पिता के वीर्य के अनुसार बनते
इसी कारण ये पितृज* कहलाते हैं। हृदय इत्यादि
ही के रज से बनता है, इसलिये माता को अपन
इस प्रकार रखना चाहिये कि उसमें वैसे ही गुण आ
जैसे वह सन्तान में चाहती है। ये माता के आहा
विचार ही से उसमें उत्पन्न हो सकते हैं। इस प्रक
कि माता अपने चित्त में न्याय, क्षमा, सत्य, ज्ञान,
ईश्वरोपासना, देवता व सत्पुरुषों का ध्यान, पा

* सुश्रुत के शारीरिक अध्याय ३ को देखो।—ले०

धर्म, पतिप्रेम, अपने में रति, धर्मोपदेश-श्रवण, ईश्वर में विश्वास, श्रद्धा और ईश्वर का भय रक्खे, जो सतोगुण वृत्ति है तो सन्तान में शील, शौच, स्मृति, दान, शूरता, उत्साह, मृदुभाव, गम्भीरता आदि गुण हो सकते हैं।

यदि दुःख मानना, अधिक चलना, अधैर्य, अहंकार, मिथ्या, निर्दयता, दम्भ, मान इत्यादि वृत्तियाँ रक्खे, जो रजोगुण की हैं, तो सन्तान में द्वेष, मात्सर्य, क्रोध, तीक्ष्णता इत्यादि स्वभाव होंगे। यदि अधर्म, अन्याय, अज्ञान, अधिक सोना, बेकार रहना, नास्तिकता इत्यादि तमोगुण की वृत्तियाँ रहेंगी, तो सन्तान में भय, तन्द्रा इत्यादि अवगुण उत्पन्न होंगे।

इसी प्रकार माता के आलस्य से कुरूप, हर्ष से सुन्दर, सुशील, शोक से कायर, टेढ़ी-मेढ़ी और भोंड़ी वस्तु देखने से कुरूप और अंगहीन सन्तान होती है। गर्भावस्था में रति की इच्छा करने से सन्तान कामी होती है।

पित्त बढ़ानेवाली वस्तु का सेवन करने से गंजी और कफकारी वस्तु का सेवन करने से पीतवर्ण सन्तान होती है।

गर्भवती यदि रात्रि में देर तक सोती रहे, तो बालक की छाती तंग हो जाती है, और बालक गुन्धा होता है।

यह तो विचार का प्रभाव रहा। इसी प्रकार आहार का भी होता है। अधिक आहार करने से सन्तान

कुबड़ी, अन्धी, गूँगी और ठिंगनी होती है। अधिक
परी वस्तु खाने से सन्तान बलहीन और कड़वी वस्तु
से बहुत ही कृशतनु (दुबली-पतली) उत्पन्न होती

जो चाहे कि सन्तान सुरूप उत्पन्न हो, तो गर्भा
से लेकर प्रसव-काल तक सदा प्रसन्नचित्त और शृंगार
रहे, सुन्दर वस्त्र धारण करे। देवता, ब्राह्मण और
की भक्ति करे। स्वस्ति और मंगल को करे। मलिन न

विकृत और हीन अंग के दर्शन व स्पर्श से, भयोत्प
बात के सुनने अथवा भयानक दृश्य या चित्र देखने
दुर्गन्धि सूँघने से, दूर की वस्तु देखने से, रात-दिन
(लड़ाई) रखने से, चित्त में दुःख मानने से अ
रोने-पीटने इत्यादि से सन्तान कुरूप होती है।

कहावत चली आती है कि सन्तान ननसाल के
ददसाल के अनुहार होती है, अर्थात् या तो पित
कुटुम्ब में से किसी की आकृति संतान में होगी या
के पीहरवालों में से किसी की आकृति होगी।

इसका यही कारण है कि माता के चित्त में अ
प्रेम या अन्य किसी कारण से, जिसकी आकृति
ध्यान रहेगा, उसी की आकृति सन्तान में आ जाय

पर अब वह बात नहीं रही कि ननसाल या दद
में ही किसी की अनुहार सन्तान में हो; क्योंकि

कुबड़ी, अन्धी, गूँगी और ठिंगनी होती है। अधिक
परी वस्तु खाने से सन्तान बलहीन और कड़वी वस्तु
से बहुत ही कृशतनु (दुबली-पतली) उत्पन्न होती

जो चाहे कि सन्तान सुरूप उत्पन्न हो, तो गर्भा
से लेकर प्रसव-काल तक सदा प्रसन्नचित्त और शृंगार
रहे, सुन्दर वस्त्र धारण करे। देवता, ब्राह्मण और
की भक्ति करे। स्वस्ति और मंगल को करे। मलिन न

विकृत और हीन अंग के दर्शन व स्पर्श से, भयोत्प
बात के सुनने अथवा भयानक दृश्य या चित्र देखने
दुर्गन्धि सूँघने से, दूर की वस्तु देखने से, रात-दिन
(लड़ाई) रखने से, चित्त में दुःख मानने से
रोने-पीटने इत्यादि से सन्तान कुरूप होती है।

कहावत चली आती है कि सन्तान ननसाल के
ददसाल के अनुहार होती है, अर्थात् या तो पित
कुटुम्ब में से किसी की आकृति संतान में होगी या
के पीहरवालों में से किसी की आकृति होगी।

इसका यही कारण है कि माता के चित्त में
प्रेम या अन्य किसी कारण से, जिसकी आकृति
ध्यान रहेगा, उसी की आकृति सन्तान में आ जाय

पर अब वह बात नहीं रही कि ननसाल या दद
में ही किसी की अनुहार सन्तान में हो, क्योंकि

के चित्त अब वैसे स्थिर नहीं हैं कि ध्यान अडिग बना रहे। इस ध्यान का ऐसा प्रभाव है कि पति के शत्रुओं तक की आकृति सन्तान में आ गई है। इस कारण कि माता को इस शत्रु का ध्यान बँध गया था।

?—इस वृत्ति ने स्त्रियों के अन्दर और पशु की आकृति तक की सन्तान उत्पन्न कर दी है। इसके तुझे अब कु दृष्टान्त भी सुनाती हूँ, जिससे तेरे चित्त पर यह विषय भली भाँति जम जाय; क्योंकि यह बहुत ही सूक्ष्म विषय है।

एक उच्चकुल की स्त्री जब गर्भिणी थी, उसका रस-भरी खाने को बहुत ही मन चला। पर रसभरी मोल न मिली। परन्तु पास ही में एक पुरुष के यहाँ रसभरी की बाड़ी थी, जिसमें कुछ पकी रसभरी लगी भी थीं। इस स्त्री के मन में रसभरी खाने की ऐसी तीव्र इच्छा हुई कि न रहा गया। दिन-भर यह सोचती रही कि कब रात्रि हो और मैं चुराकर खा आऊँ। अन्त को रात्रि में चोरी से जाकर और बाड़ी में से तोड़कर कुछ रस-भरी वह खा आई। इसका ऐसा चसका पड़ गया कि दिन-भर यही विचार रहता कि कब रात्रि हो और कुमारी चुराकर रसभरी खाने का अवसर मिले। जब रात्रि होती, तब वह नित्य चोरी से जाकर बाड़ी में से तोड़-तोड़कर रसभरी खा आया करती थी।

एक दिन पकड़ी गई, तो उस समय इसको अत्यन्त ही भय और लज्जा हुई। यहाँ तक कि गर्भ में बालक भी फड़क उठा।

जब वह बालक जन्म लेकर बड़ा हुआ, तो उसको भी चोरी करने की टेव पड़ गई। कभी-कभी जब वह पकड़ जाता था, तब बहुधा बहुत पछताता; परन्तु चोरी करना नहीं छोड़ता था।

२—एक स्त्री के दो लड़कियाँ थीं। बड़ी लड़की महा कुटिल, उपाधिन और दुष्टा थी; पर छोटी भोली, सीधी और हँसमुख थी। बड़ी लड़की अपनी छोटी बहन से बिना कारण भी कुढ़ती, ईर्ष्या मानती, दिक करती, नोच लेती, काट खाती, आँख में धूल डाल देती, अड़ोसी-पड़ोसियों के बालकों को भी छेड़ती। पासवाले इसकी दुष्टता से तंग थे। जब इसका कारण खोजा गया, तब जान पड़ा कि जब बड़ी लड़की अपनी मा के पेट में थी, तब इसकी मा को अपनी सौत से, जो उसके पति ने दूसरी स्त्री कर रक्खी थी, बहुत ही ईर्ष्या और डाह थी। यहाँ तक कि एक दिन तो उसने अपनी सौत को जान से मार डालना चाहा; पर वह मिली नहीं। यही कारण था कि इस लड़की में ईर्ष्या इत्यादि ऐसे-ऐसे अवगुण थे। छोटी लड़की के गर्भ समय वह सौत नहीं

रही थी। कहीं को चली गई थी। इसकी मा का चित्त प्रसन्न और शान्त था। इसी कारण छोटी लड़की में ऐसे गुण थे।

३—एक स्त्री पढ़ी-लिखी थी। उसके जितनी सन्तानें हुईं, वे सब महाकुरूप। कोई उनमें से सुन्दर व सुरूप नहीं थी। एक बार ऐसा हुआ कि जब यह स्त्री गर्भ से थी, एक व्यापारी कुछ वस्तुएँ और पुस्तकें बेचता हुआ आया। इस स्त्री ने उसकी पुस्तकें देखकर एक कविता की पुस्तक, जिसमें उस पुस्तक की रचयिता स्त्री का चित्रपट भी था, जो अति सुन्दरता की खान थी, पसंद की और मोल लेना चाहा। व्यापारी ने दो रुपये मोल माँगा, और इस स्त्री के पास भी उस समय दो ही रुपये थे, जिसमें घर का भी खर्च चलाना था। इसने सोचा, जो पुस्तक मोल लेती हूँ, तो रोटियों का दुःख रहेगा। यह सोच उस समय मोल न ली, पर वह पुस्तक इसके चित्त पर ऐसी चढ़ गई थी कि रात्रि-भर इसको नींद न आई। ज्यों-त्यों करके रात्रि काटी। भोर होते ही व्यापारी को ढूँढ़कर उससे पुस्तक मोल ले ही ली, और बड़े चाव तथा प्रेम से उसको नित्य पढ़ती रही। वह घंटों तक उस चित्रपट को निहारा करती थी।

इसका गुण और प्रभाव गर्भ में यह हुआ कि इसकी

पुत्री, जो इस गर्भ में से उत्पन्न हुई, इस ग्रन्थकर्त्ता स्त्री के निपट अनुहार हुई। बड़ी सुन्दर, साक्षात् मोहिनी, लक्ष्मी और सरस्वती की मूर्ति थी।

इसका एक प्रसिद्ध दृष्टान्त तुझको प्रह्लाद का और सुनाती हूँ। उसे सुन, तू जान सकेगी कि दैत्यकुल में ऐसा ईश्वर-भक्त क्योंकर उत्पन्न हुआ। इसका भी कारण यही था कि प्रह्लाद की माता के विचार, जब प्रह्लाद गर्भ में थे, ईश्वरभक्ति में अधिकतर रहे थे। उन्हीं के प्रभाव से प्रह्लाद में ऐसे भक्ति के गुण आ गये थे। इसका वृत्तान्त पुराण में यों लिखा है कि प्रह्लाद के पिता हिरण्यकशिपु देवासुर-संग्राम में जब देवताओं से हार गये, तब चुपचाप वन में चले गये। रनिवास इत्यादि का कुछ प्रबन्ध न कर गये।

प्रह्लाद की माता, जिसका नाम कयाधू था, इस समय आधान से थी, और प्रह्लाद उसके गर्भ में थे। इन्द्र यह सोचकर कयाधू को रथ में चढ़ाकर अपने संग ले चले कि उसकी सन्तान के उत्पन्न होने पर मार डालेंगे, जिससे दैत्यकुल का अन्त और नाश हो जाय; क्योंकि अन्य कोई रानी गर्भवती न थी, यही केवल आधान से थी। कयाधू चिल्लाने-पुकारने लगी। इसको सुन नारदजी आये, और राजा इन्द्र से कयाधू के

जाने का वृत्तान्त पूछकर बोले कि इसकी सन्तान दानवकुलवृत्ति की न होगी, वरन् बड़ी भक्त और धार्मिक होगी, जिससे दैत्यकुल का उद्धार होगा। आप उसको छोड़ दीजिये। राजा इन्द्र ने नारदजी के वचन में विश्वास कर कयाधू को छोड़ दिया। नारदजी कयाधू को अपने आश्रम में ले गये, और नित्य साँझ-सकारे धर्मोपदेश करते रहे। कयाधू के मन में इन उपदेशों का ऐसा प्रभाव हुआ कि गर्भ में पहुँचकर प्रह्लाद को ऐसा भक्त बना दिया। पिता के इतने कष्ट देने पर भी उसने ईश्वर-भक्ति से मुख न मोड़ा।

सो बहन! गर्भ के दिनों में स्त्री को बहुत ही आचार-विचार से रहना चाहिये, जिससे सन्तान अच्छी और श्रेष्ठ उत्पन्न हो।

जिस स्त्री के गर्भ रह जाता है, उसके पहचानने के चिह्न ये हैं कि किसी को तो उसी रात्रि के दूसरे दिन सवेरे को उठते ही जी मचलाता है, मुख का रंग और ही हो जाता है, देह भारी-भारी-सी जान पड़ती है, और स्त्रीधर्म फिर नहीं होता। भोजन में अरुचि हो जाती है, पुरुष के संग से मन हट जाता है, शृंगार करने को मन नहीं चलता, उबकाई व उलटी आने लगती है, पेट बढ़ने लगता है और देह में आलस्य-सा हर समय भरा रहता

है। जी लेटने को किया करता है, नीचे के शरीर में सुस्ती अधिक रहती है और मस्तक में कभी-कभी दर्द हो जाता है। खट्टी व सोंधी वस्तु खाने को जी बहुत चलता है। दस्त सुख से नहीं होता। नींद अच्छी नहीं आती। स्तनों के मुख छोटे हो जाते हैं, और उन पर श्यामता छाती जाती है। इसके पहचानने का सहज उपाय यह है कि थोड़े शहद को पानी में मिलाकर पी ले। जो थोड़ी देर पीछे टूँड़ी में कुछ दर्द-सा जान पड़े, तो गर्भ अवश्य ही है; यदि दर्द नहीं हो, तो गर्भ कदापि नहीं है। यह पहचान बहुत ही ठीक है। और लक्षणों से तो भ्रम भी हो जाता है; परन्तु इससे निश्चय हो जाता है।

गर्भ में पुत्र-पुत्री के पहचानने के ये चिह्न हैं—स्त्री के पेट में बालक पहले ही महीने में गोल जान पड़ता है। दाहनी आँख कुछ बड़ी-सी दीखती है। दाहनी जाँघ मोटी और भारी जान पड़ती है। कुछ दर्द भी होता है। पहले दाहने स्तन में दूध आता है। मुख का रंग अच्छा रहता है। स्वप्न में पुंलिंग फूल-फल दीखने हैं। यदि गर्भवती के दूध में जुआँ या चींटी डालकर देखे कि वे जीती हैं और चलती हैं, तो अवश्य ही पुत्र है। यदि मर जायँ, तो पुत्री है।

पुत्री होने के ये भी लक्षण होते हैं। स्त्री का मस्तक

भारी रहता है। स्तनों का दूध पतला रहता है। मुख का रंग पीला होता है। चलने में दाहने पैर को उठाती और दाहने हाथ को टेककर उठती है।

पर जिस स्त्री का पेट दोनों कोखों को नीचा करके बीच में ऊँचा हो और कुछ लक्षण पुत्र के और कुछ पुत्री के जान पड़ें, तो सन्तान नपुंसक होगी।

जिसका पेट बीच में नीचा और दोनों ओर ऊँचा हो, अर्थात् मशक के समान हो, तो दो बालक उत्पन्न होंगे।

अब तुझको यह भी बताती हूँ कि गर्भ में किस प्रकार का बालक है, अर्थात् अच्छा या बुरा। उसकी पहचान यह है कि यदि गर्भवती स्त्री को राजा के दर्शन की इच्छा हो, तो महाभाग्यवान् और धनवान् सन्तान होगी। जो रेशम, टसर तथा भूषण धारण करने की इच्छा हो, तो भूषणस्नेही और सुन्दर संतान होगी। यदि मुनियों के आश्रम या देवमन्दिरों में दर्शननिमित्त जाने की इच्छा होती है, तो शान्तस्वभाव और धर्मात्मा सन्तान होगी।

साँप, सिंह आदि पशुओं के देखने की इच्छा से हिंसक सन्तान होगी। इनमें तो कुछ-कुछ सन्देह भी रह जाता है; परन्तु पाँचवें महीने में जो गर्भवती की इच्छा होती है, उससे अच्छी-बुरी सन्तान ठीक प्रकार से ज्ञात हो जाती है। कारण, सन्तान में इसी पाँचवें

महीने में जीव अर्थात् आत्मा पड़ता है। पहले से तो केवल देह ही बनती और बढ़ती रहती है, जीव नहीं होता। इसी कारण इस इच्छा को अवश्य पूरी करनी चाहिये। यही सोचकर शास्त्र में पुंसवन-संस्कार रक्खा गया है। उसी के अनुसार अब सातवें महीने में गर्भवती की साध, चौक या फरेई होती है।

शास्त्रोक्त रीति तो की जाती है; पर ठीक प्रकार और प्रयोजन से नहीं, जैसी कि विधि है। इसको दौहृद (दोहद) कहते हैं, अर्थात् दो हृदय की इच्छा। एक बालक की, दूसरी माता की। ऐसा लेख है कि गर्भवती की इस समय की इच्छा यदि पूरी न की जाय, तो सन्तान लँगड़ी, लूली, बहरी, गूँगी इत्यादि हो जाती है। इस कारण भोजन, वस्त्र व अन्य वस्तु, जो गर्भवती अपनी इच्छा से माँगे, वह उसको अवश्य ही देनी चाहिये। इसी कारण अब इस रीति का नाम साध हो गया है कि गर्भवती के मन की साध पूरी की जाय।

अब तुझको यह भी बताये देती हूँ कि बालक गर्भ में कैसे रहता और बनता है, और कब और कैसे उत्पन्न होता है, दो-दो और तीन-तीन बालक एक ही गर्भ में कैसे हो जाते हैं, इनको वहाँ क्योंकर भोजन पहुँचता है, और कैसे पलते-पोसते हैं।

बहन ! ईश्वर ने अपने अनेक चमत्कारी कार्यों में इस गर्भ को अति ही अद्‌भुत रक्खा है। ईश्वर के सिवा ऐसे असहाय प्राणी को गर्भ में कौन भोजन पहुँचाकर पाल सकता है ? यह उसी की शक्ति है कि उस परम पिता ने माता का रज या रुधिर, जो प्रतिमास गर्भ रहने से पूर्व में बहकर निकल जाता था, इस गर्भ के बालक का भोजन बना दिया है। उसी से इसकी देह पाँच महीने तक बनती और पाँचवें महीने के उपरान्त जब जीव पड़ जाता है, तब उसी से वह पलता रहता है।

गर्भाधान से पूरे दो सौ पचहत्तर दिन में गर्भ में से बालक उत्पन्न होता है। जब से रजोदर्शन होकर बन्द हो गया हो, उसके पन्द्रह दिन पूर्व से इसके दो सौ पचहत्तर दिन का लेखा लगाया जाता है, जो नौ महीने और कुछ दिन होते हैं। जब से बालक गर्भ में फड़के या चले, उससे उन्नीस-बाईस सप्ताह में बालक उत्पन्न होता है।

तैंतीस दिन से कुछ कम या अधिक में बालक का पिण्ड गर्भ में बनता है, जिसका वर्णन आगे बताऊँगी। जितने दिन में बनता है, उससे दूने (७०) दिनों में चलने-फिरने लगता है, और उसी से छगुने (२१०) दिनों में उत्पन्न होता है। गर्भाधान से चार महीने तक गर्भाशय का मुँह बिलकुल बन्द रहता है। ज्यों-ज्यों गर्भ बढ़ता

है, वैसे-ही-वैसे गर्भाशय भी बढ़ता जाता है, और अण्डाकार होकर नीचे को कुछ खसकता आता है।

छठे महीने गर्भाशय की गर्दन बहुत ही छोटी, वरन चपटी-सी हो फैल जाती है। आठवें महीने में निपट चपटी हो जाती है। नवें महीने में और कभी-कभी सातवें महीने में गर्भाशय का मुँह खुलने लगता है।

जब बालक उत्पन्न होने को होता है, तभी यह मुँह खुलता है। यह तो मैंने तुझको बता दिया कि गर्भ केवल तभी रहता है, जब रजोदर्शन होता है। परन्तु किसी-किसी स्त्री को बिना रजोदर्शन भी गर्भाधान हो जाता है, और किसी-किसी स्त्री को गर्भाधान होता ही नहीं। उसकी दो दशाएँ हैं। प्रथम तो यह कि वह स्त्री रजस्वला ही नहीं होती होगी, पुष्पवन्ध्या होगी; दूसरे शायद स्त्री-पुरुषों के अंगों का दोष हो। वह इस प्रकार है—

(१) स्त्री हिजड़ी हो, (२) स्त्री मोटी अधिक हो, (३) किसी रोगवश स्त्रीधर्म से न होती हो या कम होती हो, (४) धरनि में सूजन हो, (५) प्रदर-रोग हो, (६) धरनि में फोड़ा व रसोली हो, (७) पैर जारी रहना अर्थात् स्त्रीधर्म बराबर रहना, (८) धरनि का सुस्त या ढीला पड़ जाना।

जो इन दोषों में से किसी के कारण गर्भ न रहता हो तो यह औषध करे, अवश्य रहेगा—

(१) स्त्रीधर्म होने के दिन से सात दिन तक दो-दो माशे हाथीदाँत का चूर्ण बराबर की मिसरी मिलाकर खाय।

(२) काले धतूरे के फूल शहद और घी में मिलाकर खाय।

(३) एक समुद्रफल को दही में रखकर निगल जाय।

(४) हथेली भर अजवायन फाँक जाय।

(५) अरण्ड के बीज चाब ले।

(६) दुद्धी रुखड़ी को छाया में सुखाकर तीन दिन तक एक-एक तोले दूध के संग फाँक ले।

(७) खरैंटी, गंगेरन की छाल, महुआ, बड़ के अंकुर, नागकेसर, इन सबको बराबर एक-एक टंक ले, महीन पीस, ५ टंक शहद में मिला, गौ के दूध के संग, पन्द्रह दिन तक पिये, तो बाँझ के भी पुत्र हो।

(८) असगन्ध के काढ़े में गौ का दूध और घी मिलाकर स्त्रीधर्म के दिनों में भोर ही पाँच दिनों तक पिये।

(९) बिजौरे के बीज को गौ के दूध में पकावे। उसी के बराबर नागकेसर और गौ का घी डालकर, मिसरी मिलाकर, स्त्रीधर्म के दिनों में सात दिन खाय, तो अवश्य ही गर्भ रहे।

(१०) अरण्डी और बिजौरे के बीज एक-एक माशे गौ के घी में पीस दूध के संग स्त्रीधर्म के दिनों में तीन दिन तक पिये।

(११) पीपल, सोंठ, मिर्च, नागकेसर, इनको महीन पीस ऋतुकाल में स्त्री तीन दिन घी के संग पिये।

(१२) धेला-भर नागकेसर सात दिन तक गौ के दूध के संग पिये।

(१३) मिर्च, पीपल, सोंठ, नागकेसर, दोनों कटाई बराबर लेकर गौ के दूध में पिये, तो तत्काल गर्भ रहे। तुझको गर्भवती के बहुत-से नियम तो पहले बता चुकी हूँ। थोड़े-से और भी बताती हूँ। यदि स्त्री इनके अनुसार बर्ते, तो बहुत लाभ हो।

यदि स्त्री का मन किसी वस्तु पर चले, और वह न मिल सके, तो स्त्री को चाहिये कि एक गिलास ठंडा पानी पी ले। और जब उसकी इच्छा किसी ऐसी वस्तु पर ही हो, तो उसको चाहिये, अपने मन को मारे जिससे गर्भ में जो सन्तान है, उसमें भी मन मारने के गुण उत्पन्न हो जायँ। गर्भाधान से पहले महीने में वीर्य जमता है। दूसरे में भिल्ली चढ़ती है। तीसरे में शरीर बनता है। चौथे में सारा शरीर बन चुकता है। पाँचवें महीने में हृदय बनता और जीव पड़ता है। छठे और

सातवें महीने में शरीर पुष्ट होकर यथासमय बालक उत्पन्न हो जाता है। जो बालक सातवें महीने में पुष्ट नहीं हो लेता, वह आठवें या नवें महीने में उत्पन्न होता है। कभी-कभी निर्बल बालक भी सात महीने में उत्पन्न हो जाते हैं, परन्तु सब जीते नहीं रहते। जो बालक पुष्ट होकर उत्पन्न होते हैं, वे तो जीते रहते हैं; पर आठवें महीने का उत्पन्न हुआ बालक कदाचित् ही कोई जीता है, नहीं तो सभी नष्ट हो जाते हैं। कारण यह है कि सातवें महीने में जो बालक ने उत्पन्न होने की चेष्टा की थी, और वह निष्फल गई, अर्थात् गर्भ से बाहर न हो सका, और आठवें महीने में फिर उत्पन्न होने की चेष्टा को तो पहली चेष्टा उसको निर्बल कर डालती है। इसी से वह मर जाता है, परन्तु जो बालक नवें महीने में उत्पन्न होता है, उसके दो कारण होते हैं। एक तो शरीर पूर्ण पुष्ट हो जाता है, दूसरे सातवें महीने की चेष्टा के पीछे आठवें महीने में उसको विश्राम मिल जाता है।

बालक मा के पेट में उकरू बैठा हुआ, हाथों को पाँवों से मिलाये हुए, दोनों घुटनों को छाती और पेट से लगाये हुए, और घुटनों के बीच में माथा टेके (यदि पुत्री है तो मा की पीठ की ओर मुँह होता है, और जो पुत्र है, तो मा के पेट की ओर मुख होता है) अपने

हाथों की उँगलियों से आँख, कान, नाक, मुँह सब मूँदे हुए रहता है। इस मूँदने का कारण यह है—जिन सात झिल्लियों के भीतर गर्भाशय में बालक रहता है, उसमें एक प्रकार का ऐसा पानी होता है कि यदि आँख से छू जाय तो अन्धा, कान में चला जाय तो बहरा, मुख में चला जाय तो गूँगा, पेट में चला जाय तो मुर्दा और मस्तक में चला जाय तो बावला बालक हो जाता है। इसी लिये ईश्वर ने बालक को अपने सब छिद्र मूँद रखने की शक्ति दी है।

किसी-किसी स्त्री के दो या तीन अथवा चार-पाँच बालक तक उत्पन्न हो जाते हैं। मैंने अपनी एक सहेली को देखा, उसके तीन बार बराबर दो-दो बालक उत्पन्न हुए। ऐसे बालक जोड़वाँ, युग्म अथवा यमज कहलाते हैं। कारण यह है कि गर्भाधान के समय वायु के कोप से पुरुष का वीर्य जितने खण्ड होकर स्त्री के रज से मिलता है, उतनी ही सन्तानें गर्भ में स्थिति पाती हैं। यहाँ तक कि किसी-किसी के पाँच-पाँच या सात-सात बालक तक हो गये हैं।

गर्भरक्षा

यहाँ तक तो मैंने तुझको गर्भाधान के विषय में बताया। अब गर्भरक्षा के विषय में कुछ बताना चाहती हूँ। स्त्री के जब गर्भ रह जाय, तब उसको कौन कौन से नियम पालने योग्य हैं, और जो उन नियमों को न पाले, तो उसकी क्या हानि हो सकती है।

स्त्री जब गर्भवती हो, तो उसको चाहिये कि इस प्रकार से रहे, जिससे अच्छी तरह गर्भ की रक्षा हो सके। उसको चाहिये कि कभी दौड़कर न चले। न कहीं से धमककर उतरे या चढ़े। गाड़ी या रथ में बैठकर कहीं को न जाय, और दूर तो कभी न जाय। अपने किसी प्यारे के मरने का समाचार न सुने। कोई भयानक रूप या दृश्य न देखे। इससे पेट का बालक कभी कभी मर जाता है। न कोई बात डर की देखे या सुने, और इसी लिये सूने घर में न रहे। मरघट में न जाय। कुरूप स्त्री के पास न बैठे। अपने पेट में कोई चोट न लगने दे। इससे भी गर्भ नष्ट हो जाता है। जुल्लाब न ले। फस्त न खुलावे। जोंक न लगवावे, और न वमन (क़य) करे।

गर्भिणी को कूदना-फाँदना कभी न चाहिये। इनकी धमक लगने से बहुत ही हानि होती है। गर्भ गिर पड़ता

है, उलटा-सुलटा हो जाता या आड़ा पड़ जाता है। फिर स्त्री दर्द होने से कभी-कभी मर भी जाती है। किसी दूसरी स्त्री के बालक पैदा होता हुआ भी न देखे; भय, लज्जा, और क्रोध से भी बची रहे। इनसे भी गर्भ गिर पड़ता है। जल में न तैरे। पत्थर, ओखली या मूसल पर न बैठे। वृक्ष के नीचे बहुत न ठहरे। फिसलने के स्थान में न सोवे। न बहुत सोवे। न बहुत जगे। कुआँ या दूर की वस्तु को टकटकी लगाकर न देखे। कोई वस्तु ऐसी न खाय, जिससे स्त्रीधर्म का रुधिर बह निकले। इससे बालक गर्भ ही में सूख जाता है, क्योंकि गर्भ-पोषण को रुधिर तो रहता नहीं, जिससे बालक मा के पेट में पलता है।

कोई वस्तु गरम या तीखी, जैसे लाल मिर्च न खानी चाहिये। अजीर्ण में भोजन न करना चाहिये। जिमीकन्द का साग न खाय (इससे बालक फटी-सी देह का होता है)। मांस-मदिरा का सेवन न करे। उपवास न करे। सूखी और रूखी वस्तु, जैसे चने अथवा बासी या पीड़क, जैसे गुड़ और सड़ा-बिगड़ा अन्न न भोजन करे, बहुत भोजन भी न करे। रुचि के अनुसार भोजन करे, पर वह हानिकारक न हो। विषम आसन से या उकरूं न बैठे। पुरुष का संग न करे। मल-मूत्र के वेग को न

टोके। मैले कपड़े न पहने। बहुत चिल्लाकर न बोले। अपने अनादर की कोई बात न करे, और न सुने। बहुत बाहर न फिरे, और न सिर में अधिक तेल डाले। जो डाले तो अफीम डालकर मले तो डर नहीं। बहुत मैथुन न करे, बहुत ऊँचे स्थान पर न चढ़े, और न वहाँ से झाँके। कुएँ को भी न झाँके। कष्टदायक कार्य भी न करे। हाथ ऊपर को न ताने। व्रत या उपवास न करे। मादक द्रव्य (नशीली चीज) न खाय, न पिये। तोप या बिजली का शब्द न सुने। न दिन में बहुत सोवे, और न रात्रि में बहुत जगे। सोकर जब उठे, तो बहुत सावधानी से उठे; क्योंकि इस समय बालक का लौट जाना सम्भव है।

स्त्री को चाहिये कि गर्भ रहते ही उत्तम-उत्तम काम करे। शरीर को शुद्ध रक्खे। स्वच्छ वस्त्र पहने। आसन तथा बिछौना कोमल और ऋतु के अनुसार रक्खे। रहने का स्थान गरमी और वर्षा में हवादार, तथा जाड़ों में गरम और सुसज्जित रक्खे।

भोजन कोमल, मधुर, सलोना, मीठा और चिकना होना चाहिये। सेब और आँवलों का मुरब्बा, गुलकन्द हरी गिलोय, पान, इलायची कभी-कभी, किंतु बहुधा खा लिया करे।

चन्द्र या सूर्यग्रहण को भी न देखे, वरन् अपने ऊपर ग्रहण की परछाईं तक न पड़ने दे। ग्रहण पड़ने से एक पहर पहले किसी कोठरी में जा बैठे, और जब तक उग्रहण न हो जाय, वहीं बैठी रहे, और किसी काम में हाथ न लगावे। इस समय की असावधानी से बालक की देह अङ्गभङ्ग हो जाती है।

गरमी में कपड़े ठंडे और ढीले पहने, जाड़ों में रुईदार या ऊनी कपड़े पहने। कपड़ा तंग या कसकर न पहने। भींगा या गीला कपड़ा न पहने। न लाल रंग का कपड़ा पहने। किन्तु नीले रंग का और स्वच्छ वस्त्र पहने, मैले-कुचैले न पहने। चन्दन, इतर और सुगन्ध लगावे। प्रसन्न, भूषित और पवित्र रहे।

गर्भिणी को चाहिए कि अपनी सभी बातों में क्रम का नियम रक्खे, अर्थात् क्रम से खाय, क्रम से सोवे, क्रम से काम करे, क्रम से विश्राम करे, क्रम से मन बहलावे, अर्थात् सब प्रकार क्रम से रहे। क्रम और नियम के बिगड़ने ही से हानि हो जाती है। जापे (प्रसव) में पीड़ा भी अधिक होती है, गर्भस्राव और गर्भपात हो जाते हैं। पर क्रम और नियम के बनाये रखने से जापे में पीड़ा बिलकुल नहीं होती, सुख से प्रसव होकर स्त्री निबट जाती है।

गर्भवती को नित्य परमेश्वर, पति या किसी अन्य विद्वान् और रूपवान् पुरुष या स्त्री का ध्यान रखना चाहिए। बूढ़े-बड़े या अपने सास-ससुर की टहल और सेवा करनी चाहिए। मैं तुझको पहले बता चुकी हूँ कि जो स्त्री नियम से इन दिनों में नहीं रहती, उसके गर्भ में हानि पड़ जाती है। सो अब तुझको बतलाती हूँ कि इनके पालन न करने से किसी स्त्री का गर्भस्राव और किसी का गर्भपात हो जाता है।

गर्भस्राव तो वह दशा है कि गर्भाधान से चार महीने के भीतर गर्भाशय से रुधिर बह निकले, और गर्भ का बालक गिर पड़े। और जो चार महीने के पीछे, पर सात महीनें के पूर्व ऐसी दशा हो, तो वह गर्भपात होता है।

इन दोनों रोगों से स्त्री के फूलने-फलने की आशा आगे को टूट जाती है। गर्भस्राव चार महीने तक, जब चाहे, तब हो सकता है, अर्थात् जब कारण प्रस्तुत हो, तभी, परन्तु तीसरे महीने में अधिक भय रहता है। जिस स्त्री को यह रोग एक बार हो जाता है, उसको बार बार हो जाने में कुछ अचम्भा नहीं।

इनके लक्षण ये होते हैं—(१) शरीर में अचानक शक्ति का न रहना और मन में अकबकाई या व्याकुलता-सी जान पड़े (२) जी डूबा-सा जाता हो (३) रहे

होने से मस्तक घूमे और चक्कर आवे । (४) पेट के ऊपर और दोनों जाँघों में रह-रहकर वेदना हो, तो जानना चाहिये, गर्भस्राव होनेवाला है। (५) यदि कुछ तरबूज का-सा पानी भी झरने लगे, तो निश्चय जानना चाहिये कि गर्भस्राव होगा। (६) यदि कमर जाँघों वा गुदा में अधिक पीड़ा मालूम हो, शूल-सा चले और रुधिर या रुधिर के चकत्ते बाहर आने लगें, तो इस बात के जान लेने में पूरा विश्वास कर लेना चाहिये कि गर्भाशय से गर्भ अलग हो गया है।

जब यह निश्चय हो जाय कि गर्भस्राव के लक्षण उपस्थित हैं, और आरम्भ ही की दशा है, अर्थात् पीड़ा ही हो, और रुधिर न निकला हो, तब यह उपाय करे—

(१) मुलहठी, देवदारु, दुद्धी, इनके संग दूध को पिये।

(२) शतावर और दुद्धी का काढ़ा पिये।

जब इस भाँति रुक जाय, तब पीछे गौ के दूध में गूलर के पके फल खिलावे, अथवा कमर में कहरुवा, मोती अथवा याकूत बाँधे।

गर्भवती को ठंडे स्थान में लिटा दे । ठंडा पानी पिलावे। ठंढा भोजन करावे। ठंडे जल से प्रसव-स्थान को धोवे, अथवा धुनी हुई रुई की बत्तियाँ बना-बनाकर और पानी में भिगो-भिगोकर डोरे से (इस प्रयोजन से कि

उनके फिर निकलने में सुविधा रहे, और बत्ती भीतर चली न जाय अथवा रह न जाय) बाँधकर भीतर रक्खे।

जो रुधिर निकल ही आया हो तो यह औषध करे कि दूध के संग कसेरू, सिंघाड़ा, या कमल औटाकर और ठंडा करके पिलावे। अथवा दो-तीन चावल-भर अफीम का सत किसी सूखी वस्तु में खिला दे। जो रुधिर अधिक निकले, तो घए की मिट्टी, मजीठ, धाय के फूल, गेरू, राल, रसौत, सबको पीसकर मीठा मिलाकर चटावे।

यदि स्त्री के पहला ही आधान हो, तो गर्भस्राव और गर्भपात छः या सात घंटे ही में हो जाता है, बहुत देर नहीं लगती। यदि स्त्री दूसरे-तीसरे बार की गर्भिणी हो, तो दो-दो तीन-तीन दिन लग जाते हैं। इसलिए पहलौठी की बार अधिक सावधानी होनी चाहिए।

जिस स्त्री के ऐसा हो जाय, वह पाँच-छः महीने तक पुरुष के पास न जाय, क्योंकि इतने समय से पहले ही फिर गर्भाधान हो जाने से स्त्री को फिर गर्भस्राव या गर्भपात का भय रहेगा। इसलिए इस काल से पूर्व गर्भाधान न होना चाहिए। यदि इतने समय के पश्चात् गर्भाधान हो जाय, तो गर्भिणी को इस प्रकार बड़ी सावधानी से रहना चाहिए—

(१) गर्भवती के नियमों का पूरा-पूरा पालन करे;

जो मैं तुझको अभी बता चुकी हूँ। (२) आहार अल्प करे। (३) मलकोष्ठ को शुद्ध रक्खे। (४) पुरुष के समीप न सोवे, अकेली सोवे।

जिस स्त्री को गर्भस्राव या गर्भपात हो जाता हो, उसको ये औषधें देनी चाहिए—

(इनकी पोटली बाँधकर दूध में डाल दे। जब दूध पीने लायक औट जाय, तब पोटली निकालकर फेंक दे, और मीठा डाल दूध पी ले।)

प्रथम महीने में	मुलहठी, दुद्धी, देवदारु।	इन दोनों महीनों में मीठा, शीतल और पतला भोजन करे।
द्वितीय ,,	करंजुआ, काले तिल, मजीठ, शतावर।	

तृतीय ,, (१) दुद्धी, कमलगट्टा, सरिवन।
(२) साँठी चावलों की खीर खाय।

चौथे ,, (१) कटेली, कम्भारी, दूधवाले वृक्ष की कोपल दूध में औटावे।
(२) घी अथवा दही से चावल खाय।

पाँचवें ,, दूध-चावल खाय।

छठे ,, (१) पृश्नपर्णी (पिठवन), सहँजना, गोखुरू, गिलोय दूध में औटावे।
(२) घी-चावल खाय।

कर खाया करती हैं। यह बहुत ही बुरी बात है। इससे गर्भ को बहुत ही हानि पहुँचती है। इसी दशा से किसी-किसी स्त्री को तो यह मिट्टी खाने की टेव सदा के लिये पड़ जाती है, जिससे देह पीली पड़ जाती है। देह में रुधिर कम उत्पन्न होने लगता है। कारण इसका यह है कि इन दिनों स्त्री के मुख का स्वाद फीका और मीठा रहता है। सोंधी वस्तु के खाने को मन चला करता है। फूहर स्त्रियाँ मिट्टी या ठिकरों को एक दूसरे की देखादेखी खाने लगती हैं। यह न करना चाहिए। इसके बदले वंशलोचन या जहरमोहरा खताई खांय। इन दोनों से गर्भ भी पुष्ट होता है, और सोंधी वस्तु भी खाने में आ जाती है। गरी और मिसरी खाना इन दिनों में बहुत ही उपयोगी होता है, और बालक की आँखों को बड़ी करता है।

स्त्रियों को देखा है कि किसी के गर्भ प्रतिवर्ष होता है; पर यह स्त्री और संतान, दोनों को बहुत ही हानिकारक है। इसके कारण स्त्री अति दुर्बल हो जाती है, और सन्तानें भी रोगी होती हैं। वरन् सन्तानें बहुधा मर जाती हैं और स्त्री पर दो-तीन सन्तानों ही में बुढ़ापा छा जाता है। गाल बैठ जाते हैं। आँखें गड़ जाती हैं। नाक उठ आती है। स्तन ढुलक पड़ते हैं, और देह में सौ रोग उत्पन्न हो

जाते हैं। बीस वर्ष ही की आयु में दूनी आयु जँचने लगती है। इसका कारण यही है कि स्त्री की देह एक जापे से पनपने नहीं पाती कि दूसरा गर्भ रह जाता है। देह का सब अंश गर्भ में चला जाता है, और देह जर्जर हो जाती है। इसलिये स्त्री को चाहिये कि जब तक बालक दूध पीना न छोड़ दे, दूसरे गर्भ की आशा न करे।

कम-से-कम पाँच वर्ष पीछे दूसरा गर्भाधान होना चाहिये। इसलिये इतने समय तक स्त्री अपने पुरुष के पास न जाय। सास, नन्द या अन्य किसी बड़ी-बूढ़ी के पास रात्रि को सोया करे।

यदि स्त्री को नीरोग और स्वस्थ रखना अभीष्ट हो, तो पहलौटी का ही गर्भाधान सोलह वर्ष की आयु से पूर्व कदापि न करना चाहिये, क्योंकि इस आयु से पूर्व गर्भाशय अपनी पूर्ण दशा को प्राप्त नहीं हो चुकता। जिन स्त्रियों को इस आयु से पूर्व ही (जैसा कि बहुधा हो रहा है) गर्भाधान हो जाता है, वे और उनकी सन्तान निर्बल और रोगी ही रहती हैं। इसी कारण अब बालक बहुत छीज जाते और स्त्रियाँ बाँझ हो जाती हैं।

धात्रीशिक्षा

अब मैं तुझको धात्रीशिक्षा की कुछ बातें बताना चाहती हूँ, जिसको दाई का काम कहते हैं, अर्थात् जो दाई न मिले, तो प्रसूता को अच्छी तरह जना ले इसलिये प्रथम यह बताना चाहिये कि दाई अथवा धाय को क्या जानना चाहिये और धाय कैसी होनी चाहिये दाई के क्या-क्या कार्य हैं और धाय कौन होती है। जो बालक को दूध पिलाती है, उसी को बहुधा धाय कहते हैं। अतएव मा भी जब तक बालक को दूध पिलाती रहे, तब तक धाय की संज्ञा में गिनी जाती है। इसलिये दाई की समस्त शिक्षा इस धात्रीशिक्षा में बतानी चाहिये।

सुन, पहले समय में तो बहुधा स्त्रियों को इस विषय की शिक्षा दी जाती थी। जैसे अँगरेजों में अब भी दी जाती है, परन्तु हमारे इस देश में इस काम को परम अधम समझकर निकृष्ट श्रेणी के लिये छोड़ दिया है, अर्थात् भंगिन, चमारिन, कोरिन, धोबिन इत्यादि जातियों की स्त्रियाँ ही इस दाई के काम को करती हैं। पर उनको कुछ शिक्षा नहीं दी जाती। जो कुछ उन्होंने अपने अनुभव अथवा किसी अन्य अनपढ़ दाई से सुनकर

सीख लिया, उसी के अनुसार काम करती हैं, चाहे किसी प्रसूता को हानि हो, चाहे अपने भाग्य से वह भली भाँति निबटकर बच जाय; परन्तु इन दाइयों को शिक्षा कुछ नहीं। पहले समय में वैद्य लोग इस क्रिया को कराते थे, जैसे अन्य चीड़फाड़ को अपने सम्मुख कराते थे। परन्तु उन्होंने यह कार्य जब से नीच वर्ग की स्त्रियों को और चीड़फाड़ का कार्य सथियों* को दे दिया है, तब से ये ही इस कार्य को करती हैं।

इसी कारण जो कुछ मुझको स्वयं अनुभव हुआ है, और प्राचीन ग्रन्थों तथा डाक्टरी पुस्तकों में जो मैंने अवलोकन किया है, वह तुझको बताती हूँ कि तू भी जानकार हो जाय; क्योंकि इससे स्त्री को सदैव काम पड़ता है। जो इस विषय को जानती होगी, वह उन रोगों और दुःखों से तो बची रहेगी, जो मूर्ख दाई के कारण सौर में असावधानी के होने से स्त्री को हो जाते और फिर जन्म-भर दुःख देते रहते हैं। यदि प्रसूता

* सथिये वे हैं जो अपने को हकीम कहते हैं। बालकों के छारुए निकालते हैं। फोड़े-फुंसी की चिकित्सा करते हैं। आँख बनाते हैं। जाला तथा फूली काटते हैं। फस्द कराते हैं। कान का मैल निकालते हैं। ये अपने को एक प्रकार का कायस्थ बतलाते हैं। ये कानमैलिये और अन्य नामों से भी कहीं-कहीं प्रसिद्ध हैं।—ले०

अपने हाथ-पाँव से कुशल होकर जाये से उठ बैठें तो उनका नया जन्म जानिये। नहीं तो अनेक रोग (प्रसूत, लुंज या नारि (योनि) का बाहर निकलकर बढ़ आना आदि) हो जाते हैं। यह तो मैं बता चुकी हूँ कि गर्भ से पीछे कितने दिनों में बालक उत्पन्न होता है। इसलिये जब देखे कि दिन पूरे हो गये, तब किसी चतुर दाई को बुलावे। जो न मिल सके, तो आप ही इस प्रकार काम कर ले। प्रथम सौर के लिये घर अच्छा हवादार ठीक करे, जिसमें दुर्गन्ध न आती हो। सील भी न हो। किसी मोहरी या पाखाने के पास न हो। जैसी कि इस देश में रीति है कि घर-भर में सबसे बुरा स्थान इसके लिये चुना जाता है। यदि जाड़े हों, तो उस घर में कोयलों की निर्धूम आग दहकती रक्खे (क्योंकि धुआँ बालक और जचा, दोनों को हानि करता है), जिससे ठंडक उस घर में न आने पावे; और वायु भी शुद्ध होती रहे। उस घर की जमीन और दीवार लिपी-पुती और सूखी होनी चाहिये। द्वार दक्षिण या पूर्व को हो। कम-से-कम बत्तीस हाथ वर्ग उस घर का क्षेत्रफल हो, अर्थात् आठ हाथ लम्बा और चार हाथ चौड़ा हो। जाड़ों में साँझ-सवेरे हवा के द्वार रोक दिये जायँ, और दुपहर को खोल दिये जायँ। ग्रीष्मऋतु में बराबर खुले

रहें। वर्षा में यदि घटा घिरी हुई हो, तो बन्द करके थोड़ा-सा खुला रहने दे। जो आकाश निर्मल हो, तो पवन को न रोके, किन्तु आने दे। सौर में सरदी या ठंडे होने से बालक को मसान आदि रोग हो जाते हैं। सौरगृह में पहले से ये वस्तुएँ प्रस्तुत रक्खे—

(१.) खूब कसा हुआ पलँग, जिस पर गुदगुदा बिछौना हो, और मोमजामा बिछा हो। (२) पेट में लपेटने को गाढ़े का कपड़ा, (३) पुराने-धुराने चीथड़े। (४) रेशम। (५) पैनी कतरनी। (६) गुनगुना पानी। (७) आग। (८) तेल। (९) बेसन या साबुन।

जनते समय इस पलँग का सिरहाना पैताने से एक फुट ऊँचा रहना चाहिये। यदि चौकी या तख्त हो, तो और भी अच्छी बात है। दीपक ऐसे स्थान में रक्खा जाय, जो जच्चा के सम्मुख न हो। सिरहाने की ओर रखना अच्छा होता है। सामने रखने से बालक और जच्चा, दोनों की दृष्टि को चमक लगने का भय है।

सौर में बहुत मनुष्य न रहने चाहिये। स्त्री के पति को तो वहाँ कदापि न जाना चाहिये। उस स्थान पर किसी ऐसी स्त्री को न रखना चाहिये, जो पीड़ा देखकर घबड़ाय या जच्चा के अगाड़ी औरों के आपे की बचों

कर-करके उसे डरावे, अथवा कोई अशुभ संवाद सुनावे प्रसूता की मा तथा सखी-सहेलियों का वहाँ पर रहना बहुत ही आवश्यक है, परन्तु दो-तीन स्त्रियों से अधिक न हों।

जब जाने कि गर्भिणी के पीड़ा उठी, उसी समय किसी ऐसी दाई को बुलावे, जो अपने काम में चतुर और दक्ष हो। जच्चा से स्नेह और मधुर वचन से बोले। उसको ढाढ़स बँधावे। सेवा करके उसका क्लेश मिटावे। बहरी और गूँगी न हो। दाई को पहले यह जान लेना चाहिये कि गर्भिणी को पीड़ा जनने की है, या किसी और कारण से है, अथवा सची पीड़ा है या भूठी; क्योंकि यह पीड़ा दो प्रकार की होती है।

इनको यों पहचान सकते हैं। प्रसूत की पीड़ा के लक्षण तो ये होते हैं—(१) कोख शिथिल हो जाय। (२) हृदय बन्धनरहित जान पड़े। (३) दोनों जाँघों में पीड़ा हो, कमर या पीठ के चारों ओर पीड़ा हो। (४) बारंबार मूत्र-त्याग की इच्छा हो; परन्तु उतरे नहीं। (५) योनि में से कफ-सदृश पानी निकले।

परन्तु यह भी दो प्रकार की होती है। एक पेट की, दूसरी पीठ की। जब यह निश्चय हो जाय कि पीड़ा प्रसव ही की है, तो माँ को उस करते हुए पलँग या

चौकी पर लिटावे। जो पीठ की पीड़ा हो, तो पीठ के पीछे तकिया रखकर दाई हौले-हौले तकिया को दबावे। जो कपड़ा चोली, लहँगा या धोती जचा पहने हो, उसे ढीला करा दे; पर छाती में एक और कपड़ा लपेट दे। तेल मलकर गरम पानी से स्नान करा दे. और गरम दूध या दूध लपसी, कण्ठ तक पिला दे या गुनगुनी चाय पिला दे। यदि पीने को जी न करे या न पीना चाहे, तो न पिलावे। इसको पिलाकर हौले-हौले टहलावे, शौच (पाखाने) हो आने दे, पर मूत्र-त्याग न करने दे; क्योंकि इससे प्रसव में बहुत सहायता मिलती है।

दाई को सौर में भेजने से पूर्व उसके कपड़े बदलवा दे और हाथ की उँगलियों के नख कटवा दे। नख बड़े रहने से गर्भस्थान में चोट लग जाने का भय रहता है।

जब जाने पीड़ा कुछ अधिक हो गई, तो देखना चाहिये कि बालक पेट में किस प्रकार से है। सिर नीचे को है या पैर नीचे को हैं, अथवा आड़ा पड़ा है। इसकी पहचान यह है कि प्रायः सभी बालकों का सि[र] नीचे को होता है और इसी सिर के बल वे उत्पन्न होते हैं।

इसमें जचा को भी थोड़ा कष्ट होता है और को[ई] बात डर की नहीं रहती। जब बालक का सिर नीचे क[ो] होता है तब वह बाईं ओर से दाहनी ओर घूमता है औ[र]

बाईं ओर स्त्री की भारी रहा करती है। पर जिस स्त्री की दाहनी ओर भारी रहे और बालक दाहनी ओर से बाईं ओर घूमे तो बालक पाँव के बल होता है जिसको विष्णुपद कहते हैं।

यदि दोनों ओर भारी है और घूमता नहीं है तो बालक आड़ा पड़ा हुआ है और हाथ के बल उत्पन्न होता है। इसमें स्त्री को महाकष्ट होता है। यहाँ तक कि बीस स्त्रियों में उन्नीस मर जाती हैं।

यदि बालक अपने आप ही घूम-घामकर पैर या मस्तक के बल आ गया तो भला जानो अथवा दाई ने हाथ डालकर चतुराई से बालक के हाथ तो ऊपर को भीतर कर दिये और पाँव को खींचकर निकाल लिया, तो भी बालक उत्पन्न हो जायगा, और स्त्री को कष्ट-ही-कष्ट होगा, प्राण बच जायँगे।

इन तीनों बातों का निश्चय करने के लिये दाई को चाहिये कि नारियल का तेल हाथ में चुपड़कर और भीतर डालकर देख ले कि बालक मस्तक के बल है या पाँव के बल अथवा हाथ के बल आड़ा पड़ा है। भीतर हाथ डालने से जान पड़ेगा कि पहले हाथ में कौन-सा अंग बालक का आता है। उसी अंग के बल बालक पैदा होगा। एक बार ठीक निश्चय कर लेना चाहिये

कि क्या दशा है । बेर-बेर हाथ न डालना चाहिये। इससे जच्चा को बड़ा क्लेश होता है, और रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं । जो कोई रोग बालक को स्त्री के पेट में न हो गया हो, तो बालक का मस्तक गर्भ से छः महीने पीछे नीचे को और पाँव ऊपर को रहते हैं, और जब तक पैदा होता है, तब तक इसी प्रकार से रहते हैं। पर बालक छः महीने तक एक भाँति नहीं रहता, वरन् घूमा करता है, और इस समय (छठे महीने के पहले) जो बालक उत्पन्न होते है, वे बहुधा हाथ व पाँव के बल होते हैं, और बचते भी नहीं । पर छठे महीने के पीछे उत्पन्न हुए तो बच भी जाते हैं। मरे बालक हाथ-पाँव ही के बल होते हैं। उनके सिर में पानी उतर आने से भी हाथ-पाँव के बल ही उत्पन्न होते हैं; क्योंकि बालक का मस्तक तो तिगुना-चौगुना हो जाता है ।

स्त्री के भी कई रोग ऐसे हैं, जिनसे कोख की दशा बदल जाती है, और बालक हाथ-पाँव के बल ही होता है। पीड़ा होते समय डुतहड़ (यह पेट के भीतर पानी की भरी हुई एक थैली होती है) फूट जाती है, तब भी बालक हाथ-पाँव के बल ही होता है ।

गर्भिणी स्त्री को, गर्भ से तीसरे महीने के पहले और पाँचवें महीने के पीछे, दूर की यात्रा करने से भी यह

...शा हो जाती है कि बालक हाथ-पाँव के बल उल...
...होता है। इसलिये इन दिनों में कहीं न जाने ...
...चाहिये। तीसरे और पाँचवें महीने के बीच में जो ...
जाना पड़े, तो भले ही जाय।

पेट में जो बालक मर जाय, तो किसी अच्छे डॉक्टर को बुलाकर उसको तुरन्त ही निकलवाने की चेष्टा करनी चाहिये। बालक के पेट में मर जाने की पहचान यह है कि वह पेट में घूमता नहीं। पेट में लोथ-सी हो जाती है। स्त्री की छातियों का दूध सूख जाता है, और उसी समय वे ढीली पड़ जाती हैं।

पीड़ा उठने के समय से बालक के उत्पन्न होने तक अर्थात् जिसमें फूल या नार तक गिर ले, स्त्री की तीन दशाएँ माननी चाहिये।

पहली दशा में इतना होता है कि बालक हट-हट... पैदा होने के स्थान के द्वार में आ जाता है। दूसरी वह पैदा होने को निकलता है। तीसरी वह है, बालक के उत्पन्न होने के पीछे, पेट से पानी, रुधि... इसी प्रकार की दूसरी अपवित्र वस्तु निकलती रहती...

पहली दशा में यह होता है कि जब पीड़ा उठने ... तभी से जरायु अथवा धरनि का मुख खुलने ल... जरायु पेट में की वह थैली है, जिसमें होक...

पैदा होता है। इसकी बनावट बैंगन-जैसी है। पर भीतर से निपट पोली होती है।

बैंगन गोल होता है; पर यह तनिक चपटी होती है। मोटा भाग ऊपर को रहता है, जिसको जरायु का शरीर कहते हैं, और पतला भाग नीचे को, जो उसका मुख कहलाता है। कारण यह है कि एक दूसरी थैली, जो मुतहड़ कहलाती है और जिसमें पानी भरा रहता है, [और उसी में उत्पन्न होनेवाला बालक भी रहता है], जरायु के मुख में आकर घुसती है।

पीड़ा की रीति है कि कुछ हो-होकर बन्द भी हो जाती है। जब पीड़ा होती है, तब यह मुतहड़ ऊपर से खिसककर नीचे को आता है, और जरायु के मुँह में घुसना चाहता है। पर जब पीड़ा बन्द हो जाती है, तब फिर यह मुतहड़ ऊपर ही को चला जाता है।

जब बहुत ही पीड़ा होती है, तब यह मुतहड़ जरायु के मुँह में आ पड़ता है, जो अब पन्द्रह उँगली के मोटाव की बराबर खुल जाता है; क्योंकि इसी में होकर तो बालक निकलता है। अड़ने से मुतहड़ में जो ठेस लगती है, उससे वह फट जाता है, और जो पानी इसमें भरा हुआ है, वह बहने लगता है। इसी को 'मुतहड़ फूटना' या 'पानी बहना' कहते हैं।

इसके पीछे ही बालक उत्पन्न हो जाता है। जब मुनहड़ का पानी निकल चुकता है, तब यह सिमटकर फिर छोटी-सी थैली हो जाती है, जैसी गर्भ रहने के पूर्व थी। गर्भ रहने पर ज्यों-ज्यों बालक बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों यह भी बढ़ती जाती है।

पहली दशा में प्रसूता को खड़ी रक्खे या टहलाती रहे, जिससे पीड़ा मन्दी न पड़ने पावे। परन्तु इतना न टहलावे कि यह थक जाय। थकने न दे। जब थकन होने लगे, तब बैठा ले। जो नींद आती हो तो निधड़क सो जाने दे; क्योंकि जगने के उपरान्त जो पीड़ा फिर उठेगी, उससे बहुत ही शीघ्र प्रसव हो जायगा।

मैंने देखा है, मूर्ख स्त्री और दाई इसी पहली दशा में प्रसूता को वृथा वेग * दे-देकर थका डालती हैं, जिससे हानि बहुत होती है, लाभ कुछ नहीं होता। इस दशा में दाई को चाहिये, इस प्रकार काम करे कि सिवा टहलाने के प्रसूता से और काम न ले, ताकि पीड़ा मन्दी न पड़े, वरन् अधिक होती जाय और प्रसव शीघ्र से शीघ्र हो जाय।

अक्सर दाइयाँ कमर को नीचे की ओर सूतने लगती हैं। सो कदापि न सूतना चाहिये। स्त्री से नीचे को साँस

* स्त्री से जो बल कराया जाता है, उसे वेग कहते हैं।

भी न लिखानी चाहिये। इन बातों से स्त्री हाँफ जाती है और निर्जीव हो जाती है।

जो पीड़ा मन्दी पड़ जाय, तो स्त्री को गर्म दूध पिलाना चाहियें। इससे जरायु का मुख बहुत जल्द खुल जाता है। कोई-कोई स्त्री के दो-दो और तीन-तीन दिन तक पीड़ा रहती है। उसमें उसे भोजन नहीं देते। यह भी नहीं चाहिये। गर्म दूध, साबूदाना, आरारोट अथवा दूसरा हलका भोजन देना चाहिये, जिससे आहार और बल दोनों हो जायँ। पर इससे पहली दशा में सदा गरम भोजन दे, कभी ठंडा न दे; क्योंकि ठंडा भोजन हानि करता है। मल-त्याग करा दे, नहीं तो पीछे यह बाधा देता है। किसी-किसी स्त्री का मुतहड़ नहीं टूटता और प्रसव की दूसरी दशा हो आती है, अर्थात् बालक जरायु के मुख में आ जाता है। ऐसी दशा में दाई को चाहिये कि उस मुतहड़ की थैली को, जिसमें बालक है, चतुराई और सावधानी से फाड़ दे, जिससे पानी निकल जाय। इस दशा में बड़ी सावधानी रखनी होती है। बालक पानी के निकलने से बहुधा हाँफकर मर जाता है। किसी-किसी स्त्री के ऐसा होता है कि जरायु का मुँह तो अच्छी तरह खुला नहीं, और पानी बहने लगा, ऐसी दशा में भी डर रहता है; क्योंकि बालक बड़ी देर में हो चुकता

है, और बहुधा हाँफकर मर जाता है। इसमें स्त्री को बहुधा दुःख सहना पड़ता है।

इस दशा में यह पानी बहुधा दाइयों के हाथ से मुतहड़ की थैली फट जाने से अथवा कमर के सूतने से वह निकलता है। इसी कारण दाई के नख कटवा देना उचित है, और सूतना अच्छा नहीं।

जो देखे कि पीड़ा मन्दी पड़ती जाती है, तो स्त्री के मुख की लट उसके मुख में दे दे, जिससे 'हूल' आने लगे, और जरायु का मुख खुलने लगे। स्त्री को बाईं करवट या जिस भाँति उसको आराम पड़े, लिटा दे। बहुत देखा गया है कि बाईं करवट ही स्त्रियाँ सुख से जनती हैं। यह उनकी स्वाभाविक दशा है। जो दाइयाँ मूर्ख होती हैं, वे इस समय जच्चा को अपने पैरों पर बिठाकर 'हूल' या 'वेग' दिलाती हैं। कोई-कोई स्त्री अपने सहारे से जच्चा को बिठाती और उससे 'बल' कराती हैं। यह बहुत ही अनुचित है। जच्चा को इससे बहुत ही हानि पहुँचती और वृथा क्लेश होता है। ऐसा करने से बहुधा जच्चा की पीड़ा बन्द हो जाती है। इसलिये ऐसा कदापि न करना चाहिये।

बाईं करवट लेटने से जब पीड़ा अधिक होने लगे, तब जच्चा से बल करने को कहे, पर आँखें उसकी मिचवा

दे, नहीं तो सूजन आ जायगी। बल भी अधिक न करने दे।

केवल इतना करने दे, जितना मल त्यागने में किया जाता है। इस दशा में साँस रोकने से भी अधिक लाभ होता और उपकार पहुँचता है।

जब जरायु का मुँह भली भाँति खुल जाय और बालक उत्पन्न होने को हो, तो इस दूसरी दशा में दाई को इस प्रकार काम करना चाहिये। यह दशा बड़ी नाजुक है। इसमें असावधानी होने से बालक और जचा दोनों को बड़ी हानि हो जाती है। जब जाने कि दूसरी दशा हो आई है, उस समय प्रसूता को सौर में ले जाकर बिछे हुए पलँग पर बाईं करवट लिटा दे। उसमें उकरू बैठना या खड़ी रखना न चाहिये, जैसा कि दाइयाँ बहुधा करती हैं।

उकरू बैठने या खड़ी रहने से प्रसव के समय बालक के मस्तक में ठेस लगने का भय रहता है। मुतदड़ फूट जाने पर जाँघों के बीच में एक तकिया दे देनी चाहिये, जिससे बालक का मस्तक निकलने में सुबीता पड़े। कमर पर हौले-हौले हाथ फेरते रहना चाहिये। इससे चैन पड़ती है। एक स्त्री जचा के पीछे बैठकर उसकी गुदा पर अपना हाथ लगा ले, पर दाबे नहीं। सधा हुआ

है, और बहुधा हाँफकर मर जाता है। इसमें स्त्री को बहुधा दुःख सहना पड़ता है।

इस दशा में यह पानी बहुधा दाइयों के हाथ से झुड़ की थैली फट जाने से अथवा कमर के सूतने से भी निकलता है। इसी कारण दाई के नख कटवा देना उचित है, और सूतना अच्छा नहीं।

जो देखे कि पीड़ा मन्दी पड़ती जाती है, तो स्त्री के मुख की लट उसके मुख में दे दे, जिससे 'हूल' आने लगे, और जरायु का मुख खुलने लगे। स्त्री को बाईं करवट या जिस भाँति उसको आराम पड़े, लिटा दे। बहुधा देखा गया है कि बाईं करवट ही स्त्रियाँ सुख से जनती हैं। यह उनकी स्वाभाविक दशा है। जो दाइयाँ मूर्ख होती हैं, वे इस समय जच्चा को अपने पैरों पर बिठाकर 'हूल' या 'वेग' दिलाती हैं। कोई-कोई स्त्री भारी सहारे से जच्चा को बिठाती और उससे 'बल' कराती हैं। यह बहुत ही अनुचित है। जच्चा को इससे बहुत ही हानि पहुँचती और वृथा क्लेश होता है। ऐसा करने से बहुधा जच्चा की पीड़ा मन्द हो जाती है। इसलिये ऐसा कदापि न करना चाहिये।

बाईं करवट लेटने से जब पीड़ा
तब जच्चा से बल करने को

दे, नहीं तो सूजन आ जायगी। बल भी अधिक न करने दे।

केवल इतना करने दे, जितना मल त्यागने में किया जाता है। इस दशा में साँस रोकने से भी अधिक लाभ होता और उपकार पहुँचता है।

जब जरायु का मुँह भली भाँति खुल जाय और बालक उत्पन्न होने को हो, तो इस दूसरी दशा में दाई को इस प्रकार काम करना चाहिये। यह दशा बड़ी नाजुक है। इसमें असावधानी होने से बालक और जचा दोनों को बड़ी हानि हो जाती है। जब जाने कि दूसरी दशा हो आई है, उस समय प्रसूता को सौर में ले जाकर बिछे हुए पलँग पर बाईं करवट लिटा दे। उसमें उकरू बैठना या खड़ी रखना न चाहिये, जैसा कि दाइयाँ बहुधा करती हैं।

उकरू बैठने या खड़ी रहने से प्रसव के समय बालक के मस्तक में ठेस लगने का भय रहता है। मुतरड़ फूट जाने पर जाँघों के बीच में एक तकिया दे देनी चाहिये, जिससे बालक का मस्तक निकलने में सुबीता पड़े। कमर पर हौले-हौले हाथ फेरते रहना चाहिये। इससे चैन पड़ती है। एक स्त्री जचा के पीछे बैठकर उसकी गुदा पर अपना हाथ लगा ले, पर दाबे नहीं। सधा हुआ

हाथ रखते हैं। जिस स्त्री के पहलौठी का बालक होता हो, उसको तो बड़ी ही सावधानी होनी चाहिये; क्योंकि बालक का मस्तक निकलते समय उस स्थान में बड़ी सनसनाहट होती है। स्थान तक फट जाने का भय रहता है। इसलिये जब तक बालक का कन्धा न निकल आवे, तब तक हाथ को उस स्थान से न हटाना चाहिये। इस समय बहुधा जाँघों में बाँइटा आ जाता है। सो हाथ या रुई को आग पर सेंककर जाँघ सेंकने से बाँइटा जाता रहता है। इस समय जबा से आँख मींचकर फिर पूर्ववत् थोड़ा बल करावे। उस समय स्त्री से ऐसी बातें करनी चाहिये, जिनसे वह घबराये नहीं। जैसे 'एक घड़ी का दुःख सब घड़ी का सुख', 'अँसुवन जल सींच बृक्ष आनँद फल खायगी', 'दुःख का फल सुख है' उसके सामने ऐसे जापों का वृत्तान्त, जो निर्विघ्न हुए हों और जिनको वह जानती हो, करे, तो और भी अच्छा।

जब बालक का मस्तक निकल आता है, और देह निकलने में कुछ देर होती है, तब बहुत-सी दाइयाँ बालक का मस्तक पकड़कर खींचती हैं। यह कभी न करना चाहिये। मस्तक के संग एक नस होती है, वह खिंच जाती है, और उसके खिंच आने से बालक तुरन्त मर जाता है। ऐसी दशा में स्त्री के पेट पर हाथ फेरना

चाहिये। इससे मन्दी पीड़ा फिर उठने लगती है। इस समय असावधान न रहना चाहिये।

इस समय जच्चा की जाँघों के बीच में एक तकिया (उसीसा) लगा दे, तो बालक के उत्पन्न होने में बहुत सुबीता होता है।

एक स्त्री जच्चा के पेट को दाब ले, और दाई बालक के मस्तक को एक हाथ से पकड़कर और उसके बगलाऊ दूसरे हाथ की दो या तीन उँगली लगाकर हाले-हाले खिसका लावे। इसके खिसकाने से नस नहीं खिंचने पाती, और न जच्चा को दुःख होता है। पेट के दबाये रहने से रुधिर नहीं निकलने पाता, जिससे बालक को हानि नहीं पहुँचती। नहीं तो रुधिर बालक के कान, नाक और मुख सबमें भर जाता है।

बालक पैदा होते ही रोने लगता है। जो न रोवे तो जानना चाहिये, अभी हाँफ रहा है, इसी से नहीं रोता।

जब बालक उत्पन्न हो चुके, तो उसके गले में उँगली डालकर जो कफ या लार हो, उसे निकाल देना और मुख पोंछ देना चाहिये, जिससे साँस लेने लगे। इसके पीछे नार काटनी चाहिये।

यदि बालक रोवे नहीं, तो यह करना चाहिये—प्रथम इस बात का ध्यान रक्खे कि बालकों के गले में

बहुधा नार लिपटी हुई आती है। पहले
कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बालक
लिपटा हुआ पैदा होता है। उस समय उ
तुरन्त ही चतुराई के साथ, हाथ या छुरी
फाड़ दे। पर बालक के लग जाने का ध
कहीं चोट न आ जाय। इस थैली में ब
रहने से बालक मर जाता है। पर फाड़ने
पानी निकल जाता है, और बालक को f
है। जो नस लिपटी हुई पैदा हो, तो उसे
ही छुड़ा देना चाहिये। नहीं तो इससे
बालक मर जाता है। पेट में तो इसके लिपटे रह
नहीं रहता; पर बाहर आने पर बड़ा ही डर
मूर्ख दाइयों के हाथ से बहुत-से बच्चे इसी प्रक
हैं, जो देखे कि नस कई पेंच खा गई है, तो
सुलझाने में बहुत देर लगती है, और लिप
बालक के लिये डर होता है, इसलिये नस को
काट देना चाहिये। इसके काटने की रीति त
बताऊँगी। पहले जो बात देखनी चाहिये, उसे श्र

बालक जब उत्पन्न हो चुके, तब देखना च
वह रोता है या नहीं। बहुत-से बालक बहु
सुस्त ही पड़े रहते हैं या हाँफा करते हैं। व

हो, तो जब तक हँफनी बन्द न हो, तब तक नार न काटनी चाहिये। हँफनी शीघ्र बन्द करने के उपाय ये हैं—बालक के मुख की लार निकालकर उसके मुख पर ठंडे पानी के छींटे दे, तो बालक रोने लगेगा। जो न रोवे, तो गले तक उसकी देह किसी ठंडे पानी के बरतन में डुबोकर तत्काल निकाल लेनी चाहिये। इससे बालक चौंककर रो उठेगा। जो इससे भी न रोवे, तो एक बरतन में ठंडा और दूसरे में गुनगुना पानी रक्खे—ऐसा कि बालक को सुहा जाय। एक बार बालक को ठंडे पानी में और दूसरी बार गुनगुने पानी में बहुत थोड़ी-थोड़ी देर रक्खे, अर्थात् दो-तीन मिनट तक ही, और मस्तक से नीचे-नीचे तक का ही धड़ रक्खे। मस्तक को पानी में न भिगोवे। ऐसा करने से बालक चैतन्य हो जायगा। गर्भिणी के पीड़ा उठने के समय ही से गरम पानी का प्रबन्ध कर ले।

यदि इससे भी बालक न रोवे, तो उसे गोदी में लेकर उसके पँजरे को हाथों से तनिक दबाकर या बालक के नथनों को उँगली से बन्द करके अपने मुख को बालक के मुख पर रखकर धीरे-धीरे फूँक देनी चाहिए। फूँकती समय बालक के हाथ छोड़ दे, और छाती दाबे दे, इससे साँस बाहर आवेगी। दो-चार बार ऐसा ही करे,

इससे फेफड़े फूल आवेंगे। जो इससे भी बालक न चेते, तो उसकी नाक के तालू को सुरसुरावे, हौले-हौले चूतड़ और पीठ पर थपकी दे, या कपड़ा जलाकर नाक में दूर से धुआँ दे, या बालक को दोनों हाथों पर औंधा लिटाकर जल्दी-जल्दी हिलावे। जो बालक होकर नीला पड़ गया हो, और रोता भी न हो तो नार को टूँड़ी की ओर से तीन अंगुल छोड़कर काट देना चाहिये। जब पैसे-भर लहू उसमें से गिर जाय, तो उसे बाँध दे। पर बहुत लहू न गिरने दे।

बहुत-सी दाइयाँ जब बालक नहीं रोता, तब यह करती हैं कि बालक के मस्तक पर ठंडा पानी डालती हैं। अथवा काली मिर्च मुख में चबाकर उसके मुख या नाक में फूँक देती हैं। इससे कई हानियाँ होती हैं। बालक निर्जीव हो जाता है, उसे सुरसुरी का रोग हो जाता है। नार काटने के लिये बहुत पैनी छुरी या कतरनी होनी चाहिये। थोड़ा फीता, डोरा, रेशम या पाट होना चाहिये। थोड़ा सफ़ेद कपड़ा भी चाहिये। भोथरी छुरी या कतरनी से नार न काटे। इससे बालक को बहुत दुःख होता है।

नार काटने की रीति यह है कि बालक की टूँड़ी की ओर तीन अंगुल नार छोड़कर फीते से बाँध दे, और आध अंगुल और छोड़कर मा की ओर की भी बाँध दे।

न दोनों गाँठों के बीच में से काट दे—बालक की
ोर की गाँठ को इसलिये बाँधते हैं कि लहू बहुत न
हे, जिससे निर्जीव होकर वह मर न जाय। और मा
ी ओर गाँठ इसलिये बाँधते हैं कि न-जाने अभी
सूता के पेट में दूसरा बालक और हो, जैसे कि जोड़ले
ालक बहुधा हुआ करते हैं; क्योंकि ऐसे बालक साथ-
ाथ नहीं होते। थोड़ी बहुत देर पीछे होते हैं। पर नार
ोनों की एक ही होती है। जो इस ओर को गाँठ न
ी जाय, तो न-जाने लहू बहकर पेट में का दूसरा
ालक मर जाय; क्योंकि 'फूल' या 'आँनार' अभी
क स्त्री के पेट ही में होता है और थोड़ी देर पीछे
नेकलता है। इसलिये इस बात की सदा सावधानी
खनी चाहिये। जो दूसरा बालक पेट में मालूम पड़े,
ो इसका हाल जच्चा से कदापि न कहे कि दूसरा
ालक अभी और है। नहीं तो जच्चा घबड़ायेगी, और
ीड़ा बन्द हो जायगी। नार काटने से पहले एक बात का
यान और भी कर ले। यदि देखे कि बालक बहुत ही
नेर्जीव है, तो नार काटने से पहले मा की ओर से
ार का लहू सूतकर बालक की टूँड़ी में कर दे, पीछे
ाटे। अथवा चार-पाँच बूँद उसकी बालक को चटा
े। मा का लहू बालक को बहुत बल करता है; क्योंकि

पेट में बालक इसी को खाकर पलता है। नार काटने से पहले उसे (नार को) शहद, घी और सेंधा नमक ले मलकर शुद्ध कर ले, तब काटे। अथवा खीर और कैथे के वृक्ष के काढ़े से या सोने वा चाँदी के बुझे हुए जल से नार को शुद्ध करे, तब काटे। उत्पन्न होने से पीछे बालक को अच्छी तरह स्नान कराकर पवित्र कर दे, और पोंछकर किसी गुदगुदे और गरम वस्त्र में दुबका-कर लिटा दे। नार को काटकर लकड़ी के कोयलों में पिसी हुई कस्तूरी (जो पहले से इस प्रकार तैयार रखनी चाहिये कि दो चावल चोखी कस्तूरी एक माशे कोयलों में महीन पीसी हुई हो) लगा दे। इससे मसान का रोग नहीं होने पाता। पीछे बालक को घी, शहद, अनन्तमूल और ब्राह्मी के रस में थोड़ा स्वर्णचूर्ण मिलाकर चटा दे। यह महा गुणकारी है। इससे बालक को पाखाना हो जाता है, और भी अनेक गुण होते हैं। यदि सब चीजें न मिल सकें, तो बालक को केवल शहद और घी ही चटा दे। जो बालक सतमासा या बहुत ही दुबला-पतला हुआ हो तो रुई के गाले को कड़वे तेल में भिगोकर उसमें दो या चार दिन तक बालक को रक्खे। इससे बहुत पोष पहुँचता है, जैसा कि मा के पेट में पहुँचता था। ऐसा करने से सतमासे उत्पन्न हुए

बालक बहुधा बच जाते और पुष्ट हो जाते हैं।

बालक के होते ही उसकी नार काटकर बेसन लगाकर, गुनगुने पानी से नहला दे। यह रीति देशी है। डाक्टर लोग साबुन से नहलाते हैं। पर मेरी समझ में बेसन उत्तम है। इसलिये कि इससे सब मैल-कुचैल स्वच्छ हो जाता है।

जिस समय बालक उत्पन्न हो ले, उस समय दाई को यह भी देख लेना चाहिये कि बालक के अंग-प्रत्यङ्ग सब ठीक हैं, अथवा बेडौल या सुडौल, अथवा कोई अङ्ग किसी से जुड़ा तो नहीं है। जैसा कि बहुधा हाथ-पाँव की उँगलियाँ जुड़ी होती हैं।

यदि कोई अङ्ग जुड़ा देख पड़े, तो तत्काल तीव्र नश्तर से चीर देना चाहिये, विलम्ब तनिक भी न करनी चाहिये। इसी प्रकार जो आँखों की पलकें जुड़ी हों, तो उनको भी चीरकर अलग कर दे। आजकल की कोई-कोई ही दाई ऐसा करती हैं, परन्तु भद्देपन से अर्थात् काँच की चूड़ी को तोड़कर उसकी नोक से ऐसे समय में चीरफाड़ करती हैं। इससे बहुत भय और हानि है। यह कार्य बड़े पैने नश्तर से होना चाहिये।

जो गुदा का छिद्र बन्द हो, तो उसको भी खोल देना चाहिये। इसी प्रकार समयोचित कार्य करे अर्थात् कोई

अंग यदि बेडौल है, जैसे नाक चपटी, मस्तक लम्बा इत्यादि, तो नाक को दोनों हाथ की उँगली से सूतकर, ऊपर को उठाकर, ऊँची सुडौल कर देनी चाहिये। इसी प्रकार मस्तक को दोनों हाथों से दाबकर सीधा सुडौल कर देना चाहिये। इस समय थोड़ी ही [illegible] सावधानी और उपाय से कुडौल अंग सुडौल हो सकते हैं; क्योंकि इस समय देह की हड्डी तक ऐसी नरम होती हैं, जैसे हरे वृक्ष की कोमल टहनी, जिधर को चाहो, झुका दो। परन्तु वायु के लगते-लगते ही कड़ी हो-होकर थोड़ी देर में वे बहुत कड़े हो जाते हैं, और फिर नहीं लचते।

जब बालक उत्पन्न हो चुके, तब जच्चा की सावधानी करनी चाहिये। यह तीसरी दशा है। बालक उत्पन्न होने के पीछे स्त्री के पेट से एक मांस की-सी थैली निकलती है, जिसको 'ऑनार' कहते हैं। जैसे गाय-भैंस के बच्चा होने के पीछे 'जेर' गिरता है, उसी प्रकार और यह ऑनार गिरती है।

[illegible] तक यह न गिर ले, तब तक स्त्री के पेट पर [illegible] रहना चाहिये। प्रसव होने के पीछे दो-तीन [illegible] के दर्द होता रहता है। पर इससे डरना [illegible] यह स्त्री के लिये सुखदायक होता है।

ोंकि इससे रुधिर बहता रहता है। पहलौठी की जच्चा
तो और भी अधिक बहता है।
यदि बालक उत्पन्न होने के पश्चात् पीड़ा बन्द हो
य, तो हौले-हौले पेट पर हाथ फेरते रहना चाहिये।
ड़ा फिर होनेलगेगी, और थोड़ी बहुत देर में 'औनार'
र पड़ेगी। जो गिरने में कुछ देर लगे, तो भले ही
। जाय, पर उसको खींचकर कभी न निकालना
हिये, जैसा कि बहुधा अनेक मूर्ख दाइयाँ करती हैं।
ा करने से बहुत-से दुःख और रोग उत्पन्न हो जाते
। जब कभी कोई मूर्ख दाई भीतरी अङ्ग में हाथ डाल
ी है, और उसके नख की चोट कहीं जरायु में लग
ती है, तो जच्चा को ज्वर आ जाता है। कभी-कभी
ो ज्वर में वह मर भी जाती है।
यदि पेट हाथ से दाबा न जायगा, तो खून बहुत
ता रहेगा। जो यह अपने आप न निकले, या निकलने
देर लगे, तो धीरे से नार को कई बार खींचने से चार-
च बार की पीड़ा में निकल आवेगा। और जो यों भी
निकले तो दाई को चाहिये कि अपने एक हाथ में
रियल का तेल चुपड़कर और पेट में डालकर औनार
इकट्ठा करके बहुत हौले-हौले निकाल ले। हाथ से पेट
दबाये रहे, और औनार को धीरे-धीरे खींचती जाय।

जब यह निकल आवे, तब एक दुपट्टा, चौतह करके पेट से लेकर कलेजे तक कसकर लपेट देना चाहिये। इससे लहू निकलना भी बन्द हो जाता है, और पेट भी नहीं डोलता। वरन् स्त्री को बहुत ही चैन पड़ जाती है, और गर्भाशय डिगने नहीं पाता, अपने स्थान पर आ जाता है। इस कपड़े को दूसरे-तीसरे दिन खोल कर बाँधती रहे, जिससे नसें भी बहुत न खिंचने पावें। बहुत सी दाइयाँ बालक उत्पन्न होने के पीछे जच्चा को बैठा देती हैं, जिसमें सब लहू निकल जावे। यह कभी न करना चाहिये। इससे स्त्री बहुत ही निर्जीव हो जाती है। बहुत लहू निकलना अच्छा नहीं होता।

प्रसूता भोजन कठिनता से पचा सकती है, इसलिये दूध सबसे अच्छा भोजन है। पर इस देश में रीति है कि हरीरा देते हैं, जो घी, गुड़ और अजवाइन को औटकर बनता है। यदि सोंठ को पीस-छानकर फंकी कराकर ऊपर से दूध पिला दे, तो बहुत ही श्रेष्ठ है। ऐसा भोजन बहुत उत्तम होगा, जो बलकारक हो, और पच भी जल्दी जाय। जो देर में पचेगा, वह हानि करेगा, और बल नहीं करेगा। प्रसव के पीछे भोजन करके सो जाने से प्रसूता को बहुत चैन पड़ता है। इस समय शोर-गुल या शब्द न करे, जैसा कि बहुधा

करते हैं। कहीं बन्दूकें छुड़ाते हैं, कहीं लुगाई ढोलक-मँजीरे बजा-बजा गीत गाती हैं। इससे जच्चा को बड़ी बेचैनी होती है। परन्तु इस देश की रीति ही ऐसी हो गई है। इस समय बंदूक छुड़ाने से कुछ लाभ नहीं। यदि प्रसव के समय छुड़ाई जाती तो लाभ भी था कि प्रसव में इसके शब्द से सहायता मिलती। अब छुड़ाने से जच्चा को वृथा क्लेश देना है।

लेटे-लेटे ही जच्चा को धो-पोंछ दे, और सब स्त्रियों को सौरगृह से निकालकर किवाड़ मूँदकर अँधेरा कर दे, जिससे जच्चा को भी नींद आ जाय।

जब सोकर उठे तो जच्चा को मूत्र करा दे, पर उठावे नहीं। करवट ही लिवाकर करा दे। जो मूत्र न आवे तो गरम पानी में कपड़ा भिगो-भिगोकर और निचोड़-कर पेड़ू पर रखती जाय। थोड़ी देर में उतर आवेगा। जो इस पर भी न उतरे, तो वैद्य से उपाय कराना चाहिये। मूत्र न उतरने से रोग उत्पन्न होकर कष्ट हो जाता है। पाखाना भी फिरा देना चाहिये। जो न उतरे, तो अरण्डी के तेल या दूध में औटाकर सनाय या दूसरा कोई हलका विरेचन दे देना चाहिये।

सौरगृह में राई, श्वेत सरसों, नीम के पत्ते या इन्द्र-वन्द की धूनी देनी चाहिये। जच्चा और उसके पहनने

तथा ओढ़ने-बिछाने के कपड़ों में इस धूनी को दे दे।

किसी-किसी कुल या जाति में, वरन् बहुधा स्त्रियों में ऐसी रीति है कि जचा को स्नान इत्यादि बहुत जल्द—चार या पाँच दिन ही में करा देते हैं, जिसको वे 'छठी की रीति' कहते हैं। यह बहुत ही हानिकारक है कम-से-कम दस दिन में यह रीति होनी चाहिये, नहीं तो छः दिन के पूर्व तो कदापि न होनी चाहिये। क्योंकि इसका नाम 'छठी' है, जो छठे दिन होनी चाहिये। यही पूर्व की प्रथा थी।

परन्तु जब यह प्रथा थी, तब स्त्रियाँ बलवान् और नीरोग होती थीं। अब निर्बल और रोगी स्त्रियाँ होती हैं। तब इसमें कुछ फेर होना जरूरी है, अर्थात् दस दिन पीछे ही होनी चाहिये।

स्त्रियों का विचार है कि जचा छठी होने के पी शुद्ध हो जायगी, छूने की छूत न रहेगी। परन्तु यह नहीं मालूम कि स्नान करने से ज्वर हो आवेगा, शीत आ जायेगा और जचा की जान पर बन जायेगी।

इसी छठी के दिन स्त्रियाँ यह भी करती हैं कि जचा को सिर से स्नान कराती हैं, घर बाहर सबको लीपती-पोतती हैं। जचा को चावल और दही का भोजन कराती हैं, जो और भी हानिकारक है।

ऐसे ही कारणों से स्त्रियाँ रोगग्रस्त हो जाती हैं, और इसी कारण से छठी दस दिन के पूर्व न होनी चाहिये।

बहुत जातियों में कुआँ पूजने की भी एक और अनोखी बड़ी हानिकारक रीति होती है। वह भी न करना चाहिये ; क्योंकि जच्चा अपनी निर्बलता के कारण चलने में क्लेश पाती है। कभी-कभी आँखों के सामने अँधेरा हो आता है, वह मूर्च्छित हो जाती है। इसी कारण दो स्त्रियाँ उसकी बाँह पकड़कर उसको ले जाती हैं। जब यह दशा होती है, तो क्यों वृथा उसको क्लेश दिया जाता है।

प्रसूता के चालीस दिन तक नित्य तेल मलना चाहिये। लाक्षादितैल* मलना और भी अच्छा होगा ; क्योंकि इससे शरीर की वायु नहीं बढ़ने पाती, वरन् शरीर में बल बढ़ता है। तैलमर्दन करके प्रातःकाल गरम पानी से स्नान कर डालना चाहिये।

प्रसूता को क्रोध कभी न करना चाहिये। न परिश्रम का काम और न पुरुषप्रसंग करना चाहिये। जच्चा एक सप्ताह, वरन् दस दिन तक चरुये का पानी पिये, जिसको प्रायः सभी स्त्रियाँ जानती हैं कि पंसारी के यहाँ से बत्तीसा, अर्थात् बत्तीस औषध की पुड़िया बनती है।

* स्त्री-चिकित्सा में देखो।

उसको पानी में डालकर औंटाते हैं, जो चरुये का पानी कहलाता है। यह बड़ा गुणकारी होता है।

यदि बत्तीस औषधें न मिल सकें, तो पीपल, पीपलामूल, गजपीपल, मोचरस, चीता, सोंठ और गुड़, इन्हीं को पानी में औंटाकर पानी पिलावें।

दशमूल का काढ़ा दे, तो अत्यन्त ही श्रेष्ठ है; क्योंकि यह पूर्व प्रसूत तक के उत्पन्न हुए रोगों को दूर कर देता है। दशमूल के काढ़े में ये औषधें हैं—१ शालपर्णी, २ पृष्ठिपर्णी, ३ दोनों कटेली, ४ गोखुरू, ५ बेल की गिरी, ६ अरणी, ७ अरलू, ८ पाढ़, ९ कुमेर (खँभारि), १० पीपल। इन सबकी बराबर-बराबर मात्रा है। यदि पहले से अर्क खिंचवा ले, तो और भी अच्छा। नहीं तो नित्य काढ़ा बना लिया करे।

दस दिन तक तो थोड़ा और पाचक भोजन दे, फिर पीछे जब पचने लगे, तो जो पहले से वह खाती आई हो, वही भोजन देना चाहिये। पर यदि इससे बालक को हानि होती हो, तो न देना चाहिये।

पर इससे यह भी न समझ लेना चाहिये कि [illegible]लक की मा जो जी में आवे, खा लिया करे। नहीं, [illegible] बहुत ही बन्धन और नियम से रहना और [illegible]-विहार करना चाहिये। यहाँ तक की जचा

के विषय में बताया । अब तुझको उत्पन्न हुए बालक के विषय में कुछ बताती हूँ ।

बालक जब उत्पन्न हो ले, उसके चार-पाँच घंटे पीछे माता को अपना स्तन बालक के मुख में देना चाहिये, जिससे बालक को पीने की आदत पड़े ।

जो दूध न उतरे (जैसा कि पहलौठी की जचा के बहुधा होता है) तो भी दो-तीन बार बालक के मुख में स्तन दे दे । उसके चचोरने से दूध उतर आवेगा । कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बहुत बार की प्रसूता स्त्री के स्तनों में दूध नहीं उतरता । उसका उपाय भी तुझे बताऊँगी । कभी-कभी बालक ही स्तन को मुख में नहीं दबाता और चचोरता । इसके दो कारण होते हैं—

(१) यह कि स्तन में दूध नहीं, (२) यह कि बालक से स्तन चचोरा नहीं जाता ।

पहले का तो उपाय यह है कि गरम पानी करके फलालैन का टुकड़ा उसमें भिगो-भिगोकर निचोड़ डाले और स्तन पर रक्खे । इससे सेंक पहुँचकर स्तन ढीले पड़ जायँगे । जब कुछ ढीले पड़ें, तो पहले किसी स्याने बालक को पिलाकर उसका दूध निकलवा दे । जिससे ढेपुनी उठ आवें, और स्तन ढीले होकर दूध निकलने लगे । अथवा मीठे तेल में कपूर पीसकर मिला ले, और स्तन

उसको पानी में डालकर औंटाते हैं, जो चरुये का पानी कहलाता है। यह बड़ा गुणकारी होता है।

यदि बत्तीस औषधें न मिल सकें, तो पीपल, पीपलामूल, गजपीपल, मोचरस, चीता, सोंठ और गुड़, इन्हीं को पानी में औटाकर पानी पिलावें।

दशमूल का काढ़ा दे, तो अत्यन्त ही श्रेष्ठ है; क्योंकि यह पूर्व प्रसूत तक के उत्पन्न हुए रोगों को दूर कर देता है। दशमूल के काढ़े में ये औषधें हैं—१ शालपर्णी, २ पृष्टिपर्णी, ३ दोनों कटेली, ४ गोखुरू, ५ बेल की गिरी, ६ अरणी, ७ अरलू, ८ पाढ़, ९ कुमेर (खँभारि), १० पीपल। इन सबकी बराबर-बराबर मात्रा है। यदि पहले से अर्क खिंचवा ले, तो और भी अच्छा। नहीं तो नित्य काढ़ा बना लिया करे।

दस दिन तक तो थोड़ा और पाचक भोजन दे, फिर पीछे जब पचने लगे, तो जो पहले से वह खाती आई हो, वही भोजन देना चाहिये। पर यदि इससे बालक को हानि होती हो, तो न देना चाहिये।

पर इससे यह भी न समझ लेना चाहिये कि बालक की मा जो जी में आवे, खा लिया करे। नहीं, उसको बहुत ही बन्धन और नियम से रहना और आहार-विहार करना चाहिये। यहाँ तक जो जवा

सा चार-पाँच बूँद धरती में गेर दे; क्योंकि इन बूँदों में विष होता है, और वह बालक को हानि करता है।

जब पिला चुके, तब स्तन को धो-पोंछ डाले। इससे स्तन नहीं फटते। इसी कारण स्तन को कभी गीला न रक्खे।

किसी-किसी स्त्री के स्तनों में दूध नहीं होता। इसके इतने कारण हैं—

(१) स्त्री का दुर्बल होना, (२) सन्तान में स्नेह न होना और (३) क्रोध या शोक करना।

इसका उपाय आगे बताऊँगी। बालक के लिये ऐसी दशा में जो करना चाहिये, वही पहले बताती हूँ।

यदि मा के स्तनों में दूध न हो, तो बालक को गौ का टका-भर दूध लेकर उसमें दूना गरम पानी मिलावे। थोड़ा-सा बूरा डालकर रुई के फोओं से बालक को पिला दिया करे। परन्तु अब तो दूध पिलाने की बोतल बिकती है, उससे ही काम ले।

जब माता अपना ही दूध पिलावे, तो दोनों स्तनों का दूध बारी-बारी से पिलावे। एक स्तन का ही न पिलावे। नहीं तो दूसरे स्तन में दूध भरा रहने से कष्ट होगा। स्तन को हौले-हौले पिलावे। स्तन में बालक की टक्कर इत्यादि न लगने दे, और न दूध इकट्ठा होने दे,

पर तीन-तीन या चार-चार घण्टे पीछे कई बार मले। इससे स्तन नरम हो जायँगे, और बालक उन्हें दाबने लगेगा। यह दशा पहलौंठी की जचा की बहुधा होती है। जिसके पूर्व में सन्तान हो गई हो, उसके बहुधा ऐसा नहीं होता। कदाचित् ही हो जाता है। नहीं तो शीघ्र ही दूध उतर आता है, और स्तन भी ढीले रहते हैं, वरन् प्रसव होने के पूर्व ही दूध उतर आता है।

इसका यह भी उपाय है कि पहलौंठी की गर्भिणी पहले ही से अपने स्तनों की नोकों को अपने हाथों से उठाती रहे, तो इस समय दूध उतरने लगेगा, और बालक मुख में भी लेकर दाबने लगेगा।

दूसरे का कारण यह है कि बालक की जीभ मुख के भीतर किसी दूसरे अंग से जुड़ी होती है। इसलिये जब बालक स्तन को न दाबे, तो पहले इसको देखे कि कहीं जुड़ी तो नहीं है। जो जुड़ी प्रतीत हो, तो तत्काल डाक्टर को बुलाकर नश्तर से चिरवाकर अलग कर देनी चाहिये। इसके होते ही बालक दूध पीने लगेगा। चिरवाने से डरना न चाहिये। जैसा कि बहुधा स्त्रियाँ डरती हैं। इस कार्य में जितना विलम्ब होगा, उतनी ही हानि होगी; क्योंकि जीभ का मांस कड़ा होता जायगा।

माता बालक को जब दूध पिलावे, तब पहले थोड़ा

दस और बारह बजे के बीच में, गरमियों में सिवा सन्ध्या के चाहे जिस समय, वर्षा में भी सिवा घटा के चाहे जिस समय) नहला दिया करे। परन्तु नहलाने से पहले आटे की लोई से तेल को सुखा ले। इस लोई के फेरने से बेकार रोएँ (जैसे मस्तक इत्यादि पर के) झड़ जाते हैं।

जिस बालक के लोई इस समय अच्छी भाँति नहीं फेरी जाती, उसके रोएँ घने रहते हैं। जब लोई करके बालक को स्नान करावे, तो गुनगुने पानी का हौले हौले तरा भी दे। इससे बालक के शरीर में बल आता है।

तेल जब बालक के लगाया जाय, तो बगल रान, कान के पीछे, घुटनों के पीछे, जाँघों में अथवा जहाँ-जहाँ खाल के चिपकने और मैल के इकट्ठे होने की सम्भावना हो खूब मलकर लोई कर दे, और गरम पानी से धो डाले। नहीं तो खाल सड़ जाती है। शरीर में फोड़े-फुंसी हो जाते हैं।

बालक को स्नान कराके सूखे कपड़े से तत्काल पोंछ डाले। जो जाड़े हों, तो तुरन्त गरम कपड़ा पहनाकर धूप में सुला देना चाहिये। इस क्रिया से बालक सुख पाकर सो जाता है।

पुत्र हो तो उसके मूत्रस्थान को खोलकर गरम पानी का तरा दे-देकर हौले-हौले खोलती रहे, जिससे खाल

जिससे स्तन में गाँठ पड़कर स्तन पक न जाय, और 'थनैला' न हो जाय। इसमें स्त्रियों को महाकष्ट होता है। कभी-कभी मर भी जाती हैं।

चालीस दिन तक बालक को दो-दो घंटे के अन्तर से दूध पिलावे। इससे जल्दी न पिलावे। जैसा कि बहुधा मूर्ख स्त्रियाँ करती हैं कि जब बालक रोया, स्तन मुख में दे दिया। पहला पिया हुआ दूध पचा नहीं कि उसमें और कच्चा जा पड़ा, जिसने अजीर्ण करके बालक को क्लेश दिया।

बालक की नार कभी-कभी किसी दूसरी वस्तु में उलझकर इँच आती और फिर पक जाती है। इसलिये यह उपाय पहले से ही कर देना उचित है कि कड़वे तेल का फाया नार पर रखकर उसको कपड़े से लपेट और एक पट्टी से बाँध दे। पर पट्टी कसके न बाँधे, और न उसे ढीली ही रहने दे।

यदि नार में रुधिर निकल रहा हो, तो उसको रेशम से बाँध दे। रुधिर को न निकलने दे। सात-आठ दिन में नार सूखकर आप ही गिर पड़ती है। यदि आप ही न गिरे, तो खींचे नहीं। जब आप छूटकर गिरे, तभी गिरने दे। बालक को नित्य कड़वा तेल लगाकर गुनगुने पानी से उचित समय पर (अर्थात् जाड़ों में

कारण वे उनको प्रकट नहीं करतीं, और पुरुषों से इलाज भी कदापि नहीं करातीं।

मेम लोग तो इस विषय में कुछ संकोच नहीं करतीं। यहाँ तक कि उनके जनाने तक को पुरुष डाक्टर ही आता है। परन्तु यह व्यवहार उनका ग्राह्य नहीं, वरन् निन्दनीय है। इस देश की प्रथा और ही है। यहाँ ऐसे रोगों का उपाय प्रायः दाई के ही अधीन रहा है। चाहे वैसी दक्ष दाइयाँ अब इस समय न हों।

इस देश में तो यहाँ तक है कि बहुधा स्त्रियाँ, जो उच्चकुल की हैं; वे बहू-बेटियों के रोगों को पुरुषों पर प्रकट तक नहीं करतीं, उपाय तथा चिकित्सा तो एक ओर रही। अतएव मैं यही सोचकर मुख्य-मुख्य रोगों की कुछ औषधें तुझको बताती हूँ। सबकी तो नहीं बता सकती ; क्योंकि रोग इतने हैं कि उनके नाम भी स्मरण रखना कठिन है। फिर उनके निदान, लक्षण, और चिकित्सा का स्मरण रखना तो बहुत ही कठिन होगा।

जिन रोगों को साधारण प्रकार से स्त्रियाँ प्रकट नहीं करतीं, प्रायः गुप्त ही रखती हैं, उन्हीं के विषय में कुछ बताना चाहती हूँ। नहीं तो वैद्य, हकीम, डाक्टर हैं ही।

सूतिकावस्था में स्त्रियों के बहुधा रोग पैदा होने की

जुड़ने न पावे, और मैल भी धुल जाया करे। जो धुलती न दीखे, तो तेल और तवे की कालिख लगा दिया करे। दस-पाँच दिन करने से धुल जायगी।

बालक को स्वच्छ कपड़ों में रखना चाहिये। भीगे या मलिन पोतड़े न रखने चाहिए। कपड़े तुरन्त बदल दिये जायँ। जो बालक बहुत ही निर्बल हो, अथवा सत-मासा, अठमासा हो, तो उसको पानी में नमक डाल-कर नहलावे। अगर बालक की खाल की सुकड़न के पास कुछ मैल या छिला-फटा नजर पड़े तो उसको नरम कपड़े या स्पंज से हौले-हौले धो दिया करे, चिकनी खड़िया और चावल के आटे या मैदा को मिलाकर लगा दिया करे, घाव भर आवेगा। यहाँ तक तुमको वे बातें बताईं, जो सौरगृह से सम्बन्ध रखती हैं। बाकी आगे बताऊँगी।

स्त्रीचिकित्सा

[illegible]ई का काम तो मैंने तुमको बता दिया, अब मैं [illegible] के कुछ रोगों की औषध और यत्न इत्यादि भी बताये देती हूँ।

स्त्रियों को बहुत-से रोग ऐसे होते हैं कि लाज के

पाँव और माथे में पसीना निकलना, (१४) शरीर का फूल जाना और (१५) मर्मस्थान में शूल का होना।

स्त्री के लिये इस रोग से अधिक कष्टदायी दूसरा रोग नहीं है।

इस अकेले रोग ही से स्त्री के अनेक प्रकार के दूसरे रोग उठ खड़े होते हैं। जिस स्त्री को इस रोग ने घेरा; उसका जीवन भार हो जाता है। इसको न होने देने का सहज उपाय यही है कि सौर में पूरी-पूरी सावधानी रक्खी जाय। अर्थात् चालीस दिनों तक जच्चा को पूरे नियम से रक्खा जाय। पहले पन्द्रह दिनों तक तो बहुत ही सावधानी से रहे-सहे, खाये-पिये और सर्दी से बची रहे तो यह रोग उत्पन्न न होगा। नियम ये हैं—

(१) सौरगृह में ठंढी वायु न जाने दे।

(२) असवन्द, अजवाइन इत्यादि गरम वस्तुओं की धूनी सौरगृह में नित्य दे।

(३) जाड़ों में उस घर को आग से गरम रक्खे।

(४) हेमगर्भ की एक-एक रत्ती मात्रा अदरख के रस में पहले तीन दिन तक देनी चाहिये। या दशमूल का काढ़ा देना चाहिये; जो पहले मैं बता चुकी हूँ।

(५) अधऔटा पानी देना चाहिये; जिसमें सोंठ, पीपल, गजपीपल, पीपलामूल इत्यादि पड़ी हों।

सम्भावना होती है, और उन रोगों के लक्षण ये हैं—मूत्र रुक जाता है, पेट भारी होने लगता है। ऐसी दशा में कड़वी तूँबी, कड़वी तोरई (ये वर्षाऋतु में ढाक-वृक्ष के जंगल में बहुत होती हैं), सरसों, साँप की केंचुल इन सबको सरसों के तेल में मिलाकर सूतिका को धूनी दे।

प्रसूत—यह रोग जापे ही में स्त्री को हो जाता है। इसी से इसका यह नाम पड़ा है। आजकल कोई भी स्त्री इससे बची हुई नहीं है। प्रायः सभी थोड़ी-बहुत इस रोग में ग्रस्त हैं। जच्चा की अवस्था में जो स्त्रियाँ अपना खान-पान नियम से नहीं रखतीं, और अनाचार व थोड़ी-सी भी असावधानी कर बैठती हैं, वे जन्म भर कष्ट भोगती हैं। इस रोग के लक्षण ये हैं—

(१) शरीर का टूटना, (२) भीतर ज्वर का अंश बना रहना, (३) प्यास अधिक लगना, (४) पेट, पीठ, पसली, कमर, घुटने इत्यादि में सदा अथवा चाहे जब दर्द होना, (५) हाथ, पाँव या पेट पर सूजन का आना, (६) बार-बार कय का आना, (७) जी का मिचलाना, (८) आँखों में धुन्ध होना, (९) कब्ज रहना, (१०) मूत्र ठीक न आना, अथवा कभी बहुत और कभी थोड़ा आना, (११) शरीर में कमजोरी का होना, (१२) डकारों का बहुत आना, (१३) हाथ,

अब एक सेर बूरे की चाशनी करे। जब तीन तार चाशनी में आने लगें, तब वह खोया उसमें डाल दे, और यह मसाला डाले—

केसर छः माशे, कस्तूरी डेढ़ माशे, भीमसेनी कपूर तीन माशे, पिस्ता चार तोला, छिला बादाम आठ तोला। इन सबको मिलाकर चकती या लड्डू बना ले। एक तोला नित्य गरम दूध के संग खा लिया करे।

(२) बैतरा सोंठ का चूर्ण पाव-भर, चका दही आध-पाव, पीपल छोटी आध पाव, धतूरे के बीज आध पाव। इन सबको एक मिट्टी की हाँडी में भरे, मुँह बन्द करके उस पर तीन कपरौटी चढ़ा दे। फिर हाथ-भर लंबा, चौड़ा और नीचा एक गढ़ा खोदकर आग सुलगा दे। जब कंडे जल जायँ, तब राख निकालकर फिर भरे, और आग दे। इसी प्रकार तीन बार करे। अब हांडी को बहुत सावधानी से निकालकर उसमें से सब औषधें रत्ती-रत्ती भर निकाल ले। हाँडी में लगी न रह जाय। अब इसको शीशी में भरकर डाट कसकर लगा दे। यह साधारण मात्रा है।

यदि इसको बहुत तेज करना चाहे, तो इसमें सात-सात पुट अदरख, बँगला पान के रस और थूहर के दूध के

(६) भोजन बलिष्ठ, किन्तु पाचक और हलका देना चाहिये। ये उपाय तो इसके रोकने के हैं। इसके दूर करने के उपाय ये हैं।

(१) गोखुरू ढाई तोले कुचलकर आध सेर पानी में औटावे। जब छटाँक-भर रह जाय, तब छटाँक-भर बकरी का दूध मिलाकर सात दिन तक दोनों समय साँझ-सवेरे पिये। इससे अवश्य ही शीघ्र आराम होगा। जो कहीं पेट, पसली इत्यादि में दर्द होता हो, तो तिल का तेल मलकर नामे से सेंके। परन्तु ठंडे पानी से बची रहे। जिस स्त्री को यह रोग हो जाय, वह इतनी वस्तुओं से बचे—१ भात, २ दही, ३ खटाई, ४ शरबत, ५ ठंडा पानी और ६ ठंडी हवा।

इस रोग में पथ्य ये चीजें हैं—अरहर या मूँग की दाल। रोटी, पूरी, दूध, गरम साग। इस रोग में सुहाग-सोंठ, विषगर्भ रस या मरीच्यादि तेल भी बहुत गुण करते हैं। इनके बनाने की क्रिया ये हैं—

सुहागसोंठ (१)-बैतरा सोंठ पाव-भर लेकर, कूट-छानकर रख ले। डेढ़ सेर गौ के दूध को औटावे। जब आधा रह जाय, तब सोंठ का चूर्ण डालकर चलाती रहे। जब खोया हो जाय, तब पाव-भर गौ का घी डालकर उसे भून ले। इसको थाली में निकालकर रख ले।

छः माशे और आधी छोटी पीपल पीसकर दो रत्ती मात्रा मिलाकर दे।

सन्निपात में अदरख का रस छः माशे, पीपल एक और तीन रत्ती मात्रा पीसकर दे। पैरों के तलवे में अदरख का रस, लहसन का रस और अजवाइन गरम करके मले।

सरदी में तीन माशे शहद में दो रत्ती मात्रा चाटे।

हुचकी में शहद और अदरख का रस तीन तीन माशे और मात्रा डेढ़ रत्ती मिलाकर चाटे।

विषगर्भ तेल—धतूरे की जड़, निर्गुण्डी, कड़वी तूँबी की जड़, अरंड की जड़, असगन्ध, पमार, चित्रक, सहँजने की जड़, कागलहरी, करिहारी की जड़, नींब की छाल, बकायन की छाल, दशमूल, शतावरी, चिरपोटन, गौरीसर, बिदारीकन्द, थूहर के पत्ते, मदार के पत्ते, सनाय, दोनों कनेरों की छाल, अज्झाझारा (चिरचिड़ा या अपामार्ग) और सीप। इन सबको तीन-तीन टके भर ले। इन्हीं के बराबर काले तिल का तेल ले। इतना ही अंडी का तेल ले। इनसे चौगुना पानी डाले। फिर सब औषधों को कूटकर इसमें डाले और मीठी आँच से पकावे। जब पकते-पकते सब औषधें और पानी जल जाय, केवल तेल ही रह जाय, तब उतार ले। फिर इसमें सोंठ,

क्रम से दे दे, फिर ऊपर की भाँति करने उपलों की आग पौहर पार दे।

(३) बैंगरा मोठ का चूर्ण पाव-भर, मज्जी आध पाव, लौंग छटाँक-भर। इनको थूहर के दूध में पीसकर लुगदी बना ले, और मिट्टी के उतने ही बड़े बरतन इस लुगदी को रख दे। हाथ-भर लम्बे, चौड़े और गहरे गढ़े में बरने कंडे भरकर ऊपर की भाँति फूँक ले। परन्तु जब आधे कंडे जल चुकें तब और कंडे डालकर मिट्टी से आग को ढक दे। आग देने के आठ पहर पीछे इसको निकाल ले। फिर इनका थूहर के दूध, बँगला पान के रस और भँगरा के रस में क्रम से आठ-आठ पहर खरल करे (रस में पानी या छिलका कुछ न रहने पावे, निचुड़ा हुआ केवल रसमात्र हो)।

जितना-जितना रस सूखता जाय, उतना-उतना ही डालती जाय और खरल करती जाय। इसको फिर मिट्टी के बरतन में कपरौटी करके ऊपर की भाँति फूँक ले; और आठ पहर पीछे निकाले। फिर पीसकर शीशी में भर डाट लगा दे। इसका अनुपान यों है—

कमर, पेट तथा छाती के दर्द में छः माशे अदरख के रस में तीन रत्ती देनी चाहिये।

कफ की खाँसी में अदरख का रस छः माशे, शहद

रोगों को खोता है। प्रसूत के लिये ये औषधें भी गुण-कारी हैं—

(१) एक माशे लोहबान का सत और दो रत्ती कस्तूरी मिलाकर सात गोली बाँधे। एक गोली नित्य निहार मुँह खाय।

(२) बीरबहूटियों को पकड़कर एक डिबिया में बन्द कर दे, और उसमें चावल डाल दे। महीने-दो-दो-महीने रक्खी रहने दे। जब बीरबहूटी मर जायँ, तब उन चावलों में से एक चावल नित्य खा लिया करे।

प्रसूतिका को ज्वर अर्थात् जब सौरगृह ही में प्रसूता को ज्वर आ जाय (जिसके ये लक्षण हैं कि देह में हड़-फूटन हो, शरीर भारी और गरम रहे, कम्प हो, प्यास हो, सूजन हो, अतीसार अर्थात् बार-बार दस्त हो), तब इस दशा में सबसे उत्तम तो दशमूल का काढ़ा है, जिसको मैं पहले धात्रीशिक्षा में तुझको बता चुकी हूँ। यदि यह न मिल सके तो अजमोद, जीरा, वंशलोचन, खैरसार, विजयसार, सौंफ, धनिया, मोचरस, इन सबको बराबर-बराबर लेकर दो तोले को आध सेर पानी में औटाकर जब छटाँक-भर रह जाय, दस दिन तक पिलावे।

गर्भिणी को ज्वर अर्थात् गर्भावस्था ही में जब ज्वर आ जाय, तो उसकी औषध यह है—रक्तचन्दन, दारवा,

मिर्च, पीपल, असगन्ध, रास्ना, कूट, नागरमोथा, बच, देवदारु, इन्द्रजौ, जवाखार, पाँचों नमक, नीलाथोथा, कायफल, पाढ़, भारंगी, नौसादर, गन्धक, पुष्करमूल, शिलाजीत और हरताल ये सब औषधें घेले-घेले-भर ले। सिंगीमुहरा एक टके भर ले। इन सबको महीन पीस तेल में डाले। फिर इस तेल को मले, तो सब वात के रोग दूर हों। पीठ, जाँघ, संधि इत्यादि की सूजन और हड़-फूटन, कर्णशूल, गण्डमाला इत्यादि रोग दूर हों।

मरीच्यादि तेल—कालीमिर्च, निसोत, दारुणी, मदार का दूध, गोबर का रस, देवदारु, दोनों हल्दी, छड़, कूट, लालचन्दन, इन्द्रायन की जड़, कलौंजी, हरताल, मैनसिल, कनेर की जड़, चित्रक, कलिहारी की जड़, नागरमोथा, वायविड़ंग, पमार, सिरस की जड़, कुड़े की छाल, नींव की छाल, सतौंप की छाल, गिलोय, थूहर का दूध, किरमाला की गिरी, खैरसार, बाबची, बच, मालकाँगनी, इन सबको दो दो टके-भर ले। सिंगीमुहरा चार-टके-भर, कड़वा तेल चार सेर और गोमूत्र सोलह सेर ले। इन सबको इकट्ठा चढ़ाकर मीठी आँच से पकावे। जब गोमूत्र आदि सब जल जावें, केवल तेल रह जाय, तब उतारकर छान ले। पीछे इस तेल को मले। यह यौवन को निखारता और वायु के

रोगों को खोता है। प्रसूत के लिये ये औषधें भी गुण-कारी हैं—

(१) एक माशे लोहबान का सत और दो रत्ती कस्तूरी मिलाकर सात गोली बाँधे। एक गोली नित्य निहार मुँह खाय।

(२) बीरबहूटियों को पकड़कर एक डिबिया में बन्द कर दे, और उसमें चावल डाल दे। महीने-दो-दो-महीने रक्खी रहने दे। जब बीरबहूटी मर जायँ, तब उन चावलों में से एक चावल नित्य खा लिया करे।

प्रसूतिका को ज्वर अर्थात् जब सौरगृह ही में प्रसूता को ज्वर आ जाय (जिसके ये लक्षण हैं कि देह में हड़-फूटन हो, शरीर भारी और गरम रहे, कम्प हो, प्यास हो, सूजन हो, अतीसार अर्थात् बार-बार दस्त हो), तब इस दशा में सबसे उत्तम तो दशमूल का काढ़ा है, जिसको मैं पहले धात्रीशिक्षा में तुमको बता चुकी हूँ। यदि यह न मिल सके तो अजमोद, जीरा, वंशलोचन, खैरसार, विजयसार, सौंफ, धनियाँ, मोचरस, बराबर लेकर दो तोले

जब अर्द्ध-भर रहे

मिर्च, पीपल, असगन्ध, रास्ना, कूट, नागरमोथा, वच, देवदारु, इन्द्रजौं, जवाखार, पाँचों नमक, नीलाथोथा, कायफल, पाढ़, भारंगी, नौसादर, गन्धक, पुष्करमूल, शिलाजीत और हरताल ये सब औषधें धेले-धेले-भर ले। सिंगीमुहरा एक टके भर ले। इन सबको महीन पीस तेल में डाले। फिर इस तेल को मले, तो सब वात के रोग दूर हों। पीठ, जाँघ, संधि इत्यादि की सूजन और रस-फूटन, कर्णशूल, गण्डमाला इत्यादि रोग दूर हों।

मरीच्यादि तेल—कालीमिर्च, निसोत, दालचीनी, मदार का दूध, गोबर का रस, देवदारु, दोनों हल्दी, छड़, कूट, लालचन्दन, इन्द्रायन की जड़, कलौंजी, हरताल, मैनसिल, कनेर की जड़, चित्रक, कलिहारी की जड़, नागरमोथा, वायविड़ंग, पमार, सिरस की जड़, कुड़े की छाल, नींव की छाल, सतौंप की छाल, गिलोय, थूहर का दूध, किरमाला की गिरी, खैरसार, बावची, वच, मालकाँगनी, इन सबको दो दो टके-भर ले। सिंगीमुहरा चार-टके-भर, कड़वा तेल चार सेर और गोमूत्र सोलह सेर ले। इन सबको इकट्ठा पकाकर मीठी आँच से पकावे। जब गोमूत्र आदि सब जल जावें, केवल तेल रह जाय, तब उतारकर छान ले। पीछे इस तेल को मले। यह यौवन को निखारता और वायु के

प्रतीत हो सकते हैं। परन्तु इसके अनेक लक्षण हैं। कभी थोड़े और कभी बहुत प्रतीत होने लगते हैं। यह स्त्रियों में इतना अधिक हो गया है कि बहुत स्त्री इसमें पड़ी भोग रही हैं। इस रोग के कुछ ऐसे रूप हैं कि यहाँ के अपढ़ और नासमझ लोगों ने तो इसको भूत, प्रेत, असुर, चुड़ैल और भुतनी मान लिया है। रोग का कुछ उपाय नहीं कराते। केवल स्यानों के गंडे, तावीज़, लौंग, भभूत इत्यादि कराकर बेचारी स्त्रियों को व्यर्थ कष्ट देते हैं, इनकी जान तक खो देते हैं। इसके लक्षण ये हैं—

(१) सिर में भारी पीड़ा का रहना। (२) आँखों की भौंहों में ऐसी पीड़ा होना, मानो कोई कील ठोकता है। (३) मन उदास और गिरा रहता है। (४) विना कारण आँखों में आँसू भरे रहते हैं। (५) एकान्तवास से मन प्रसन्न रहता है। दस जनों में घबराता है। (६) मन किसी वस्तु में नहीं लगता। न कोई वस्तु सुहाती है। (७) कण्ठ रुक जाता है, और गोला-सा कण्ठ में जान पड़ता है (इसी गोले के उठने से प्रतीत हो जाता है कि रोग का वेग आनेवाला है)। (८) कलेजा धड़कता है। (९) साँस छोटी और झटझट आती है। (१०) बाईं तरफ पसली में दर्द होता है। (११) छाती में बहुत कष्ट मालूम होता है,

गोरीसर, नम, दुलहटी, महुआ, धनिय मिसरी। इन सबको बराबर-बराबर लेकर दिन तक पिये तो ज्वर जाय। मुलहटी नम, गोरीसर, कमल की जड़, इन सबको बराबर लेकर काढ़ा करे, और वह मिसरी मिलाकर पिलावे।

झान आना—अर्थात् मस्तक में कमजोर एक प्रकार की झनझनाहट से मूर्च्छा-सी हो यह गर्भिणी को बहुधा हो जाती है। जब प्रतीत हो, तो गर्भिणी खाट पर चित लेट ज सिर के नीचे तकिया इत्यादि न रक्खे। अपने को ढीला कर दे, हवा करावे। घर के किवाड़ मु तो खुलवा दे। मुख पर ठंडे पानी के छींटे दे। सु सूँघे। बहुत मनुष्यों को अपने पास न रहने दे।

बाँयटे— ये गर्भिणी को पिछले दिनों में अर्थात् महीने से लेकर बालक होने तक बहुधा आते हैं। रोग नसों के तनने से होता है। इसलिये ज्यों ही न तनती जान पड़ें, त्यों ही कपड़ा बाँध दे। अफीम के रस से सेंके। नमक की गरम पोटली से या बोतल में गरम पानी भरकर उससे सेंके।

मस्तकपीड़ा

हवादार स्थान में बैठने को जी चाहता है। यह रोग बहुधा ऐसी स्त्रियों को होता है, जिनका गर्भ बेर-बेर गिर पड़ता है या जिनके संतान बहुत और शीघ्र-शीघ्र होती हैं, या जिनको शोक अधिक रहता है, अर्थात् जिन कारणों से देह निर्बल होती है, उन्हीं कारणों से यह रोग उत्पन्न होता है। इसका सबसे उत्तम उपाय यही है कि गर्भाशय को ठीक करके शुद्ध कर देना चाहिये, जिसमें ठीक समय पर ठीक तरह से मासिक धर्म होने लगे। पीछे और भी उपाय हो सकता है।

यह रोग क्वाँरी लड़कियों को भी होता है। परन्तु उनको झूठा होता है। ब्याही स्त्रियों को सच्चा होता है। विशेषकर उनको, जो बाँझ या विरहिन हैं या पति का जिनको शोक रहता है, उन्हें होता है। इस कारण कि उनके पति उनसे प्रेम नहीं करते, या परदेश को चले गये हैं, या छोटे हैं या पिण्डरोगी अथवा नपुंसक हैं।

जननेवाली स्त्री को बाँझ की अपेक्षा यह रोग कम होता है।

उपाय—यदि दूध के साथ पान का रस मिलाकर दिया जाय, तो यह रोग दूर हो सकता है।

मसूढ़े दुखें या दाँत खोखले हों—गर्भावस्था में स्त्री के मसूढ़े और दाँतों में बहुधा दर्द होता है। किसी-किसी

मानो छाती का मांस गलता जाता हो। (१२) बड़ी डकार आती हैं। (१३) पेट ऐंठता है। (१४) आँतें गड़गड़ाती हैं। (१५) देह की सब नसों में विना रोग ही पीड़ा होती है, कभी किसी ठौर पर, कभी किसी ठौर पर। (१६) देह में कोई जगह ऐसी नहीं रहती, जहाँ पीड़ा न जान पड़ती हो। (१७) दाँतों की वत्तीसी भिच जाती है। (१८) देह ऐंठकर कमान-सी हो जाती है। (१९) कभी-कभी बेरंग का मूत्र बहुत-सा होने लगता है। (२०) कभी-कभी पेट में अफरा जान पड़ता है। (२१) वायु आँतों में गुरगुरा-कर आँतों तक आ जाती है, और कण्ठ रुक-सा जाता है। (२२) कभी-कभी पेट भी इतना फूल जाता है कि गर्भ-सा जान पड़ता है। (२३) इसके कोई-कोई लक्षण लकवे से भी मिलते हैं, अर्थात् रोगी कहता है मेरा हाथ रह गया, मेरा पाँव रह गया। पर यह रोग अधिक देर तक नहीं ठहरता। इधर आया, उधर चला गया।

इस रोग की अधिकतर पहचान यह है कि रोगी देव-मन्दिर आदि में जाने से झिझकता है। और यदि चला भी जाय, तो उसका अपना कण्ठ घुटता-सा और छाती गिरती-सी जान पड़ती है। बाजे बजने पर रोगी को मूर्च्छा हो आती है, या वह चिचियाने लगता है।

(४) रोटी के संग शहद या राब खाय ।

हुक्मी विरेचन यह है (इस कारण कि जितने दस्त लेना चाहे, उतने ही आवें । अधिक न आवें)—

सुपारी, बड़ी हड़ का छिलका, बबूल की कोंपल, तीनों एक-एक तोला लेकर तीन पाव पानी में औटावे, जब छटाँक-भर पानी रह जाय, तब उतार ले । जितने दस्त लेना चाहे, कपड़े में उतने ही बेर इस काढ़े को छानकर पी ले । जितनी बेर छानोगे उतने ही दस्त आ जावेंगे ।

गर्भिणी की वायु—पाँच या सात बादाम की मींगी और एक माशे गेहूँ की साफ भूसी खा लिया करे, तो गर्भिणी को वायु का कोप नहीं होने पाता, दबा रहता है ।

गर्भिणी का अफरा—बच, रसौंत, हींग, काला नमक, इनमें दूध औटाकर पिये ।

मूत्र न उतरे, तो डाभ की जड़, दूब की जड़ और काँस की जड़, इनको थोड़ा-सा ले और दूध में औटाकर पिये ।

संग्रहणी (अर्थात् जब भोजन न पचे, खाया कि दस्त में निकल गया) की दशा में चावल का सत्तू, आम और जामुन के बकल के काढ़े से खाय ।

गर्भिणी को वमन—यह स्त्रियों को बहुधा हुआ

स्त्री के तो ऐसा होता है कि प्रत्येक गर्भ में एक
गिरता जाता है।

जब दाँतों में दर्द जान पड़े, तब रुई से दोनों
मूँद दे। यदि इससे चैन न पड़े, तो लौंग के तेल में
भिगोकर दाँत में रक्खे या यदि मसूड़ों में दर्द
मसूड़ों पर लगावे।

मसूड़ों में दर्द हो, और पेट में गड़बड़ हो,
दशा में औषध खानी चाहिये, अथवा पोस्त के
और बाबूना को औटाकर कुल्ले करे, और सोते
पुलटिस बाँध ले। कागज को ब्रांडी (शराब) में
कर और ऊपर से पिसी हुई काली मिर्च छिड़कक
तीन घंटे तक गलपटे पर लगा रहने दे।

गर्भिणी के लिये मेदी (अर्थात् हलका
औषध ये हैं—

(१) अरण्डी का तेल दूध में पिये।

(२) दो तोले दाख, एक तोला गुलाब
दो तोले अंजीर। इनको पीसकर चटनी बन
तीसरे-चौथे दिन एक सुपारी के बराबर खा लि
यदि प्रयोजन हो, तो सोते समय थोड़ा-सा अधि

(३) पके अंगूर और भुने सेव से भी
होता है।

गर्भपात—इसके लक्षण ये हैं कि प्रसवद्वार से असमय रुधिर निकलने लगे। छाती ढीली और छोटी हो जायँ। स्तनों का दूध सूख जाय। पेट ठंडा और भारी हो जाय। बालक का फड़कना बन्द हो जाय। गर्भाशय में कुछ पिण्ड-सा ढुलकता हुआ जान पड़े। करवट लेने से पिण्ड-सा इधर-उधर कोख में आवे। इसके उपाय गर्भरक्षा में बता चुकी हूँ। गर्भपात में भी जापे के बराबर, वरन् अधिक सावधानी करनी पड़ती है। प्रसूता को खाने के लिये दो-तीन दिनों तक कुछ नहीं दिया जाता। इन दो-तीन दिनों में ताँबे के पैसों को पानी में औंटा-कर पिलाते हैं। कोई बाँस का पानी औंटाकर पीने को देते हैं। दो-तीन दिन पीछे भोजन इत्यादि देते हैं। जो पेट में बालक मर गया हो, तो उसके लक्षण तो मैं तुमको धात्रीशिक्षा में बता चुकी हूँ। उपाय यहाँ बताती हूँ। छटाँक-भर गौ का गोबर डेढ़ पाव पानी में घोलकर पिला दे। अथवा काले साँप की केंचुल की धूनी अंग के भीतर दे। तुरन्त बालक हो पड़ेगा। यदि इनसे बालक जल्द न निकले, तो तुरन्त किसी चतुर दाई को, जिसने डॉक्टरी पढ़ी हो (न मिल सके, तो डाक्टर को), बुलाकर बालक को काटकर निकलवा ले। नहीं तो थोड़ी ही देर में इसका विष पेट में फैल जाता है, और पीछे स्त्री

करती है। इसका उपाय यह है कि गेरू को आग में गरम करके पानी में बुझा ले, और उस पानी को पिये अथवा कपूरकचरी को पीसकर मूँग बराबर गोली बनाकर खाय, या वटवृक्ष की डाँठी जलाकर उसकी राख शहद में चाटे।

गर्भिणी के पाँव की सूजन—जिस स्त्री के पाँवों पर सूजन आ जाय, उसको चाहिये कि थोड़ा-थोड़ा चला करे। इससे सूजन जाती रहेगी।

गर्भिणी को कम नींद आना—सोते समय थोड़ा पानी पी ले, और गीला कपड़ा एक हाथ में लपेटकर सो रहे, नींद आ जायगी।

गर्भिणी के रुधिर का बहना—कभी-कभी किसी-किसी स्त्री को किसी कारण ऐसा हो जाता है कि रुधिर बहने लगता है, जिससे गर्भ को बहुत ही हानि पहुँचती है, बालक दुबला पतला हो जाता है, वरन् कभी-कभी तो गर्भ बिना समय गिर भी पड़ता है। जब ऐसी दशा हो, तब अनार के छिलके के पानी की पिचकारी लेने से यह 'जरायुप्रवाह' रुक जाता है। इस पानी के बनाने की रीति बालचिकित्सा के रक्तातीसार के उपाय में बताऊँगी। फिटकरी के पानी में कपड़ा भिगोकर गुप्त अंग के भीतर रक्खे।

पत्थर को अपने हाथ में प्रसूता पकड़े रक्खे। (६) मनुष्य के बाल जलाकर, गुलाबजल में मिला स्त्री के तलवे पर मले या स्त्री की लट उसके मुख में दे दे । (७) अज्जा-झारा अथवा औंगा को पीस, टिकिया करके थोड़ी देर तक टूँड़ी पर रक्खे । (८) वच उबालकर पी ले। (९) यन्त्र घुलाकर जो पिलाते हैं, यह सब थोथी बातें हैं, इससे कुछ नहीं होता। यह कभी न करना चाहिये। (१०) गर्भिणी को तेल लगाकर गरम पानी से नहला दे। (११) थोड़ी-सी मूँग की खिचड़ी गरम-गरम खिला दे, या गरम दूध अथवा पानी पिला दे। (१२) पोय की पत्ती और जड़ पीसकर तिल का तेल मिलाकर भीतर लगा दे। (१३) पीपल, वच पानी में पीसकर और गरम कर अण्डी के तेल में मिलाकर टूँड़ी पर लगा दे । (१४) साँप की केंचुल की धूनी अंग के भीतर दे। (१५) हुलास से छींक लिवावे। (१६) प्रसूता के पास हीरे की कनी न रहने दे। (१७) ओखली में धान डालकर गर्भिणी को मूसल देकर उससे कुटवाये। सवारी या ऊँचे आसन पर बिठावे।

(१) पिलानेवाला के स्तनों में जो दूध कम हो, तो यह उपाय करे कि भाड़ में गेहूँ उकरवा * और अखरोट के

* एक बालू से भुनवाना, जिसमें अधभुने हो जायँ।

का बचना दुर्लभ हो जाता है, बरन् स्त्री बहुधा मर ही जाती है। इसलिये विलम्ब करना अनुचित है।

पुष्पावरोध—इसके कुछ लक्षण तो पहले बता चुकी हूँ, अर्थात् पूर्वोक्त कारणों से मासिकधर्म ठीक समय पर न हो, अथवा कई-कई मास तक रुका रहे, और दो-दो, तीन-तीन, बरन् चार-चार, पाँच-पाँच महीने में हो, सो भी कष्ट से और रुधिरप्रवाह कम हो। इसका उपाय किसी चतुर वैद्य से करावे। जिस कारण से हुआ हो, उसी का उपाय करावे। इसके उपाय बता भी चुकी हूँ। उनके अलावा चिरचिटे की जड़ को रेशम में बाँधकर गले में पहने, तो आराम हो जायगा।

स्त्री के पेट का बढ़ आना—फलालैन की पट्टी पेट पर लपेटकर गुदा के नीचे होकर न बहुत कड़ी और न ढीली बाँध रक्खे।

प्रसव को सुगम करने के उपाय—अर्थात् स्त्री जब पीड़ा से (जनने को) व्याकुल हो, तो इन औषधियों से काम ले—(१) अण्डी का तेल ढूँड़ी पर मले। (२) सेहुँड़ का दूध नख और ढूँड़ी पर मले। (३) सवा तोले अमलतास के छिलके को औटाकर, शकर मिलाकर पिला दे। (४) नौ माशे गुलबाबूना पानी में औटाकर, शहद डालकर पी ले। (५) मुश्क

.. इसको थनैला कहते हैं। इससे स्त्री को महाकष्ट होता है। उसकी औषध यह है—(१) नागरमोथा और मेथी को बकरी के दूध में पीसकर लगावे। (२) अरण्डी की पत्ती का रस निकालकर, उसमें कपड़ा भिगो-भिगोकर बेर-बेर लगावे। (३) गुलाब की पत्ती, सेब की पत्ती, मेहँदी की पत्ती और अनार की पत्ती बराबर-बराबर लेकर धो-पोंछ डाले और पानी में बहुत ही महीन पीसे। फिर आग पर गुनगुनी करके तीन-चार बेर स्तनों पर लगावे। लगाते-लगाते चैन पड़ जायगी। (४) सहँजने के पत्ते पीसकर लेप करे।

कुच तड़क गये हों या स्तनों में पीड़ा हो, तो (१) ग्लैसरिन (Glycerine) चुपड़ दे या घी में मोम मिलाकर चुपड़ दे। (२) सुहागा दो तोले, गेहूँ का सत सात तोले पीस-छानकर स्तन पर मले। (३) अरबी गोंद एक तोला और फिटकरी पाँच रत्ती, दोनों को महीन पीसकर स्तन पर लगावे। पहले नुस्खे से, जिसमें सुहागा है, बालक के मुख के फफोले भी जाते रहते हैं।

दूध से भरे स्तन जो तराते हों अथवा बालक न पीता हो, तो (१) ऐसी दशा में तेल मलवावे। (२) दूध की पुलटिस बँधवावे। (३) कपड़े की चौतह करके कुचों के बीच में लगाकर दोनों कुचों को कपड़े

पत्ते बराबर लेकर गौ के घी में पूरी उतारे और गौ के घी ही से सात दिन खाय, तो बाँझ के भी दूध उत्पन्न हो सकता है। (२) गौ के दूध में थोड़ी शतावर डाल, खाँड़ मिलाकर पिया करे। (३) जीरा सफेद और साँठी के चावलों की खीर पकाकर खाय। (४) सौंफ और शतावर को बराबर लेकर कूट-छान ले, और भीगे चनों के पानी के संग पिये। (५) गेहूँ के दलिये को दूध में पकाकर खाय। (६) सफेद जीरे का पाग बनाकर खाय।

दूध-शोधन—इसके लक्षण मैं तुझको 'बालक का पालन-पोषण' में बताऊँगी। परंतु औषध यहीं बताये देती हूँ—(१) मूँग का जूस पिये। (२) भारंगी, दारुहल्दी वच, अतीस तीन-तीन माशे घोटकर पानी में पिया करे (३) पाढ़, मूर्वा, मोथा, चिरायता, देवदारु, इन्द्रजौ, कुटकी इनका काढ़ा पिया करे। (४) जायफल की फ खिलावे। दूध पिलानेवाली को जो प्यास लगे तो मात दूध की लस्सी, ठंडा जल व काली चाय बनाकर पी पर शराब कभी न पिये, जैसे कोई-कोई स्त्री करती

जो स्त्रियाँ बालकों को दूध पिलाती हैं, उनके स में कई कारणों से गाँठ पड़कर फोड़े हो जाते और फि स्तन पक जाते हैं। जैसे बालक के सिर की चोट लग जाने से गाँठ पड़ जाती है अथवा गीले रहने से फट जाते हैं।

इसको थनैला कहते हैं। इससे स्त्री को महाकष्ट होता है। उसकी औषध यह है—(१) नागरमोथा और मेथी को बकरी के दूध में पीसकर लगावे। (२) अरण्डी की पत्ती का रस निकालकर, उसमें कपड़ा भिगो-भिगोकर बेर-बेर लगावे। (३) गुलाब की पत्ती, सेब की पत्ती, मेहँदी की पत्ती और अनार की पत्ती बराबर-बराबर लेकर धो-पोंछ डाले और पानी में बहुत ही महीन पीसे। फिर आग पर गुनगुनी करके तीन-चार बेर स्तनों पर लगावे। लगाते-लगाते चैन पड़ जायगी। (४) सहँजने के पत्ते पीसकर लेप करे।

कुच तड़क गये हों या स्तनों में पीड़ा हो, तो (१) ग्लैसरिन (Glycerine) चुपड़ दे या घी में मोम मिलाकर चुपड़ दे। (२) सुहागा दो तोले, गेहूँ का सत सात तोले पीस-छानकर स्तन पर मले। (३) अरबी गोंद एक तोला और फिटकरी पाँच रत्ती, दोनों को महीन पीसकर स्तन पर लगावे। पहले नुस्खे से, जिसमें सुहागा है, बालक के मुख के फफोले भी जाते रहते हैं।

दूध से भरे स्तन जो तर्राते हों अथवा बालक न पीता हो, तो (१) ऐसी दशा में तेल मलवावे। (२) दूध की पुलटिस बँधवावे। (३) कपड़े की चौतह करके कुचों के बीच में लगाकर दोनों कुचों को कपड़े

से बाँधकर कन्धों के पीछे कपड़े को बाँध दे, जिससे कुच नीचे को न ढलक सकें। इससे स्त्री को बहुत चैन पड़ती है।

प्रदर—यह कमजोरी से हो जाता है। इस रोग के होने से और भी कमजोरी आती जाती है। यह रोग स्त्रियों ही को होता है, पुरुषों को नहीं होता। इसके लक्षण ये हैं—प्रसवद्वार से एक प्रकार का श्वेत रंग का पानी-सा बहता रहता है (यह पानी कई प्रकार का होता है।) स्त्री के शरीर में पीड़ा रहती है। हड़फूटन होती है। पानी झागदार, लिपलिपा (चिपकना) और चिकना-सा निकलता है। कभी-कभी सफेदी निलाई या जर्दी लिये हुए होता है। यह दशा तो साध्य है; परन्तु जब रुधिर बराबर निकलता ही रहता है, रुकता नहीं, प्यास अधिक लगती रहती है, दाह होता है, शरीर में ज्वर रहता है, और शरीर अति दुर्बल हो जाता है, तब दशा दुःसाध्य है।

इसके होने के कारण ये होते हैं—गर्भपात, भारी बोझा उठा लेना, पेड़ू आदि में चोट लग जाना 'पुरुष-प्रसंग अधिक करना, अधिक मद पीना, विरुद्ध भोजन करना, बुरी सवारी पर बैठकर चलना, कोई अति तीक्ष्ण वस्तु खा लेना, अथवा अधिक सोच करना इत्यादि।

श्वेत प्रदर की अत्युत्तम औषधि—(१) लाल रतालू, शकरकन्द, इन दोनों को सुखाकर बराबर लेकर कूट, पीस, छानकर आधी मिसरी मिला, छः माशे लेकर उसमें चार बूँद बड़ का दूध डालकर खा ले। ऊपर से गौ का दूध पी ले। पंद्रह दिन ऐसा करे। निश्चय आराम हो। (२) पठानी लोध डेढ़ तोला ले, और महीन पीसकर तीन पुड़िया करे। सवेरे ही तीन दिन ठंडे पानी के संग फाँके। ऊपर से पकी केले की फली खाय।

पीला प्रदर—कायफल कूटकर दूध के संग खाय।

सब प्रकार के प्रदर जायँ—(१) सुपारी के फूल, पिस्ता के फूल, मँजीठ, सिरयाली के बीज, ढाक का गोंद। सब चार-चार माशे लेकर पानी के साथ फाँके, तो सफेद, पीला, स्याह, दुर्गन्धयुक्त सब प्रदर जायँ।

(२) सालबमिसरी, चिकनी सुपारी और माजूफल को कतरकर कतीरा, काली मूसली, केले की फली, मोचरस, चोबचीनी दो-दो तोले, केसर, जायफल, जावित्री, लौंग, सोंठ साढ़े चार चार माशे, मसौंढ़ा आठ तोला, तालमखाने, मस्तगी एक-एक तोला, देवदारु चार तोला। इन सबको कूट-पीसकर छान ले। इन सबके बराबर मिसरी लेकर चाशनी करे। आठ तोले घी और 5=

मावा डाले। पीछे कुटी-पिसी औषधें मिला दे। नौ-नौ माशे साँझ-सवेरे खा लिया करे।

अन्य औषधें—(१) तोला-भर फालसे के पेड़ की छाल ले। रात्रि को पानी में एक कोरे कुल्हड़ में भिगो दे। सवेरे उस पानी में मिसरी मिलाकर पी लिया करे। पन्द्रह दिन तक सेवन करे। (२) कसैला, माजूफल, पुरानी सुपारी, धाय के फूल, गोंद, लोध। इन सबको पाव-पाव-भर ले। मँजीठ तीन तोले, मोचरस तीन तोले, मैदा लकड़ी तीन तोले, सोंठ तीन तोले। इनको कूट-छानकर सेर-भर घी में भिगोवे, और दो सेर मिसरी की चाशनी करके लड्डू बाँध ले। छटाँक-छटाँक-भर नित्य दोनों समय खा लिया करे, तो सब प्रकार के प्रदर रोग जायँ। (३) चिकनी सुपारी को पीसकर घी में बराबर की खाँड़ मिलाकर दो-दो तोले नित्य दोनों समय खाय। (४) डाभ की जड़ को चावल के पानी में पीसकर तीन दिन पिये। (५) गूलर के फल सुखाकर महीन पीस उसमें मिसरी और शहद मिलाकर तोले-तोले भर की गोली बाँध, सात दिन खाय। टिंकचर स्टील (Tincture of Steel) की पाँच-पाँच बूँद पानी में डाल नित्य सवेरे पिये।

रक्तप्रदर वह है, जब स्त्री के गुप्त अंग से मासिक रुधि

बराबर बहता रहे, और बन्द न हो जिसको 'पैर काटना' या 'पैर जारी होना' कहते हैं। उपाय—१ आम की गुठली का चूरा करके घी, चूरे में मैदा मिला हलवा बनाकर खिलावे। २ आम की गुठली को आग में भूनकर खिलावे। ३ अशोक की छाल के काढ़े के साथ दूध को औटा और ठंडा करके प्रातःकाल शक्ति के अनुसार पिलावे। ४ कठगूलर के कच्चे फल के रस में शहद मिलाकर चटावे। दूध-भात खाय। सफेद सुरमा, रसौत, पठानी लोध, कहरवा, चुनियाँ गोंद, मोचरस, धाय के फूल। सब बराबर लेकर पीस-कूट, छान ले। सबके बराबर मिसरी मिलाकर छः-छः माशे की पुड़िया बनावे। गौ के कच्चे दूध के संग साँझ-सवेरे खाय। यदि कच्चा दूध न पच सके या जाड़े की ऋतु हो तो औटाकर पिलावे। पर गुनगुने दूध के संग सेवन करे। दूध न मिले, तो शहद के संग चाटे।

टिकिया—काही की टिकिया नरमाबन के पत्ते पर धरकर मूत्रस्थान पर बाँध दे और मँजीठ को औटाकर उसका पानी ठंडा कर पिलावे।

जो स्त्री को प्रदर रोग गर्भावस्था में पिछले महीने में हो, जैसा कि कभी-कभी हो जाता है; तो यह उपाय उचित है—

(१) स्त्री अपने नीचे कंबल बिछाकर न सोवे। (२) बिछौना बहुत गुदगुदा न रक्खे। (३) मल कोष्ठ को शुद्ध रक्खे। (४) कभी-कभी अल्प-विरेचक ओषधि खा लिया करे। (५) भोजन साधारण पर पुष्ट करे। (६) मदिरा आदि का कदापि सेवन न करे। (७) सज्जी, फिटकरी व सिरके को गरम पानी में मिलाकर भीतर के अंग को साँझ-सवेरे धो दिया करे।

अब तुझको कुछ फुटकर औषधें बताती हूँ, जो तेरे काम आवेंगी।

आँखों के रोग—(१) जो आँखें लाल रहती हों तो छः माशे बकरी के दूध में चार रत्ती अफीम पीसकर नेत्र के ऊपर लगावे। भीतर तनिक भी न जाने दे, वरन् हाथ तक न लगने दे। नहीं तो बहुत कष्ट होगा। (२) दो रत्ती फिटकरी को एक तोले पानी में पीसकर चार बूँद आँख में साँझ-सवेरे, दोनों वक्त डाले—ललाई जाती रहेगी।

रतौंधी—इस रोग में कमजोरी के कारण रात्रि या अँधेरे में कम देख पड़ता है। इसका मुख्य उपाय तो मस्तक की पुष्टि है। दवा—१ गौ का घी, मिसरी और काली मिर्च का सेवन प्रातःकाल ही किया करे। २ आँखों में अंगरेजी साबुन आँजे। ३ हुक्के की कीट (जो नैचे में

जमी होती है) अथवा देशी स्याही दावात में से लेकर आँख में आँजे। तीन-चार दिन में आराम हो जायगा। फिटकरी की सलाई बनाकर आँख में लगा लिया करे, पर अधिक नहीं। ४ पान के रस की तीन-चार बूँदें आँखों में डालकर पीछे से आँखों को साफ पानी से धो डाले। दस-पाँच दिन ऐसा करने से बीमारी जाती रहेगी।

नेत्र की ज्योति—कपूर जलाकर काजल पार ले। रात को आँजकर सो रहे। बहुत ही गुणकारी है। ज्योति बढ़ती है।

बवासीर—यह दो प्रकार का होता है—१ जिसमें रुधिर आता है। २ जिसमें मस्से सूज आते हैं।

पहले में छोटे-छोटे कोमल सोखनेवाले ललाई लिये हुए गुमड़े होते हैं, जिससे लहू गिरता है। इसके कारण मल त्यागने में बड़ी पीड़ा होती है। कभी-कभी इनके संग आँत तक निकल आती है। इसलिये जब यह रोग हो, तब बहुत देर तक मल त्यागने को न बैठी रहे। फिरकर तुरन्त उठ बैठे। जो बने तो अँगूठे के बल आँत को भीतर कर दे, और इसलिये अँगूठे के नख को कटाये रहे, जिससे लग जाने का भय न रहने पावे। खूनी बवासीर में रोगी बहुत निर्बल हो जाता है; परन्तु पीड़ा कम रहती है। मस्सों में पीड़ा बहुत ही अधिक होती है।

बेचैन होकर रोगी बिलबिला जाता है। दवा—मस्से जो सूज आये हों, तो अखरोट के तेल में रुई भिगोकर गुदा के भीतर रक्खे। मस्से गल जायँगे।

दो सेर पानी में पोस्त के डोरे और धतूरा को आध घंटे तक औटाकर, उसमें फलालैन का टुकड़ा भिगोवे, और इससे गुदा को सेंके। सोते समय पुलटिस बाँध दे। गेंदे की पत्ती कालीमिर्चों में घोटकर भाँग की भाँति पिये।

उबटना—(१) पीली सरसों ऽ१, श्वेत चन्दन का चूरा ऽ-, बालछड़ ऽ-, नेत्रबाला ऽ०॥, आम की छाल ऽ-, केसर १͟͟), चिरौंजी ऽ=, इन सबको कूट छानकर रक्खे। जब आवश्यकता हो, दूध में पीसकर लगावे। शरीर में सुगन्ध होगी, कांति बढ़ेगी और स्वच्छता होगी।

(२) बकरी का दूध, गौ का घी, मसूर का चून, नारंगी का छिलका और मैदा मिलाकर उबटन करे। सवेरे उठकर और सोने समय ठंडे पानी से मुख धो डाले।

यह तुझको स्त्रीचिकित्सा में नाममात्र बतला दिया है; नहीं तो पार भी नहीं पाती। अब उठ, चलकर सो रहें। भाई कई बार आ-आकर और दूर ही से हमको यहाँ बैठी देखकर फिर गया है। उसके सोने में बाधा पड़ती है। और सोना हमको भी है। यह कहकर दोनों उठ खड़ी हुईं।

स्वास्थ्यरक्षा

दूसरे दिन जब फिर रात्रि का समय हुआ, मोहिनी अपनी बड़ी बहन दुर्गा से आकर पूछने लगी— आज मुझको क्या सिखाओगी ? दुर्गा बोली—बहन ! अब मैं तुझको स्वास्थ्यरक्षा के विषय में कुछ बताना चाहती हूँ। इससे यह प्रयोजन है कि अपने शरीर को आरोग्य और नीरोग कैसे रक्खे ? यह भी अधिकतर स्त्री के अधीन है ; क्योंकि बहुधा खाने, पीने और घर को मैला-कुचैला रखने से स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। इसलिए इसके नियम तुझको बताती हूँ।

यह तो तू जानती ही है कि "संसार के सभी सुख एक ओर और अकेली आरोग्यता एक ओर।" कारण यही जब सुखों की जड़ है। यदि शरीर आरोग्य रहा, तो जीव मोक्ष तक के साधन सुगमता से प्राप्त करके उसे पा सकता है। किसी ने सच कहा है—"सहस्र सुख भी आरोग्यता के बराबर नहीं।" जिसकी काया नीरोग रहती है, वह सब सुख भोगती है। जो सदा रोगी रहती है, उसको सुख भी कुछ सुख नहीं दे सकता। नीरोग रहना दो प्रकार से हो सकता है। प्रथम खाने-पीने की वस्तुओं में सावधानी रखने से, दूसरे घर और कपड़े आदि के स्वच्छ रखने से। इसलिए मैं पहले

तुझको वही बताती हूँ कि खाने-पीने की वस्तुओं में क्या-क्या सावधानी रखनी चाहिए।

खाने-पीने की वस्तुओं को कभी खुला न रक्खे, क्योंकि खुला रहने से उनमें कूड़ा-कर्कट, धूल, मकड़ी के अण्डे, छोटे कीड़े, सुरेहरी, पई, घुन या ऐसी ही दूसरी वस्तुएँ गिर पड़ती हैं, और पेट में जाकर अनेक प्रकार के रोग, अपच आदि उत्पन्न करती हैं।

कच्चा भोजन न खाय। अच्छा पका हुआ खाय। कच्चा भोजन पेट में गद करता है, और थोड़े ही दिनों में बड़े-बड़े रोग पैदा कर देता है।

ऐसा भोजन कभी न खाना चाहिये, जो सड़ और घुस गया हो। फफूँद लगा या गल गया हो, सूख गया हो। कारण, सूखा भोजन पेट में जाकर आँतों में चुभता है, और फिर शूल का दर्द पैदा कर देता है। सड़ा-घुसा भोजन भीतर जाकर विष का असर रखता है।

इसलिये सदा टटका भोजन खाय, और स्नान करके खाय, चबा-चबाकर खाय। शीघ्रता से न निगल जाय। कौर छोटा खाना चाहिये। बड़ा कौर न खाय। जब एक ग्रास को खा ले, तब दूसरा मुख में दे। अधिक चबाने में यह गुण है कि मुख की लार भोजन में अधिक मिल जाती है, जिससे वह शीघ्र गलकर पच

जाता है। लार में एक प्रकार का खार रहता है

भोजन के समय बहुत पानी न पीना चाहिये। न भोजन के पहले और न पीछे पीना चाहिए। भोजन करके आध घंटे लेट रहना चाहिये। पीछे थोड़ा पानी पीने से भोजन अच्छा पचता है।

भोजन करके परिश्रम न करे, न राह चले। नहीं तो पेट में दर्द हो जायगा। भोजन तब करे, जब खूब कड़कड़ा कर भूख लगी हो; क्योंकि कहा है—"धनी को जब भूख लगे और दरिद्री को जब मिल जाय, उस समय भोजन करना उचित है।"

अरुचि या अजीर्ण में भोजन कभी न करे। परिश्रम करने के पीछे ही भोजन न करे। रुचि से अधिक भी न करे। जिसके सामने भोजन करने से लज्जा या ग्लानि आती हो, उसके आगे भी कभी न करे। इसलिये भोजन के लिये सबसे उत्तम एकान्त स्थान है। जिस भोजन के लिये मन न करता हो, उस भोजन को भी न करे क्योंकि "जो रुचता है वही पचता है।" किसी के संग भी भोजन करना उचित नहीं। साँझ-सवेरे की संधि समय में भोजन न करे। इससे वायु की वृद्धि होती है भोजन के पीछे ही भोजन न करे। कम-से-कम दो भोजनों में चार घंटे का अन्तर चाहिये। निय

समय पर भोजन होना चाहिये। नरम, पाचक, तर, सुरूप, सुगन्धित भोजन वृद्धि तथा बल को बढ़ाता है। अधिक भोजन अजीर्ण, पाकयन्त्र में पीड़ा और मन्दाग्नि तथा वमनरोग को उत्पन्न करता है। इसलिये इतना भोजन करे कि थोड़ी-सी रुचि बनी रहे। भोजन के पीछे स्नान भी न करे। भोजन करते समय रसोई करनेवाले को, कुत्ते को, मा या स्त्री अथवा अपने किसी और प्यारे को आगे बैठावे। इससे भोजन अच्छा किया जाता है, और पचता है। भोजन पेट भरकर कभी न करे। सदा थोड़ी-सी भूख बनी रहने दे। भोजन करने को जब बैठे, तब हाथ-पाँव धोकर और कुल्ले करके बैठे। पालथी मारकर सुख के आसन से बैठे। किसी प्रकार की चिन्ता का ध्यान न करे; किन्तु प्रसन्नचित्त होकर भोजन करे। भोजन के समय अप्रसन्न कभी न हो; क्योंकि प्रसन्न होकर खाने से चित्त शान्त रहता है, शरीर पुष्ट होता है। अप्रसन्न होकर करने से देह नहीं पनपती, वरन् घटती है।

भोजन के आदि में ईश्वर का ध्यान करके धन्यवाद दे, फिर पहले कुछ मीठा खाय; बीच में नमक और खटाई की वस्तु खाय। भोजन के अन्त में दही, मट्ठा, नींबू, इमली इत्यादि खाय। इससे अच्छा पचता है। इसी

कारण अचार या दही और बड़े या रायता भोजन में अवश्य होना चाहिये। भोजन के संग थोड़ा-सा गुड़ खा लेने से भी बहुत गुण होता है। भोजन खूब पचता है।

भोजन के आदि और अन्त में थोड़ा मीठा भोजन करे। जिन भोजनों का आपस में विरोध है, उनको एक साथ न खाय—जैसे दूध के संग शराब, मट्ठा, गुड़, मछली और साग; खीर के संग नींबू; तेल के संग दही और अफीम; उड़द के संग शहद; मूली के संग मीठा, मसूर-उड़द और मांस; केले के संग लस्सी; गरम भोजन के संग दही; खिचड़ी के संग खीर; दही के संग मूली या किसी पक्षी का मांस; सिरके के संग चावल; शहद के संग घी, मसूर, लहसन, खरबूजा, मुनक्का, दही और मूली; खरबूजे के संग मांस, शहद और आम; मांस के पीछे शहद; मछली के संग दूध, ईख का रस या शहद, लहसन, प्याज या बादाम न खाय। इन विरुद्ध भोजनों के सिवा छः प्रकार से भोजनों की विरुद्धता और भी मानी है। उसका भी ध्यान रक्खे।

(१) रस विरुद्ध—जैसे दूध और नमक, जिसके मिलने से दूध फट जाता है।

(२) योगविरुद्ध—जैसे गुड़ और दूध। ये मिलकर अवगुणकारी हो जाते हैं।

हो जाती है। पानी बहुत ठंडा भी न पिये और न गरम पानी पिये। भोजन के पहले भी पानी न पिये। इससे भी जठराग्नि मन्द हो जाती है। भोजन के संग बार-बार भी पानी न पिये। इससे भोजन पचता नहीं। अजीर्ण हो जाता है। परिश्रम करके भी तत्काल पानी न पिये, न पाँव धोवे। रात्रि में सोकर उठे, और पानी पीकर फिर सो जाय तो कफ अधिक होता है। इस-लिए ऐसा न करे। पानी पीने की एक कहावत प्रसिद्ध है—"माघ गलेला, भादों वेला, जेठ मास में प्यास की वेला।" इसका यह प्रयोजन है कि माघ मास में पानी बहुत ठंडा होता है। वह दाँतों में लगता है। इसलिये गले से पिये, अर्थात् बहुत ठंडे जल को जब पिये, तो दाँतों से लगाकर न पिये। भादों में पानी में कीड़े-मकोड़े या कूड़ा-करकट इत्यादि के पड़ने का भय रहता है। उजाले की वेला में पिये कि वह तुरन्त दीख जाय, ताकि निकाल डाला जाय और पानी में न आ जाय। जेठ मास में जब प्यास अधिक लगती है, बहुत पानी पिये कि फेफड़े सूखने न पावें। यह तो खाने-पीने के विषय में रहा, अब और विषय बतलाती हूँ।

प्राणी सारे दिन परिश्रम करता है, तो उसको रात्रि विश्राम करना उचित होता है। विश्राम में सोना सबसे

उत्तम और सुखदायक होता है। इसलिये इसके नियम तुझको बतलाती हूँ। ग्रीष्मऋतु में छः घंटे और शीत-ऋतु में आठ घंटे का सोना नीरोगी प्राणी को बहुत है। अथवा इससे कम या अधिक भी सो सकते हैं। परन्तु गरमी के दिनों में दुपहर को भी घंटे-दो-घंटे का विश्राम आवश्यक है। इससे मस्तिष्क की शक्ति को चैन मिलता है। बालक, बूढ़े और रोगी का नियत समय से अधिक सोना स्वास्थ्य का रक्षक है। सोना निर्विघ्न होना चाहिये, अर्थात् ऐसा कि उसमें स्वप्न इत्यादि कुछ न दीखे। सुषुप्तिदशा होनी चाहिये; स्वप्नदशा न रहनी चाहिये। इसी कारण सोने के पूर्व भोजन सूक्ष्म करना चाहिये। सोने के पूर्व पेट भरकर कभी भोजन न करे। सिर में तेल डालकर सोवे। दीपक को सोने के पहले बढ़ा दे। इससे नींद अच्छी और गहरी आती है। भरे पेट में बहुत और बुरे-बुरे स्वप्न दीखते हैं। नींद में विघ्न पड़ता है। शयनागार स्वच्छ और पवित्र होना चाहिये। उसमें दुर्गन्ध आदि कुछ न हो। बहुत असबाब आदि भी न भरा व रक्खा हो। शयनभवन में अच्छे-अच्छे फूल, चित्र इत्यादि रक्खे हों। भयानक खिलौने व चित्र न हों। दीवारें लिपी-पुती हों। ग्रीष्म और वर्षाऋतु में हवादार और शीत में गरम घर होना चाहिये।

खाट का सिरहाना पाँयते से कुछ ऊँचा रखना चाहिये, जितना अपने को भावे। परंतु सिरहाना उत्तर दिशा और पाँयता दक्षिण दिशा को न करना चाहिये। शास्त्र में इसको वर्जित किया है, और लोक में प्रसिद्ध भी है। वह इसलिये कि इस भाँति सोने से बुरे-बुरे स्वप्न दीखते हैं। मनुष्य कभी-कभी पागल तक हो जाते हैं, वरन् मर भी जाते हैं, क्योंकि तूने देखा है, दिग्यन्त्र (ध्रुवयन्त्र या कुतुबनुमा) की सुई सब ठौर उत्तर को होती है, तो ठहर जाती है। अन्य किसी दिशा में नहीं ठहरती। इसी भाँति मनुष्यों के मस्तक में जो धमनी नाड़ी है (अर्थात् वह जो बालक के तालू में लपका करती है), वह जब ठीक दोनों भ्रुवों के बीच में उत्तर को होती है, तो ध्रुवयन्त्र की सुई की भाँति ठहर जाती है। इसी कारण दक्षिण को पाँव और उत्तर को सिरहाना करके न सोना चाहिये। इसके ठहरने से मस्तक में रोग उत्पन्न हो जाते हैं, जो कभी-कभी अति भयानक होते हैं। बिस्तरा गुदगुदा हो। सिरहाना कुछ ऊँचा और उसीसा (तकिया) नरम हो। ओढ़ने-बिछाने के वस्त्र धुले हुए स्वच्छ हों, मलिन न हों। पसीने आदि की दुर्गन्ध न आती हो। जाड़ों में कपड़े धूप में सुखा देने चाहिये।

कपड़े से मुख ढककर न सोना चाहिये। नाक तक

थोढ़े । मुख उघारा रहने दे । इसका कारण यह है कि मुख में से जो दुष्ट वायु निकलती है, वह कपड़े से रुककर भर जाती है, और वही भीतर को साँस द्वारा फिर चली जाती है । मुँह उघरे में यह बात नहीं होती। स्वच्छ वायु बाहर से बराबर आती रहती है। सोने के घर में मिट्टी का तेल न रहने दे । भीगे या ठंडे वस्त्र ओढ़ या बिछाकर कभी न सोवे । सदा अकेली खाट पर सोवे। दूसरे जने को अपने पास न सुलावे । यहाँ तक कि स्त्री-पुरुष भी भोर तक एक खाट पर न सोवें। दिन में कभी न सोवे, विशेषकर वर्षाऋतु में । इससे ज्वरांश हो आता है । आलस्य शरीर में भर जाता है। अँगड़ाई आने लगती है । इसलिये दिन में सोने का शास्त्र में निषेध है। परन्तु बालक, बूढ़ी स्त्री, थकी हुई, घाववाली, मद्य पीनेवाली, नित्य वाहन पर चलनेवाली, मार्ग की थकी हुई, भूखी, मेद, पसीना, कफ, रस और रुधिर की क्षीण तथा उनींदी, अजीर्णवाली अगर थोड़ी देर को दिन में भी सो जायँ तो कुछ हानि नहीं, वरन् लाभ है। इस सोने से इनको चैन मिलती है।

धरती में कभी न सोवे, विशेषकर वर्षाऋतु में, क्योंकि बहुधा कीड़े-मकोड़े के काट खाने तथा कान और नाक में घुस जाने का भय रहता है। सोने के समय कान

में सदा रुई देकर सोना चाहिये। धरती पर सोने से नसें दब जाती हैं, देह तख्ता-सी हो जाती है; लहू बहना बन्द हो जाता है। यही तख्ता या चौकी पर सोने से भी हो जाता है।

ओस में सोना भी वर्जित है, क्योंकि ओस की ठंडक फेफड़ों में घुस जाती और खाँसी या दमे का रोग उत्पन्न कर देती है। सवेरे उठकर शरीर अकड़ने लगता है। देह टूटती है, और देह में आलस्य छाया रहता है।

सोने से पहले नित्य अञ्जन आँजना चाहिये। हाथ-पाँव धोकर और कुल्ले करके सोना चाहिये। इससे नींद गहरी आती है, स्वप्न नहीं दीख पड़ते। रात्रि को सोते समय और सुबह को उठते ही ताजे पानी से सदा मुँह धो डाले, तो मुख की कान्ति सदा बनी रहेगी। मुख पर झुर्री न पड़ेगी। यह एक बड़े प्रसिद्ध डाक्टर का नुस्खा है। दिन चढ़े या सूर्योदय तक न सोवे, वरन् चार घड़ी के तड़के, जब तक तारागण दीखते रहें, उठ बैठे। आँख-खुले पीछे फिर न लेटी रहे; क्योंकि यह हानिकारक है। आँख खुलते ही तत्काल उठ बैठे। थोड़ा-सा पानी पीकर मल-त्याग कर आवे, तो बहुत ही लाभदायक है; क्योंकि ऐसा करने से काया नीरोग और चित्त प्रसन्न रहता है। स्त्री की तो लाज भी बनी

रहती है। कवियों ने सवेरे उठने के बड़े-बड़े लाभ वर्णन किये हैं। यथा—

सदा रैन को सोइ के, जो जागे बड़ भोर।
रहै निरोग शरीर सों, गहै ज्ञान की डोर॥

प्रातःकाल उठकर शौच आदि जाना चाहिये। फिर निबटकर नीम, खैर, महुआ या करंजुवा की दतून करे। या यह मंजन मले—भुना हुआ जीरा, सोंठ, काली मिर्च, महीन पिसा और छना हुआ सेंधा नमक।

मुँह धोकर जहाँ हवा न आती हो, ऐसे स्थान में स्नान करना चाहिये। पहले सिर के तलुए पर कुछ तेल मले। सुगन्धित या तिल या सरसों का तेल हो। फिर सिर पर पानी डाले। इसी कारण तीर्थों पर संकल्प बुलवाकर पहले माथे पर जल चढ़ाने को कहते हैं। यह नहीं कि पहले पाँव धोवे, जैसा कि अब प्रचलित है। यह बहुत ही हानिकारक है। इससे गरमी ऊपर को चढ़ती है। सिर पर पानी डालने से नीचे को उतरती है। पर गरम पानी तलुए पर न डाले। गुनगुना भी, जहाँ तक बने, न डाले। ठंडा पानी मस्तक पर डालना चाहिये। पर शीतऋतु में ताजा पानी मस्तक पर डाले। स्नान करने से पहले शरीर में भी तेल मल ले, तो अति उत्तम है। बरन् तेल मलकर पहले उबटना भी कर लेना

चाहिये। पीली सरसों ५१, श्वेतचन्दन ५, वालछड़ ५, नेत्रबाला ५०॥, आम की छाल १), चिरोंजी ५॥; इन सबको कूट-छानकर रख छोड़े। जब आवश्यकता हो, तब दूध में पीसकर लगावे। शरीर में सुगन्धि होगी, कान्ति बढ़ेगी, स्वच्छता होगी। उबटने ही में तेल डालकर स्नान करे। नित्य तेल न मल सके, तो आठवें दिन तो मल ले। इसी कारण शनिवार को तेल मलने की विधि शास्त्रकारों ने लिखी है। तेल मलने से शरीर पुष्ट रहता है, फटने नहीं पाता, कोमल रहता है, बल बढ़ता है। स्नान करे, तब गीले अँगोछे को पानी में भिगो-भिगोकर शरीर को खूब रगड़े। यदि पानी में थोड़ा सिरका या नमक डाल ले, तो बहुत गुणकारी है। स्नान का प्रयोजन शरीर की शुद्धि है, न कि धर्म जैसा मान रक्खा है। अँगोछे से रगड़ने से मैल छूट जाता है, रोमों के मुँह खुल जाते हैं, जिससे भीतर की अशुद्धि निकलकर चित्त प्रसन्न होता है।

स्त्रियाँ तो आजकल ऐसा स्नान करती हैं कि एक लोटा पानी शरीर पर डाल लिया, और बस, स्नान हो गया। यह महाहानिकारी है, इससे शरीर का मैल फूलकर त्वचा में रोग उत्पन्न हो आते हैं। जब स्नान कर चुके तो तुरन्त सूखे अँगोछे से शरीर पोंछ डाले। वायु न

लगने दे। पसीने में, सोकर उठकर, परिश्रम करके या भोजन के बाद तुरन्त स्नान करना वर्जित है।

प्रातःकाल के समय नदी का स्नान करना बहुत ही गुणकारी और श्रेष्ठ है, परन्तु स्त्रियों को नदी पर जाकर स्नान करने में बड़ी असुविधा होती है। नदी के स्नान से देह का वायु कम होता है। प्रातःकाल के स्नान से आलस्य जाता है। काया नीरोग रहती है, चित्त प्रसन्न होता है और स्वास्थ्य बना रहता है।

स्नान करके यथाशक्ति और यथारुचि कुछ ईश्वरोपासना भी करनी चाहिये। इससे चित्त प्रसन्न होता और स्वास्थ्य बना रहता है। मुख की कान्ति और चेष्टा बढ़ती है। जाड़ों में गरम या ठंडे पानी से, गरमी और वर्षा ऋतु में ठंडे पानी से स्नान करे। जाड़ों में एक समय परन्तु गरमी और वर्षाऋतु में देह शुद्ध और चित्त प्रसन्न रखने के लिये दो-तीन समय भी स्नान करे।

भोजन पचाने और रुचि बढ़ाने के लिये कोई काम ऐसा भी करना चाहिये, जिससे काया को थोड़ा-सा परिश्रम करना पड़े। खाट पर पड़े या खाली बैठे रहने से भोजन नहीं पचता।

भोजन का पचना ही देह में बल को बढ़ानेवाला है। भोजन भली भाँति पचने से दस्त अच्छा आ

जाता है। नहीं तो कोष्ठबद्ध रहता है, चित्त प्रसन्न नहीं रहता; भूख नहीं लगती और भोजन में अरुचि हो जाती है। इसलिये थोड़ा परिश्रम बहुत आवश्यक है, वह नित्य करना चाहिये। बैठे-बैठे प्राणी घुन जाता है। रहने का घर किसी ऊँचे और सूखे स्थान पर बना हुआ होना चाहिये, अर्थात् किसी ऐसे स्थान में न हो, जहाँ धूप न जाती हो, और पानी की सील बराबर बनी रहती हो। घर का द्वार ठंडे देश में दक्षिण को, गरम देश में उत्तर को, आर्द्र (सीलवाले) देश में पश्चिम को और साधारण में पूर्व को रखना चाहिये।

घर ऐसा होना चाहिये कि जिसमें वायु और धूप बे रोक-टोक चली आती हो, और इसके लिये द्वार, खिड़की या झरोखे रखने चाहिये। नीचे-नीचे की धरती पक्की रहनी चाहिये। आँगन में पानी न भरने पावे, सब निकलता रहे। मोहरी, पनाले, पाखाने इत्यादि के फर्श पक्के या गच के होने चाहिये। जिसमें वहाँ की मिट्टी सड़कर दुर्गन्ध न देने लगे।

इसीलिये ऐसे स्थानों पर विशेषकर पाखाने में कोयलों को किसी डलिया में भरकर लटका दें। ये सब दुर्गन्ध को सोख लेते हैं।

जिन गड्ढों पर मल त्याग करें, उन पर शीघ्र

ले। दूसरी खुड्डी पर (जो इसी प्रयोजन से खाली रहे) शौच ले। ऐसा करने से मल में दुर्गन्ध शीघ्र नहीं उठने पाती। यदि मल पर मिट्टी डलवा दे, तो और भी श्रेष्ठ है।

रहने के घर में पशु आदि को न बाँधे। यदि लाचारी से बाँधना ही पड़े अर्थात् कोई दूसरा स्थान न हो, तो लीद, गोबर को नित्य और तुरन्त उठवा दिया करे। तंबाकू इत्यादि की पीक से भी घर को अपवित्र न करना या रखना चाहिये, और न थूक, खखार या नाक छिनकने से।

घर में बहुत मक्खी, मच्छर न रहें, इसलिये चूने में संखिया डालकर पुतवाना चाहिये। यदि हो सके तो जाड़ों में गुलाबी, ग्रीष्म में हरे या नीले और वर्षा में श्वेत रङ्ग से घर को पुतवावे। परन्तु ये धनी लोगों के व्यवहार हैं, साधारण के नहीं।

वर्षाऋतु में बहुधा कीट, पतङ्ग इत्यादि उड़-उड़कर दीपक की लौ पर आकर गिर पड़ते हैं। इसलिये दीपक में यदि प्याज डाल दे, तो पतङ्ग इत्यादि जीव दीपक के पास नहीं आवेंगे।

जिस घर में रहे, उसको नित्य बुहार डाले। कूड़ा-कर्कट इकट्ठा न होने दे। एक तो इसमें दुर्गन्ध आने

लगती है, दूसरे कीड़े-मकोड़े, बिच्छू, काँतर आदि आ छिपते हैं, जिनके काटने का भय रहता है। घर को बहुत स्वच्छ और लिपा-पुता रखना चाहिये। आठवें दिन गौ के गोबर से घर की धरती लिपवा दिया करे, और धूप, लोबान, गूगल वा कपूर की धूनी देती रहे। इससे दुर्गन्ध दूर होती रहती है। कोई रोग नहीं होने पाता, और हवा भी शुद्ध रहती है।

इसी कारण तुलसी और सूर्यमुखी के वृक्ष घर में अवश्य रहने चाहिये। इनके रहने से घर की हवा बहुत ही अच्छी रहती है। घर नीरोग हो जाता है। इनकी तीव्र सुगन्ध घर की दुर्गन्ध को हर लेती है।

तुलसी के दल, जो नीचे गिरें, उनमें से दो या चार नित्य सवेरे खा लिया करे, तो बहुत ही गुण करते हैं। निवासगृह में बहुत अँधेरा न होना चाहिये, जिससे उसमें सील रहे। सील का घर बहुत बुरा होता है। उसके निवासी आरोग्य कभी नहीं रह सकते; क्योंकि ऐसे घर की वायु कभी स्वच्छ नहीं रहती। घर से मकड़ी के जाले आदि सब निकाल देने चाहिए। छिपकली के अण्डे न होने देने चाहिये। नमक को सदा ढका रखना चाहिये, क्योंकि इसको बहुधा छिपकली चाट जाती है। ऐसे नमक के खाने से कोढ़ हो जाता है। सील के घर

में एक और जीव, जिसे 'दखोरी' कहते हैं, हो जाता है । इसके काटने से बहुत दुःख होता है । इसके सिवा सील के घर में बहुत-से अन्य जीव उत्पन्न हो जाते हैं । इसलिये ऐसे घर का रहना आरोग्य कभी नहीं रहने देता । इसी कारण धनी लोग अपने घरों में कबूतर पालते हैं । कलकत्ते आदि बंगाल के (जो सीलवाले तर देश हैं) नगरों में साहब लोग अपने-अपने बँगलों में इनको बसेरा लिवाते हैं । इसीलिये वे संध्यासमय नित्य दाना डालते हैं कि ये पक्षी भोजन के लोभ से आकर वहाँ बसेरा लें । कबूतरों के पंख की वायु बहुत ही गरम है । लकवे में कबूतरों के दरबे की वायु में रोगी का मुँह रखवाते हैं । छोटे-छोटे बालकों को, जिनके बहन-भाई हो-होकर मर जाते हैं, इनके पंखों की हवा खिलवाते हैं ।

सोने के कपड़ों को ओढ़ने-बिछाने से पहले अच्छी तरह फटकार लेना चाहिये । वर्षाऋतु में तो इस बात की बहुत ही सावधानी रखनी चाहिये ; क्योंकि बहुधा इनमें जीव-जन्तु घुस बैठते हैं ।

खाट भी, जिन पर सोया जाय, खटमल इत्यादि दुःखदायी जीवों से बची रहनी चाहिये । इसका सहज उपाय यह है कि खाटों को धूप में रखना चाहिये ।

खाटों को सील के स्थान में रक्खा रहने देने से ऐसे जीव उत्पन्न हो जाते हैं। कभी-कभी पान और साग में भी छोटे-छोटे जीव आ जाते हैं। इसलिये इनको भी अच्छी तरह धुलवाकर और देखकर, खाने-पीने के काम में लाना चाहिये। अब तुमको कुछ ऋतुचर्या बताती हूँ। अर्थात् किस ऋतु में कौन-सी वस्तु खानी चाहिए।

सावन मास लगते ही बैंगन न खाय। कारण बैंगन इस समय पक जाते हैं, और उनमें बीज अधिक हो जाते हैं, जिनका खाना महाहानिकारक है। सावन मास में कही भी न खाय। कातिक से पहले सिंघाड़े, कचरी, गन्ना, चने का साग, बेर इत्यादि न खाय। इस कारण कि ये इस समय से पूर्व पक नहीं चुकते, कच्चे रहते हैं। कातिक के अन्त में पकने और खाने के योग्य होते हैं।

वर्ष भर में छः ऋतुएँ होती हैं। उनकी चर्या इस प्रकार से रहनी चाहिए—

(१) ग्रीष्मऋतु—शीतल जल से स्नान और उसे पीना। प्रातःकाल ताजा दूध मिसरी डालकर पीना। इत्र, चन्दन लगाना। पुष्पमाला धारण करना या सुगन्धि सूँघना। मोटे कपड़े पहनना, जिसमें धूप और लू न लगे। बड़े मकान में दोपहर को रहना।

परन्तु एकदम से निकलकर बाहर या धूप और लू में न आ जाना; क्योंकि ऐसी ही दशा में लू का लगना सम्भव है। दो बजे से चार बजे दोपहर तक लू लगने का भय है। इसलिए अधिक खस इत्यादि के घर में न रहे। यथासमय रहे। गेहूँ, चावल का भोजन करे।

सिखरन और सत्तू खाना, शर्बत पीना और सघन वृक्ष की छाया सेवन करना पथ्य हैं।

सिरका अथवा दूसरी तीक्ष्ण वस्तु खाना, अधिक परिश्रम करना, धूप और लू में अधिक चलना इस ऋतु में कुपथ्य हैं।

हड़ का सेवन—बराबर का गुड़ मिलाकर एक छोटी हड़ को पीसकर, मिलाकर खाय।

(२) वर्षाऋतु—रायता या मट्ठा पीना। श्वेत, महीन और ढीले वस्त्र धारण करना। गेहूँ, चावल, उड़द, दूध इत्यादि का अल्प भोजन करना। टटका कूपजल पीना और उससे स्नान करना। शरीर में मिट्टी मलना। उबटना करना। घरों में धूप (सुगन्ध आदि) का समीर-सेवन पथ्य है।

घर में पवन इस ऋतु में कम मिलना है, ... से पर्दे की रीति ... लिये

जो वस्तु स्वास्थ्य के सहायक और विनाशक हैं, उनका ध्यान रक्खे। वे इस प्रकार हैं—

स्वास्थ्य के सहायक—

(१) चार घड़ी के तड़के उठना, और थोड़ा शीतल जल पीकर मल त्याग को जाना।

(२) कान, मस्तक और तलवे में तेल* लगाना, शरीर में तेल मलना।

(३) सदा एक ही भोजन न करना। भोजन में हेर-फेर करते रहना। फल और साग थोड़ा-थोड़ा नित्य खाना। तीसरे दिन तो अवश्य ही खाना। ऐसा न करने से रुधिर में विकार हो जाता है, जिसको अँगरेजी में स्कर्वी (Scurvy) कहते हैं—अर्थात् मसूड़े इत्यादि से रुधिर बह निकलता है।

(४) ताजा, सादा, पुष्ट और सार भोजन करना।

---

* (१) कान में तेल डालने से कान में रोग नहीं उत्पन्न होते। खुजली नहीं होती। नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। मस्तक ठंडा रहता है। ठोढ़ी और गले की नाड़ी दृढ़ होती है।

(२) मस्तक में तेल डालने से बाल कोमल, काले, सघन और पुष्ट होते हैं, मस्तक ठंडा रहता है।

(३) तलवे में तेल मलने से शरीर कोमल होता है। कफ और वात का नाश होता है। शरीरस्थ धातुओं का बल और रुधिर बढ़ जाता है तथा वर्ण स्वच्छ होता है।—ले॰

कारण ऐसी बलवान् होती हैं कि पुरुषों के समान, वरन् अधिक काम करती हैं। इस कारण उनके लिए मेरी सम्मति यह है कि धनी घरों की स्त्रियाँ यदि साधारण की भाँति अपने घर के परिश्रमी काम-धन्धे को नीच कार्य समझकर न करना चाहें, तो यह ठीक होगा कि दस-पाँच मिलकर गा-बजाकर नाचा करें। इसमें उनका मन भी लगेगा और स्वास्थ्य भी बना रहेगा, चित्त भी प्रसन्न रहेगा।

स्त्रियों की स्वास्थ्यरक्षा के वास्ते ही उनके लिए कूटना, पीसना, कातना इत्यादि कार्य निश्चित किये गये हैं। कूटने, कातने से रुधिरप्रवाह हाथों की ओर ऊपर को अधिक होता है। इससे कामशक्ति में कमी होती रहती है। वह चंचल नहीं होने पाती। पीसने से जाँघों में मेद नहीं जमने पाती, जिससे गर्भाधान में बाधा पड़ती है। अर्थात् गर्भ रहता ही नहीं और स्त्री मोटी हो जाती है। इसी प्रकार के अनेक कारण हैं।

(२) स्वास्थ्य के विनाशक ये हैं—

(१) धूप का बैठना *, आग से पाँव तपाना †, अग्नि को मुख से फूँकना ‡।

---

* इससे भोजन नहीं पचता, अजीर्ण रहता है।

† शरीर निर्बल और ढीला होता है, दृष्टि को हानि होती है।

‡ मुख की कान्ति मारी जाती है, दृष्टि को हानि होती है।—ले०

(२) विषम आसन बैठना, गरिष्ठ भोजन करना, विना भूख के अथवा अति भोजन करना, दूषित अन्न, जल या वायु का सेवन करना, मलिन रहना, वीभत्स वस्तु को देखना या सूँघना।

(३) सूर्योदय या सूर्यास्त होते, बिजली और इन्द्र-धनुष को अथवा देर तक और किसी दूर की वस्तु को टकटकी बाँधकर देखना।

(४) दूसरों के कपड़े या बिस्तर पर सोना या दूसरे की कंघी अपने बालों में डालना। इससे छूत के रोग उत्पन्न होते हैं।

(५) ग्रीष्मऋतु में काले कपड़े पहनना। इससे वीर्य की क्षीणता होती है, क्योंकि यह शीघ्र ही गर्म हो जाता है।

(६) अधिक ठंडे, गरम, कड़े और खट्टे पदार्थ खाना, यह दाँतों को हानि पहुँचाते हैं।

(७) अधिक पुरुषप्रसंग करना। इससे यौवन शीघ्र ढल जाता है।

(८) इन्द्रियों के वेग अर्थात् मल, मूत्र, अपानवायु, डकार, छींक, जँभाई, निद्रा, आँसू, उलटी, खाँसी, साँस, भूख, प्यास और काम को रोकना।

(९) क्रोध, चिन्ता और शोक, ये तीनों स्वास्थ्य के शत्रु हैं। इसलिए इनको अपनी देह में कभी स्थान न दे।

(१०) आलसी रहना।

अब तुझको कुछ स्वास्थ्य के सिद्धान्त भी बताती हूँ, सुन—

(१) रुचे सो पचे।

(२) दाँत का काम आँत के लिए न छोड़ना चाहिए।

(३) नाक में उँगली, कान में तिनका मत कर मत कर; दाँत में मञ्जन, आँख में अञ्जन नित कर नित कर।

(४) आँत भारी, तो गात भारी।

(५) भोगी सदा रोगी, और उद्योगी सदा नीरोगी।

(६) एक बेर योगी, दो बेर भोगी और तीन या अधिक बेर रोगी पाखाने जाता है।

(७) अपने को जो पथ्य हो वह भोजन करे। जैसे "काहू को बैंगन बादी, काहू को बैंगन पथ्य" अर्थात् जैसे मक्खन, घी इत्यादि दुबले मनुष्य को बलकारक हैं; परन्तु अधिक मेदा और कफवाले को मक्खन, घी, चीनी, मिठाई, दूध और आलू हानिकारक हैं। उसको अरहर की दाल, फल, हरी तरकारी उपयोगी हैं, क्योंकि ये कफनाशक हैं।

(८) बेजानी वस्तु या औषध न खाना।

(९) ऋतु के फल और साग अवश्य ही खाना।

(१०.) पाँव और मस्तक दोनों ठंडे रखना; परन्तु अँगरेजी सिद्धान्त से इसमें भेद है। उनका सिद्धान्त पाँव गरम और मस्तक ठंडा रखना है (Keep your head cool and feet warm.) । पर यह इसलिये है कि उनका देश ठंडा है। वहाँ पाँव गरम ही रहने उचित हैं। यह देश गरम है। यहाँ पाँव भी ठंडे रहने हानिकारक नहीं। इसलिए हमारे यहाँ बेर-बेर पाँव धोने की विधि है। परन्तु शीतऋतु में पाँव ठंडे न रखने चाहिए। इस ऋतु में गरम ही रखना स्वास्थ्यप्रद है।

(११) चौपाई।

आँखन त्रिफला, दाँतन नौन। चौथाई छोड़ जु खावै पौन॥
साँझ सकारे झाड़े जावे। ताको पैसा वैद्य न खावे॥

प्रकृति के स्वास्थ्यरक्षक नियम ये हैं—

(१) चलना-फिरना, परिश्रम करना।

(२) शुद्ध जल * व वायु का सेवन और शुद्ध स्थान का निवास।

* शुद्ध जल की पहचान यह है कि उसमें किसी प्रकार की दुर्गन्धि न हो। स्वाद और रंग बुरा न हो। कीड़े-मकोड़े या मैल-मिट्टी न हो। जिसमें मल-मूत्र न पड़ते हों। लोग जिसमें स्नान न करते हों। बहता हो, स्थिर या बन्द न हो। काई अधिक न पड़ गई हो, जैसी कि बहुधा छोटी नदी या तालाबों की दशा होती है।

हुई हैं। मुख की कान्ति वैसी ही है। काम-धन्धा अब तक मा और चाची से अधिक कर लेती हैं। कभी स्नान या परिश्रम करने में अलकसाती नहीं। भोजन भी सबसे अधिक करतीं और पचा लेती हैं। कभी अजीर्ण इत्यादि नहीं होता। यहाँ तक कि मस्तक में पीड़ा भी कभी न सुनी और न कभी आँख दुखी। मा, चाची नित्य रोगी ही रहती हैं। दाँत गिर पड़े हैं। दादी के मुँह का अभी एक भी दाँत नहीं गिरा। चने चबाती हैं, गन्ना चूस लेती हैं, चाँदनी रात में सुई तक पिरो लेती हैं, काम आ पड़े, तो दस-पाँच कोस पैदल भी चल लेती हैं। मा, चाची से एक कोस भी नहीं चला जाता, वरन् स्नान को भी नहीं जाया जाता। रात्रि को रतौंधी आती है, तीसरे दिन पेट, पीठ या पसली में पीड़ा रहती है। दादी अब भी इस अस्सी वर्ष की आयु में जाड़े-भर प्रात ही गंगास्नान कर आती हैं। अब तक उनकी देह नीरोग, बलवान् तथा हृष्ट-पुष्ट बनी हुई है।

इसी प्रकार मैंने एक पार (Parr) नाम के पुरुष का हाल पुस्तक में पढ़ा है। उसने स्वास्थ्य के नियम पूर्ण रीति से पाले थे, और एक सौ बावन वर्ष की आयु तक सुखपूर्वक मनुष्यजीवन भोग किया। उसके एक सौ बीस वर्ष की अवस्था में पुत्र उत्पन्न हुआ था। अब तक

जिया, सदा नीरोग रहा। मरते दिन तक राजसभा (British Parliament) का काम पूर्णबुद्धि के साथ किया। एक आजकल के प्राणी हैं कि सदा रोगी, मुँह पीला, देह में दर्द, कमर झुकी, आँखों में कीचड़ भरी और कम दीखता है। एक ही सन्तान में बूढ़ी। भूख लगती नहीं। खाया तो पचता नहीं। भली भाँति मल त्याग नहीं होता। इसलिये तू यदि अपनी पूर्ण आयु और नीरोग काया चाहे, तो जो नियम मैंने तुझको बताये हैं, उन्हें भली भाँति पालना और अपनी संतान से भी पलवाना।

देख तो सही, चन्द्रमा अभी निकला या नहीं। हाँ-हाँ, वह छज्जे पर चाँदनी दीख पड़ती है, निकल आया। चल, अब रात्रि के दस बज गये; क्योंकि आज पञ्चमी है, नौ बजे चन्द्रोदय हुआ होगा। एक घंटा समय उसका हो गया। नींद का वेग भी प्रबल होता आता है। इसको रोकना न चाहिये, सो रहें।

श्रीसुबोधिनी

चतुर्थ भाग

बालक का पालन-पोषण

सा नये दिन, जब दुर्गा ने यह देखा कि घरवाले खा-पीकर निश्चिन्त होने जाते हैं, कोई-कोई तो जाकर सोया भी है, तब अपनी बहन मोहिनी को पास बिठाकर यों बतलाने लगी—बहन ! जब बालक पैदा होता है, तब उसका पालन-पोषण भी करना होता है। इसलिए तुझे यह भी बताती हूँ कि बालक को किस प्रकार पाले। सबसे प्रथम बालक दूध पीकर ही पलता है, क्योंकि वह अपनी माता का दूध जन्मते ही पीता है। परमेश्वर उसके लिये उसके खाने-पीने की वस्तु पहले ही से उसकी मा के अङ्ग ही में पैदा कर देता है। पर बहुत स्त्रियों का दूध उन्हीं के बालकों को हानि करने लगता है। उनका दूध पीने से उन्हीं के बालक मर जाते या रोगी हो जाते हैं। इसलिये उनका दूध न पीने देना चाहिये। ऐसे दूषित दूध की पहचान यह है कि जिस स्त्री का दूध पानी में न डूबे, खट्टा या कड़वा

हो, जिसका रंग काला या पीला हो, जिसको निकालकर रख देने पर उसमें मलाई-सी न पड़े अथवा जो उसमें चींटी डाली जाय तो मर जाय, जीती तैरकर निकल न आवे, ऐसा दूध दूषित होता है। निर्दोष दूध पतला, निलाई लिये हुए, मीठा और जिसमें मलाई पड़ती हो, ऐसा होता है। जिस स्त्री के दूध में दूषित दूध के ऐसे लक्षण पाये जायँ, उसका दूध उसकी सन्तान को न पीने दे। उसके लिये कोई धाय रख लेनी चाहिये। उस स्त्री का दूध निकलवाकर धरती में डलवा दिया करे। स्तन में न रहने दे। नहीं तो रोग हो जाता है। स्त्री के स्तन दुखने लगते हैं। कभी-कभी पक भी जाते हैं।

यदि स्त्री के दूध में थोड़ा ही दोष हो, तो औषध देने से शुद्ध हो सकता है। जैसा कि मैं तुझको स्त्रीचिकित्सा में बता चुकी हूँ। यदि मा का दूध बहुत ही दूषित हो, तो बिना धाय के काम नहीं चल सकता।

धाय इस प्रकार की हो कि जितने दिन के बालक के लिये धाय चाहिये, उतने ही दिन का बालक उसकी गोद में हो। दो-चार दिन की कमी-बेशी का तो कुछ विचार नहीं। कम दिन का बालक गोद में होगा तो धाय का दूध पतला, और यदि अधिक दिन का होगा तो गाढ़ा होगा। पचने में अन्तर पड़ेगा।

जो बालक को धाय का ही दूध पिलाया जाय, तो पहले इन बातों को देख ले कि इस धाय की सन्तान मर तो नहीं जाती। उसको कोई रोग (कुष्ठ, दम, खाज इत्यादि) तो नहीं है। गर्भवती तो नहीं है। स्त्रीधर्म से तो नहीं होती, क्रोध तो बहुत नहीं करती। पवित्र रहती है कि नहीं। कभी कोई बुरा रोग तो उसके नहीं हो गया है, जो बहुधा खोटी स्त्रियों को हो जाता है। उसका दूध पीने से वे रोग उनकी सन्तान में भी हो जाते हैं। धाय का स्वभाव अच्छा हो, सुशील हो, प्रसन्नमुख हो। धाय कुलीन हो, सन्तान को प्यार करनेवाली हो। सन्तोषी हो। जवान हो। दूधवाली हो। मध्यम अवस्था की हो। बहुत मोटी या दुर्बल न हो। स्तन उसके ऊँचे, लम्बे और कड़े हों। पहलौठी की जनी न हो। दूसरे या तीसरे बार की जनी हुई हो, तो बहुत अच्छी।

बालक को पैदा होने से छः दिन तक दूध के सिवा गूला या घूटी और देनी चाहिये, क्योंकि इन दिनों मा का दूध बहुत ही निर्बल होता है। गूला इसे कहते हैं—एक तोला गुड़ में थोड़ी-सी अजवाइन और पानी डालकर मिट्टी का कुल्हिया में आग पर औटा लेते हैं। फिर छानकर बच्चे को पिला देते हैं। घूटी कई प्रकार की होती है। पर मुगलानी घूटी सबमें अच्छी होता है।

सौंफ, बनफ्शा, मुनक्का, मुलहठी, अमलतास, तुरञ्जबीन, एक-एक माशे और बूरा चार तोला पानी में डालकर औटाकर छान ले। फिर बालक को पिला दे। पर जाड़े के दिनों में इसमें अजवाइन तथा गर्मी में गुलकन्द और डाल दे। बालकों के लिये जन्मघूटी यह है—(१) सौंफ, दोनों हड़, सोंठ, सनाय, किरमाला, अजवाइन, अजमोद, इन्द्रजौ, नौसादर, सुहागा, पाँचों नोन दो-दो रत्ती और खाँड़ छः माशे।

(२) पोदीना, सौंफ, मरोड़फली, अमलतास, पित्तपापड़ा, सफेद जीरा, सनाय, पाँचों नोन चार-चार रत्ती। सोंठ, मिसरी, पलाशपापड़ा, नरकचूर, सुहागा दो-दो रत्ती, उन्नाव एक दाना। यह एक मात्रा है।

(३) सौंफ, एलुवा, पलाशपापड़ा, मरोड़फली, अमलतास, काली मिर्च, बड़ी हड़, छोटी हड़, गोखुरु, बच, सोए के बीज। इन सबको चार-चार रत्ती लेकर औटावे, और सिदौसी पिला दे।

बालक को अठवारे में एक बेर यह घूटी अवश्य दे दे। गुण करती है। बालक को केवल दूध तब पिलावे, जब वह भूखा हो। बिना भूख कभी न पिलावे। बहुधा स्त्रियाँ जहाँ बालक रोया कि दूध पिलाने लगती हैं। यह न करना चाहिये। बे भूख बेर-बेर पिलाने से बालक को

अजीर्ण होकर पेट में दर्द पैदा हो जाता है, और व
दूध को डाल देना है।

बालक को इस रीति से दूध पिलावे। माता सं
बैठकर, स्तन को धोकर बालक के मुख में दे, पर
पहले कुछ दूध की बूँदें निकालकर डाल दे, क्यों
यह दूध अच्छा नहीं होता। पहले सीधा स्तन पिला
फिर दूसरा पिलावे। यह न करे कि एक ही स्तन क
बराबर पिलाती रहे। इससे स्त्री के कुचों में रोग हो जात
है। उनमें से एक छोटी और बड़ी भी हो जाती है।
लेटकर दूध कभी न पिलावे। इससे बालक का कान बह
निकलता है। बालक को गोद में लेकर और एक हाथ
उसके मस्तक के नीचे लगाकर मस्तक को ऊँचा रक्खे
रहे, तब पिलावे। माता नींद में बालक को दूध कभी
न पिलावे। इससे अनेक रोग हो जाते हैं। क्रोध
और भय के समय भी न पिलावे। न जब आप रोती
हो, किसी से लड़ती हो, दूर से चलकर आई हो अथवा
पसीने से देह भरी हो, तब पिलावे। ऐसी दशा में दूध
पिलाना बहुत ही बुरा है। विष का गुण रखता है।
इसीलिये जब दूध पिलावे, तब प्रसन्नचित्त होकर और
बालक से स्नेह मानकर पिलावे। नहीं तो बालक को
स्याने होने पर माता से स्नेह कम होगा। यह तो

देखी-भाली बात है कि जिस माता का दूध बालक नहीं पीता, उससे उसका स्नेह नहीं होता।

स्त्री बालक को दूध पिलाने से नीरोग रहती है। वरन् ऐसी स्त्री के गर्भस्राव तथा गर्भपात रोग नहीं होते।

दूध पिलानेवाली स्त्री का आहार अच्छा होना चाहिये। ऐसे पुष्ट आहार उसको दिये जायँ, जिनसे दूध शुद्ध हो और बढ़े। जैसे जीरा, दलिया और दूध। परन्तु इतना दे, जितना पचे। अधिक न दे, क्योंकि उससे अजीर्ण होकर दूध दूषित हो जाता है, और बालक को भी अजीर्ण करता है।

माता को गरिष्ठ या सूखा भोजन न देना चाहिये। दूध बढ़ाने की यह भी रीति है कि जब बलिष्ठ भोजन देने से दूध न बढ़ता देखे, तब इससे उलटा करे कि रूखा भोजन दे।

यदि स्तनों के कड़े होने से दूध कम हो, तो किसी स्याने बालक से पिलाकर स्तनों को ढीले कर लिया करे। स्तनों पर पुलटिस बाँध दिया करे। अथवा अरण्ड के पत्तों को डंठल समेत पानी में पीस और छानकर दूध पिलानेवाली को पिला दे, और इसके पत्तों का रस निकालकर स्तनों पर मले। दूध पिलानेवाली स्त्री चोली या अँगिया कड़ी न पहने। बालक को रात्रि में दूध

पिलाने की टेव न डाले । इससे दोनों को हानि होती है । नींद मारी जाती है, स्तनों में पीड़ा पैदा हो जाती है । छाती पक जाती है । (इस कारण कि बालक के मस्तक की चोट लग जाती है) बालक का मुख फफल जाता है, और पेट में अफरा हो जाता है।

जो मा या धाय, दोनों का दूध किसी कारण से न मिल सके, तो बालक को गाय का दूध, पानी और खाँड़ मिलाकर पिलाना चाहिये।

ज्यों-ज्यों बालक बढ़ता जाय त्यों ही त्यों दूध में पानी कम करती जाय, अर्थात् फिर क्रमशः केवल निरा दूध ही पिलाया जाय। पर दूध जब पिलाया जाय, तब गुन-गुना ही पिलाया जाय। ठंडा कभी नहीं पिलाना चाहिये। जो यह दूध पचता न हो अथवा बादी करता हो, तो चूने का पानी मिलाकर पिलावे। यदि इस दूध से दस्त न आता हो, तो सवेरे उठते ही थोड़ा-सा ठंडा पानी पिला दे। दूध में थोड़ी कची खाँड मिलाकर पिलावे, अथवा थोड़ा शहद चटा दे।

यदि गाय का दूध पिलाया जाय, तो केवल एक ही गाय का पिलावे। दो-तीन गायों का मिलाकर कभी न पिलावे। जिस बासन में दूध निकाला या रक्खा जाय,

यह भली भाँति धो-पोंछ और माँज लिया गया हो। चाहे रुई के फाहे से पिलावे, चाहे दूध पीने की शीशी से; पर इस शीशी को भी नित्य धो-पोंछकर शुद्ध कर लिया करे। दूध में मलाई न रहने पावे। छानकर निकाल देनी चाहिए, तब पिलाना चाहिए। गाढ़ा दूध न पिलाना चाहिए, पतला पिलाना चाहिए। यदि दूध में तनिक-सा नमक डाल दिया जाय, तो और भी अच्छा। इससे पचता शीघ्र और अच्छा है।

दूध नियत समय पर पिलावे और इस प्रकार समय बाँध ले—

एक महीने के बालक को एक-एक घंटे पीछे।
तीन महीने के बालक को दो-दो घंटे पीछे।
छः महीने के बालक को तीन-तीन घंटे पीछे।
नौ महीने के बालक को चार-चार घंटे पीछे।

नौ महीने की अवस्था तक बालक को निरा दूध पिलावे, अन्य कोई वस्तु खाने को न दे; क्योंकि कहावत है—"नौ महीने भरे और नौ महीने धरे।" अर्थात् पहले नौ महीने में निरा दूध पिलावे, और पीछे नौ महीने आहार देकर दूध छुड़ा दे। जब बालक नौ महीने का हो जाय, तब धीरे-धीरे दूध छुड़ाने के उपाय करे, अर्थात् धीरे-धीरे छुड़ा दे। एक संग ही न छुड़ा दे,

बाद बालक को माता के दूध पीने के संग कभी-कभी खीर, खिचड़ी, अरारोट या साबूदाना आदि देती रहे।

जिस बालक को जो रुचे और पचे, वही उसको खिलावे; क्योंकि किसी बालक को कोई वस्तु और किसी को कोई वस्तु रुचती-पचती है। अंगरेजी सौदागरों के यहाँ बालकों के लिए बनी हुई खाने की वस्तुएँ बिकती हैं। वे दूध या पानी में पिलाने से माता या गौ के दूध की बराबर, वरन् उससे भी अधिक गुण पहुँचाती हैं। जैसे मेलिन्स साहब की बनाई हुई दवाई (Mellin's Infant Food) बालकों के लिए।

पर दूध छुड़ाने का सुगमतर उपाय यह है कि माता बालक से कुछ दिनों के लिए अलग हो जाय या रात को अपने पास न सुलावे, दूसरी स्त्री के पास सुला दिया करे।

यदि पिला सके तो माता सन्तान को अपना दूध जब तक गर्भ न रहे, बराबर पिलाती रहे। सन्तान के लिए इससे अधिक गुणदायक और बलकारक कोई दूसरी वस्तु नहीं। कहावत प्रसिद्ध है—"देखें तूने अपनी मा का कितना दूध पिया है।"

बालकों को दूध पिलाकर या भोजन कराकर उनका मुँह धो डाले जिससे मुँह व आँख में मक्खी न काट

खाय वा मुख में दुर्गन्ध न आने लगे, और मुँह के रोग उत्पन्न न हो जायँ।

नीचे के चिह्नों में से जब स्त्री के दो-चार देख पड़ें, तो दूध पिलाना अवश्य छुड़ा देना चाहिये। गर्भिणी माता तो अपना दूध कभी बालक को न पिलावे; क्योंकि सब यह महाहानिकारक है।

(१) जब माता के स्तनों में दूध न रहे। (२) जब माता के कानों में सनसनाहट जान पड़े। (३) आँखों में अँधेरा-सा दीखे। (४) आँखों में पीड़ा हो। (५) मस्तक में धमक और चित्त में व्याकुलता हो। (६) मूर्च्छा हो, देह काँपे, झान आवे, भूख न लगे, देह दुर्बल होती जाय और थकावट जान पड़े, अजीर्ण हो, मल बँधा हुआ उतरे। (७) पेट में सनसनाहट हो, मानो पेट बैठा जाता है, बाईं ओर पीड़ा हो, कमर निर्बल पड़ जाय, देह में चलते-फिरते पीड़ा हो, मुख पर जर्दी छा जाय, साँस उखड़ आई हो, टखने सूज आये हों।

जब तक बालक छः महीने का हो, तब तक सदा उसकी गरदन को हाथ लगाकर सहारे से रक्खे; क्योंकि इस समय तक गरदन ठहरी हुई नहीं होती। ऐसा न करने से झटका लग जाता है, और गरदन टूटकर

बालक कभी-कभी मर भी जाता है। बालक को बिना सहारे कभी न बिठावे। इन दिनों बालक को सीधा भी न ले, क्योंकि सीधा लेने से पीठ का कूबड़ निकल आता है। यह इस कारण कि बालक की रीढ़ की हड्डी बहुत नरम होती है, बोझ से झुक जाती है। एक वर्ष की आयु से पूर्व बालक को कभी पैरों से खड़ा न करे। इससे पाँव फैल जाते हैं, जब बालक स्वयं खड़ा हो सके, तभी खड़ा करे या होने दे। बालक की टाँगें फैलाकर भी गोद में न रक्खे। बालक को अपनी नींद सोने दे, और अपनी ही नींद उठने दे। आप कभी न जगावे। न अचानक जगावे। बालक को औंधा या चित कभी न लिटावे। झूले में झुलाकर या गीत गाकर (जैसा कि स्त्रियाँ बहुधा करती हैं) बालक को सोने की टेव न डाले। न गोद ही में सोने की टेव पड़ने दे। मुँदे घर में भी बालक को न सुलावे। सदा हवादार घर में सुलावे।

दूध पीकर ही या भोजन करते ही बालक को न सोने दे। इससे दूध या भोजन पचता नहीं और स्वप्न भी बालकों को बुरे दीखते हैं। तीन वर्ष की आयु तक तो बालक को दिन में सोने दे, पीछे केवल रात्रि ही में सोने की टेव डाले, दिन में सोने को छुड़ा दे।

अफीम आदि खिलाकर बालकों को सुलाने की टेव न डाले; क्योंकि ऐसी वस्तुओं से बालकों के मस्तक अभी से निर्बल और शुष्क हो जाते हैं। मूर्ख स्त्रियाँ अपने सुख के लिए ऐसा करती हैं, जिससे बालक अचेत हो पड़ा रहता है। पर यह महाहानिकारी है। बालकों को अपनी देह से चिपटाकर न सुलाया जाय। और यदि सुलाया जाय, तो माता बालक की पीठ अपनी ओर रक्खे। बालक को सदा करवट लिवाकर और चौड़ी खाट पर सुलाना अच्छा होता है। ओढ़ने-बिछाने के कपड़े देख ले कि उनमें कोई वस्तु बालक के चुभती तो नहीं अथवा बालक फँसता तो नहीं। बालकों को तंग कपड़े न पहनाना चाहिए। इनसे फेफड़े, पाकाशय और हृदय को हानि पहुँचती है। दम रुक जाता है। भोजन पचता नहीं। नाड़ियों में रक्त भली भाँति नहीं बह सकता। मलत्याग अच्छी तरह नहीं होता। और न बहुत ढीले कपड़े पहनावे कि उनमें हाथ-पाँव उलझ जायँ। सोने में बालकों के मुख को न ढके। गरदन तक कपड़ा उढ़ावे, जिससे साँस भीतर न भरी रहे, वरन् बाहर निकली चली आवे। अँगरखे की तनी, कोट आदि के बटन सोते समय खोल दिये जायँ। गरदन में जो कोई रूमाल इत्यादि बँधा हो, तो सोने में खोल

अण्डकोष में आ जाती है। इसलिए उसका अधिक ध्यान रखना चाहिए। यही सोचकर हमारे देश में पहले ही से कटिबंधनसूत्र (कंधनी या करधनी) के पहनने का नियम रक्खा है। इससे वह नस दबी रहती है, और नीचे को धसकने नहीं पाती।

यदि धसक गई हो, तो उस बालक को जाँघिया पहनाये रक्खे। इससे ठीक हो जायगी।

बालकों को सदा हवा खिलाया करे—गोद में लेकर अथवा पैदल चलाकर (जब चल सके, पर पहले नहीं) अथवा गाड़ी में बिठाकर। जाड़ों में दोपहर और धूप के समय, गर्मी में साँझ-सवेरे, वर्षा में जब बादल न हों या बूँदें न पड़ती हों। पर बालक को गर्मी और सर्दी, दोनों से बचाये रक्खे।

तीन-चार महीने की आयु तक बालक के सब अंगों में नित्य तेल लगा फिर आटे की लोई करके, जाड़ों में गरम पानी से, गर्मी में ताजे पानी से, वर्षा में गुनगुने पानी से नहला दिया करे, जैसा कि धात्रीशिक्षा में बता चुकी हूँ।

जब बालक तीन वर्ष का हो जाय, तब उसको नित्य-प्रति प्रातःकाल स्नान कराने की टेव डाले। नहलाकर शरीर को सखे कपड़े से तुरन्त पोंछ डाले।

छोटे बालकों के नहलाने के पानी में खाने का नमक डालकर नहलावे तो अति गुणकारी है। निर्बल बालक थोड़े ही दिन के स्नान में बलवान् तथा पुष्ट हो जाता है। यदि पानी में मेथी या मेहँदी डालकर गरम करे और फिर नहलावे, तो बहुत ही अच्छा।

बालकों को कभी गहना न पहनाना चाहिए। इनमें दो अवगुण हैं—एक तो यह कि इनके पहनने से बालकों की नस दबी और भिची रहती है, जिससे वे अच्छी तरह पनपने नहीं पाते, और जन्म-भर को दुर्बल और क्षीणतन बने रहते हैं। दूसरे यह कि गहने पहननेवाले बालकों के प्राण हरने के लिए बहुत-से दुष्ट पैदा हो जाते हैं। अकसर देखने और सुनने में आया है कि अमुक के बालक को चोर ले गये, अथवा उन्हीं का नौकर गहना उतारकर उनको मार किसी कुएँ या खाई में डाल आया, अथवा द्वार पर से बालक को कोई बटोही ले गया और पता न लगा।

ये बातें नित-नित सुनने और देखने में आती हैं, और केवल गहने पहनने ही से होती हैं। पर मूर्ख लोग तो भी नहीं मानते। अपनी सन्तान के शत्रु बनने में उलटे सिहाते हैं। कभी न देखा और सुना कि कोई ऐसे बालक को पकड़ ले गया, जिसके गहना न था। तं

भी लोग गहना पहनाये बिना नहीं मानते। बिना गहने के बालकों की शोभा ही नहीं समझते। गहना पहनाने से शोभा नहीं होती। मनुष्य की शोभा गहने में नहीं है, अच्छे-अच्छे गुण सिखाने में है। यदि तुमको इस बात का ध्यान है कि कोई हमारे बालकों को नंगा, बूचा कहेगा, सो कहने दो। यह इतनी बुरी बात नहीं जितनी यह कि बालक के प्राण जाते रहें। कुरूप और महादरिद्री का बालक, जो गुणवान् है, वह गहने लदे हुए धनी के महास्वरूपवान् बालक से कहीं उत्तम और श्रेष्ठ है, जिसमें कोई अच्छा गुण नहीं, केवल गहना ही गहना है।

बालकों के कानों और बालों में चौथे या पाँचवें दिन कड़वा तेल डालना चाहिये। जिन दिनों दाँत निकलते हों, उन दिनों तो अवश्य ही डाले। इससे आँख नहीं दूखतीं, और कनपटियाँ, जो इस दशा में गर्मी से भड़का करती हैं, नहीं भड़कतीं, वरन् बालक को चैन पड़ता और दुःख दूर होता है।

बालकों की चाँद में मैल जम जाता है। उसको भी धोकर निकाल दिया करे। पीछे तेल डालना चाहिये। इससे मस्तक में तरी रहती है, बाल भी जल्दी बढ़ आते हैं, चाँद में भूसी या फियास नहीं पड़ने पाती, जिसके

होने से न तो बाल बढ़ते और न दृढ़ होते हैं और न मस्तक तर रहता है, वरन् बहुत ही सूखा रहता है। इसके कारण बालक बहुधा मस्तिष्कशून्य और मूर्ख हो जाते हैं।

अब कुछ तुझको बालकों के दाँत निकलने के विषय में बताना चाहती हूँ। जिन दिनों बालकों के दाँत निकलते हैं, उन दिनों उनके लार बहुत गिरती है। इसलिये उनके गले में एक रूमाल वा अँगोछा बाँधे रक्खे। जब वह भीगकर गीला हो जाय, तब दूसरा सूखा बदल दे। इस भीगे को धोकर सुखा दे। इसी प्रकार हर घड़ी गले में सूखा कपड़ा बँधा रक्खे। ऐसा करने से बालक की छाती पर ठंड नहीं पहुँचने पाती। छाती में ठंड पहुँचने से छाती के अनेक रोग (खाँसी आदि) उत्पन्न होकर महादुःख देते हैं।

इन दिनों फेफड़े, मस्तक या पाकाशय का काम ठीक नहीं रहता। इसी से उनको खाँसी, अपच, अफरा, दस्त, उलटी, फोड़े, फुंसी और खाज आदि रोग हो जाते हैं।

इन दिनों शुद्ध वायुसेवन कराना (इसी से हमारे शास्त्रों में निष्क्रमण-संस्कार रक्खा है, जो इन्हीं दिनों होता है। उसका अभिप्राय समीरसेवन ही है) परमा-

. छोटे-छोटे बच्चों को मिट्टी खाने की टेंव पड़ जाती है। इससे उनकी चौकसी और सावधानी रखनी चाहिए। वे मिट्टी न खाने पावें। दूसरे-तीसरे दिन बालकों को कुछ थोड़ा-सा गुड़ खिला दिया करे, तो बहुत अच्छा। बालकों को कभी न डरावें; क्योंकि इससे कभी-कभी बालक ऐसे डर जाते हैं कि सदा को डरपोक बन जाते हैं। बचपन का भय उनके हृदय से जन्म-भर नहीं निकलता। कभी-कभी उन्हीं बातों का स्वप्न देखकर वे युवावस्था में डर उठते हैं। उनका हृदय निर्बल हो जाता है, और बहुधा स्वप्न में वे ही बातें देखकर वे सोते-सोते रो उठते हैं। यहाँ तक कि मल-मूत्र त्याग कर देते हैं।

यदि बालक किसी प्रकार से डर गया हो, तो उसका उपाय यह है कि उस दशा में बालक से कभी कड़े वचन न कहे या डराकर न बोले। घुड़की आदि न दे, वरन् बहुत ही प्यार और स्नेह से बोले। चिल्लाकर कभी न बोले। जो रात्रि में बालक सोते-सोते चौंक पड़ता हो, तो उसको रात्रि में अकेला कभी न छोड़े, और अँधेरे में न रक्खे, वरन् रात्रि-भर दिया जलाये रक्खे कि बालक की जब आँख खुले तब अँधेरा न देख पड़े, उजेला ही दीखे। कुछ दिनों तक ऐसा करने से बालक का डर जाता रहेगा।

छोटे बालकों को सदा इच्छापूर्वक खेलने-कूदने दे, पर गिरने-पड़ने की सावधानी रक्खे। इच्छापूर्वक किलोल करने से बालक बहुत बढ़ते और मगन रहते हैं, जैसे मत्स्य इत्यादि क्रीड़ा से बहुत बढ़ते हैं, वैसे ही बालक भी बढ़ते हैं।

परन्तु बालकों को विष की वस्तु, औषध, छुरी कतरनी या अन्य किसी हथियार के पास न जाने दे अथवा इनको ऐसे स्थान पर न रक्खे, जहाँ बालकों का हाथ पहुँच जाय, या ये उनके हाथ लग जायँ। इससे सदा सावधान रहे।

बालकों को चौथे, आठवें दिन घूटी, जो पहले बता चुकी हूँ, अवश्य दे दिया करे। अथवा हड़, काला नमक व सुहागा पानी में घिस-घिसकर और तनिक-सी हींग घिसकर, आग पर गुनगुना करके, बालकों को पिला दे। पहले ही वर्ष वरन् जहाँ तक शीघ्र हो सके, तीसरे या चौथे ही महीने, यहाँ तक कि हाल के हुए बालक के टीका लगवा दे, पर सावधानी पूरी करनी चाहिए। बालक इसे खुजा न डाले। ज्वर आदि रोकने की कोई औषध इस समय न दी जाय, जैसा कि मूर्ख स्त्रियाँ बहुधा कर बैठती हैं; क्योंकि इन दिनों बालक को निश्चय करके ज्वर हो आता है। टीके के स्थान पर

सूजन हो आती है, और कभी दर्द भी हो आता है। हाँ, लोनी या घी मल दिया जाय, तो कुछ हानि नहीं।

जो बालक पाँच-छः महीने ही का हो, तो उसके कुर्ते या अँगरखे की दोनों बाँहें उधेड़ दे, और तब पह-नावे, जिससे रगड़ न लगने पावे; क्योंकि इसके छिल जाने से पीछे बालकों को बहुत कष्ट होता है। जहाँ-जहाँ इसका चेप लगता जाता है, वहाँ-वहाँ फफोले पड़ते जाते हैं। यहाँ तक देखा गया है कि असावधानी से सारी देह, मुँह, नाक, कान और हाथ में फफोले हो गये हैं। इसी लिए बालक के दोनों हाथों में कपड़े की पट्टी लपेट दे कि वह खुजाने न पावे, जिससे फफोले टूटकर उसका पसेव दूसरे स्थान में न लग जाय। कोई-कोई मूर्ख स्त्रियाँ ऐसा करती हैं कि टीका लगानेवाले ने टीका लगाकर पीठ फेरी कि उसी समय उसने पानी से धो डाला। इससे बड़ी ही हानि हो जाती है। यह न करना चाहिए। प्रथम तो एक बेर के टीका लगाने ही से शीतला नहीं निकलती; पर यदि सात वर्ष की आयु में एक बेर टीका और लगवा दिया जाय, तो फिर शीतला निकलने का कुछ डर और चिन्ता नहीं रहती। कोई-कोई युवावस्था में भी बालकों के तीसरी बेर टीका लगवा देते हैं।

टीका लगने पर जब फफोले उठ आवें, तब उनको फूटने न दे। आप ही जब बैठ जायँ, तब बैठने दे या टीका लगानेवाला उनका पसेव निकाल ले जाय। इसके पीछे दो-चार दिनों ही में खुरंट बँध आवेगी। परन्तु उस खुरंट को हाथ से न उचेले। आप ही सूखकर जब गिर पड़े, तब गिर जाने दे।

यदि बालकों को ये औषधियाँ खिलाई जायँ, तो महागुण करती हैं। ये वैद्यक के सर्वोत्तम ग्रन्थ सुश्रुत में लिखी हैं।

जब तक बालक दूध पीता रहे तब तक इस घी को चटाती रहे, जो इन औषधियों को घी में पकाने से बनता है—

श्वेत सरसों, बच, दुद्धी, चिरचिरी, शतावर, सारिवन, ब्राह्मी, पीपल, हल्दी, कूट और सेंधा नोन।

जब बालक दूध पीता हो, और अन्न भी खाता हो, अर्थात् दूध छुड़ाने का समय हो, तब मुलहटी, बच, पीपल, धाना, त्रिफला, इनका घी पकाकर खिलाये।

जब केवल अन्न ही खाता हो, और दूध छोड़ दिया हो, तो दशमूल, दूध, तगर, भद्रदारु (देवदारु), कालीमिर्च, शहद, वायविडंग, मुनक्का, दोनों ब्राह्मी, इनका घी पकाकर दे अथवा असगन्ध के कल्क से चौगुना काथ का

घी और घी से दशगुना गाय का दूध मिलाकर घी तैयार करके बालक को पिलावे, तो बालक पुष्ट और बलवान् होगा। ये चार उपाय भी बालकों के शरीर, बुद्धि और बल बढ़ाने को उसी ग्रन्थ में लिखे हैं। इनको योग या प्राश कहते हैं—

१—सुवर्णचूर्ण—कूट, शहद, घी, वच।
२—सोमलता—शंखपुष्पी, शहद, घी, सुवर्ण।
३—अर्कपुष्पी—शहद, घी, सुवर्णचूर्ण, वच।
४—सुवर्णचूर्ण—कट्फल, श्वेतफल का कुम्हड़ा, दूध, घी, शहद।

कुमारकल्याण घी बालकों को बहुत ही गुणकारी होता है। यह बल और वर्णकारक, श्रेष्ठ, पुष्टिदायक, जठराग्निवर्द्धक तथा छाया, सर्वग्रह, अलक्ष्मी, कृमि, दन्तरोग, सर्व बालरोग और दाँतों के भेद का विशेष साधक है। उसके बनाने की रीति यह है कि घी से चौगुना भटकटैया का काढ़ा और दूध साथ-साथ मिला ले। अष्टमंगल घृत इससे भी अतिश्रेष्ठ है। इसकी रीति यह है कि वच, ब्राह्मी, सफेद सरसों, सारिवा, सैन्धव, पीपल और आठवाँ घृत। इनसे घी तैयार करके बालक को पिलावे, तो बालक की स्मृतिशक्ति दृढ़ और बुद्धि तीव्र होती है।

बालक को गरिष्ठ भोजन कभी न करावे। बीस वर्ष की आयु तक उसको सुपच और साधारण भोजन दे। जैसे रोटी, खिचड़ी, दाल, भात। पर इनमें घी इत्यादि कभी न दे, अथवा अन्य ऐसा ही पुष्ट भोजन करावे। न बालकों को बेर-बेर भोजन करावे। भोजन के जो समय नियत हों, उन्हीं समयों पर दे, जिससे भोजन पचकर भूख भी अच्छी लगे। बिना पचे हुए भोजन पर या भोजन के पीछे कभी भोजन न करावे। घी या मेवा की कोई वस्तु उनको यों न खिलावे। बहुधा मनुष्य यह सोचते हैं कि ऐसा भोजन बालकों को बल करेगा। यह उनका भ्रम है। घी, मेवा या इसी प्रकार की अन्य गरिष्ठ और देर में पचनेवाली वस्तुओं के पचाने को बहुत बल चाहिए। बालकों के पेट में इतना बल नहीं होता कि ऐसे भोजन को पचा लें, और जब पचता नहीं और पाकाशय को अपनी अधिक शक्ति करनी पड़ती है, तब पाकाशय निर्बल हो जाता है, और फिर उसमें ऐसा बल नहीं आने पाता, जैसा कि आना चाहिए था। जो उनको केवल नाज या अन्न ही का साधारण भोजन दिया जाय तो वे उसको बहुत ही शीघ्र और बहुत पचा जावें। जो मनुष्य भूखा सेर-भर भोजन करता है, वह पाव भर घी नहीं खा सकता, और न उसको सदा [illegible]

सकता है। निरा नाज बहुत शीघ्र पच जाता है, और इसी कारण अधिक बल करता है। जो भोजन पचता नहीं, वह बल भी नहीं करता, बरन् पाचनशक्ति को उलटा कम करता है।

यह बात इससे भी प्रकट है कि गँवार लोग, जो निरा नाज खाते और खूब पचा लेते हैं, बड़े हृष्ट-पुष्ट और बलवान् होते हैं। वे लोग, जो घी-दूध खाते हैं, पर पचा नहीं सकते, उनके जैसे नहीं होते।

जब आयु बीस वर्ष की होगी, तब पाचनशक्ति पूर्ण हो जायगी। उस समय घी, दूध, मेवा इत्यादि बलकारक वस्तुएँ जितनी दी जायँगी, वे पचकर उतना ही अधिक बल करेंगी। यह परीक्षित है।

बालकों को यथारुचि खेलने-कूदने दे कि उनका मन भी बहले और भोजन भी पचे; क्योंकि इसमें थोड़ा-सा परिश्रम भी पड़ेगा, जो पाचनशक्ति को सहायता देगा।

बालकों को ऐसे खेल-कूद करने दे, जिनमें उनकी बुद्धि, बल आदि बढ़ें, और मन भी बहले, चित्त को अरुचि भी न हो और मन फिर उसके करने को चाहे। इसका सहज उपाय यह है कि (१) किसी वस्तु को ऊँचे स्थान पर रख दे, और बालकों से कहे कि देखें इस वस्तु को उछलकर कौन ले सकता है? (२) किसी वस्तु को

नियत करके यह कहकर बालकों को दौड़ावे कि देखें पहले इसको कौन छू सकता है ? (३) तुममें से इस बोझ को कौन उठा सकता है, अथवा यहाँ से उठा-कर वहाँ तक कौन ले जा सकता है ? (४) सौ बेर कौन उठ-बैठ सकता है ? (५) इस भीत पर इस आले में पाँव रखकर कौन चढ़ सकता है ? (६) दोनों पाँव जोड़-कर इतनी दूर कौन फाँद सकता है ? (७) बालकों में इसी प्रकार की आपस में होड़ बाँधकर परिश्रम करावे, और उनमें से जो जीते, उसको कुछ दे भी दे, जिससे उसका मन फिर भी करने को करे। ऐसा करने से भोजन पचकर बालकों को भूख अच्छी लगेगी।

बालकों की छाती चौड़ी होकर शरीर सुडौल हो जाय और स्वर भी गम्भीर हो, इसके लिए बालकपन ही से उनको गाने का अभ्यास करावे। यह बालकों को बहुत ही उपकारी है। इससे छाती तथा फेफड़े चौड़े होते हैं। बालकों का मन भी बहलता है, और वे गान-विद्या भी सीख जाते हैं, जो मन को अति ही प्रफुल्लित करनेवाली है। छोटी अवस्था में पुत्र या पुत्री का विवाह कभी न करना चाहिए। पुत्र का तो इस कारण कि उसका पढ़ना-लिखना विवाह होने पर मारा जाता है, गौना होते ही मन कुछ-से-कुछ हो जाता है, जिससे देह

निर्बल और मस्तक में पीड़ा होकर अनेक प्रकार के रोग हो जाते हैं। बहुत-से तो शीतला आदि रोगों में मर जाते हैं। उनका वह बालविधवा हो जाती हैं, जिनको जन्म काटना असह्य हो जाता है। पुत्रविवाह तो जब वह पढ़-लिखकर जीविका करने योग्य हो जाय, तब करे। इससे पहले कभी न करे। शास्त्रों में पचीस वर्ष की आयु में पुत्र के लिए विवाह करने की आज्ञा है। पर जो देश की प्रचलित रीति से इतना न बन सके, तो बीस वर्ष से पहले कभी पुत्र का विवाह और गौना न करे।

पुत्री का भी चौदह वर्ष के पूर्व न करे। शास्त्र में तो रजस्वला होने के तीन वर्ष पश्चात् लिखा है। यदि ऐसा न हो सके, तो रजस्वला होने के पूर्व तो कदापि न किया जाय; क्योंकि तब तक तो पुत्र-पुत्री विवाह आदि को ठीक-ठीक न जानकर खेलमात्र समझते हैं। स्त्री का गर्भाशय सोलह वर्ष की आयु के पूर्व पूर्ण और गर्भ धारण के योग्य नहीं होता। इसी कारण आजकल की स्त्रियों की बहुत-सी सन्तानें मर-मर जाती हैं; क्योंकि गर्भाशय की संकोचता से बालक पूर्ण देह प्राप्त नहीं कर सकता। यदि जीता भी है, तो माता को दुर्बल कर देता है। इसलिये शास्त्रोक्त-आयु में विवाह-गौना होना चाहिए।

बालकों के पाँव के नख कभी न कटवावे। इनके कटवाने से आँखों की दृष्टि में अन्तर आ जाता है। चौर कराकर बालकों को अच्छी तरह स्नान कराकर देह में से बाल छुड़ा देने चाहिए, क्योंकि यदि ये बाल साँस से मुख में अथवा वायु से कान, नाक वा आँख में घुस जायँ तो दुःख देते हैं, और फिर कठिनता से निकलते हैं। वरन् कभी-कभी नहीं भी निकलते। बालकों को कान-नाक कुरेदने की टेव भी न पड़ने दें। इसके करने से हानि होती है। सुनाई कम पड़ता है। चोट लगकर घाव हो जाता है। कान का मैल मुख में चला जाने से महाहानि करता है; क्योंकि यह भी एक विष है। दाँत कुरेदने से दाँत झर्रे और निर्बल हो जाते हैं।

बालकों को पाँव पर पाँव रखकर सोने और बैठने न दे। उनको खाट या कुर्सी पर बैठकर पाँव भी हिलाने न दे। यह नपुंसकता उत्पन्न करता है; क्योंकि एँड़ी के पीछे ऊपर को जो एक पतली नली-सी है, वह जाँघों से मिली हुई है। पाँव पर पाँव रखने से यह दबती है, जिससे शरीर में हीनता आती है, और बालकों का पुरुषार्थ मारा जाता है। हिलाने से जाँघों की नसों पर बल पड़ता है, उनमें हीनता आती है, और पुरुषार्थ कम होता है। इसलिए कुर्सी, मोढ़े, चौकी, तख्त आदि

पर पाँव लटकाकर बालकों को कभी न बैठने दे और जो बैठे हों तो हिलने न दे।

इसी कारण ऐसी खाट पर भी सोना हानिकारी है, जिसके पाँयते के सेरुये पर यह नली आती हो, अर्थात् अपनी लंम्बाई से खाट छोटी हो। बालकों को सदा पालथी मारकर भोजन करने की टेंव प्रथम ही से डाले। बालकों को पान न खाने दे, क्योंकि पान का चूना दाँतों की जड़ों को हानि पहुँचाता है। हाँ, पान का केवल रस ही चूस लिया जाय, तो कुछ हानि नहीं। इसी प्रकार हुक्का पीना आदि अन्य हानिकारक व्यसन न करने देना चाहिए, जिससे वे युवावस्था में इनके ऐसे आदी न हो जायँ कि रात-दिन हुक्का ही चचोरा करें। वह मुख से अलग ही न होने पावे।

बालचिकित्सा

इतना सुनकर मोहिनी ने पूछा—तुम बालचिकित्सा बताने को कहती थीं, सो किसे कहते हैं? दुग बोली—छोटे बालकों को जो दुःख, दर्द या रोग हो जाते हैं, और उनका जो इलाज किया जाता है, उसे बालचिकित्सा कहते हैं। यह सुनकर मोहिनी बोली—

इसे अवश्य बता। मैं अपना इलाज आप ही कर लिया करूँगी। दुर्गा बोली—अच्छा बहन! ले सुन। छोटे बालक बहुधा रोगग्रस्त हो जाते हैं, पर आजकल मूर्ख माता-पिता औषध द्वारा उनकी वैसी चिकित्सा नहीं कराते, जैसी कि करानी चाहिए। वे निरे स्याने-भोंपों ही के भरोसे रहते हैं, और अपनी प्रिय सन्तान के प्राण खो बैठते हैं। जब उनसे कहते हैं कि औषध करो; नहीं तो सन्तान से हाथ धो बैठोगे, तो उत्तर देते हैं—जब हमारे वैद्योंने (और उनमें से भी कैसे, जैसे सुश्रुत आदि ने) भी बालकों के रोगों का कारण ग्रह आदि माना है, जिसकी शान्ति के निमित्त उपाय का नाम भूतविद्या रक्खा है, और लिखा है कि बालकों को नवग्रह पीड़ा करते रहते हैं, तो फिर क्योंकर इसको झूठा मानें, और स्याने-भोंपों से इलाज न करावें ? पर वे इतना नहीं विचारते कि ऐसे रोगों को सुश्रुत आदि ने भ्रम से उत्पन्न माना है, और जब कारण लिखा है तो अपवित्रता ही लिखा है। चिकित्सा में यन्त्र, मन्त्र, जप, तप, दान आदि के सिवा औषधें भी लिखी हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि जब बालकों को ग्रह आदि पीड़ा करें, तो फिर औषध से क्योंकर वे नीरोग हो सकते हैं। इसी से जान लेना चाहिए कि यह केवल भ्रममात्र है।

· रोग की चिकित्सा केवल औषध ही द्वारा हो सकती है—यंत्र, मंत्र, जप, तप, दान, उठावने, टोटके, उतारे आदि से कदापि नहीं। वास्तव में यह निरा भ्रम ही है। सुश्रुत में लिखा है कि बालकों को रोग के हो जाने का कारण बहुधा अपवित्रता है। बात यह है कि बालकों का स्वभाव अति ही कोमल होता है। थोड़ी-सी भी अपवित्रता और दुर्गन्ध उनको हानि करती है। इसीलिए जहाँ तक हो सके, उनको इन दोनों से बचाये रक्खे।

सौर में यह ध्यान रक्खे कि वास न जाने दे। वायु को न रोके। बालक की नार को बहुत सावधानी से काटे। सर्दी न पहुँचने दे। बालक का शरीर मैला न रहने दे। जन्म लेने के पश्चात् ही बालक को एक दस्त करा दे। बालक को बासी दूध न पिलावे। इन्हीं बातों में असावधानी होने से बालकों को बहुधा ये रोग हो जाते हैं—शरीर शिथिल हो जाता है। बालक सोता नहीं। दस्त पतला जाता है। बेर-बेर दूध डाल देता है। प्यास बहुत लगती है। माता के स्तन को मुख में नहीं दाबता। हिचकी, खाँसी, अतीसार, उलटी और ज्वर हो आता है। रंग पीला पड़ जाता है। काँपता है। गले में घुरघुराहट होने लगती है। मुख में झाग लाता है। शरीर में दुर्गन्ध हो जाती है इत्यादि। पूर्व

स्त्री-पुरुष, इनको भूत-प्रेत, मसान के कारण जान, झाड़-फूँक कराने लगते हैं। कहते हैं बालक को झपेटा हुआ है, अथवा दब गया है, और स्याने, भोंदे, भाँड़, भगतों की झाड़-फूँक तथा गंडा-यन्त्र के भरोसे ही रहकर संतान के शत्रु बन पीछे रोते हैं। बालकों के रोग रोकने का सहज और मुख्य उपाय तो यही है कि सौर ही। उन्हें स्वच्छ प्रकार से रक्खा जाय। और इन काढ़ों से बालकों को चौथे-आठवें दिन स्नान कराती रहे—(१) गोरखमुंडी और खस का काढ़ा। (२) हल्दी, चन्दन, कूट, इनको पीस बालक के उबटना कर स्नान करावे। (३) साँप की केंचुल, लहसुन, सरसों, नीम के पत्ते, बिल्ली की बीट, बकरे के बाल, मेढ़े के सींग, बच और शहद सबको पीस बालकों को धूनी दे। (४) गौ, बकरी, भेड़, भैंस, घोड़ा, गधा, ऊँट, सबके मूत्र को तैल में औटावे। जब मूत्र जल जाय, तेल-भर रह जाय, तब उस तेल को छानकर बोतल में रख छोड़े। यही बालकों के मलकर स्नान करा दिया करे। (५) पीपल, पिपलामूल और कटेली का काढ़ा करके गौ के घी में पकावे, जब सिर्फ़ घी ही रह जाय, तब उसे रख छोड़े। उस घी को बालकों के मलकर स्नान करावे। (६) राल, गूगल, खस और हल्दी इनकी धूनी दे दिया करे।

बालक जन्म लेते ही दस्त जाता है। यदि किसी कारण से उस समय दस्त नहीं आता, तो दाई हाथ की कच्ची उँगली को गुदा में डालकर दस्त करा देती है। यह अच्छा नहीं। यदि बालक को इस समय दस्त न आया हो, तो उसकी माता का थोड़ा-सा दूध उसको पिला दे (पर फिर पीछे इस दूध को दो-तीन दिन तक न पिलावे। यह विष है), अथवा अण्डी के तेल की दस बूँदें शहद में मिलाकर चटा दे, तो दस्त आ जायगा। इस दस्त के न आने से बालकों को बहुत से रोग हो जाते हैं, जिसको मसान का रोग बतलाते हैं। बालचिकित्सा बहुत कठिन है; क्योंकि बड़े आदमी के रोगों का तो निदान अच्छे वैद्यों से नहीं हो सकता, छोटे बालकों का, जो मुँह से कुछ कह नहीं सकते, क्योंकर निदान होकर ठीक औषध हो सकती है। परन्तु जिस प्रकार रोगों के निदान अनेक प्रकार से किये गये हैं, इसी प्रकार बालकों के रोग पहचानने के लिए बहुत-से उपाय निर्धारित किये गये हैं।

बड़े बालक तो अपना कुछ वृत्तान्त कह भी सकते हैं, परन्तु बहुत ही छोटे बच्चे, जो मुख से बोलना तो एक ओर रहा, सुनने-समझने भी नहीं, क्योंकर अपना दुःख-दर्द जता सकते हैं। उनके पहचानने के उपाय

से हैं—बालक रोता है, क्योंकि उसे इस द्वार के सिवा और कोई अपने दुःख जताने का द्वार नहीं है। पर बहुत सी मूर्ख स्त्रियाँ बालक को भूखा जानकर उसको बेर-बेर दूध पिलाने लगती हैं, जिसे बालक पीता नहीं। यदि कुछ पी लिया, तो थोड़ी देर पीछे उसे और उलटा कष्ट होने लगता है—जैसे पेट के दर्द और अजीर्ण की दशा में।

मूर्ख स्त्रियाँ, जब बालक दुःख के कारण दूध तो पीता नहीं, पर रोता ही चला जाता है, जिसका ठीक कारण वे निश्चय नहीं कर सकतीं, झुँझलाकर बालकों को मारने-पीटने लगती हैं। यह नहीं करना चाहिये। माँ को चाहिये, पहले उसके कारण को खोजे। बालक के दुःख जानने की रीति यह है—

(१) बालक रोता हो, मुँह में झाग आते हों, तो जानना चाहिये, उसके कपड़ों में कोई जूँ है, जो बालक को काट रहा है। उसको ढूँढकर निकाल देना चाहिये। जहाँ काट खाया हो, तनिक-सा घी मल देना चाहिये। तत्काल बालक चुपका हो जायगा।

(२) यदि बालक बेर-बेर अपने पैरों को पेट की ओर समेटे और पेट को दबाने से चुप न हो वरन रोता ही रहे, तो जानना चाहिये, पेट में दर्द है। इसका उपाय यह है कि (अ) हाथ को आग पर सेंक-सेंककर

अथवा रुई को आग पर दूर ही से गरम करके बालक के पेट को सेंके। पर इस बात का ध्यान रक्खे कि रुई का इतना गरम करके न सेंके कि बालक की खाल, जो बहुत ही कोमल होती है, कहीं जल जाय। (इ) रोगनगुल को गुनगुना करके पेट पर मल दे। (उ) नमक को खूब महीन पीसकर गरम करके बालक के पेट पर मले। (क) इलायची के दो बीज तथा सौंफ के दो दाने मा के दूध में पीसकर पिला दे।

(३) बालक सोकर उठे और रोवे, जीभ निकाले; इधर-उधर दूध की खोज में मस्तक को हिलाये तो जानना चाहिये, भूखा है। दूध पिलाने से चुपका हो जायगा।

(४) एक करवट देर तक सोने, किसी वस्तु के चुभने या चींटी अथवा मच्छड़ के काटने से भी बालक रोता है। इसको भी देख लेना चाहिये। यदि इनमें से कोई-सा कारण जान पड़े, तो पहले उसका उपाय कर देना चाहिये।

(५) जो बालक बराबर रोता ही चला जाय, चुपका न हो तो जानना चाहिये, कहीं दर्द या कोई दुःख है।

(६) दर्द पहचानने की यह रीति है कि जहाँ दर्द होता है, उस अंग को बालक बार-बार छूता है, और उस अंग को दूसरे के छूने पर रोता है।

(७) जब बालक के मस्तक में पीड़ा होती है तब वह अपनी आँखें मूँद लेता है।

(८) यदि बस्तिस्थान (गुदा) में दर्द होता है, तो बालक को प्यास अधिक लगती है, मूर्च्छा होती है। यदि मलकोष्ठ में दर्द होता है तो मल-मूत्र रुक जाता है; मुख मलीन हो जाता है, साँस अधिक चलती है और आँतें बोलती हैं।

(९) जब सब शरीर में दर्द होता है, तो रोता है। बालकों को खाने की औषध तीन प्रकार से दी जाती है (१) जो बालक दूध पीते हैं, तो उनको दूध पिलाने-वाली को। (२) जो नाज खाते हैं, तो बालक को। (३) जो बालक दूध भी पीते हैं, और नाज भी खाते हैं, तो बालक और दूध पिलानेवाली, दोनों को। बालकों को उनके माता के दूध अथवा शहद में घिसकर औषध दी जाती है। बालकों को बहुधा ये रोग होते हैं, जिनके नाम, लक्षण और उपाय अब तुमको बताती हूँ। अब तक तो ऊपरी विषय ही बताये।

ढूँडी का पक जाना—(अ) जो गरदन के खिंचने से पक गई हो, तो मोम का मरहम कपड़े पर लगाकर या (इ) कपड़े को कड़वे या गोले के तेल में भिगोकर लगा दे। (उ) अथवा थोड़ी-सी पुलटिस

बाँध दे। (क) हल्दी, लोध, प्रियंगु के फूल, इन सबको शहद में महीन पीस टूँडी के ऊपर लेप करे। (ख) जो सूजन हो तो पीली मिट्टी को आग में गरम कर, दूध डाल उसका बफारा दे। (ग) कपड़े को आग पर गरम कर-करके सेंके, तो सूजन जाती रहेगी।

(ख) खाल का लग जाना—बालक की खाल आँख, कोहनी, घोंटू, रान या जाँघ में चिपकी रहती है। यहाँ मैल जम जाता है, और कच्ची खाल होने के कारण वह लग उठती है। इसलिए कड़वा तेल लगाकर, मैल निकालकर, नित्य गरम पानी से धो दिया करे।

(३) दूध डालना—इसको बालक कई प्रकार से डालता है—(१) अपने पेट के विकार से (२) माता के दूध से दूषित होने से, अर्थात् जब माता का दूध गरम अधिक होता है, तो बालक उसको पीते ही डाल देता है। जो स्त्री रोटी करके या चक्की पीसकर उठी हो अथवा कहीं से शीघ्रता में चली आई हो, पसीने से तर हो अथवा ऐसा ही अन्य कारण हो, तो उस समय का दूध गरम हो जाता है। उसको न पिलाना चाहिये। माता से ये काम छुड़ा देने चाहिये। यदि माता को अजीर्ण रहता हो, तो माता को अल्प भोजन, जो शीघ्र पच जाय, देना चाहिये। कोई पाचन चूर्ण देना चाहिए।

पेट-भर भोजन न देना चाहिए। आधी भूख खिलाना चाहिए। (अ) काकड़ासिंगी, अतीस, मोथा और पीपल पीसकर शहद में चटावे। (इ) आम की गुठली, धान की खील और सेंधा नमक पीसकर शहद में चटावे। (उ) कटेली के फूल का रस, पीपल, पीपलामूल, चित्रक और सोंठ, इन सबको पीसकर घी और शहद में चटावे।

(४) दूध न पीना—इसका पहले कारण निश्चय कर ले, और यह निश्चय करे कि कौन-सी पीड़ा के मारे दूध नहीं पीता। (आ) जहाँ उसका हाथ बेर-बेर जाकर पड़े, वहाँ दर्द जाने। कारण निश्चय करके उपाय करना चाहिए। (ई) गर्भिणी का दूध पीने से मन्दाग्नि हो गई है। जौन-सा कारण हो उसी का उपाय करे अथवा नीम के पत्ते, परवल के पत्ते, गिलोय के पत्ते और अडूसे के पत्ते, इनका काढ़ा कर स्नान करावे।

(५) दूध पीकर डाल देना—इसके कारण भी वे ही उपयुक्त हैं, और वे ही उपाय भी।

(६) डुड़ी का जाना—इसके पहचानने के ये लक्षण हैं कि बालक दस्त जाने में रोता है, और दस्त पतला आता है। दस्त आने में फिट-फिट शब्द भी होता है। गुदा के नीचे एक नस होती है, वह अपने स्थान से हट जाती है। उसको किसी चतुर दाई या

बूढ़ी स्त्री से, जो इस काम को भली भाँति जानती हो, उठवा देना चाहिए। इस क्रिया का नाम 'टुड्डी उठाना' कहते हैं।

(७) हँसली का जाना—यह गरदन की हँसली की एक हड्डी है, जो हँसली की भाँति दोनों कन्धों से लगी हुई गरदन के आगे को होती है। बालक की गरदन में हाथ लगाकर उसे न उठाने से झटका चला जाता है, उसी से दर्द हो जाता है। (अ) इसके रोकने का उपाय यही है कि बालक की गरदन में चाँदी की एक हँसली डाल दे। (इ) उसके ठिकाने बैठाने का उपाय यह है कि किसी चतुर दाई से सुतवा दे। (उ) नीम के पत्तों की धूनी दे। (क) घुँघची की माला पहनावे।

(८) काग का लटक आना—यह गर्मी से हो जाता है। बालक दूध पीना छोड़ देता है, अथवा पीकर तत्काल डाल देता है। रोता बहुत है; पर रोया नहीं जाता। उपाय—१ इसमें चूल्हे की राख और काली मिर्च पीसकर, उँगली पर लगाकर, उँगली के पल से चतुराई से ऊपर को उठा दे। गरम वस्तु बालक को न खाने दे, न उसकी दूध पिलानेवाली को खाने दे। २ मुलतानी मिट्टी को सिरके में पीसकर तालू पर लगा दे,

या माजूफल को सिरके में पीसकर, उँगली से लगाकर काग को उठा दे।

(६) आँख दुखना—जब आँख दुखने को आवे, तो पहले तीन दिन तक तो किसी प्रकार की कुछ औषध न करे ; क्योंकि औषध करने से वेग रुककर पीछे अधिक दुःख होता है। आँख दुखने के कई कारण होते हैं। कभी गर्मी से, कभी दाँतों के निकलने से, कभी दूध पिलाने-वाली की आँख दुखने से। इसके उपाय ये हैं—

१ छोटे बालकों के कान में तो कड़वा तेल डाल दे और तालू पर भी मल दे। यदि हो सके, तो एक-एक बूँद आँख में भी डाल दे। २ दूध पिलानेवाली को खाने-पीने में नियम से रहना चाहिये। नमकीन या खट्टा न खाना चाहिये। चने या चने की बनी हुई कोई भी वस्तु न खाय। ३ रसौंत का पानी आँख में डाल दे। ४ नीम की कोंपल पीसकर, टिकिया बनाकर, कोरे घड़े पर लगाकर ठंडी कर ले। फिर रात्रि को या दोपहर को बाँध दे। ५ गेरू पानी में घिसकर रुई को उसमें अच्छी भाँति भिगोकर बाँध दे। ६ घी को गरम करके और रुई के फाये बनाकर नमक के पानी में भिगोकर इसे घी में छोड़ दे। जब छुन-छुन शब्द बन्द हो जाय, तब उतारकर और ठंडा करके आँखों

पर बाँध दे। ७ जो आँखें दाँत निकलने के कारण दुखती हैं, उनका अच्छा होना तनिक कठिन पड़ता है, क्योंकि जब तक दाँत नहीं निकल चुकते, आँखें दुखती ही रहती हैं। ८ घीग्वार का रस आँख में टपका दे। ९ आँवले और लोध को गौ के घी में भूनकर पानी में पीसकर लगा दे। १० अमचूर को लोहे पर पीसकर आँख पर लेप कर दे। ११ उसी बालक के मूत्र में रुई भिगोकर फाये बाँध दे। १२ बकरी के दूध के फाये बाँधे। १३ वासे की पत्ती या बमरूली की टिकिया बनाकर बाँधे। १४ तोले भर गुलाबजल में चार रत्ती फिटकरी महीन पीसकर मिला दे, और मोरपंखी या पंख के लिखने की कलम में इस जल को भरकर दिन में दो तीन बार चार-चार बूँदें दोनों आँखों में डाल दिया करे। १५ रसौत और फिटकरी बराबर और अफीम आधी लेकर, पानी में पीसकर, गुनगुनी कर आँखों के ऊपर-नीचे पलकों पर लेप कर दे। परन्तु आँखों के भीतर न जाने दे।

(१०) खाँसी—यह बहुत ही बुरा रोग है, और सब रोगों की जड़ है, क्योंकि कहावत प्रसिद्ध है—"रोग का घर खाँसी, लड़ाई की जड़ हाँसी।" इसलिए इस रोग में बहुत ही सावधानी रखनी चाहिये। इसके लक्षण

मालूम होते ही उपाय करना चाहिये। यह कई प्रकार की है—

१ खाँस, जो कभी-कभी उठे ; पर जोर से उठे। २ श्लेष्मा (जुकाम) होने से, जिसमें छाती की कौड़ी में दर्द होता है। यह बहुत ही बुरी होती है। ३ काली या कुकर-खाँसी। यह सर्दी से होती है। छूत से भी हो जाती है। अर्थात् एक बालक को खाँसी हो रही है, उसका जूठा पानी या खाना दूसरे बालक ने पी या खा लिया, अथवा मुँह में साँस चली गई, तो उस बालक को भी हो जायगी। यह खाँसी देर में जाती है, बड़ा कष्ट देती है। बालक बहुत देर तक खाँसता रहता है। यहाँ तक कि खाँसते-खाँसते क्रय (वमन वा उलटी) कर देता है। ४ जिसमें बालक की आवाज बैठ जाती है। यह और भी बुरी है। इसमें बहुत ही जल्दी बालक की सुध लेनी चाहिये ; क्योंकि इसमें बालक मर जाता है। इस खाँसी में साँस देर में आती है। साँस लेने में ताँबे के बर्तन की-सी टङ्कार जान पड़ती है। ५ धुयें के कारण जो खाँस गई हो, तो ताल् सुसुराने से आराम होता है। ६ गले में गरद-गुबार चला गया हो, और उससे खाँसी उठती हो, तो छाती पर तेल मलने अथवा गला सहलाने से आराम हो जायगा। ७ सुरकी से गले में फाँस पड़

गई हो, तो बिहीदाने के लुआब में मिसरी मिलाकर पिलावे, या शहतूत का शर्बत चटावे या छाती और गले में तेल मले। ८ जब बालक के चिनूने या छारुये पड़ जाते हैं तो उस समय भी सूखी खाँसी उठती है। इस दशा में चिनूनों का उपाय करे, जो आगे बताऊँगी।

अन्य दवाएँ—१ पोहकरमूल, अतीस, पीपल, काकड़ासिंगी को पीसकर शहद में चटावे। २ वंशलोचन पीसकर शहद में चटावे। ३ आक की मुँहमुँदी थोड़ी गिनकर और उतनी ही काली मिर्च गिनकर पाँचों नमक डालकर एक कुल्हिया में रखकर कपरौटी कर आग में फूँक ले। इस राख को थोड़ी-थोड़ी खाँसीवाले बालक को चटावे। ४ एक कुल्हिया को गरम करके साँभर नमक उसमें भून ले, और बालक को चार-पाँच बेर दिन में चटा दिया करे। ५ अनार का छिलका और नमक पीसकर चटा दिया करे। ६ बहेड़े को भूभल में भून नमक मिलाकर चटा दिया करे। ७ आक की जड़ को आक के रस में तीन-चार बेर भिगोकर सुखा ले। फिर इसका धुआँ पिलावे। जब ठंड से खाँसी हो। ८ अथवा आक के पत्तों को तवे पर भूनकर जला ले। उसमें खारी नमक डालकर पीस ले, फिर बँगले पान में रखकर चूसे। ९ पान के रस में एक

या दो रत्ती जायफल घिसकर दे। १० यदि सुरक खाँसी हो, तो मुलेठी का सत मुख में डाले रक्खे। ११ गरम पानी की भाप टोंटीदार लोटे या झारी से गले में ले तो खाँसी दूर हो। १२ कीकर (बबूल) का गोंद मुख में डाले रक्खे। रस चूसने दे। १३ खाँसी, ज्वर और अतीसार संग-संग हो तो काकड़ासिंगी, पीपल, अतीस और मोथा को पीसकर शहद में चटावे।

(११) खाँसी और ज्वर—१ काकड़ासिंगी, अतीस और पीपल पीसकर शहद में चटावे। २ कटेली के फूलों की केसर को शहद में मिलाकर चटावे। ३ अधभुना सुहागा और बराबर की काली मिर्च पीसकर घीग्वार के रस में चने बराबर गोली बाँधे और खिला दिया करे। ४ बादाम की मींगी पानी में घिसकर चटावे। सरसों को पीसकर शहद में चटावे। यदि इनके संग दस्त भी आते हों तो काकड़ासिंगी, पीपल, अतीस और मोथा को पीसकर शहद में चटावे।

(१२) पेट चलना—इसको अतीसार भी कहते हैं। यह कई कारण से होता है। अजीर्ण से, सर्दी पाने से और गर्मी पाने से। दाँत निकलने के दिनों में तो बहुधा होता है। जो दाँतों के कारण दस्त हों, तो उनको कदापि न रोकना चाहिये; क्योंकि रोकने से हानि होती

है। इसका विशेष हाल दाँत निकलने के विषय में बताऊँगी। जो अजीर्ण के कारण से हो, तो बालक को घूटी देना चाहिये, या कोई पाचक चूर्ण, जैसे भुना हुआ सुहागा आदि। दूध में मिलाकर चूने का पानी पिलाया जाय। चूने का पानी बनाने की विधि आगे बताऊँगी। दूध पिलानेवाली दूध को जल्दी-जल्दी न पिलावे, देर में पिलावे। सर्दी से जो दस्त हों, तो बालक को सर्दी से बचाये रक्खे। उसके पेट पर फलालैन लपेट दे। दूध पिलानेवाली भी ठंडक से बची रहे, और ठण्ड करनेवाली वस्तु का भोजन न करे। यदि गर्मी से बालक को दस्त हो गये हों, तो बालक और दूध पिलानेवाली दोनों गर्मी से रक्षित रहें, ठंडी वस्तु का सेवन करें, चावल आदि भोजन करें, अथवा वंशलोचन, छोटी इलायची और मिसरी पीसकर माता के दूध में बालक को पिलावे।

सामान्य दस्तों के लिये ये औषधें उपयोगी हैं—

१ बेलगिरी, कत्था, धाय के फूल, बड़ी पीपर्ल और लोध। इनको पीसकर शहद में चटावे। २ हल्दी, कुड़े के बीज, काकड़ासिंगी और बड़ी हड़ पानी में भिगोकर उस पानी को पिलावे। ३ सोंठ, अतीस, नागरमोथा, नेत्रवाला और इन्द्रजौ, इनका काढ़ा पिलावे।

यदि अतीसार के संग ज्वर भी बालक को हो, तो

नागरमोथा, पीपल, अतीस और काकड़ासिंगी, इनका चूर्ण कर, शहद में मिलाकर चटावे। इस ओषधि से खाँसी और दूध गिरना भी बन्द होता है।

यदि इनके संग प्यास भी हो, तो मोथा, सोंठ, अतीस, इन्द्रजौ और खस, इनका काढ़ा दे।

(१३) आँवअतीसार—अर्थात् दस्तों के संग आँव भी आती हो, तो १ वायविड़ंग, अजमोद और पीपल महीन पीसकर चावलों के पानी में दे। २ सोंठ, अतीस, भुनी हींग, मोथा, कुड़ा और चीता, इनका चूर्ण कर गरम पानी में दे।

(१४) रक्तातीसार—उसे कहते हैं, जब दस्तों में लहू निकलता है। तब १ पाषाणभेद और सोंठ पानी में घिसकर पिलावे। २ सफ़ेद जीरा और कुड़े के बीज जल में पीसकर, मिसरी मिलाकर दे। ३ मोचरस, मँजीठ, धाय के फूल और कमल के फूल, इनको पीसकर साठी के चावलों के माड़ में दे। ४ अनार के फल का छिलका एक छटाँक, लौंग और दालचीनी का चूरा आठ-आठ माशे लेकर मिट्टी की हाँडी में डेढ़ पाव पानी में पन्द्रह मिनट तक मन्दी आग से उबाल ले। पर हाँडी का मुँह बन्द रक्खे। जब ठण्डा जायँ तब दवा छान ले; और ठंडा कर ले। बालक को छः-छः माशे

और युवा मनुष्य को चार-चार तोले दिन-भर में तीन-चार वेर दे । ५ आक की जड़ का चूर्ण दे, जो इस प्रकार बनता है । आक की जड़ को खोदकर, मिट्टी को धो-पोंछकर छाया में सुखावे । जब सूख जाय, तब छाल को अलग कर ले, और दूसरी वेर फिर सुखावे कि तनिक भी दूध न रहने पावे । जब निपट सूख जाय, तब कूटकर चूर्ण कर ले । बालक जितने वर्ष का हो उतनी ही रत्ती दिन में तीन, चार वेर ठंडे पानी के साथ फँका दे। युवा मनुष्य को दस से तीस रत्ती तक दिन-भर में तीन-चार वेर फँका दे। (१) सौंफ और सफेद जीरा दो-दो माशे, छोटी इलायची के दाने चार रत्ती। सौंफ और जीरे को आग पर किसी बरतन में थोड़ा अकोर ले। फिर तीनों को पीस ले इसमें छः माशे अनार-दाने का लुआब निकालकर एक तोला मिसरी मिलावे। पहले फंकी कर ले। ऊपर से इस लुआब को पिला दे। (२) सौंफ को अधभुनी कर कूट ले और बूरा मिलाकर खाय। (३) मरोड़फली को सेंधा नमक के साथ घिसकर पिलावे। (४) सोंठ या अदरख का मुरब्बा खिलावे। (५) सौंफ, सोंठ, पोस्त का छिलका, आँवला, छोटी हड़, सफेद जीरा यह सब चार-चार माशे, मिसरी दो तोला, पोस्त के ढोरे, सौंफ और जीरे को भूनकर अलग रख

ले। फिर बाकी तीनों को भून ले। ये तनिक देर में भुनती हैं। फिर इन सब औषधियों को थोड़े घी में भूनकर पीस ले, और मिसरी मिलाकर रख छोड़े। दिन में तीन बेर ठंडे पानी से खिलावे; पर भोजन गरिष्ठ न करे, हलका भोजन करे। अनार का काढ़ा दे, जि[illegible] विधि चिनूनों में बताऊँगी।

(१५) अफरा—उसे कहते हैं, जब पेट [illegible] जाय। यह बहुधा अजीर्ण से होता है। तब १ सों नमक, सोंठ, इलायची, भुनी हींग और भारंगी क महीन पीस गरम पानी के संग पिलावे। २ हींग को भूनकर, पानी में घिसकर ढूँड़ी के चारों ओर लेप कर दे। ३ सूखा पोदीना, छोटी इलायची, पीपल, काली मिर्च और काला नमक बराबर-बराबर पीसकर तीन-चार दिन खाय।

(१६) लार गिरना—जवारस मस्तगी थोड़ी-थोड़ी सी खिलावे। इसके बनाने की यह विधि है कि दो तोले मस्तगी, दो तोले बड़ी इलायची के बीज कूट-पीसकर, पाव-भर बूरे की चाशनी करके उसमें दवा डाल दे, और चकती जमा ले। एक या दो माशे खिला दिया करे।

(१७) कान बहना—लोध करे महीन पीसकर कान

में डाल दे। बन्द हो जायगा और दर्द भी जाता रहेगा।

और उपाय—समुद्रफेन, सुपारी की राख, कत्था इन सबको महीन पीसकर, कागज की बत्ती बनाकर कान में फूँक दे। या मोर के पंजे को जलाकर डाले। या मोटी सीप को कड़वे तेल में जलाकर डाले। या जो कान में दर्द होता हो, तो लड़केवाली स्त्री के दूध की चार बूँदें डलवा दे। या नीम की कोंपल का रस शहद में मिलाकर, गुनगुना करके डाल दे। या सुदर्शन के पत्ते का रस निकालकर गुनगुना करके कान में डाल दे। या रुई को गरम कर-करके सेंक दे। या बाबूने को पानी में औटाकर, किसी टोंटीदार लोटे में भरकर उसका मुँह तो ऐसा बन्द कर दे कि भाप न निकले, और टोंटी की ओर से कान में भाप जाने दे। इस प्रकार से सेंके तो चैन पड़ जायगी। या आक की जड़ को मीठे तेल में खूब औटावे। जब तेल रह जाय और जड़ जल जाय, तब उसको छानकर कान में डाले, तो दर्द जाता रहेगा।

(१८) दाँत निकलना—ये आगे जाकर जितना सुख के कारण बनते हैं, उतना ही बालक को निकलने की दशा में कष्टदायक होते हैं, और शरीर में अनेक रोग उत्पन्न कर देते हैं। दाँत का निकलना प्रायः

सात ही महीने के पीछे होता है। पहले आगे के दाँत निकलते हैं, सो भी नीचे के। पर किसी-किसी के ऊपर भी निकलते हैं (उनको अशुभ मानते हैं)। नवें महीने आगे के दाँतों से इधर-उधर के दाँत और बारहवें महीने दो अगली डाढ़ें निकलती हैं। अठारहवें महीने में दो कीलें और चौबीसवें महीने में पिछली दो डाढ़ें। नीचे ऊपर के दाँत डाढ़ों के संग ही निकलते हैं। यह साधारण समय है। पर किसी-किसी के इस समय में अन्तर पड़ जाता है। ये 'दूध के दाँत' कहलाते हैं। छठे या सातवें वर्ष से सच्चे दाँत निकलते हैं, जो 'नाज के दाँत' कहलाते हैं। इस समय ये दूध के दाँत गिरने लगते हैं। इक्कीस वर्ष की आयु तक सब दाँत और डाढ़ें निकल चुकती हैं। फिर नहीं निकलते। हाँ, एक अकल-डाढ़, जो सब डाढ़ों में पीछे होती है, इक्कीस वर्ष की आयु के पीछे भी किसी-किसी के निकलती है। कोई-कोई मनुष्य ऐसे भी होते हैं कि उनके जन्म-भर दाँत और डाढ़ें निकलतीं ही नहीं, और किसी-किसी के मा के उदर में ही से दाँत निकले हुए आते हैं। यह विशेष दशा है। मैंने केवल सामान्य दशा का वर्णन किया है, जो सबकी होती है।

बालक के दाँत निकलने के लक्षण ये हैं कि मुख से गिरती है, मसूड़े गरम और लाल रहते हैं, बालक

अपनी उँगलियों को चबाता है, प्यास अधिक लगती है और इसी कारण जल्दी-जल्दी दूध पीने को करता है; पर पीता नहीं। माता के स्तन को तनिक चचोड़ा कि तत्काल छोड़ दिया। रोने में बालक के गालों का रंग लाल हो आता है। जब ये लक्षण हों तब जान ले कि दाँत निकलते हैं। बालक के सुगमता से दाँत निकलने के लिए सहज उपाय यह है कि किसी चतुर डाक्टर से मसूढ़ों को चिरवा दे, या शहद में सुहागा, नमक अथवा शोरा पीसकर मिलावे, और मसूढ़ों पर दिन में कई बार चुपड़ दिया करे। मुलहठी की डंडी को छीलकर बालक के गले में डोरे से बाँधकर लटका दे, और उसको चूसने दे। अथवा रबड़ के बने हुए खिलौने दे दे, जिनको वह दाँतों से दाबता रहे। इससे बालक को बहुत चैन पड़ती है।

जब बालक के दाँत निकलते हों, तब इतनी बातों का ध्यान रक्खे—खटाई की कोई वस्तु बालक के खाने को न दी जाय; क्योंकि खटाई खाने से दाँत देर में निकलते हैं। गरमी के दिनों में बालक के सिर को गरम पानी से धो दिया करे; परंतु गरम टोपी न पहनावे। कोई छोटी वस्तु बालक के खेलने को न दे दे, जिसको वह निगल जाय; क्योंकि बालक इन दिनों में हर वस्तु को मुख में

रखकर मसूढ़ों मे चचोरने लगता है। छोटी वस्तु के गले में चले जाने का भय रहता है, जो कण्ठ में अटककर बालक के कभी-कभी प्राण तक हर लेती है, नहीं तो कष्ट तो देती ही है। जब बालक के दाँत निकलते हों तो माता को चाहिये अपना दूध न पिलावे, वरन् छुड़ा दे। इस प्रकार कि दो-चार दिन आप भोजन कम करे जिससे दूध न उतरे। छः माशे खड़िया मिट्टी और चार रत्ती कपूर पानी में पीसकर स्तनों पर मल दिया करे। दस-पाँच दिन ऐसा करने से बालक स्वयं दूध पीना छोड़ देगा; परन्तु ऊपरी दूध बालक को खूब पिलावे, और नाज खाने को कम दे। यदि बालक को दाँत निकलने में दस्त आते रहें, तो बहुत अच्छा है। कब्ज हो तो कभी-कभी अरण्डी का तेल दे दिया करे। पर यदि स्वयं ही दस्त बहुत आते हों, तो बेलगिरी और रूमीमस्तगी मिलाकर तनिक-तनिक खिलावे।

कभी-कभी बालक को इसमें बहुत ही पीड़ा होती है। मसूढ़े फूल जाते और लाल हो आते हैं, गर्म रहते हैं, बहुत दुखने हैं, दूध पिया नहीं जाता, कण्ठ सूख जाता है और चेहरा लाल, देह में ज्वर हो आता है, माथा गरम रहता है, सोते-सोते बालक रो पड़ता है, कभी उठकर बैठ जाता है, कभी ऐंड़ाने लगता है, पेट चल निकलता

है, दुखता और अफर जाता है, और कभी-कभी टाँट भी बँध जाती है।

जब ऐसी दशा हो, तो तत्काल ममूड़ों को चिरवा दे। इससे बालक का कष्ट बहुत ही कम हो जायगा।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि टाँट बँधकर बालक के हाथ-पाँव ऐंठ जाते हैं, और बालक नार नटेर जाता है, और बत्तीसी भिच जाती है—१ ऐसी दशा में बालक के मुँह पर ठंडे पानी के छींटे दे; जब तक कि बालक आँख न खोल दे। २ गुनगुना पानी करके, नाँद या किसी चौड़े बरतन में भरकर बालक को गले तक आठ वा दस मिनट तक उसमें बिठा दे; पर अधिक नहीं। निकालकर तुरंत सूखे अँगौछे से शरीर पोंछ डाले और वस्त्र उढ़ा दे, जिससे हवा न लगने पावे। फिर डाक्टर से ममूड़े चिरवाकर अरण्डी के तेल का विरेचन (जुल्लाब) दे दे।

इन्हीं दिनों बालकों के कान के पीछे फुंसी या गिल्टी भी हो जाती है। उनको गरम पानी में दूध या शराब डालकर धो दिया करे। आहार बालक का घटा दे, और मेदी औषध दिया करे। अँगरेजी सौदागरों के बिजली की बनी हुई एक प्रकार की पट्टी-सी बिकती है, जिसको गले में पहना देते हैं, और इसी कारण उसका नाम

गुलूबंद है। उसको बालक के गले में बाँध दें, तो दाँत बहुत सुगमता से निकल आवेंगे, और बालक को पीड़ा कम होगी।

(१६) गला आ जाना—शहतूत का शर्बत चटा दे। यह जितनी वेर चटाया जायगा, उतना ही शीघ्र आराम पड़ेगा। इससे यह प्रयोजन है कि गले में होकर जितनी अधिक देर यह शर्बत उतरता है, उतना ही अधिक और शीघ्र सुख होता है। इसलिये बहुत थोड़ा-थोड़ा चटावे कि बहुत देर तक चटाया जाय।

(२०) कोहे आ जाना—उसको कहते हैं कि आँखों की बाहरी कोर लाल पड़ जायँ और जो संधि दोनों पलकों की हैं, वे चिर जायँ और उसमें पीड़ा हो, खुजली हो। घाव बढ़ता ही जाय। इसका उपाय यह है कि कपड़े की पोटली-सी बनाकर हाथ पर रगड़े अथवा मुख से उसमें फूँक भरकर आँखों के उस भाग को सेंक दे। १ काजल में सफ़ेदा रगड़कर और उँगलियों में भरकर दिये की लौ पर उँगलियों को तनिक सेंके और गरम-गरम ही आँखों में आँज दे। दो-तीन दिन करने से आराम हो जायगा। २ यदि रोहे हो गये हों अर्थात् आँखें बहुत सूज गई हों और ऊपर की पलक के भीतर फुंसियाँ हो गई हों, तो

चिकासू (यह औषध पंसारी के यहाँ बिकती है) के बीज लेकर उबाल ले । उनके छिलके छील डाले। भीतर की मींगी को पानी में घिसकर दिन में दो-तीन वेर आँखों में आँज दे। इससे फुंसियाँ फूट-कर पानी या लहू निकल जावेगा। ३ अथवा रोहू मछली के दाँत डोरे में बीस व पचीस बाँधकर बालक के गले में पहना दे। चिकासू चक्षु का अपभ्रंश है।

(२१) तलुये का पक जाना या बैठ जाना—मुलतानी मिट्टी घिसकर दिन में कई वेर तलुये पर रक्खे।

(२२) अलाई का निकलना—ये वे फुंसियाँ हैं, जो वर्षाऋतु में छोटी-छोटी लाल-सी चकत्ते के रूप में, शरीर में और विशेषकर पीठ और छाती में निकल आती हैं। किसी-किसी का मुँह सफेद होता है। इसका उपाय यह है कि मसूर के छिलके और आँवले जलाकर उनके बराबर मेहँदी और कबीला पीसकर घी में मिलाकर शरीर के उस भाग पर मल दे और मेहँदी को पानी में औटाकर छानकर उस पानी से नहला दे।

(२३) अफोह—वे फुंसियाँ हैं, जो शीतला के-से फफोले बालक के शरीर में श्वेत-श्वेत हो जाते हैं। आज के हुए फफोले कल फूट गये, और कल नये और उत्पन्न हो गये। इनकी झिल्ली बहुत ही पतली होती

इतनी एक बेर की मात्रा है। जब शरीर ठंढा हो, ज्व
का अंश न हो, तब ठंढे या सर्द पानी के संग फं
दे। इतना ही साँझ और इतना ही सवेरे।

यदि मल कोष्ठबद्ध हो, साफ दस्त न आवे, तो पह
एक माशे कालादाना और आधा माशे सोंठ का चू
कर, दोनों को फँकाकर, गरम पानी पिलाकर विरेच
करा दे। फिर दूसरे दिन औषध दे।

जो संध्या को देह गरम हो आता हो, तो बरा
भर पानी में चार रत्ती शोरा और एक माशे बूरा घोल
कर पिला दे। इससे पसीना आवेगा। उस समय कंबल
से शरीर को ढक दे। यदि ज्वर के सङ्ग आँव के दस्त आ
हों, तो यह गोली बनाकर देनी चाहिये—हींग एक रत्ती,
अफीम ½ रत्ती, काली मिर्च आधी रत्ती। यह एक गोली
का प्रमाण है। इस हिसाब से गोली बनाकर रख छोड़े,
साँझ-सवेरे खिला दे। इन दस्तों में रोटी पूरी नहीं
खाना चाहिये। दही या मीठे से चावल खाय।
खिचड़ी या दलिया खाय। ऊपर की मात्रा युवा मनुष्य
के लिये है। बालक को इस प्रकार से है—

१४ वर्ष के बालक को इसमें से ½ मात्रा
७ „ „ ¼ „

२ वर्ष के बालक को इसमें से १/८ मात्रा
१ „ „ १/१२ „
६ महीने के „ „ १/१६ „

नीम की हरी-हरी सींकें लेकर उनके पत्ते और छिलका छील डाले। पचीस सींकें और सात कालीमिर्च डालकर पानी में पीस ले और पी जाय। दो-तीन दिन दोनों समय पीने से ज्वर जाता रहेगा।

अतीस पीसकर रख छोड़े। जब ज्वर उतर गया हो और शरीर ठंडा हो गया हो, तब एक रत्ती की पुड़िया ठंडे पानी के संग खिला दे। तीन-चार दिन तक दिन में तीन-चार बेर खावे।

ज्वर में पुरुषप्रसंग अत्यंत वर्जित है। इससे विषमज्वर होकर हड्डी में पैठ जाता है। फिर सिवा मृत्यु के दुःख से बचने का और कोई उपाय नहीं होता। यह तरुण अवस्था में बहुधा और विशेषकर हो जाता है। इसलिए बहुत ही सावधान रहना चाहिये।

(२६) संग्रहणी—अर्थात् भोजन का न पचना। उपाय—१ आधी छटाँक खाने का खरा चूना ले, और परात में रखकर ढाई सेर पानी से धीरे-धीरे पतला धार से तरा दे, जिससे वह घुल-घुलकर पानी में मिलता जाय। दो घंटे पीछे उस पानी का निथार ले। नीचे के

इतनी एक बेर की मात्रा है। जब शरीर ठंडा हो, ज्वर का अंश न हो, तब ठंडे या सर्द पानी के संग प्रेम से दे। इतना ही साँझ और इतना ही सवेरे।

यदि मल कोष्ठबद्ध हो, साफ दस्त न आवे, तो पहले एक माशे कालादाना और आधा माशे सोंठ का चूर्ण कर, दोनों को फँकाकर, गरम पानी पिलाकर विरेचन करा दे। फिर दूसरे दिन औषध दे।

जो संध्या को देह गरम हो आता हो, तो आध पाव भर पानी में चार रत्ती शोरा और एक माशे बूरा घोल कर पिला दे। इससे पसीना आवेगा। उस समय कपड़े से शरीर को ढक दे। यदि ज्वर के सङ्ग आँव के दस्त आते हों, तो यह गोली बनाकर देनी चाहिये—हींग एक रत्ती, अफीम ¼ रत्ती, काली मिर्च आधी रत्ती। यह एक गोली का प्रमाण है। इस हिसाब से गोली बनाकर रख छोड़े, साँझ-सवेरे खिला दे। इन दस्तों में रोटी पूरी नहीं खाना चाहिये। दही या मीठे से चावल खाय। खिचड़ी या दलिया खाय। ऊपर की मात्रा युवा मनुष्य के लिये है। बालक की इस प्रकार से है—

१४ वर्ष के बालक को इसमें से ½ मात्रा
७ ,, ,, ⅓ ,,
४ ,, ,, ¼ ,,

२ वर्ष के बालक को इसमें से [illegible] मात्रा
१ „ „ $\frac{१}{१२}$ „
६ महीने के „ „ $\frac{१}{१६}$ „

नीम की हरी-हरी सींकें लेकर उनके पत्ते और छलका छील डाले। पचीस सींकें और सात काली-मिर्च डालकर पानी में पीस ले और पी जाय। दो-तीन दिन दोनों समय पीने से ज्वर जाता रहेगा।

अतीस पीसकर रख छोड़े। जब ज्वर उतर गया हो और शरीर ठंडा हो गया हो, तब एक रत्ती की पुड़िया ठंडे पानी के संग खिला दे। तीन-चार दिन तक दिन में तीन-चार बेर खावे।

ज्वर में पुरुषप्रसंग अत्यंत वर्जित है। इससे विषम-ज्वर होकर हड्डी में पैठ जाता है। फिर सिवा मृत्यु के दुःख से बचने का और कोई उपाय नहीं होता। यह तरुण अवस्था में बहुधा और विशेषकर हो जाता है। इसलिए बहुत ही सावधान रहना चाहिये।

(२६) संग्रहणी—अर्थात् भोजन

उपाय—१ आधी छटाँक खाने का　　से,
परात में रखकर ढाई सेर पानी
से तर्रा दे, जिससे वह
जाय। दो घंटे पीछे

करे । दूध पिलानेवाली को ठंडी वस्तु खाने को दे।
अथवा रुधिरशोधक वस्तु, जैसे शहद, चिरायता पिलावे।
उड़द की दाल और मीठा न दे । जब जाने कि बालकों
के शीतला के दाने निकलने लगे, तो दूध पिलानेवाली
को चार-चार तोला गोला खिलावे । और जो बालक
दो वर्ष का हो, तो दो तोला उसे भी खिलावे। वर्ष पीछे
एक तोला के हिसाब से दे। (१) गोला खाने से
शीतला के दाने अधिक नहीं निकलने पाते, बरन थोड़े
निकलते हैं । (२) रुद्राक्ष के दाने पानी में घिसकर
दे। (३) मुलहठी और अनारदाना बराबर कूट और
औटाकर शाहतरा के अर्क में मिलाकर पिलावे ।

जिस बालक के शीतला निकले, उसको अंधेरे घर
में रक्खे । किसी की परछाहीं न पड़ने दे । परछाहीं
पड़ने ही से मुख या शरीर पर रंग का चिह्न पड़ जाते
हैं । कभी खुजलाने से भी चिह्न पड़ जाते हैं। इसलिए
बच्चे के हाथ में कपड़े की थैली बाँध दे कि वह इसको
खुजला न सके । यदि खुजली मालूम हो, तो कपड़ा
[illegible] से मक्खन व मलाई खुजली के स्थान पर लगा दे।
[illegible] पड़ने के लिये ठंडे पानी से देह धो दे । [illegible]
[illegible] में नारियल का तेल मिलाकर लगा दे । इससे
[illegible] चिह्न नहीं पड़ने पाते । जब खुरंट उतरने लगें

तब गरम पानी से नहला दे। तेल नित्य लगा दे, और आँख नित्य धो दे। दिये को ऐसे स्थान पर रक्खे, जो खाट के सिरहाने की ओर रक्खा जाय, जिससे परछाहीं न पड़ने पावे। बालक की आँखों के सम्मुख दिया न रहे। ऐसा न करने से बड़ी हानि होती है। कभी-कभी बालकों की आँखें मारी जाती हैं। इस रोग में बालकों को डरने न दे। कभी-कभी डर के मारे ही बालक मर जाता है। जब शीतला के दाने फूट जायँ, तो सिर्स, पीपल, लसोढ़ा और गूलर की छाल को जलाकर, पीस-छानकर घी में मिला ले और फफोलों पर लगा दे। शीतला कोई देवी नहीं हैं, जैसा कि लोगों ने विश्वास कर रक्खा है। यह केवल एक प्रकार का रोग है। यदि यह देवी होतीं, तो अपने न मानने-वालों की सन्तानों को कभी जीता न छोड़तीं। सबको मार डालतीं। और अपने पूजनेवालों की सन्तानों में से एक को भी न मारतीं, वरन् सबको चिरञ्जीवी रखतीं। सो कदापि नहीं होता। न माननेवालों और न पूजने-वालों के बालक जीते-जागते भी रहते हैं, और मानता माननेवालों तथा पूजनेवालों की सन्तान मर भी जाती हैं; क्योंकि सिवा हिन्दुओं के अन्य देश के वासी इसको नहीं पूजते। उनकी सन्तान नहीं मरती। हिंदुओं (जो

अधिकतर पूजते हैं) की मर जाती हैं। इसलिए यह रोग ही है। जो मरनेवाला था, वह मर गया, और जो बचनेवाला था, वह बच गया।

(२९) मसान—यह रोग बहुत कर सौर ही में उत्पन्न हो जाता है। यह कोई भूत-प्रेत नहीं है, जैसा कि माना गया है। यह केवल एक रोग है जो मैला-कुचैला रहने से हो जाता है। इसमें बालक की पसली चलने लगती है। ज्वर हो आता है। पसलियों में कफ जम जाता है। कभी दस्त हो जाते हैं, और कभी नहीं भी होते। बालक अचेत रहता है। यह सर्द और गर्म दो प्रकार का होता है। इस रोग में दस्त करा देने से तुरन्त आराम पड़ता है। जो गर्मी से होता है, उसमें तो कुछ डर नहीं होता। इसके होने के इतने कारण हैं—

(१) जिस घर में बालक रहता है, वह तंग और अँधेरा होने से। (२) पहनने के कपड़े और पोतड़े अपवित्र रखने से। (३) दूध पिलानेवाली की असावधानी से। (४) थोड़ी-थोड़ी देर में दूध पिला देने से। (५) बालक या दूध पिलानेवाली को गरिष्ठ भोजन कराने से। (६) ठंड में पूरे कपड़े न पहनाने से। (७) पुरुषप्रसंग के पीछे ही दूध पिला देने से। कारण, दूध में से उस समय गर्मी निकल जाती है।

(८) दूध पिलानेवाली के अधिक पुरुषप्रसंग करने से। सर्दी में बहुत डर रहता है। इसकी औषध ये हैं—
१ कबीला, चूना, नीलाथोथा, बड़ी हड़ और बहेड़े का छिलका, पपड़िया कत्था। इन सबको बराबर ले कूट-छान गोली बना ले। जब देखे, बालक को रोग है, तो घी में मिलाकर पसली पर लेप करे। २ केंचुआ, पीलू का बीज और लौंग बराबर लेकर बाजरे के बराबर गोली बना ले। एक गोली नित्य खिला दे। ३ एक कंजे का बीज और एक रत्ती नीलाथोथा, दोनों को पीस, सरसों के बराबर गोली बनाकर एक नित्य खिला दे। ४ एलुआ और जमालगोटा बछिया के मूत्र में लोहे से पीसकर मूँग-बराबर गोली बना ले। एक नित्य खिला दे। ५ सूखा केंचुआ पानी में पीस एक बूँद बालक के मुख में टपका दे। ६ अरण्डी का तेल बालक के पेट में मलकर, बकायन के पत्ते गरम करके बाँध दे। ७ तेलिया, संखिया और जमालगोटे की मींगी थूहड़ के दूध में पीसकर टूड़ी पर लेप कर दे। ८ बालक की नार जिस समय काटी जाय, उसी समय एक चावल-भर चोखी कस्तूरी थोड़े-से कोयले में महीन पीसकर उस कटी हुई नार पर लगा दे, तो यह रोग फिर न होगा। ९ शराब को थोड़े-से तेल में मिलाकर नख

और पेट पर लेप कर दे। १० थोड़ी शराब (अथ
चार-पाँच बूँदें) अथवा कुछ अधिक बालक की अवस
के अनुसार गले में डाल दे, और घंटे-घंटे व दो-दो घ
पीछे तीन-चार बेर फिर डाल दें। यदि कण्ठ में क
भी घिर आया होगा, तो दूर हो जायगा। ११ य
बालक के शरीर में लाल-लाल फफोले उठ आवें।
ज्वर हो, और फफोले इस भाँति के हों कि एक ग
में न हों, जैसे आज पेट पर हैं तो कल जाँघों में।
गये। कल जाँघों पर हुए, तो परसों मुख पर हो गये
ऐसी दशा में कपड़े बहुत ही स्वच्छ और धी
रहने चाहिए। रहने का घर हवादार होना चाहिए
१२ सर्दी होकर गले में कफ घरघराता हो, पेट की पी
से बालक रोता हो, सुस्त पड़ा हो, तो गुण्डी-मात्रा दे
अर्थात् वैतरा सोंठ का चूर्ण पाव-भर, दही पका पा
पाव, पीपल छोटी आध पाव, इन सबको एक मिट्टी की
हाँडी में भरे। मुँह बन्द करके उस पर तीन कपरौ
चढ़ा दे। फिर हाथ-भर लंबा, हाथ-भर चौड़ा औ
इतना ही नीचा एक गढ़ा खोदकर, उसमें आरने उप
भर दे। बीच में इस हाँडी को रखकर आग लगा दे
जब कंडे जल जायँ, तब राख निकालकर फिर भरे, औ
आग लगा दे। इसी प्रकार तीन बेर करे। हाँडी को

तीसरी बेर निकालकर उसमें से अब औषध रत्ती-रत्ती भर निकाल ले। इसको शीशी में भरकर, कसकर डाट लगा दे। साधारण मात्रा माता के दूध में एक चावल है। जो रोग का बल अधिक जान पड़े, तो एक रत्ती अदरख का रस और छः रत्ती शहद मिलाकर तीन दिन तक दोनों बेर दे। यदि पसली चले तो तुलसीदल के चार रत्ती रस में या चावल-भर शुण्ठी-मात्रा और एक माशे शहद मिलाकर दे, और इस तेल का पेट पर लेप करके सुहाता-सुहाता सेंक दे।

तेल—अदरख और लहसन का दो-दो तोले रस लेकर आधी छटाँक मीठे तेल में आग पर औटावे। जब रस जल जाय, तब उतारकर छान ले और शीशी में भर ले। जिसके बालकों को बहुधा मसान का रोग हो जाता है, उसको यह करना चाहिये कि वह अपने घर में कबूतर पाले। बालकों को साँझ-सवेरे कबूतरों के पंख की वायु लगने दे। इसी कारण बालकों के हाथ से कबूतरों या और चिड़ियों को चुगा चुगवाते हैं

और उपाय—१ जब तक बालक दूध पीता रहे, तब त क कभी पुरुषप्रसंग न करे; क्योंकि इससे दूध की गर्मी निकलकर ठंडक आ जाती है, और यही ठंड दूध का कफ बना देती है, जो आँतों में चिकट जाता और रोग

और पेट पर लेप कर दे। १० थोड़ी शराब (अर्थात् चार-पाँच बूँदें) अथवा कुछ अधिक बालक की अवस्था के अनुसार गले में डाल दे, और घंटे-घंटे व दो-दो घंटे पीछे तीन-चार बेर फिर डाल दें। यदि कण्ठ में कफ भी घिर आया होगा, तो दूर हो जायगा। ११ यदि बालक के शरीर में लाल-लाल फफोले उठ आये हों, ज्वर हो, और फफोले इस भाँति के हों कि एक अंग में न हों, जैसे आज पेट पर हैं तो कल जाँघों में हो गये। कल जाँघों पर हुए, तो परसों मुख पर हो गये। ऐसी दशा में कपड़े बहुत ही स्वच्छ और पवित्र रहने चाहिए। रहने का घर हवादार होना चाहिए। १२ सर्दी होकर गले में कफ घरघराता हो, पेट की पीड़ा से बालक रोता हो, सुस्त पड़ा हो, तो सुण्ठी-मात्रा दे अर्थात् बैतरा सोंठ का चूर्ण पाव-भर, दहीं पका चार पाव, पीपल छोटी आध पाव, इन सबको एक मिट्टी की हाँडी में भरे। मुँह बन्द करके उस पर तीन कपरौटी चढ़ा दे। फिर हाथ-भर लंबा, हाथ-भर चौड़ा और इतना ही नीचा एक गढ़ा खोदकर, उसमें कंडे उसे भर दे। बीच में इस हाँडी को रखकर आग लगा दे। जब कंडे जल जायँ, तब राख निकालकर फिर भरे, और आग लगा दे। इसी प्रकार तीन बेर करे। हाँडी को

तीसरी बेर निकालकर उसमें से अब औषध रत्ती-रत्ती भर निकाल ले। इसको शीशी में भरकर, कसकर डाट लगा दे। साधारण मात्रा माता के दूध में एक चावल है। जो रोग का बल अधिक जान पड़े, तो एक रत्ती अदरख का रस और छः रत्ती शहद मिलाकर तीन दिन तक दोनों बेर दे। यदि पसली चले तो तुलसीदल के चार रत्ती रस में या चावल-भर शुण्ठी-मात्रा और एक माशे शहद मिलाकर दे, और इस तेल का पेट पर लेप करके सुहाता-सुहाता सेंक दे।

तेल—अदरख और लहसन का दो-दो तोले रस लेकर आधी छटाँक मीठे तेल में आग पर औटावे। जब रस जल जाय, तब उतारकर छान ले और शीशी में भर ले। जिसके बालकों को बहुधा मसान का रोग हो जाता है, उसको यह करना चाहिये कि वह अपने घर में कबूतर पाले। बालकों को साँझ-सबेरे कबूतरों के पंख की वायु लगने दे। इसी कारण बालकों के हाथ से कबूतरों या और चिड़ियों को चुगा चुगवाते हैं

और उपाय—१ जब तक बालक दूध पीता रहे, तब तक कभी पुरुषप्रसंग न करे; क्योंकि इससे दूध की गर्मी निकलकर ठंडक आ जाती है, और वही ठंड दूध का कफ बना देती है, जो आँतों में चिकट जाता और रोग

उत्पन्न कर देता है। २ यदि कभी ऐसा (पुरुषप्रसंग) हो ही जाय, तो उस समय से एक पहर पीछे अपने स्तनों का दूध बालक को पिलावे। पर उसमें भी पहले थोड़ा-सा दूध निकालकर धरती पर डाल दे; क्योंकि यही दूध अधिकतर दूषित हो जाता है। ऐसा करने से दूषित दूध निकल जाता है। ३ आप जायफल खाय, और बालक को भी कभी-कभी अपने दूध में घिसकर पिला दिया करे।

(३०) चिनूने या छाल्ये पड़ जाना—ये बालक को अजीर्ण रहने और दूध या भोजन के न पचने से पड़ जाते हैं। बहुधा दाँत निकलने के दिनों में पड़ते हैं। इसमें बालक आँख नटेर जाता है। उसका मुख पीला पड़ जाता है। बालक सोने में गुदा को खुजाता है, नाक को मलता है। दाँत को किर्राता है। ये ही लक्षण यह जान लेने के हैं कि इस बालक के पेट में चिनूने हैं। और ये तो प्रत्यक्ष भी हो जाते हैं; क्योंकि बहुधा बालक के शौच के संग सूत-से कीड़े निकलकर रेंगने लगते हैं। १ इसका उपाय यह है कि सबसे प्रथम बालक की पाचनशक्ति का उपाय करे। २ काँजी का पानी पिलावे। इसके बनाने की रीति यह है कि उड़द का दाल के बड़े या बेसन की पकौड़ी करके उनको

पानी में डाल दे, और उस पानी में राई-नमक पी
कर डाले। उसे चार-पाँच दिन तक रक्खा रहने
जब खट्टा हो जाय, तब इस पानी को पिला
३ अथवा जल्दी का उपाय यह है कि राई को पीस
और दही में मिलाकर पिला दे। ४ मुनक्कों
बायविड़ंग रखकर पाँच दाने से दस दाने तक रि
दिया करे। ५ नमक के पानी में कपड़ा भिगं
अथवा कड़वे तेल या हींग में भिगोकर शौचस्था
रक्खे। ६ इन्द्रजौ पीसकर पिला दे। ७ आम की गु
का चूर्ण आठ रत्ती दे। ८ कभी अण्डी के तेल
विरेचन दे दिया करे। ९ चार माशे खाने का
एक रत्ती हीरा कसीस में आधी छटाँक ठंडे पान
पीसकर गुदा में पिचकारी देने से चिनूने मर जाते
१० अनार की जड़ के बकल का पानी भी इ
औषध है। इसकी विधि यह है कि अनार की जड़
ताजा छिलका एक छटाँक कतरकर तीन पाव
में उबाले। जब आधा जल जाय, तो उतार ले
छानकर बोतल में रख छोड़े। सवेरे एक छटाँक
उसके पश्चात् आध घंटे के अन्तर से पीता रहे
भाँति चार मात्रा खाने और दो तोले अण्डी
का विरेचन लेने से बारह घंटे में सब कीड़े

जावेंगे। इसमें बालक को मीठा न खाने दे, न दूध पिलाने-वाली को खाने दे। बालक और दूध पिलानेवाली को गरिष्ट भोजन न दे। भोजन नोन का अधिक खाय।

(३१) हिचकी—१ नारियल पीसकर और शक्कर मिलाकर चटावे। २ गीला कपड़ा तलुये पर रक्खे। ३ रीठे को डोरे में पिरोकर गले में पहना दे।

(३२) गंज—१ प्रथम नीम के पत्तों को पानी में औटाकर सिर को खूब धो डाले। पीछे इस औषध को लगावे। गन्धक और चूना आधी-आधी छटाँक तीन पाव पानी में डालकर मिट्टी की हाँडी में औटावे, और छानकर बोतल में भर दे। कबूतर के पंख को इसमें भिगो-भिगोकर गंज या खुजली पर लगावे। २ मक्खियों की विष्ठा, जो छप्परों के फूस पर इकट्ठी हो जाती है, उसको थाली में पानी भरकर धो ले, और कपड़े को भिगो-भिगोकर सिर पर रक्खे। ३ गौ के घी को धोकर उसमें कबीला, तूतिया, मुर्दासंग एक-एक तोला पीसकर मिला ले, और गंज पर लगावे।

(३३) जल जाना—१ इमली की छाल जलाकर गौ के घी में मिलाकर लगावे। २ जले हुए अंग को उसी समय आग पर सेंक दे, अथवा बूरा मल दे, तो फफोला नहीं पड़ता। ३ यदि घाव हो गया हो, तो कड़वे तेल

को चुपड़-चुपड़कर पत्थर के कोयले को महीन पी
छिड़कता रहे। ४ अथवा चूने का पानी, जिसकी
आगे खुजली रोग में है, लगावे।

(३४) खुजली—चूने के पानी में कड़वा
डालकर खूब हिलावे। जब हिलाते-हिलाते गा
जाय, तब उसमें रुई के फाये भिगो-भिगोकर खुज
स्थान पर लगा दे।

(३५) काँच निकल आना—१ बालक ही
से उसे शौच लिवावे। २ पुरानी चलनी का
जलाकर और पानी में घिसकर उस स्थान पर छिड़
३ कड़वा तेल लगाकर जला हुआ और पिसा ह
लगावे। ४ आम और जामुन की छाल और प
पानी में औटाकर उस पानी से शौच करावे।

(३६) पेट बढ़ आना—पानी में मिला हुआ
थोड़ा-थोड़ा दिया करे। थोड़े दिनों इसका सेवन
से पेट छटकर ठीक हो जायगा।

(३७) चिनग—जब देखे, बालक मूत्र करते
रोता है, और छोंगनी (इन्द्री) को पकड़-प
खींचता है, तो जाने, उसको चिनग है। तब यह
करे—१ चार-पाँच डली बबूल के गोंद की फ
पोय पानी में भिगो दे। फिर उस पानी में

मिलाकर तीन-चार या पाँच बेर दिन भर में पिलावे। २ पत्थर के बेर को पानी में घिसकर पिला दे। यह बेर पंसारी और अत्तारों के यहाँ बिकता है, और 'हजरुल यहूद' अर्थात् यहूद-देश का पत्थर कहलाता है। ठीक बेर की आकृति का होता है।

(३८) मिरगी--यह रोग है, जिसमें प्राणी बिलकुल बेसुध होकर धड़ाम से गिर पड़ता है। चाहे आग हो अथवा पानी, उसको अपने शरीर की तनिक भी सुध नहीं रहती। यहाँ तक कि आग में जलकर मर तक जाता है; पर उठता नहीं। पानी में दम घुटकर प्राण त्याग देता है; पर कुछ सुध नहीं रहती। इसका कारण मस्तक का निपट बेसुध हो जाना है। इसलिये इसका उपाय यही है--१ मस्तक को सुन्न न पड़ने दे। इसका दौरा हुआ करता है। जिस प्राणी को मिरगी का रोग हो, उसको आग या पानी के पास कभी न जाने दे। पानी को देखकर भी बहुधा मिरगी आ जाती है। जब इसका दौरा हो, तो जूते के तले से रोगी की नाक के नथनों को बराबर रगड़ता रहे, ताकि मस्तक अचेत न होने पावे। जब तक चेत न हो बराबर रगड़ता रहे, और दोनों कानों को मींजता जाय। इन दोनों से मस्तक चैतन्य हो जाता है। २ जब दौरा

हो, तो गिलहरी को काट उसका टका-भर टटका
रोगी की नाक में डाल दें, तो फिर कभी यह
होगा।

(३९) नकसीर या नाक से रुधिर बा
१ अनार के फूल और सफेद दूब का रस दो
दिन में दो-तीन बेर नास ले, रुधिर रुक ज
२ फिटकरी के पानी को सूँघे। ३ छूटी मिट्टी प
डाल-डालकर सूँघे। ४ नाक में जो कीड़े पड़ ग
तो यह उपाय अति ही श्रेष्ठ है कि पिंडोल मिट्टी क
डले कूट डाले। रोगी के मुख और नथनों प
महीन कपड़ा ढीला करके डाल दें। फिर औंधा ।
उसकी नाक के नीचे खूब मिट्टी रख दे, औ
मिचवाकर उसके मस्तक को मिट्टी में ढककर
मिट्टी पर हौले-हौले पानी डाले। जब सब मिट्टी
जाय, तब पानी डालना बन्द कर दे। पर रोगी क
देर तक उसी प्रकार औंधा लेटा रहने दे।
इस मिट्टी की सोंधी गन्ध नाक की राह से म
जायगी, त्यों-त्यों कीड़े बाहर निकल आवेंगे
चार दिन ऐसा करने से सब कीड़े निकल जायँगे

(४०) विसूचिका अर्थात् हैजा—इसकी
सरकार से मुफ्त बटती है। या १ अफीम, हींग,

मिर्च और कपूर बराबर लेकर और पीसकर डेढ़-डेढ़ रत्ती की गोली बना ले। घंटे-घंटे पीछे बालकों को खिलावे। २ कपूर का अर्क पिलावे। यदि अर्क न मिल सके, तो कपूर ही खिलावे। ३ जब जाने कि यह रोग फैल रहा है, तब सदा हाथ-पाँव धोकर और कुल्ले करके भोजन करे। एक ताँबे का पैसा डोरे में बाँधकर कौड़ी के ऊपर लटकाये रक्खे। कपूर को सदा अपने पास रक्खे और सूँघती रहे, बल्कि थोड़ा-थोड़ा-सा खा भी लिया करे।

(४१) लू लगना—१ कच्चे आम के भुर्ते का पानी बनाकर पिये। २ पुराने पेड़ों का शरबत पिये और हाथ-पैरों में भी मले। ३ प्याज का अर्क पिये।

(४२) पान से जीभ फट जाना—एक या दो लौंगें खा ले। ज्यों-ज्यों लौंग को चाबेगी, त्यों-त्यों जीभ जुड़ती चली जायगी।

(४३) फूली—यह आँख में पड़ जाती है। फिटकिरे की जड़ का रस शुद्ध शहद में मिलाकर आँखों में आँजे। फूली कट जायगी।

(४४) बालकों की कम्प—इसके ये लक्षण साधारण हैं—जब बालक को नींद खुलकर न आवे, बुरे-बुरे स्वप्न दीखने से बालक सोते-सोते रोने लगे, तो

बालक का पालन-पोषण' में बताई हुई घूटियां
भी दे अथवा १ काला नोन, सुहागा, भुनी हं
घिसकर और तनिक गुनगुनी करके पिला दे।
को पानी में घिसकर और शक्कर मिलाकर अ
गुनगुना पिला दे। ३ अण्डी का तेल पिल
बालक को कभी अकेला न छोड़े, और न ३
में सुलावे। दिया जलने दे।

यहाँ तक तुझको बालरोगों की चिकित
अब कुछ फुटकर औषधें बताती हूँ, जिनसे
पड़ता है।

(४५) मकड़ी का फल जाना—जब
अंग से मकड़ी रगड़ जाती है, तब उसके विष
हो जाती हैं, जिनमें जलन और खुजली
उसकी औषधि यह है—१ नींबू के रस में च
लगावे। २ अमचूर पीसकर लगावे।

(४६) मक्खी का काटना—लोहे से
कर लेप कर दे। अथवा मक्खी की बीट
घोलकर लगा दे। यह भी स्मरण रक्खे कि
काटे, उसी की विष्ठा वहाँ लगा दे, तो
जायगा।

(४७) बर्तया का काटना—१ मधु

हुए अथवा सन के कागज को पानी में भिगोकर काटने के स्थान पर रख दे। २ नौसादर और चूना मल दे। ३ पाँच दियासलाई पानी में भिगोकर उस स्थान पर खूब रगड़ दे। ४ गेंदे के पत्ते मल दे।

(४८) कुत्ते का काटना—१ लाल मिर्च पीसकर घाव में भर दे। २ कुत्ते की विष्ठा जलाकर भर दे। ३ कुचला पीसकर लगा दे, और एक-एक रत्ती सात दिन तक नित्य खा लिया करे। ४ चिरचिटे की जड़ को पीसकर शहद में चटा दे। ५ घीग्वार के मोटे-मोटे पत्तों को लेकर, एक ओर से छीलकर, सेंधा नोन पीसकर छिड़क दे, और काटने के स्थान पर बाँध दे। दो-तीन दिन में आराम हो जायगा।

(४९) बावले कुत्ते का काटना—एक पके केले की फली को लेकर बराबर के तीन टुकड़े करे। उसमें सिंह की खाल (पर बाल खूब उखाड़कर) एक-एक रत्ती भरकर एक-एक घंटे पीछे खिलावे। आराम हो जायगा।

(५०) काँतर (कनखजूरा) का चिपट जाना—१ जहाँ पंजे खाल में गड़े हुए हों, वहाँ सींक से कड़वे तेल की लकीर खींचती जाय। पंजे अलग होते चले जायँगे। २ अथवा मूली के पत्ते का रस इसी प्रकार लगा दे।

३ यह बहुत ही उत्तम है कि काँतर के मुँह में थोड़
चूना भर दे, तो तत्क्षण छूटकर गिर पड़ेगा।

(५१) बिच्छू का काटना—१ मूली के पत्तों क
लगा दे। २ काशीफल के ऊपर जो डंठल होत
उसको पानी में घिसकर लगा दे। ३ जमालगोटा
में घिसकर लगा दे। ४ ओंगा की लकड़ी को
में रख ले व पत्तों को पीसकर लगा दे। ५ दिया
के मसाले को पानी में घिसकर लगा दे। ६ फास
या गन्धक लगा दे। ७ पुरानी खाल को जलाकर
दे। ८ एक माशा चूना पानी में मिलाकर सुँघा दे
समय आराम हो जायगा।

(५२) साँप का काटना—यह बड़ा ही दुः
है। इसके अनेक प्रकार हैं, जिनमें से कोई-कोई तो
ही विषैले होते हैं। भारतवर्ष-भर में दो सौ
प्रकार के सर्प गिने गये हैं, जिनमें तेंतीस प्रकार के
ही विषधारी हैं। विषधारी साँप के काटने की प
यह है कि उसके काटने में दुहरे दाँतों के चिह्न देख
हैं। जिनमें विष कम है, उनके इकहरे दाँत हो
जहाँ सर्प काट खाय, वहाँ बंध बाँधना ब
आवश्यक है। काला साँप बहुत ही विषधारी है।
तो अनेक हैं, परन्तु हुक्मी कोई नहीं। इसमें

अधिक ध्यान इस बात का रक्खे कि काटे हुए मनुष्य को सोने न दे। जैसे बने, वैसे उसको चैतन्य रक्खे। इसी कारण हमारे यहाँ थाली बजाने की प्रथा जारी है, जिसको 'ढाँक धरना' कहते हैं। आँखों में ठंडे पानी के छींटे देती रहे। कान में फूकती रहे। सबसे प्रथम काटने ही कसकर बाँध दे। पीछे सुई से जहाँ-जहाँ साँप के दाँत लगे हों, वहाँ-वहाँ से देखे कि कहीं कोई दाँत टूटकर रह तो नहीं गया। यदि रह गया हो तो पहले उसको निकाल डाले, और फिर यह औषध दे—

(१) तूतिया और सफ़ेद घुँघची को पीसकर नाक में नल से फूँके। थोड़ी देर पीछे पीला-पीला पानी नाक की राह से झड़ने लगेगा, और चेत आता जायगा। जब चेत आ जाय, तब मट्ठे में थोड़ा नमक घोलकर पिला दे, तो चित्त में शीतलता आ जायगी।

(२) कुचले को पानी में पीसकर पिला दे।

(३) मनुष्य को आधा और गाय भैंस को एक बीज पूरा पलासपापड़े को पानी में पीसकर पिला दे।

(४) मुर्गी के पर पूँछ के ऊपर से नोच डाले, और साफ़ करके काटे हुए स्थान पर उस भाग को बिठा दे। थोड़ी देर में मुर्गी स्वयं चिपक जायगी, और विष को खींचने लगेगी। अन्त को मरकर गिर पड़ेगी।

यदि इतने में काटे हुए को चेत न हो, तो इसी प्र
दूसरी, तीसरी या चौथी मुर्गी को करे । इस क्रिय
मुर्दा भी अच्छा हो जायगा ।

(५) सफेद कनेर की जड़ की छाल और
काली मिर्च बारह तोले पानी में पीसकर शीशी में
ले । एक घंटे पीछे खूब हिला-हिलाकर एक एक त
पिलावे। यदि मुख बन्द हो रहा हो, तो चमचे से
दे । एक बेर ही देने से दो घंटे में आराम हो जाय
पर पहले चार घंटों में इस औषध का गुण जान पड़े
चार घंटे पीछे देह हिलने लगेगी ।

(६) अज्ञाझारा, जिसको चिरचिरा भी कहं
उसका कोई-सा अंग (पत्ते, डंठा या जड़) पानी में
कर काटे हुए स्थान पर लगा दे, और उस समय
पिलाता भी रहे, जब तक कड़वा स्वाद न जान
जब कड़वा लगने लगेगा तभी विष उतर जायगा ।

(७) सोंठी की जड़ छः मासे ग्यारह काली
में मिलाकर और पानी में घोटकर पिला दे । जो
से आराम न हो, तो आध घंटे पीछे फिर पि
चार-पाँच बेर के देने से मुर्दा भी जी उठेगा ।

(८) हुक्के का कीट (जो नैचे में जमती रहत
घी में मिलाकर चने बराबर खिलावे । काले सां

विष उतर जायगा। यदि एक बेर के देने से आराम न हो, तो थोड़ी-थोड़ी देर बाद दो-तीन बेर दे। जरूर आराम होगा। इसकी सहज परीक्षा यह है कि इस कीट को काले साँप को खिला दो, तो फन पटक-पटककर मर जायगा। इस कीट को काटे हुए स्थान पर भी लगा दे।

(९) रीठा घोटकर पिला दे।

(१०) कमलगट्टे की मींगी पीसकर आँख में आँजे।

(११) जहाँ साँपों का डर रहता है, वहाँ अपने चारों ओर कार्बोलिक पाउडर (Carbolic Powder) की लकीर करा दे। साँप उसको लाँघकर कभी नहीं आवेगा।

यदि किसी ने विष खा लिया हो, तो उसके उतारने की ये औषधें हैं—

अफीम का विष—१ हींग को पानी में घोलकर पिला दे। २ प्याज का रस सुँघावे। ३ रीठे का जल पिलावे। ४ फिटकरी का चूर्ण और बिनौले का सत खिलावे। ५ घी में पीसकर चौकिया सुहागा पिलावे। ६ नारी (एक प्रकार की जड़ी, जो पोखरों में होती है) का साग खिलावे अथवा उसके पत्तों का रस निकालकर पिलावे। ७ काफी (कुन) औटाकर पिलावे। ८ अण्डी और नमक बराबर मिलाकर पिलावे।

९ चौलाई या अदरक के पत्तों का रस पिलावे। १० जि
अफीम खाई हो, उसको सोने न दे, टहलाता रहे।

संखिया का विष—१ गूलर के पत्तों का
निकालकर पिलावे, अथवा गूलर का दूध पिल
२ गूलर की छाल औटाकर पिलावे। ३ कत्था खि
या घोलकर पिलावे।

सींगिया का विष—नारंगी का रस पिलाने
उतर जाता है।

धतूरे का विष—जिसने धतूरा खा लिया हो
किसी ने खिला दिया हो, तो १ अदरख का रस पिल
२ बैंगन के फल, पत्ते या जड़ को पानी में घो
पिला दे। ३ निमोली अथवा उसकी मींगी को
में घोटकर पिला दे। ४ चौलाई की जड़ या गि
को पानी में घोटकर पिला दे। ५ कपास के फल,
पत्ते, लकड़ी सबको घोटकर पिला दे।

बालशिक्षा

लपोषण के संग बालशिक्षा बताना भी बहु
या है उचित है; क्योंकि जिन दिनों में बालक
हैं, उन्हीं दिनों में उनको सिखाया-पढ़ाया भी
है। बालक की सबसे उत्तम शिक्षा तो माता के

में होती है, जैसा कि मैं तुझको गर्भाधान में बता चुकी हूँ कि माता के आचार-विचार के गुण सन्तान में आते हैं। पर पीछे भी सन्तान को जैसी शिक्षा दी जाती है, उसका गुण भी अधिक होता है।

सन्तान को प्रथम ही से जैसी टेंव डाली जायगी, वैसी ही पड़ती जायगी। बड़े होने पर वही टेंव और स्वभाव उसके रहेंगे; क्योंकि यह तो तूने भी देखा है कि बालक को जैसी टेंव पड़ जाती है, अर्थात् गोद में रहने की या झूले में झूलते हुए सोने की या अपनी माता की गोद ही में सदा रहने की, वह टेंव कठिनता से छूटती है और माता को इसके छुड़ाने में बड़ी कठिनता पड़ती है। इसलिए प्रथम ही से बालक की अच्छी और ऐसी टेंव डाले कि पीछे बुरी जानकर, उसके छुड़ाने की आवश्यकता न हो।

छोटे बालक कोरे घड़े और काँच के सदृश होते हैं। उसमें जो भरा जाय, उसी की गन्ध उसमें रह जाती है, अथवा जो कोई उसके सम्मुख आता है, उसी का प्रतिबिम्ब दिखलाई देता है। इसी कारण पहले ही से उत्तम शिक्षा देने का प्रबन्ध करे।

माता-पिता तथा सब लोगों का विचार ऐसा होता है, और होना यथा है, है ही कि अभी तो हमारी सन्तान

बालक है। अभी क्या है, बड़े होने पर सब सी
जायँगे। यह उनकी बड़ी भूल है। इसी सोच में रहक
पीछे उनको पछताना और हाथ मलना पड़ता है; क्यों
बालक फिर सुधारे नहीं सुधरते। इसी असावधानी
सन्तान कुचाली, धूर्त, मूर्ख, झूठी, निलज्ज आ
अवगुणवाली हो जाती है।

पुत्र और पुत्री दोनों की शिक्षा समान होनी चाहिर
क्योंकि पुत्र केवल एक ही कुल का प्रकाश करता है
पर पुत्री पिता और पति, दोनों के कुल की प्रकाश
हो जाती है। पुत्रियों को जो पुत्रों के बराबर पढ़ाना
चाहे, तो न सही ; पर इतना तो अवश्य पढ़ावे कि
अपने भले-बुरे की बात पुस्तकों से आप पढ़-लिख लें
पुत्र की अपेक्षा कन्या की शिक्षा की अधिक आवश्यक
है। इसलिये कि वह दूसरे घर जायगी, जहाँ स
नये ही नये मनुष्यों से काम पड़ेगा, और उस पर
कोई आज्ञा करना चाहेगा। उसके दोष और अवगुण
पर दृष्टि करेंगे। तनिक-तनिक-सी बातों पर धमकावेंगे
बात-बात में माता-पिता की बुराई करेंगे कि कुछ सिखा
ही नहीं।

इसलिये कन्या को शिक्षा देकर ऐसी दक्ष और च
बना देना चाहिये कि कन्या भी सुख पावे, और ना

धराई न हो ; कन्या पतिगृह में जाकर अपनी चतुराई से सबको प्रसन्न रख सके, और सबकी प्रेमपात्र बन जाय। जो स्त्रियाँ यह समझकर कि कन्या तो पराये घर का धन है, शिक्षा नहीं देतीं, वे महामूर्ख हैं। शिक्षा के लिये पढ़ना-लिखना एक बहुत ही उत्तम द्वार है। इसलिये कि बिना मिले और देखे सहस्रों वर्षों पूर्व की और सैकड़ों कोस दूर की बुद्धिमान् पुरुषों की चतुराई केवल उनकी रचित पुस्तकों द्वारा ही आ जाती है।

शिक्षा से मेरा प्रयोजन केवल लिखा-पढ़ी ही नहीं है, बल्कि मनुष्य को मनुष्यत्व सिखाना है। इसलिये सन्तान को चार प्रकार की शिक्षा देनी उचित है—

१–आत्मिक शिक्षा अर्थात् प्रकृति, स्वभाव और गुण आदि की शिक्षा।

२–लिखने-पढ़ने की शिक्षा।

३–व्यवहार-शिक्षा, अर्थात् जीविका के निमित्त शिल्प आदि। इसमें भी सबसे प्रथम निजकुल-व्यवहार की शिक्षा।

४–धर्मशिक्षा।

अब इसी क्रम से तुझको शिक्षा देने की रीति बताती हूँ। बालक को प्रथम ही से स्वच्छ रखना तो मैं 'बालक का पालन-पोषण' ही में बता चुकी हूँ। इससे

बालकों की प्रकृति आप ही स्वच्छ रहने की पड़ जायग
ज्ञान होते ही बालक जब सदा स्वच्छ वस्त्र और स्थान
देखेंगे, और माता-पिता का रुख या शिक्षा भी इ
ओर पावेंगे, तो तभी से इस ओर ध्यान देंगे, अ
इच्छा करेंगे। बालक जब बोलने लगे, तभी से स
प्रथम उसे पिता का नाम, धाम तथा ग्राम, जाति अ
बता दे, जिसमें यदि कहीं खो जाय, तो पूछने
अपना पता बता सके। मैंने एक बालक को देखा
मेले में खो गया। जब उससे पूछें कि किसका बेटा
तो कह दे कि 'चाचा का'। जब चाचा का नाम
तो कुछ नहीं। यदि वह 'चाचा' शब्द के बदले अ
पिता का नाम बता देता, तो अवश्य कुछ पता
जाता। परन्तु उसका कुछ पता न चला।

बहुधा स्त्रियों की रीति है कि बालक जब रोते
किसी वस्तु को मचलते हैं, ऊधम करते हैं अथवा क
नहीं मानते, तब ऐसा कहकर उनके चित्त में डर उ
देती हैं कि "सो जा, नहीं लूलू आ जायग
"बाबाजी से पकड़वा दूँगी", "कनफटा बैरागं
कंजर झोली में डालकर ले जायगा।" अथवा ब
रात्रि में कहीं जाते हैं या दुपहरी में कहीं दूध या
श्वेत वस्तु खाकर घूमते हैं, तो उनसे यह कह दे

कि अमुक की भीत के नीचे पीर है, चुड़ैलों का फेरा है, भूत रहता है, उस पीपल के पेड़ पर प्रेत बसता है, वहाँ न जाना।

इसी प्रयोजन से जब बालक श्वेत वस्तु खाकर बाहर जाता है, तब उसको वहाँ नहीं जाने देतीं, और यदि जाने देती हैं, तो ऊपर से थोड़ी-सी राख खिला देती हैं। इन बातों का प्रभाव बालकों के चित्त पर कुछ ऐसा हो जाता है कि भूत-प्रेत का विश्वास मरने तक नहीं जाता। बल्कि मरने समय से पूर्व ही वे अपनी सन्तान को अन्य सम्पत्ति की भाँति सौंप जाते हैं। ऐसा निरर्थक और भय पैदा करानेवाला विश्वास बालकों को दिलाना महानिषिद्ध है। उनको केवल ईश्वर का भय दिलाना चाहिये कि वह सब स्थानों में हमारे बुरे-भले कर्मों को देखता और पापी को दण्ड देता है। हर कोई कर्म उससे छिपा नहीं सकते। वह सदा और सब स्थानों में हमारी रक्षा करता है। इसलिये बुरे कर्म न करें, और हर समय उसका उपकार मान उसका धन्यवाद करें। पुत्रों को मस्तक पर आड़ बेंदा इत्यादि लगाने की और पुत्रियों को नीला आदि गुदाने की शिक्षा न देनी चाहिये। इससे उनको दूर रक्खे। यह अधम श्रेणी की प्रथा है, सभ्यमण्डली की नहीं।

सन्तान के नाम अच्छे और श्रेष्ठ रक्खे कि बड़े होने पर उनको अपने नाम के सुनने में लज्जा या संकोच न हो। मैंने देखा है, जिस स्त्री के बालक हो-होकर मर जाते हैं, वह अपने बालकों को छीतरी में धरकर खींचती-घसीटती है, कान-नाक छेद देती है इत्यादि। इसी कारण उनका नाम 'छीतर' या 'छीतरिया', 'घीसा' या 'घसीटा', 'नकछेदी', 'कनछिदा', 'छिदा', 'नकटा', 'बूचा', 'कूड़ा', 'फकीरा', 'भिखारी' (इसमें से भीख माँगकर लेने से) रख देती हैं। पुत्रियों के नाम भी ऐसे ही कारणों से 'मरो', 'निरादरी' इत्यादि रखती हैं। ऐसे कदापि न रखना चाहिये। पुत्रों के नाम सदा गुणसूचक और उत्तम प्रकार के रखने चाहिये। अन्त में वर्णसूचक उपाधि भी रखनी चाहिये। ब्राह्मण के नाम के अन्त में शर्मा या देव, जैसे श्रीकृष्णदेव या हरिप्रसाद शर्मा, क्षत्रियों के नामान्त में वर्मा, जैसे महावीर वर्मा, वैश्यों के अन्त में कृता या गुप्ता, जैसे श्रीनिवास गुप्ता, लक्ष्मीचन्द कृता और शूद्र वर्ण के नामान्त में दास, जैसे चरणदास इत्यादि रहना चाहिये।

कन्याओं के नाम बहुत ही मनोहर, सुहावने तथा प्यारे रखने चाहिये, जिसमें माता-पिता के घर भी शौक से इनके नाम लिये जायँ और पतिगृह में जाकर भी

स्नेह के साथ बोले जायँ। इसलिये कन्याओं के नाम ऐसे होने चाहिये—जैसे चन्द्रमुखी, चन्द्रप्रभा, विधुमुखी, विदुषी, सत्यवती, सरस्वती, यशोदा, सत्यदा, सुखदा, प्रियंवदा, विद्याधरी, आनन्दाबाई, सावित्री, भाग्यवती माधवी, मालती, शारदा, विमला, कमला, श्रीकान्ता, श्रीदेवा, श्रीधरी इत्यादि।

माता-पिता को इस प्रकार से सन्तान-पालन करना चाहिये कि पुत्र-पुत्री में कुछ भेद न हो। एक बच्चे से दूसरे के लाड़-प्यार में कुछ विशेषता न जान पड़े। सबको समान दृष्टि से देखकर पालन-पोषण करना चाहिये।

पुत्र-पुत्री के पालन में भेद होने से बहन और भाई में प्रेम नहीं रहता। भाई बहन को अपना कुटुम्बी न समझने लगता, वरन् इसी छोटी अवस्था से बहन को तुच्छ गिनने लगता है, और इसी कारण फिर उससे यथार्थ प्रेम नहीं मानता। लोकलाज को बुला-चला लेना है, यह दूसरी बात है।

इसी भेद से बालकों में भी परस्पर प्रेम-प्रीति कम हो जाती है, वरन् ईर्ष्या, डाह इत्यादि उत्पन्न हो जाते हैं। इसीलिये कभी किसी बालक का पक्षपात भी न करना चाहिये, अर्थात् जिसका दोष हो; उसको अवश्य दंड दे। ऐसा कदापि न करे कि एक अपराधी बालक को तो

उसके अपराध पर दण्ड दिया जाय, और दूसरा बालक अपराध करने पर बिना ताड़ना छोड़ दिया जाय, एक बालक को अधिक प्यार करें, खिलावें-पिलावें और दूसरे को उतना न करें। हाँ, जो बालक कहा न मानता हो, ऊधम करता हो, लिखता-पढ़ता न हो, रोता-मचलता अधिक हो, उसके आगे लिखने-पढ़नेवाले, कहना माननेवाले, ऊधम न करनेवाले बालकों को अधिक-अधिक वस्तु दे, उनकी प्रशंसा और न माननेवाले की निन्दा की जाय। इस पर जब वह लज्जित हो, तब यह कहकर कि तुम भी अब यदि इन्हीं के समान कहना मानोगे, लिखोगे-पढ़ोगे, तो तुमको ऐसी ही वस्तुएँ अधिक मिला करेंगी। पर अब तो दिये देती हूँ, आगे जो अच्छी बातें न सीखोगे या ऊधम इत्यादि करोगे, तो न दूँगी। फिर ऐसा मत करना। इसी के अनुसार फिर आप भी बर्ताव करे। यह न करे कि इतना कहकर ही समय को टाल दे। नहीं तो तुम्हारे वचनों में प्रतीति न होगी। यदि दो-चार बेर के ऐसा करने पर वह कुछ समझ जाय, तब तो ठीक है; नहीं तो फिर उसको कभी अच्छी वस्तु न दे। अन्य बालकों को दे दे, और उसके सामने ही दे, जिससे उसको डर और शोक उत्पन्न हो। जो बालक कहना न माने, उसको हर समय दुतकारे और ललकारे भी नहीं। केवल

कभी-कभी ही ऐसा करे, वरन् सदा प्रेम से समझा
कि ऐसा न करना चाहिये। तू तो राजा है। अमुक
बालक जो कहना नहीं मानता या ऊधम करता है या
पढ़ना नहीं, रोता (जैसी दशा हो) है, 'लुच्चा है',
'गुलाम है' इत्यादि शब्दों का प्रयोग करके बतलावे।
इससे उसका जी कुछ बढ़ जायगा, और वह निर्ल
न होगा।

बालकों को आपस में गाली या अपशब्द न बोलने
दे। जब कभी उनके मुख से ऐसे शब्द सुने, तभी उनको
उपदेश कर दे कि ये बातें बुरे बालकों की हैं कि आपस
में गाली दें, या लड़ें। 'अच्छे' और 'राजा' बालक सदा
प्यार-प्रीति से वर्तते और बोलते हैं। जो तुम 'राजा' या
'अच्छे' होगे, तो फिर ऐसी बात न करोगे, और बुरे या
'नौकर' होगे, तो करोगे।

इसी कारण बालकों को बुरे बालकों में कदापि न
बैठने दे, जिससे उनको कुटेव सीखने का अवसर ही प्राप्त
न हो। बालकों में परस्पर अपराध क्षमा करने की टे
डालनी चाहिये, ताकि वे लड़ाई और वैर से बचे रहें
सुशीलता आदि गुण सीखें। बालकों को गहने के दोष
बता-बताकर उनके मन में इनकी ओर से घृणा और
ग्लानि उत्पन्न करा दे कि वे पहनाने से भी गहना न पहनें

गुरुजनों का आदर-सत्कार करना तथा उनसे भय और लज्जा मानना भी उनको बतावे।

जो बालक इस प्रकार समझाने से न समझे, तो एक ही बेर ऐसी कठिन ताड़ना देनी चाहिये कि उसको बहुत दिनों तक स्मरण रहे, जैसे एक तमाचा उसके मार दे, कान उसके मसल दे या मसक दे, दिन-भर भोजन न दे, हाथ-पाँव बाँधकर धूप में बैठा दे या कोठरी में बन्द कर दे। बालक ऐसा करने पर बहुत रोवेगा, माता उसके रोने का कुछ ध्यान न करे (जैसा कि बहुधा करती हैं), नहीं तो पीछे फिर आप रोवेगी। ऐसी दशा में बालक को भले ही रोने दे, किसी को मनाने भी न दे, और न उसकी ओर उठने दे। जब बालक रो-पीटकर घंटे आध घंटे में चुप हो जाय, तब उससे हामी भरवा ले कि अब मैं फिर कभी ऐसा न करूँगा। जब वह हामी भर ले, तब प्यार से उसको समझावे। खाने-पीने की वस्तु दे। पास बिठावे। बातों-ही-बातों में अच्छे बालकों की प्रशंसा कर-करके बालक के हृदय में उत्साह उपजावे।

जो वह बालक फिर भी ऐसा ही करने लगे, तो उसको पहली ताड़ना का स्मरण दिलाकर समझा दे। इस पर भी जो न माने, तो अब के पहले से दूनी ताड़ना दे। एक या दो बेर की ऐसी ताड़ना में सीधा

हो जायगा । परन्तु बेर-बेर ताड़ना देना अच्छा नहीं इससे बालक ढीठ और निडर होकर निर्लज्ज बन जाते हैं। बालकों को सबके सामने फटकारना या झिझकारना न चाहिये। इससे भी वे निर्लज्ज हो जाते हैं। फिर वर्षों के यत्न से उनकी निर्लज्जता मिटेगी।

बालक से क्रोध से कभी न बोले। विशेषकर जब बालक क्रोध में हो, इस समय बालक पर आप क्रोध कभी न करे, और न कड़ी होकर बोले। वरन् उसके क्रोध को कोई खेल की वस्तु देकर शान्त कर दे।

क्रोध के समय बालक को ताड़ना भी न करे; क्योंकि इसका कुछ प्रभाव बालक पर नहीं होता। किन्तु बालक को ताड़ना अधिक हो जाती है। जब तुम्हारा क्रोध शान्त हो जाय, तब एकान्त में शिक्षा के लिये ताड़ना दो। अपने क्रोध के बदले में ताड़ना मत दो; क्योंकि जो काम बालक से प्यार द्वारा निकलता है, वह क्रोध और ताड़ना द्वारा नहीं। प्यार से बालक शीघ्र मान जाता है, और आज्ञा का पालन करने लगता है।

बालशिक्षा में सबसे प्रथम और प्रधान शिक्षा इसी बात की है कि बालक आज्ञापालन की टेव सीख जाय। जिस बालक ने यह सीख लिया, उसने मानो संसार की सब वस्तु सीख ली। जिस बालक में आज्ञापालन करने की

कुटेंव पड़ गई, जान लो, वह कभी कुछ न सीखेगा, वरन् जन्म-भर दुर्दशाग्रस्त और पीड़ित रहेगा।

बालक को निरे लाड़-प्यार से भी शिक्षा देना उचित नहीं। उचित समय पर, जैसा मैं पहले कह चुकी हूँ, अवश्य ही ताड़ना देनी चाहिये। कोई-कोई मूर्ख स्त्रियाँ ताड़ना न देकर अपनी सन्तान को निरे चाव और लाड़-प्यार में ही बिगाड़कर माथे पर चढ़ा लेती हैं। वे फिर उनके बड़े होने पर अपने इस किये हुए पर लाख-लाख पछताती हैं। इसलिये यह गुर स्मरण रक्खें कि 'यथासमय प्यार दुलार और यथासमय दुतकार फटकार।' इससे बालक आज्ञाकारी हो जाता है। कोई-कोई माताएँ तो ऐसी चतुर होती हैं कि उनको ताड़ना करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। वे बातों-ही-बातों में बालक को शिक्षा दे देती हैं। जैसे जब बालक दंगा करने लगते हैं, तो सबको अलग-अलग करके खेल में लगाकर उनका दंगा मिटा देती हैं। बीच-बीच में आप भी उनके खेल को देखती रहती हैं। और थोड़ा देर पीछे उनके खेल समाप्त करा देती हैं। यदि बालकों की इच्छा समाप्त करने की नहीं देखतीं, तो उनकी प्रार्थना पर थोड़ी देर की आज्ञा और दे देती हैं। बालक अपनी इच्छा पूरी देखकर प्रसन्न हो जाते हैं, और फिर आप ही खेल समाप्त

नहीं। ऐसा करने से बालक ढीठ हो जाते हैं। इसलिये जिस वेर ताड़ना देनी हो, उसी वेर ऐसा कहे, और ताड़ना दे दे। तब तो कुछ कहने और ताड़ना करने का प्रभाव भी होता है। परन्तु बड़े लड़कों को ताड़ना या बहुत लज्जित करना भी ठीक नहीं। सन्तान का निरादर कभी न करे। इससे सन्तान को अपने में श्रद्धा नहीं रहती हर समय सन्तान को बुरा-भला कहने से उनका चरि ठीक नहीं बन सकता। बालक को यदि कोई ताड़ना दे रहा हो, तो उस समय बालक की हिमायत न करे, पत्त न ले, वरन् बालक ही को ढब से ताड़ना देनेवाले के पास ही ले जाकर हाथ आदि जुड़वाकर ऐसा कहलाये कि मेरा अपराध क्षमा करो, मैं फिर ऐसा न करूँगा।

सन्तान के संग ऐसा व्यवहार रक्खे कि सन्तान माता-पिता से निधड़क आकर अपने मन की बात कह दे। ऐसी दशा में माता सन्तान को उचित शिक्षा दे सकती है। सन्तान जब घर में अपने मन की बात न कह सकेगी, तब अवश्य बाहरवालों से जा-जाकर कहेगी। इससे उसका चलन बिगड़ेगा।

सन्तान को आदि ही से इन बातों का अभ्यास डलावे—(१) बड़ों की सेवा—और उनकी आज्ञा का पालन। (२) अधीनता, सत्वशीलता। (३) आलस्य

र्गामत्रेयिनी

श्रीमद्वैराग्यिनी

का त्याग। (४) नियम समता। (५) परिश्रम की बान। (६) दृढ़ता। (७) साहस। (८) महात्माओं के वचन स्मरण कराना। (९) सत्पुरुषों की जीवनी पढ़ना। (१०) सदा सत्संग में रखना। (११) कुसंग में न पड़ने देना। (१२) ईश्वर की उपासना करना। (१३) प्रत्येक वस्तु से कुछ शिक्षा ग्रहण करना इत्यादि।

छोटेपन ही से उनको प्रणाम आदि करने की टेंव सिखावे कि उठते ही प्रातःकाल सबको प्रणाम करें, और जब रात्रि को सोवें, तब भी सबको प्रणाम करके सोवें। जब मिलें, प्रणाम करें, कुशल-क्षेम पूछें। जब दूसरे के घर जायँ, तब ऊधम न करें। जो बालक अपने घर आवें, उनसे न लड़ें; वरन् प्यार से बोलें-चालें और खेलें। जहाँ दो मनुष्य बातें कर रहे हों, वहाँ न जायँ; जो जायँ, तो चुपके बैठे रहें।

बालकों के आगे उनके विवाह आदि की बातें कभी न करे और न उनको सुनने दे। विशेषकर कन्याओं के आगे; क्योंकि इससे उनका रजोदर्शन बहुत शीघ्र हो आता है।

बालकों को बेरोक-टोक, डावाँडोल वा आवारा न फिरने दे। खेलने के समय खिलावे और दौड़ावे; परन्तु

नियत समय पर, सारे दिन नहीं। बालकों को शीलता के संग बैठकर बातें सुनने या देखने का अभ्यास करावे। आठ वर्ष की अवस्था के पीछे लड़कियों को लड़कों में न खेलने दे। न दो स्यानी लड़कियों को एक खाट पर एक संग सोने दे। इसी अवस्था से उनको घर के काम-धन्धे अधिकतर सिखाने चाहिये। विशेषकर गुड़ियों के खेल के मिस से उनको गृहस्थी की सब बातें सिखा दे।

लड़कियों को जब से गुड़ियाँ खेलाई जायँ, तभी से रीति-व्यवहार सब बताने चाहिये। गुड़ियाँ खेलाने का मुख्य प्रयोजन यही है कि लड़कियाँ इस खेल-ही-खेल में सब सीख लें कि स्त्रियों को क्या-क्या करना चाहिये, नित उठ घर में क्या करना पड़ता है, भोजन किस प्रकार बनाते हैं, घर को कैसे स्वच्छ रखते हैं, सगाई-विवाह कैसे होते हैं, उनकी रीति-भाँति किस-किस प्रकार करनी होती है, नेग टेहले कौन-कौन-से होते हैं, फेरे कैसे पड़ते हैं, स्त्री और पुरुष कौन-कौन-से वचन आपस में माँगते हैं, किस टेहले में क्या होता है, उसे कौन करता है, सासुरे में जाकर क्या करना होता है, पति के संग कौन-कौन काम करने होते हैं, पुत्र या ...ी के विवाह में क्या करना होता है, कैसे-कैसे गीत

किस समय किस टेहले में गाये जाते हैं, गहने कितने होते हैं, और शृंगार कैसे करते हैं। इस प्रकार गुड़ियाँ खेलने में उनको सब बातें बता दे। पुत्रीशिक्षा के लिये किसी बड़ी चतुर स्त्री ने यह गुड़ियों का खेल निकाला था। इसी आठ वर्ष की अवस्था से उनकी चाल-ढाल, बोल-चाल, पहनावे-उढ़ावे पर ध्यान देना उचित है। लड़कियों को कभी एक क्षण भी खाली न रहने दे। उनको ऐसी टेंव डाले कि कोई कार्य करने में हीनता न समझें, जी न चुरायें, बरन् सब धन्धे चाव और उमंग से करें। अपना काम आप कर लें। दूसरों का आसरा न तकें। लड़कियों को रस या बकने के गीत कभी न सीखने दे, न सुनने दे, न गाने दे। लड़कियों को अपनी मा वा भावज का हाथ बँटाने की टेंव डालनी चाहिये। यह न विचारना चाहिये कि हमारे घर तो टहलनी काम करती है, फिर हम अपनी पुत्रियों से ऐसा काम क्यों करावें। नहीं, इस बात का ध्यान रक्खे कि यद्यपि हमारे घर टहलनी और चाकर हैं। पर वह घर, जहाँ पुत्रियाँ ब्याही जायँगी, न-जाने कैसा हो, वहाँ टहलनी न हो, तो फिर नाम-धराई होगी, और लड़की को भी दुःख पाना पड़ेगा। इसलिये ऐसी टेंव पहले ही से डला देनी चाहियें।

(१) बालकों को आरम्भ ही से ऐसी टेंव डाले कि वे बड़े-बूढ़ों की मान-मर्यादा का ध्यान रक्खें। अपने से अधिक आयुवाले का कभी निरादर न करें, वरन् सदा मान करें। कभी किसी को कुरूप, लँगड़ा, लूला या अंगहीन देखकर हँसें नहीं, वरन् दुखी को देखकर दुःख मानें और दीन के संग सहानुभूति प्रकट किया करें।

(२) लिखने-पढ़ने की शिक्षा—जब से बालक कुछ बोलने लगे, तभी से उसके लिखने-पढ़ने की शिक्षा का भी आरम्भ समझना चाहिये। लिखने-पढ़ने की शिक्षा केवल पाठशाला ही में होती है, न कि पोथी पढ़ाने ही से। बालकों की शिक्षा बिना पोथी के भी हो सकती है। वह इस प्रकार कि पहले उनको नातेदारों के नाम, जो सदा सम्मुख रहते हैं, बतावे। जैसे चाचा, बाबा, चाची, दादी इत्यादि। इनके संग ही पीछे उन वस्तुओं के नाम बतावे, जो खाने-पीने की हों। जैसे रोटी, पूरी, पानी, दूध। इसके पीछे पशु, पक्षी इत्यादि के नाम, जो घर में रहते हों या नित्य-प्रति देखने में आते हों, बतावे। उनके वृत्तान्त, गुण आदि भी बतावे। बालक जब भली भाँति बोलने लगे, तब उसको जो वस्तु बताई जाय, वह उसको दिखाकर

बताई जाय, जिससे वह उसकी समझ में भली भाँति
जाय, वह भूले नहीं, क्योंकि देखने से बालक के चि
पर उस वस्तु का चित्र खिंच जाता है।

जब बालक कुछ और बड़ा हो जाय, और अच्
तरह बोलने लगे, तब उसको छोटे-छोटे मन्त्र, भज
दोहे, नीति की कहानियाँ और कहावतें सिखावे, गवा
उच्चारण पहले ही ठीक करना चाहिये।

इसलिये बालक को बोलते ही वर्णमाला के अ
सिखा दे। इसके लिये बावन प्रकार के बहुत-से अ
खाँड़ के बनवा ले। जैसे दिवाली में हाथी आ
खिलौने खाँड़ के बनते हैं। मिठाई के स्थान में इ
अक्षरों को दे, और बालकों से पहचनवावे कि क
ख ऐसा होता है। दो-तीन दिन तक क दे, फिर इ
भाँति ख दे। फिर जब ख माँगे, तो धोखा देकर
या त दे। जो बालक ले ले, तो उसको सावधान
दे कि देखो कौन-सा अक्षर है। जो यह बता दे
यह तो क है, ख नहीं, तो उसी समय उसको एक
पलटे दो दे दे। यदि उससे न बताया जाय, तो उ
बता दे कि यह ख नहीं, क या त है। इसी प्रकार
अक्षर पहचनवा दे। इसके सिखाने के लिये यह भी उप
करे कि उनके वस्त्र पर भी पहचान के लिये इन अक्ष

को डोरे या रेशम से काढ़ दे या गोटे और कलाबत्तू से बना दे, जिससे बालक पहचानते रहें कि यह अमुक अक्षर का कपड़ा है, और यह अमुक का। उनके खेलने के खिलौनों पर भी यही अक्षर बनवा दे, और, उन खिलौनों के नाम भी उन्हीं अक्षरों के नाम से रख दे। इस भाँति करने से उनको अक्षर पहचानना बहुत ही थोड़े दिनों में आ जायगा।

जब अक्षर पहचानना आ जाय, तब उनको लिखाने का अभ्यास कराना चाहिए। जब कुछ लिखने लगें, तब शब्दों के अक्षर याद रखने और अभ्यास करने का यह उपाय बहुत उत्तम, सुगम और युक्तिपूर्ण है कि "शिक्षक ताश" से उनको खेलावें, जिसमें उनका जी भी बहले और अक्षरज्ञान भी हो।

सात-आठ वर्ष की अवस्था तक बालक को बिना पुस्तक के अधिक शिक्षा दे। मस्तिष्कशक्ति पर अधिक परिश्रम न पड़ने दे

इतनी आयु तक तो माता आप ही शिक्षा दे। इसके पीछे, यदि चाहे, तो पाठशाला में भेजे। यदि आप पढ़ा सके तो दो वर्ष तक और भी पढ़ावे। सोलह वर्ष की आयु तक बालकों को जो वस्तु सिखावे, दृष्टांत देकर सिखावें। इससे विद्याशक्ति पर अधिक

बोझ नहीं पड़ने पाता। इसी लिये उनको ऐसी-ऐसी बातें सिखावे, जिनके समझने में उनकी विचारशक्ति अधिक खर्च न हो, और स्मरण भली भाँति रहे। अर्थात् हाथी के विषय में यदि कुछ बताना चाहे, तो हाथी उनको दिखा दे, तब कुछ बतावे। जो इस प्रकार बताया जायगा, तो वह सदा स्मरण रहेगा।

जब बालक कुछ लिखने लगें, तो पहले उनसे मोटे अक्षर लिखावे। अक्षर टेढ़े न होने पावें, इसलिये लकीर खींचकर लिखवावे। जब हाथ कुछ जम जाय, तब इस टेव को छुड़ाती जाय। जो बालक हकलाता हो, तो यह उपाय करे। इससे हकलाना जाता रहेगा।

(१) जब बालक हकलाय, तो उसकी ओर कोई हँसे या चिढ़ावे नहीं।

(२) प्यार से शाबाशी देती जाय।

(३) बोलने में शीघ्रता न करने दे। धीरे-धीरे बोलने का अभ्यास डलवावे, और साँस ले-लेकर बोलने दे।

(४) ऐसे बालक से एकान्त में बातें करे। जिस शब्द पर हकलाय, उस शब्द को कई बेर हौले-हौले कहलावे।

(५) जब बालक तुतलाय, तो उससे अपनी बायें हाथ की तर्जनी को दाहने हाथ की उँगलियों से मुड़ावे।

(६) मुख में पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़े या चने

हालचाल एकान्त में बालक को आप ही-आप बातें करने का अभ्यास कराते।

(७) सोते समय बालक को सीधा पैर या सदा रखें; झुकने या टेढ़ा न होने दें।

(८) कसरत कराए। विशेषकर मुग्दर फिराये।

(९) स्नान करें। इससे अक्सर तुतलाना दूर भागता।

बालकों को सबसे प्रथम मातृभाषा की शिक्षा दें। जब मातृभाषा में दक्ष और निपुण हो जायँ, तब अन्य भाषा सीखने दें। यदि मातृभाषा में दक्ष होने के पूर्व ही दूसरी भाषा सिखाई गई, तो वे दोनों भाषाओं में अपूर्ण रहेंगे। किसी भाषा के पण्डित न होंगे, और यदि हुए, तो समय बहुत लगेगा।

मैंने देखा है जिन बालकों ने मातृभाषा पूर्णरूप से सीखने के पहले अँगरेज़ी का आरम्भ कर दिया, जैसा कि बहुधा हो रहा है, तो चाहे वे बी. ए. और एम. ए. हो गये हैं, परन्तु मातृभाषा को शुद्ध और अच्छी तरह नहीं लिख-पढ़ सकते, और न शुद्ध बोल सकते हैं। जैसा कि वे अँगरेज़ी को लिखते, पढ़ते और बोलते हैं। मातृभाषा को प्रथम पढ़े बिना दूसरी भाषा को मनुष्य देर में सीखता है।

सात-आठ वर्ष की आयु तक माता को स्वयं शिक्षा देने का विधान यों किया है कि अकेली माता सौ शिक्षकों का गुण रखती है। यदि माता स्वयं शिक्षा न दे सके, तो इस प्रकार के किसी अध्यापक या अध्यापिका को सौंप दे, जिसमें ये गुण हों—(१) विज्ञ हो। (२) लिखाने-पढ़ाने का ढंग जानता हो, चाहे बहुत न पढ़ा हो। (३) उच्चारण उसका ठीक हो, चाहे तनख़्वाह तुमको अधिक देनी पड़े ; पर वह लाभ के देखते तुमको सस्ती ही पड़ेगी। (४) थोड़े वेतनवाले शिक्षक बालकों की शिक्षाप्रणाली ठीक नहीं जानते। उनकी शिक्षा में बालक बिगड़ जाते हैं। (५) बालकों को प्यार-प्रीति से शिक्षा दे, मारकर वा भय दिखाकर शिक्षा न दे। मैंने देखा है, जो शिक्षक बहुत मारते हैं ; उनके बुद्धिमान् शिष्य भी मूढ़ बन जाते हैं।

जिस शिक्षक से बालकों का प्रेम न होगा, वरन् वे डरेंगे; उस शिक्षक की कोई-भी बात मन से नहीं सीखेंगे। उसकी बताई हुई बात को शीघ्र भूल जायँगे।

बालकों को जब से पुस्तक पढ़ाना प्रारम्भ कराया जाय, तभी से कभी कोई बुरी पुस्तक उनके पढ़ने में न आने पावे। जैसे लावनी, ख़्याल, प्रेम या रस की कहानी, बारहमासी इत्यादि। उनको ऐसी पुस्तकें पढ़ाई जायँ

जो सरकारी पाठशालाओं में प्रचलित हों, या जो किसी श्रेष्ठ पुरुष की बनाई व बताई हुई हों अथवा आप माता-पिता ने सोची हों।

जो पुस्तकें पढ़ाई जायें वे सोच-समझकर पढ़ाई जायें। तोते की भाँति न पढ़ाई जायँ कि रटते-रटते मस्तक भी खाली रह जाय और समझे-बूझे कुछ नहीं। बालकों से कह दे कि जहाँ उनकी समझ में न आवे, वहाँ पुस्तक में चिह्न बना दिया करें या अपना विचार लिख दिया करें, और फिर शिक्षक से उसको पूछ लिया करें।

थोड़ा पढ़ावे ; पर बहुत गुनवावे और गुनावे। पीछे का पढ़ा हुआ हर समय, वरन् कुछ-कुछ नित्य फिरवाता रहे; क्योंकि विद्या और पान बिना फेरे नष्ट हो जाते हैं। ऐसा न होने दे कि आगे की दौड़ और पीछे की चौड़। जितना पढ़ावे, भली भाँति समझा दे। जब तक बालक न समझ ले, कभी अगाड़ी न बढ़ावे। समझ में बैठा कभी भूलता नहीं। बालक जब कुछ पढ़-लिख जाय, तब उसको पढ़ने-लिखने के लाभ बतावे, उसके उत्साह को बढ़ावे। कभी भंग या कम न होने दे। अच्छे पढ़ने-लिखने पर या परीक्षा में अच्छा निकलने पर बालक की इच्छा पूरी कर दे, अथवा धन, वस्त्र या और

कोई खेलने की सामग्री दिला दे। जब पढ़ने से जी हट जाय। तब न पढ़ावे। थोड़ा-सा मनबहलाव करने दे। नहीं तो बालक का जी उकता जायगा, और पढ़ने में ग्लानि हो जावेगी; क्योंकि जो कार्य मन से होता है, वह अच्छा होता है। दबाव डालने या डरपाने से नहीं होता। सामान्य बातों से बालकों को कुछ-न-कुछ सिखाता रहे, जिससे उनके सोचने की शक्ति बढ़े। पहले उनसे एक बात को पूछे, जो न आवे, तो आप बता दे। दृष्टान्त दे-देकर विद्या की ओर चित्त को लगावे। दूसरे बालकों की बड़ाई कर-करके या उनसे लज्जा दिला-दिलाकर उनमें चाव उत्पन्न करे।

जो सिखावे, वह प्यार-प्रीति से सिखावे। कभी क्रुद्ध होकर न सिखावे। प्यार से काम अच्छा निकलता है। भूल जाने पर बालक को एक वा दो बार बता दे। मारे नहीं। क्रोध न करे। पर इतना भी न होने दे कि बालक निरा निडर ही हो जाय। थोड़ी ताड़ना अवश्य रक्खे। रात के समय बालकों को ऐसी-ऐसी कहानियाँ सिखावे, जिनसे उनको कुछ शिक्षा भी प्राप्त हो, मन भी बहले और जिनके सीखने या सुनने की वे अधिक इच्छा भी करने लगें। दो-चार कहानियाँ दृष्टान्त के लिये तुझे बताये देती हूँ—

कहानी (१)

एक बारहसींगा प्यासा होकर ताल के किनारे पर गया। निर्मल और अचल जल में अपनी परछाहीं निरख मन में फूल गया कि मेरी देह और सींग कैसे सुन्दर हैं। पर पैरों पर जब दृष्टि पड़ी, तो सोचने लगा, ईश्वर ने इनको क्यों ऐसा कुरूप बनाया ! यह विचार मन में कर ही रहा था कि इतने में शिकारी कुत्ते लेकर अहेर के लिये आ पहुँचे। वह उनको देखकर भागा। अपनी उन्हीं पतली और कुरूप टाँगों से चौकड़ी भरता हुआ उनसे दूर निकल गया। पर वे ही सुन्दर सींगें, जिनको इतना सराह रहा था, एक सघन झाड़ी में अटक गयें और वह फँस गया। जब तक सींग सुलझें; तब तक कुत्तों ने आ पकड़ा, और फाड़ डाला। तब वह बारहसींगा अपने मन में कहने लगा, जिन टाँगों को मैं बुरी बताता था। वे तो काम आईं, और जिनकी सुन्दरता को देख फूला न समाता था, वे ही मृत्यु का कारण हुईं। अतएव—

शिक्षा

वस्तु के रूप को न देखना चाहिये, किन्तु उसके गुण को देखना उचित है।

कहानी (२)

हर मनुष्य के कन्धे पर एक झोली पड़ी हुई है। आधी अगाड़ी को, आधी पिछाड़ी को। पीछे की में अपने दोष भरे हैं, और आगे की में औरों के। इसलिये मूर्ख और अज्ञानी मनुष्य औरों ही के दोषों को तो देख लेते हैं, पर अपनों को नहीं देख सकते। पर बुद्धिमान् और चतुर मनुष्य इस झोली को सदा उलटकर रखते हैं कि औरों के दोषों पर अपनी दृष्टि नहीं पड़ने देते। सदा अपने दोषों को देखते रहते और उन्हें छोड़ते जाते हैं।

कहानी (३)

किसी कौए को मोर के पंख कहीं से मिल गये। उनको उसने अपनी देह में लगा लिये और घमण्ड से कहने लगा—देखो, मोर में और मुझमें अब कुछ अन्तर है? अब हम भी मोर बन गये। सो अब उन्हीं में जाकर रहेंगे। इन काले कौओं में नहीं रहेंगे। यह कहकर मोरों में जा मिला। मोरों ने इस नये अद्भुत पक्षी को देखकर कहा, यह कौन पक्षी है कि चाल तो कौओं की सी और पंख हमारे-से हैं। यह मोर का बच्चा भी नहीं है। ये बातें मोर कर ही रहे थे कि उसकी काँव-काँव और खेहखाने ने तुरन्त प्रकट कर दिया कि यह तो कौआ है।

इस पर मोरों ने उसे चोंचों से मारना आरम्भ कर दि
उसके सब पर नोच डाले, वह लँडूरा रह गया। उन
पास से यह कहकर निकाल दिया कि कहीं प
लगाने ही से मोर बन जाते हैं। मोरों की-सी
मोरों की-सी बोली, उनकी-सी रहन-सहन तो है
नहीं, और वह कौए में कहाँ से और कब आ सकती
यहाँ से पिटपिटाकर वह बेचारा फिर कौओं में
मिला। पर कौओं ने भी इसको अब न बैठने दि
वे कहने लगे—अजी मोर साहब! यहाँ आप क्यों
करनेवाले कौओं में क्या करेंगे? हम आपके साथ
योग्य कहाँ? आप तो मोरों में जाइये, यहाँ रहिये।
आपका क्या काम? इस पर जब यहाँ से भी नि
गये, तो दुःख पा-पाकर मर गये; क्योंकि बिना
तो सके नहीं।

शिक्षा

किसी के बड़ों की नकल न करो। जो सीखो,
उनके गुण सीखो।

कहानी (४)

एक बार ऐसा हुआ कि पशुओं और पक्षियों
लड़ाई ठनी। चमगीदड़ पहले तो किसी ओर न हुए
पर जब देखा कि पक्षी हारने पर हैं, तब तुरन्त

में जा मिला, और पक्षियों की बुराई करने लगा। जब पशुओं ने पूछा—क्या तू पक्षी नहीं है, तो बोला, क्या पक्षी के कहीं दाँत और कान भी होते हैं ? मैं तो पशु हूँ। यह सुन पशु चुपके हो गये। पर थोड़ी ही देर पीछे ऐसा हुआ कि पशुओं की हार होने लगी, और पक्षी जीतने को हुए। तब यह पक्षियों में चट से आ मिला, और पशुओं की खोटी कहने लगा। जब पक्षी कहने लगे कि तू भी तो पशु ही है, तो बात बनाकर कहा, क्या पशु के पंख भी होते हैं ? पक्षी भी यह सुनकर चुप हो गये। इसके उपरान्त दोनों में मेल हो गया। तब दोनों कहने लगे कि हम तुम तो निपट ही लिये, इस चमगीदड़ को दण्ड देना चाहिये, जो तुम्हारी हार पर हममें और हमारी हार पर तुममें जा मिला था, और एक से दूसरे पक्ष की खोटी कही थी। यह विचार दोनों ने यह निश्चय किया कि न तुम इसको अपने पास बैठाओ, और न हम। जहाँ तुम देखो, वहाँ तुम मारो और जहाँ हम देखें, वहाँ हम मारें।

चमगीदड़ यह मता सुनकर भागा, और डर के मारे अँधेरे में जा छिपा। वहाँ वह अब तक छिपा रहता है और केवल रात को निकलता है। पशु और पक्षी, दोनों में से जो कोई उसे पाता है, मारकर खा जाता है।

शिक्षा

जो मनुष्य एक ओर नहीं रहता, इसकी बुराई उससे और उसकी इससे करता रहता है, उसके सब शत्रु बन जाते हैं, मित्र कोई नहीं रहता।

कहानी (५)

एक समय लड़ाई में बिगुल बजानेवाला शत्रुओं के हाथ में पड़ गया। वे उसे मारने लगे, तब वह बोला—भाई, मुझे क्यों मारते हो ? मैंने तो लड़ाई में किसी को नहीं मारा। न मेरे पास लड़ाई के शस्त्र हैं। मैं तो बिगुल बजाता हूँ। इस पर उन्होंने कहा—हम इसलिये तुमको मारते हैं कि आप तो अलग रहते हो और औरों को लड़ा देते हो। यदि तुम आप लड़ते तो इतना दोष तुम्हारा न था ; क्योंकि तुमको भी लड़कर मरने का भय होता। औरों ही को लड़ा देते हो और आप बचे रहते हो। इसी कारण तुम्हारा अधिक दोष है, और अधिक दण्ड के योग्य हो।

शिक्षा

लड़नेवाले से लड़ानेवाला अधिक बुरा है।

कहानी (६)

एक बन में एक ही स्थान पर दो पेड़ थे। एक अरेंड का, दूसरा बेत का। एक समय आँधी आई

और मेह बरसा। अरण्ड जो सदा अकड़ता और सतराता रहता था, अब भी सतराता रहा, झुका नहीं। बेत बेचारा, जो तनिक-सी बयार से भी झुक जाता था, अब और भी अधिक झुक गया। आँधी के वेग से अरण्ड तो उखड़कर कलाबाजी खाते हुए जा पड़ा और बेत झुककर बच गया। जब शान्ति हुई, तब बेत अरण्ड से बोला—'क्यों, अकड़ने और झुकने में कितना भेद है? घमण्ड करना अच्छा नहीं होता। जो घमण्ड न करते, तो हमारी भाँति तुम भी बच जाते।'

शिक्षा

घमण्डी दुःख भोगता है। झुक के जो चलता है, वह सुख पाता है।

कहानी (७)

दो बिल्ली साझे में कहीं से एक रोटी लाईं। बाँटने के समय झगड़ने लगीं। आपस में जब निबटेरा न हुआ, तो अपने पड़ोसी बन्दर से न्याय चाहा। उसने रोटी के छोटे बड़े दो टुकड़े करके पलड़ों में धरे। जब बड़ा टुकड़ा भारी हुआ, तो उसमें से इतना तोड़कर मुख में डाल लिया कि दूसरा टुकड़ा भारी हो गया। अब इसमें से इतना तोड़-कर मुख में रख लिया कि दूसरा भारी हो गया। जब दो-तिहाई रोटी खा गया, तो बिल्ली बोली—बस, रहने दो।

देख लिया तुम्हारा न्याय ! हमारी बनी-बनाई ही रोटी हमें दे दो । इस पर बन्दर बोला—क्या हमारी मेहनत का कुछ मुझे न दोगी ? यह कहते-कहते बचे हुए टुकड़े को खाकर पेड़ पर जा चढ़ा । दोनों बिल्लियाँ पछताती रह गईं, और सन्तोष कर चुप हो रहीं ।

शिक्षा

जो अपना निपटेरा आप नहीं निपटाते, दूसरों पास जाते हैं, वे बराबर पीछे पछताया करते हैं ।

जैसी बालकों की रुचि देखें, वैसी ही शिक्षा दें, रुचि के विपरीत शिक्षा कभी न दें । इससे तीव्र बुद्धि का बालक भी मूढ़ हो जाता है । जैसे बालक यदि वैद्यक पढ़ना चाहता है, पर तुम उसको गणित पढ़ाने लगो, जिस कारण उसका मन उसमें नहीं लगता और न उसकी समझ में आता है । यदि उसको वैद्यक पढ़ाई जाय, तो वह बहुत थोड़े दिनों में विज्ञ और निपुण हो सकता है । इसके अनेक दृष्टान्त हैं कि जिन बालकों को उनकी रुचि के विपरीत शिक्षा दी गई है, वे निरे उजड्ड रह गये हैं । पर अब उन्हीं को किसी कारण से उनकी रुचि के अनुसार शिक्षा मिली, तो वे देश भर में बड़े चतुर और निपुण होकर प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित हो गये ।

रुचि के पहचानने में कोई कठिनता नहीं पड़ती । जिस

विषय में बालक बिना बताये वा पढ़ाये किसी बात को सीख जाय, तो जान लेना चाहिये कि इसकी रुचि इसी ओर है।

(१) बालकों को कौड़ी, पैसे, फल, फूल वा खिलौनों से जोड़ना, घटाना, गुणा और भाग, छोटे-छोटे अंकों को जबानी बतावे। जैसे दो-दो फल दो बालकों को देकर उनसे गिनवाये, फिर तीन-तीन देकर, फिर चार-चार, पाँच-पाँच देकर गिनवाये। इससे जोड़ना आवेगा।

जब इसमें कुछ अभ्यास हो जाय, तब बाकी इस प्रकार सिखावे कि एक बालक को पाँच फल देकर तीन फल उस बालक से दूसरे बालक को दिला दे, और फिर पूछे कि तुम्हारे पास कितने फल रह गये ? इसी भाँति अधिक दे-देकर और कम कर-करके सिखावे। गुणा सिखाने की यह रीति है कि बराबर-बराबर फल कुछ बालकों को देकर फिर पूछे कि सब बालकों के पास सब फल कितने हुए ? बिना गिनके बताओ। जब न बता सकें, तो जितने-जितने फल दिये हैं, या जितने बालकों को दिये हैं, उसी अंक के पहाड़ों का स्मरण दिलाकर बुलवावे, तो वे बता देंगे। फिर उनको समझा दे कि इसी प्रकार पहाड़ा बोलकर बिना गिने बता दिया करो। इस प्रकार पहाड़ों से काम लेकर गुणा सिखा दे।

(२) भाग इस रीति से सिखायें कि बीस फल एक स्थान पर रख दे । चार बालकों से कह दे कि बराबर इनमें से सब ले लो । जब वे बाँट चुकें, तब उनसे पूछे, कितने-कितने फल आये ? जब गिनकर बता दें, तो समझा दे कि इसी भाँति पहाड़ों से लेख लगाकर बता दिया करो कि इतनी वस्तु को, जो इतनों में बराबर-बराबर बाँटें, तो इतनी-इतनी आवेंगी। ४ पंजे २०, ८ चौक ३२ और ९ सत्ते ६३ इत्यादि।

(३) जब बालक लिख-पढ़कर निपुण और चतुर हो जायँ, तब उनको व्यवहार-शिक्षा इस प्रकार से दे कि निज कुल का जो कुछ व्यवहार हो, वह प्रथ- उनको बतावे । कार्य करने की ऐसी टेंव डाले कि जिस काम को करें, धुन बाँधकर करें और भली भाँति करें । जब तक पूरा न कर लें, कभी मुख न मोड़ें और न छोड़ें । चाहे अन्त में हानि भी उठानी पड़े; पर अधूरा कभी न छोड़ें । अधूरे काम करने की टेंव कदापि न पड़ने दे । अपने सब कामों को ठीक समय पर उचित प्रकार से आरम्भ और समाप्त करने का स्वभाव बनावें और काम को बेढंगा न करें ।

अपने व्यवहार के कुछ सिद्धान्त निश्चय कर लें, और सदा उनके ही अनुसार बर्तें, जिससे साख बँध

जाय और लाभ हो। कोई टेंव या बान खोटी न डालें, जिससे व्यवहार वा कार्य में विघ्न पड़ने लगे। जैसे लेखा-जोखा आप न देखना, चाकरों ही का भरोसा करके सब काम उन्हीं के ऊपर छोड़ रखना। उनकी चौकसी या पड़ताल आप न करना। ऐसा करने से हानि सम्भव है। कहावत चली आती है कि "स्वामी की आँख लाख का काम करती है।"

किसी दुर्व्यसन में पड़कर अपने बने या बँधे कार्य को न बिगाड़ लें। उनको सिखाना चाहिये कि व्यवहार में सदा शील और नम्रता से काम निकालें। अपने काम को जिस प्रकार बने, सुधार लें, बिगड़ने न दें। चाहे कड़े बनकर या नम्र बनकर। बालकों को विद्या और धन के गुण भी सिखावें कि इन दोनों के बिना संसार का कोई काम नहीं चलता। इसलिये उनको सर्वोत्तम समझकर यथासाध्य उनका संग्रह करना चाहिये। ये मनुष्य के बड़े काम के और सहायक होते हैं। जिसके पास ये होते हैं, उसका संसार में कोई काम अटका नहीं रहता। पर ये दोनों अपने पिता समय के पुत्र हैं। इसलिये समय को वृथा न खोवे। समय को अमूल्य जानकर सदा काम में लगावे। यों ही न खो दें, नहीं तो पीछे पछताना पड़ता है।

(४) धर्मशिक्षा भी बालकों को प्रथम ही से इस कारण देनी उचित है कि फिर उनके चित्त में से धर्म के वे विचार, जो इस आयु में चित्त पर चढ़ जाते हैं, निकाले नहीं निकलते। यही तो कारण हुआ कि जिन बालकों की धर्मशिक्षा बचपन में नहीं हुई थी, और अँगरेजी पढ़ने लगे। ईसाइयों की पुस्तकें पढ़-पढ़कर या उनके उपदेश सुन-सुनकर अथवा उनकी संगति में पड़ वे क्रिस्तान होते चले गये। यदि उनकी धर्मशिक्षा बाल्यावस्था ही में हो जाती, तो वे ऐसे धर्मधुरन्धर होते कि धर्मावतार कहलाते। परन्तु विधर्मी हो जाने से उनके विचार बदल गये।

जितने बालकों ने अँगरेजी की शिक्षा पाई, उनमें से अधिकांश की वृत्ति ईसाईमत की ओर झुक गई थी, औ[र] वे अपने धर्म को न जानते थे। इस कारण जो-जो दोष ईसाइयों ने उनके धर्म में कहे या उनकी पुस्तकों से उनको [ज]ान पड़े, वे मान लिये और निज मत त्याग अन्य मत [ग्र]हण कर लिया।

मैं खुद ऐसे ही कारणों से अपने धर्म में अविश्वासी [हो] गई थी, और कुछ संदेह नहीं था कि वर्ष दो वर्ष [य]दि ऐसी ही दशा रहती या किसी पादरी का संग हो [ज]ाता तो अवश्य क्रिस्तान हो जाती। पर अब जब से

आर्यसमाज स्थापित हो गया है, और इसने वैदिकधर्म का झंडा बीच मैदान में खड़ा किया है, तब से प्रायः सभी स्कूलों और कॉलेजों में शिक्षा पानेवाले निज-निज धर्म से जानकार होकर अन्य मतवालों को बात की बात और चुटकियों में उड़ाते हैं। क्रिस्तानों और मुसलमानों के मत को तो कुछ समझते ही नहीं। इनकी पोल तो ऐसी खोलते हैं कि ये मतवाले तो सामने खड़े नहीं रहते। इसी लिये बालकों को प्रथम ही से धर्मशिक्षा इस प्रकार से दे कि सबसे पहले बालकों में ईश्वर का विश्वास, प्रेम और भय उपजावे। कहे, ईश्वर ही सबको उत्पन्न करके पालता-पोषता है। हम सबको उसकी भक्ति और आराधना करनी चाहिए। दोनों काल आप संध्या या भजन करने को बैठे, और बालकों को बैठाकर भजन करावे।

जब कोई लूला, लँगड़ा, कोढ़ी या दुखी नजर पड़े तो बालकों को ईश्वर का भय दिलावे कि ईश्वर ने इसकी यह दशा बुरे कर्मों के फल से कर दी है। इन्होंने पहले जन्म में या इस जन्म में बुरे कर्म किये थे। इसलिये यह दण्ड मिला है। यदि तुम बुरे कर्म करोगे (यहाँ पर चोरी करना, हत्या करना, झूठ बोलना इत्यादि बुरे कर्मों के विवरण भी उन्हें बता दे) तो तुमको भी ऐसा ही दण्ड मिलेगा।

इसी प्रकार जब वे किसी कीड़े-मकोड़े को सतावें या मारें, तो उनको उपदेश दे कि हत्या से महापाप होता है। जो इन कीड़े-मकोड़ों को मारता या सताता है, ईश्वर उसकी बुरी दशा करता है, मारनेवाले को भी इसी प्रकार मारता और दुःख देता है। इसलिये तुम्हें किसी जीव को न मारना चाहिये।

अथवा जब बालक कोई अपराध करे; तब आप क्षमा करके उससे ईश्वर से भी क्षमा मँगवावे, अथवा जिस किसी के घर में पूजा या देवालय हो तो बालक को वहाँ ले जाकर ईश्वर से क्षमा की प्रार्थना करावे। कहलावे–मेरा अपराध क्षमा कर। अब मैं फिर ऐसा कर्म न करूँगा।

बालकों की सत्य में निष्ठा और प्रीति करावे, सत्य बोलने के गुण और पुण्य बतावे; जिससे वे सदा सत्य बोलने की टेंव डालें। सत्य बोलनेवालों का यश उनसे कहे। झूठ से घृणा उनके मन में उत्पन्न करावे। झूठ बोलनेवालों की दुर्दशा का हाल कह सुनावे कि झूठों का कोई विश्वास नहीं करता। परमेश्वर झूठों को दण्ड देता है, और वे कष्ट पाते हैं। यथा—

झूठ कबहुँ नहिं बोलिये, झूठ पाप को मूल।
झूठे की कोउ जगत में, करै प्रतीति न भूल॥
मिथ्याभाषी साँच हूँ, कहै न मानै कोय।

. भाँड़ पुकारैं पीरवस. मिस समझै सब कोय ॥

मैंने एक लड़के को अपनी ससुराल में देखा कि वह नित्य झूठ बोला करता था । जब वह गंगाजी में तैरता तो झूठमूठ ही बहाना कर चिल्लाता कि डूबा, डूबा, कोई निकालियो, निकालियो ! और दिखाने के लिये गोते खाने लगता । उसको ऐसा करते देखकर सब चुपके हो जाते । सब खेल जान लेते थे । पर एक दिन ऐसा हुआ कि वह बालक सचमुच डूबने लगा, और बहुत चिल्लाया; पर सबने नित्य की भाँति खेल ही समझ कुछ ध्यान न दिया, वह लड़का डूब गया । न वह लड़का झूठ बोलने की टेव डालता और न डूबता ।

जीवों के प्रति प्रेम की शिक्षा भी बालकों को दे, जिससे दयाभाव उनके चित्त में उत्पन्न हो जाय और वे निर्दयी न बन जायँ । ईश्वर के गुणानुवाद बता-बताकर उनके मन में विश्वास और भय पूर्णरूप से उत्पन्न करा दे, और इसी हेतु उनसे नित्य सोते-जागते अथवा साँझ-सवेरे इस प्रकार ईश्वर की प्रार्थना करावे —

चिन्ता दूर करो प्रभु, मंगल रूप अनन्त ।
परमपिता करुणाअयन, लेहु सुद्धि भगवन्त ॥
लेहु सुद्धि भगवन्त, हरी तू दीनदयाला ।
सोकहरन सुखकरन, तुही सब जन रखवाला ॥

निर्धन धन भूपाल, साधु सन्तन के मिन्ता।
बार-बार तुहिं नमो, हरो प्रभु मेरी चिन्ता॥
ओमग्नेव्यापकजगनायक। हिरनगर्भ भक्तनसुखदायक॥
शङ्कर महादेव भवईशा। विश्व विराट अदित्यमहेशा
सत्सचिदानन्दअविनासी। विष्णुअगोचर घटघटवासी।
ज्ञानस्वरूप भक्तभयभञ्जन। सबमें व्यापकनित्यनिरञ्जन॥
निर्मरनिराकार भवस्वामी। भक्तपाल हरि अन्तरजामी॥
अचल अनन्त पूत कर्तारा। सर्वशक्तिमन जन भर्तारा॥
तैजस माज्ञ अनादि अरूपा। दयानिधे देवी सुखरूपा॥
अजर अमर जगदीशदयाला। संकटहरन गनेसकृपाला॥
विद्यामय वायू दुखभञ्जन। आनँदरूप सन्तमन-रञ्जन॥
पूरन ब्रह्म पुरुष जगधारी। परब्रह्म स्वामी सुखकारी॥
नित्यानन्द प्रीति-उत्पादक। ज्योतिरूप तव वेदप्रचारक॥
अलख महा होता सर्वज्ञ। मोहित धर्मराज उपजज्ञ॥
शुद्धस्वरूप अजन्मा कर्ता। सब सुखदाता अरु दुखहर्ता॥
वरुनइन्द्रयमगंगल परसन। शिव विश्वम्भरअग्रप्रभुदरसन॥
सर्व मित्र राजप हितकारी। रूप अद्वितिय भवभयहारी॥
सृष्ट्युत्पादक निर्गुनरूपा। पूज्य अपार सर्व जगभूपा॥

बस, ईश्वर की इसी प्रार्थना पर आज के उपदेश का अन्त करती हूँ। हमारे सोने में यह ईश्वर हमारी रक्षा करे।

स्त्रीसुबोधिनी

पञ्चम भाग

धर्मोपदेश

आठवें दिन रात्रि को छुट्टी पाकर मोहिनी से दुर्गा बोली—बहन मोहिनी ! अब तक तो मैंने तुझको इन सात दिनों के 'सप्ताह' में घर के काम-काज ही बताये, अब आज थोड़ा-सा सप्ताह के फल में धर्म और नीति-विषय भी बताती हूँ। मैंने बहुधा देखा है, स्त्रियाँ अपने कुल-धर्म को छोड़कर ऐसे-ऐसे बुरे पूजन और कर्मों को अपना धर्म मान बैठी हैं कि मैं देखकर बहुत ही दुःख पाती हूँ। मैं नहीं जानती, वे धर्म का अर्थ भी समझती हैं या नहीं ? मैं तो यही कहूँगी कि नहीं समझतीं। समझना तो दूसरी बात है, वे जानती भी नहीं कि धर्म किसे कहते हैं ? जैसे किसी ने बहका दिया वैसा ही मान गई, और करने लगीं। मूर्ख में बुद्धि तो होती नहीं। दूसरे की देखादेखी तुरन्त करने लगती हैं, और कुछ नहीं विचारतीं कि हम क्या करती हैं। यह करना भला है या बुरा, सत्य है या असत्य ?

दावे, उससे एकान्त में बातें करे। स्त्री को पति के सिवा कभी किसी अन्य पुरुष को गुरु न बनाना चाहिये। यदि ऐसा करेगी, तो उसके पातिव्रत में अन्तर पड़ेगा। स्त्री तो अपने पति ही को अपना गुरु समझे और पति-सेवा ही को गुरुमन्त्र जाने। यथा—

पतिशुश्रषणाच्चार्यास्तपो नान्यद् विधीयते।
सावित्री पतिशुश्रूषां कृत्वा स्वर्गे महीयते॥

तुलसी की माला धारण करने और जपने से स्त्री को बड़ा ही पाप होता है; क्योंकि ये विधान विधवाओं के लिये हैं। सौभाग्यवती स्त्रियों के लिये तो लिखा है कि सदा कमल की माला धारण करें। तुलसी की माला को हाथ में भी न लें। तुलसी की माला जपना वैरागिनियों का काम है। गृहस्थिनी स्त्रियों का काम नहीं है। ऐसी स्त्रियों के लिये लिखा है कि नरक भोगेंगी, बालविधवा हो जायँगी या युवावस्था में विधवा होंगी, और फिर अनेक प्रकार के दुःख और क्लेश भोगेंगी।

शास्त्र में लिखा है, जप, तप, तीर्थयात्रा, संन्यास, मन्त्रसाधन और देवता का पूजन, ये सब बातें स्त्री और शूद्र को नाश करनेवाली हैं। कारण, ये बातें केवल उससे हो सकती हैं, जो स्वाधीन है, अथवा जिसको

दूसरे की सेवा नहीं करनी पड़ती, और दूसरे की प्रसन्नता पर जिनका जीवन नहीं है। परन्तु स्त्री और शूद्र, जो सदा अपने स्वामी ही की सेवा में रहते हैं, उनको इन बातों के करने की छुट्टी कहाँ, जो करें। और यदि किया भी जाता है, तो फिर सेवा में बाधा पड़ती है, जिससे स्वामी की अप्रसन्नता होती है, और सेवक को हानि पहुँचना अत्यन्त सम्भव है। इसलिये शास्त्र में जप, तप, पूजा और पाठ इत्यादि का निषेध स्त्रियों के लिये किया है।

पूजा, पाठ इत्यादि करनेवाली स्त्रियाँ बहुधा निस्सन्तान और बाँझ रह जाती हैं; क्योंकि उनके पति का चित्त उनसे प्रसन्न नहीं रहता, सन्तान फिर कहाँ से हो? और यदि पति का चित्त प्रसन्न भी है, तो स्त्री का चित्त नहीं, वह पूजा-पाठ में लगा हुआ है। गर्भ कहाँ से रहे।

इन्हीं कारणों से पति की सेवा के सिवा स्त्री को कभी अन्य देव की सेवा न करनी चाहिये। नित्य उठ प्रातःकाल अपने ईश्वर की प्रार्थना ही केवल कर लेना बहुत है, और सर्वदा अपने पति ही का ध्यान और सेवा करनी सर्वोत्तम है।

आजकल की स्त्रियों ने अपने कुलधर्मों को छोड़

जिन धर्मों को ग्रहण कर लिया है, उनके दोष और बुराइयाँ मैं तुझे बताये देती हूँ। तू उनके दोष समझकर उनको न करे।

जिस ईश्वर ने हमको उत्पन्न किया है, और उस अवस्था में, जब माँ के उदर में ही थीं, तभी हमारे भोजन को माता के स्तनों में दूध भर दिया था, और माता के हृदय में ऐसा मोह उत्पन्न कर दिया था कि सैकड़ों दुःख और कष्ट सहकर उसने हमारा लालन-पालन किया। आप दुःख सहे ; पर हमको दुःख न पहुँचने दिया। जो वह ईश्वर ही माता के हृदय में ऐसा मोह न उत्पन्न करता, तो हम पलकर इतनी बड़ी क्योंकर होतीं। मर जातीं। न कभी कोई माता अपनी सन्तान को पालती। अब भी वही ईश्वर हमको नित्य भोजन वसन की सामग्री पहुँचाता है; क्योंकि खेतों में उसी की कृपा से अन्न उपजता है। वस्त्रों के लिये वृक्ष में रुई आदि लगती हैं। रोग-निवृत्ति के लिये ओषधियाँ उत्पन्न होती हैं। रात को सुषुप्ति अवस्था में भी वही हमारी रक्षा करता है। इस कारण उसी ईश्वर की उपासना, उसी से प्रार्थना और उसी का ध्यान करना उचित है। उसके सिवा दूसरा कोई उपास्य नहीं।

उस ईश्वर को छोड़ मूर्ख स्त्रियों ने भ्रम

में पड़कर ऐसे-ऐसे नीच, दुष्ट तथा निन्दनीयों को अपना पूज्य मान रक्खा है कि कहते भी लज्जा आती है। जैसे अमरोहे का मियाँ, जाहरपीर, जखैया, सय्यद, सेढ़, शीतला, मुय्याँ, पीर, वाराही, ताजिया, भूत, प्रेत, भूतनी, सौत, चुड़ैल, अऊत, पितर इत्यादि।

बहन, जो यह स्त्रियाँ तनिक-सा भी विचार करें, तो ऐसी मूर्खता की बात कभी न करें। स्याने, देवी के भगत और ठगियों की ठगाई में कभी न आवें। न अपने धर्म में बट्टा लगावें, और न पाप की भागिनी बनें। मैंने बहुधा स्त्रियों को यह कहते सुना है कि "गृहस्थ स्त्री को तो आल-औलाद के लिये सभी कुछ करना पड़ता है। स्याने-भोपे सभी की माननी पड़ती है, और पूजना पड़ता है।" पर मेरी समझ में नहीं आता कि इन्होंने इसमें क्या धर्म विचारा है, जिससे उनको इनका विश्वास हो गया है। मैंने देखा है, जब लोग अमरोहे के मियाँ की जात देने (ज्यारत करने) को जाते हैं, और राह में जो कहीं गंगाजी उतरनी पड़ती हैं, तो उनका जल अपनी देह से छूने तक नहीं देते। नहाने की कौन कहे, हाथ तक उसमें नहीं धोरते, इस विचार से कि ऐसा करने से मियाँ बिगड़ जायगा, क्योंकि गंगाजी हिन्दुओं का तीर्थ है, और वह हिंदुओं के तीर्थों से अप्रसन्न होता है, ज्यारत नहीं मानता।

हाय ! हाय ! इतना नहीं सोचतीं कि अपने घर की बात छोड़कर दूसरे चाण्डाल की तो पूजा करें और गंगाजी को छूएँ तक नहीं, जिनकी इतनी महिमा हमारे यहाँ मानी है। देखें, यह निगूना मियाँ हमारा क्या कर सकता है ? जो इसको नहीं पूजते, उनका ही क्या कर लेता है। फिर अपने पूज्यों को छोड़ ऐसे नीच विधर्मी को क्यों पूजें ?

जब हम मुसलमानों को ही बुरा कहते हैं, तब वह भी तो एक मुसलमान ही था। वह भी ऐसा अधम कि दूसरे मुसलमान भी उसके नाम पर गालियाँ देते हैं, कभी उसको नहीं पूजते। पर धिक्कार है हम आर्यों को, जो ऐसे विधर्मी को मानते और मरे हुए के हाथ जोड़ते और पूजते हैं। जब मुसलमान को छूते तक नहीं, उसका जूठा क्या छुआ तक कोई आर्य नहीं खाता, तब सोचने की बात है कि स्त्रियाँ, जो बहुधा 'मियाँ की कड़ाही' करती हैं, और फातिहा दिलाकर उसके जूठे भोग को उखाती हैं यह कहाँ तक ठीक है। क्या इससे आर्यत्व नहीं जाता ? पर इसका ध्यान किसी को नहीं। मियाँ को पूजेंगी और जूठा खायँगी। इसी प्रकार सय्यदों (शहीदों) का ...। उनके विषय में भी हम नहीं विचारतीं कि ये ...न हैं ? मुसलमानों में शहीद उसको कहते हैं,

जो हिन्दू (काफिर) को मारकर अपनी जान दे दे। तो हाय! जिन मुसलमानों ने हमारे पुरुषार्थों के मारने के यत्न में या युद्ध में प्राण-त्याग कर दिया, वे क्या कभी हमारे पूजनीय ठहर सकते हैं ? नहीं-नहीं, कदापि नहीं। धिक्कार है उनके पूजनेवालों को !!!

जाहरपीर का भी पूजना ऐसा ही है ; क्योंकि उसके विषय में भी वे नहीं सोचतीं कि वह कौन था ? और यदि उसको न पूजें, तो वह हमारा क्या कर सकता है ? कहानी तो तूने उसकी सुनी ही है कि अपने मौसी के बेटों से लड़कर मरा था, अपनी माता के कहने से घर छोड़ निकल भागा और धरती में समा गया। तभी से जाहर का जाहरपीर हो गया।

धरती में कौन सा मनुष्य नहीं समा सकता ? लज्जा और क्रोध के मारे बहुत-से मनुष्य कुएँ या नदी में जा गिरते हैं। इसी प्रकार वह भी किसी अन्धे कुएँ में जा गिरा, और मूर्ख लोग उसको किसी कारण से पूजने लगे। पर तमाशा यह कि उसके संग उसके चमार को भी पूजते हैं, जिसका नाम भज्जू था।

हाय! क्या यह लज्जा की बात नहीं कि हम उच्चकुल की होकर नीच कुलवालों को पूजें ? उनके हाथ जोड़ें, दण्डवत् करें, और उनकी मानता मानें ?

इसके संग तो चमार ही पुजता है ; पर एक और इससे भी अधिक नीच पुजता है, जिसका नाम जलैया है। उसके संग भंगी पुजता है।

इसकी पूजा में स्त्रियाँ अपने बालकों की जान बचाने को इस भंगी के नाम का एक सुअर का घेंटा (बचा) कटवाती हैं, और उसके लहू का टीका अपने बालक के माथे पर लगाती हैं। घेंटा कटाती बेर भंगी से कहती हैं—"देख, गरदन पर से दो कर देना; कहीं हिलगी न रह जाय।" जो कहीं शीघ्रता से दो टुकड़े हो गरदन अलग हो गई, तो बड़ी पुण्य समझती हैं कि हमारी जात (ज्यारत) अंगीकार हुई।

बहन, ये निर्दयी स्त्रियाँ भगवान् से जरा भी नहीं डरतीं कि एक बेचारे घेंटे का बलिदान वृथा करती हैं, और अपने बालक की जान के बदले दूसरे के बालक की जान इस अभिप्राय से मरवा डालती हैं कि हमारा बालक अब न मरे ; क्योंकि परमेश्वर ने जो इसका जी लेना चाहा था, सो हमने उसके बदले में घेंटे की जान दे दी।

बहन, इन्हीं स्त्रियों ने परमेश्वर को क्या अन्धा समझ लिया है ? क्या वह इतना भी नहीं देख सकता और समझता कि किसके बदले किसका जीव मारा

इसके संग तो चमार ही पुजता है ; पर एक इससे भी अधिक नीच पुजता है, जिसका नाम ज है। उसके संग भंगी पुजता है।

इसकी पूजा में स्त्रियाँ अपने बालकों की जान को इस भंगी के नाम का एक सुअर का पेंठा (व कटवाती हैं, और उसके लहू का टीका अपने बाल माथे पर लगाती हैं। पेंठा कटाती वेर भंगी से हैं—"देख, गरदन पर से दो कर देना; कहीं न रह जाय।" जो कहीं शीघ्रता से दो टुकड़े हो। अलग हो गई, तो बड़ी पुण्य समझती हैं कि जात (ज्यारत) अंगीकार हुई।

बहन, ये निर्दयी स्त्रियाँ भगवान् से जरा भी डरतीं कि एक बेचारे पेंठे का बलिदान वृथा करतं और अपने बालक की जान के बदले दूसरे के की जान इस अभिप्राय से मरवा डालती हैं कि बालक अब न मरे ; क्योंकि परमेश्वर ने जो जो लेना चाहा था, सो हमने उसके बदले में ये जान दे दी।

गया ? जो ऐसा ही है, तो फिर क्या डर है ? दूसरे के बालक के बदले इसी के बालक के प्राण हर लिये जायँगे।

यह जचैया क्या बालक की जान बचा सकता है ? स्त्रियाँ ऐसी अन्धी, मूर्ख और मतिहीन हो गई हैं कि कुछ कहते नहीं बनता ! इतना तो यह सोचें कि जैसे तुमको अपना बालक प्यारा है, वैसे क्या सुअरिया को अपना बेटा नहीं उतना प्यारा है ? जब तुमने उसके बेटे को मरवा डाला, तब क्या वह तुम्हारे लाल को नहीं कोसेगी ? परमेश्वर उसके दुःख की पुकार न सुनेगा ? क्या तुम्हारा बालक बेटा कटवाने से फिर जीता ही रहेगा ?

राम ! राम ! लज्जा नहीं आती ! क्या अब हम आर्य ऐसे धर्महीन और गये-बीते हो गये कि भंगी, चमार, कोली, चाण्डाल इत्यादि के हाथ जोड़ते फिरें, और उनकी पूजा करें ? तनिक सोचो तो, जिस परमेश्वर ने हमको उत्पन्न किया है, केवल वही हमको जीवनदान दे सकता है और देता है। अन्य दूसरा कोई नहीं दे सकता। फिर ऐसे नीच क्या दे सकते हैं। और ये ह ही क्या ? जब आप ही कुमौत मरे, तो हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं। जो आप मर गये, वे हमको क्या जिला सकते हैं।

जब कोई किसी को यहाँ मारता या सताता है
दंड मिलता है, तो क्या इन नीचों को (यदि
सतावेंगे, मारेंगे) ईश्वर दण्ड न देगा ?

यह भी तो विचारना चाहिये कि वे कोई दे
या कौन थे, जो इनको पूजा जाय ? जब ये मह
मनुष्य थे, जिनको कोई अपने पास भी नहीं बैठात
तो हमको धिक्कार है, जो उनको पूजते हैं। यह बड़
बड़ी मूर्खता की बात है।

और तो और, मैंने देखा है, मूर्ख स्त्रियाँ अ
लिखाकर ताजियों को देती हैं कि हमको बेटा द
हमारे बालकों पर मेहर करो। हमारे घरवालों का रो
गार लगाओ। इसी प्रकार की अनेक बातें उनमें लिख
लिखकर उनसे माँगती हैं। यह नहीं जानतीं कि वे
चीजें हमको दे सकते हैं कि नहीं ? जिनको हमने आप
अपने हाथों से बनाया है, वे बेचारे क्या कर सकते हैं ?
ये कागज और बाँस इत्यादि के बनाये हुए खिलौने हैं ?
जैसे विवाह-बरात में बनते और निकलते हैं। उनको
अर्जी देने से क्या हो सकता है ?

ए ही थोड़ी देर में

होकर निकालती हैं कि जो बालक हमारे हो-होकर मर जाते हैं, वे न मरा करें। इन ताजियों का जूठा शर्बत भी बालकों को पिलाती हैं, इन पर चढ़ी हुई कौड़ियों को बालकों के गले में पहनाती हैं। इनका गुलाम बनाने के लिये बालकों के अंग में बद्धी * (जो दोनों ओर को जनेऊ की भाँति होती है) पहनाती हैं। इन बातों से कभी किसी को लाभ नहीं हुआ। पर मूर्खता ऐसी फैली हुई है कि उनका पूजना नहीं छोड़तीं। और जो कहीं किसी की मनचाही बातें ईश्वर-कृपा से हो गई, तो बस, इन्हीं की कृपा समझ फिर तो ऐसा विश्वास कर बैठती हैं कि सकल सच्चे हैं तो ये, परिचयधारी हैं तो ये दूसरा और कोई नहीं। नीच जातियों में तो कोई ही शायद ऐसी जाति बची होगी कि उसका कोई मनुष्य न पुजता हो। जैसे नगरसेन धोबी, सेदू भंगी, कुएँवाला कमालखाँ इत्यादि। न-जाने ये मूर्ख स्त्रियाँ किस किसका भय करती हैं कि उनके नाम की मशक छुड़वाती हैं, मुर्गियाँ उसरवाती हैं, मुर्दों पर दूध चढ़ाती हैं, बाराही (सुअरिया) की कढ़ाही करती हैं, शीतला का 'पूर बोलती हैं'। जो बालक को ताप आ गई हो, तो मसानी (चौराहे) पर लाल कागज का ताव (तख्ता) चढ़ाती हैं।

* मुसलमानों में बद्धी गुलाम का चिह्न होता है।—सं०

जो सामने में भूखा है, उसको टुकड़ा भी न डालें।
आजकल दान की यह दुर्दशा हो रही है। जो दानपात्र
हैं, उनको तो दान मिलता नहीं : जो कुपात्र हैं, उनको
सहस्रों, वरन् लाखों रुपये का धन मिलता है, दीन-
दुखिया बेचारे मारे-मारे फिरते हैं। जिनको नित्य नये
नये भोजन घर घर भी हैं, उनको सब कोई खिलाते हैं,
और यह समझते हैं कि हम बड़ा पुण्य कर रहे हैं। जो
कोई दुखिया या अनाथ उस भोजन के समय आ गया,
तो उसको गाली देते हैं, पिटवाते हैं। क्या हुआ, जो
वेश्या बनकर इन दाताओं से कुछ ले गया। इसी दान
ने दाता और लेता, दोनों को पापी बना दिया है।

लोगों को धर्म के भ्रमजाल में कुछ ऐसा फँसाया
है कि वे निपट भौंचक्के-से हो गये हैं। ठीक तरह से
उनको कुछ सूझता ही नहीं। जो कुछ उनको बता
दिया जाता है, वही बोली बोलते हैं। जैसे मदारी कपड़े
के भीतर बालकों को बिठाकर, उनके मस्तक पर हाथ फेर-
कर कहता है—'गधे की बोली बोलो', 'बकरे की बोली
बोलो' और बालक बोलने लगते हैं। अर्थात् मदारी
जो-जो उनसे कहता है, वे वही बोलते हैं। पर जब वे
कपड़े से बाहर निकलकर आते हैं, और उनसे
जाता है कि तुमने गधे की बोली क्यों बोली थी,

तो कहते हैं, हमने तो नहीं बोली । ठीक यही दशा हम लोगों की है; क्योंकि देख, हमको वैतरणी नदी पार उतारने का भय दिलाकर हमसे मरते समय गौ पुण्य करा लेते हैं, सब बड़ी श्रद्धा और प्रेम से गोदान करते और इसको बड़ा भारी पुण्य मानते हैं ; पर यह नहीं सोचते कि यह गौ क्योंकर वहाँ हमारी सहायता को पहुँच सकती है। दाता तो अभी प्राणत्याग करके वैतरणी पर पहुँचा जाता है, और गौ तो यहाँ अभी कई वर्षों तक रहेगी । वहाँ क्योंकर इससे सहायता मिलेगी ? इसका विचार किसी को नहीं होता । इस पर तुझको एक दृष्टांत भी सुनाती हूँ, जो मुझको इस समय स्मरण आ गया ।

एक मनुष्य था, जिसके एक पुरोहित था। इनमें परस्पर बड़ी प्रीति थी। वह अपने पुरोहितजी का बहुत आदर-सत्कार करता था । जब वह रोगग्रस्त होकर मर गया, तब उसके पुत्र ने अपने बाप की मृत्यु पर यह सोचकर पुरोहितजी को बहुत-सा दान दिया कि यह हमारे पुरोहित भी हैं, और मृत पिता के परमस्नेही मित्र भी । इनको दान देने से पिता की आत्मा अधिकतर प्रसन्न होगी। पुरोहितजी को दान तो अधिक मिला ; परन्तु एक घोड़ी, जो इस मृत मनुष्य की सवारी में रहती थी, न मिली । वह कुछ अधिक मूल्य की थी।

कुछ इलाज नहीं होता । वैद्यों ने यह कहा है कि यदि गरम लोहे से पुरोहित की देह दाग दी जाय, तो मेरे फोड़े अच्छे हो जायँ ।' सो पुरोहितजी आज कृपा करके अपनी देह को दगवा लीजिये, तो आपके यजमान को शीघ्र आराम हो जाय ।

यह सुनकर पुरोहितजी घबराये । और कहने लगे—यजमान, दान तो पहुँच जाता है, परन्तु शरीर दग्ध नहीं हो सकता । इस पर बहुत वाद-विवाद हुआ । अन्त को पुरोहितजी ने जो कुछ घोड़ी आदि सामान दान में लिया था, सो सब लौटा दिया । उस दिन से उस पुत्र ने तो मृत पिता के निमित्त दान किया नहीं । सबको ठगी समझ लिया ।

सो बहन मोहिनी, यही हाल गोदान का है । न वा पहुँचता है और न कुछ होता है । ये तो ठगी की बातें हैं । वैतरणी कोई नदी नहीं, जो मरकर उतरनी पड़ती हो । यह तो गौ लेने का मिस ही मिस है । हाँ, हमारी देह में अवश्य वैतरणी है, जो मरते समय जीव को उतरनी पड़ती है । पर उस वैतरणी से यह अभिप्राय है कि रोगी रहने में जो दुर्गन्धि आदि अपवित्रता रोगी की देह में हो जाती है, और प्राणत्याग के समय आत्मा को जिससे महाक्लेश और दुःख होता है, उसका उपाय गौ का दूध है । अर्थात् जिस मनुष्य ने आयु भर या

बहुधा गौ का दूध पिया है; उसके शरीर के परमाणु ऐसे हो जाते हैं कि उनमें यह दुर्गन्धि आदि अपवित्रता उत्पन्न नहीं होती, अर्थात् आत्मा को देहवियोग में कुछ ग्लानि या दुःख नहीं होता। यही वैतरणी है जिसमें मवाद, लोहू इत्यादि दुर्गन्धित पदार्थ माने हैं।

यमदूतों का भी यही हाल है। वे कोई देहधारी जीव नहीं, किन्तु हमारे ही दुष्ट विचार हैं, जो जन्म-भर होते रहते हैं और इस समय साक्षात् होकर हमारे सम्मुख आ खड़े होते हैं। मरनेवालों को उनसे क्लेश पहुँचता है। उनके भयानक रूप और दृश्य देख-देखकर उसका आत्मा भयभीत होता है, दुःख पाता है, रोता है, चिल्लाता है। परन्तु रोया-पीटा नहीं जाता। मरने पर जीव को वायुमण्डल (यमलोक) में जाना पड़ता है। यदि न मरा, नीरोग होकर अच्छा हो गया, तो कहता है, ऐसे-ऐसे भयानक जीव मेरे प्राणान्त को आये थे, मुझको वहाँ तक ले गये; पर पीछे छोड़ दिया। इसका व्याख्यान यदि विस्तार से दिया जाय, तो बहुत हो जायगा। केवल संकेतमात्र बता दिया है। इसलिए प्राणी अपने विचार सदा अच्छे रक्खें और बुरे कार्यों तथा पाप के संकल्प-विकल्प और कुव्यसनों को मन में स्थान न दें।

अब मनुष्य विचार नहीं करते, जिससे प्रत्येक बात के तत्त्व को समझें। वे तो उसी को मान लेते हैं; जो उनको समझा दिया गया है। यह उसके विषय में कभी नहीं विचारा जाता कि यह बात सम्भव भी है या नहीं! सच है या झूठ? हे ईश्वर! तू इस देश की स्त्रियों को अब भी कभी बुद्धि और समझ देगा? क्यों ऐसी मूर्खों मे पाला डाला है? देख! तुझे तो यह निपट ही भूल गई। तेरी महिमा को तो पहचानती भी नहीं। सब प्रकार से अन्धी और बहरी बन गई हैं कि कोई लाख दिखावे या पुकारे और सुनावे; पर कुछ फल नहीं।

स्यानों का कपट

बहन! मैं तुझे धर्मोपदेश तो कर चुकी; पर स्याने-भोपों के विषय में कुछ न बताया। सो और बताती हूँ। तू देखती है कि स्त्रियाँ इनके भ्रमजाल में ऐसी फँस रही हैं कि कुछ कहा नहीं जाता। तनिक माथा दुखा कि 'खोर' मान ली। बालकों को कुछ रोग हुआ कि स्यानों को बुला भेजा। स्त्रियाँ क्या, पुरुष तक इनके प्रपञ्च ही का आश्रय लेकर स्त्री और सन्तान की जानें खो देते हैं, और औषध नहीं करते। इन्हीं के

'गंडा-मूरी' के भरोसे पर रहते हैं। ये धूर्त कुछ ठग-ठगाकर इन बेचारों के प्राण हर लेते हैं। मूर्खों का तो कुछ ठीक ही नहीं। मैंने देखा है, बड़े-बड़े चतुर पुरुष भी तो स्त्रियों के कहने से इनके प्रपञ्च में आ जाते हैं। स्याने लोग होते तो मूर्ख और धूर्त हैं, परन्तु उनकी चतुराई ने स्त्री-पुरुषों को अपने 'मोहनीमन्त्र' और वशीकरण में कुछ ऐसा फाँसा है कि वे खूब माल उड़ाते हैं।

जब लोग मूर्ख होते थे, इनके प्रपञ्चों को नहीं समझते थे, किन्तु यही जानते थे कि इनकी क्रिया ठीक है, तभी से इनके अधिकार में पड़कर, अब तक वे विश्वास करते चले आते हैं। इनका नाम उसी समय और कारण से स्याने (चतुर) पड़ गया है।

स्त्रियाँ इन स्याने भोपों के बहकाने में ऐसी आ गई हैं कि रात-दिन इन्हीं को गुरु बना बैठी हैं। पर ये दुष्ट इनको ऐसा-ऐसा धोखा देकर ठगते हैं, जिसका कुछ ठिकाना नहीं। कोई बात ऐसी करके दिखा देते हैं कि वे स्त्रियाँ उनको परमेश्वर से भी अधिक समझने लगती हैं, उनकी ठगाही में आ जाती हैं।

जहाँ कहीं किसी स्त्री ने इनको अपना बालक या बहू-बेटी (जिन पर वह सौत, भूतनी, चुड़ैल इत्यादि का असर माने बैठी है) दिखायी कि इन्होंने अपना दाँव लगाया।

उन पर तंबाकू उतारकर पीते हैं, और बहाना बनाकर बताते हैं कि इस पर तो अमुक की छाया है। इस पर तो बड़ा भारी सय्यद (शहीद) का फेरा है। इसको साँत का खलल है, अथवा कोई बड़ी भारी चुड़ैल लगी बैठी है, कभी-कभी इनमें से दो-तीन मिलाकर बता दिये। जा कारण पूछा, तो कह दिया, फलाँ वक्त सय्यद (शहीद) की सवारी जाती थी, और यह इस बालक को लिये हुए खिला रही थी। उसी समय से वह इस बालक को देख-कर राजी हो गये हैं। कहते हैं, ले जायँगे। यदि इसका कुछ उपाय करा दोगी तो कदाचित् बच जाय, नहीं तो इस सय्यद के झपेटे में आये हुए बालक बचते नहीं। सय्यद की चद्दर चढ़ाओ, हमारा यह गंडा और तावी इसके बाँध दो। गुरु की कृपा हुई, तो बाल भी बाँक न होगा। अथवा यों बता दिया कि यह भूतों के फेरे में आ गया है। अमुक सय्यद या पीर की चद्दर बोल दो या चढ़ा दो, तो उसकी मेहर से इनके फेरे में से निकल जायगा। फिर इस पर हम चौकी रख देंगे कि आगे यह किसी के 'झपेटे' या 'फेरे' में न आवेगा। तुम्हारे बालकों से मीरों चिढ़ रहा है। यदि उसका मान (...)पाल दो तो तुम्हारे बालक जीने-मागने लगेंगे, । तो ऐसे ही बीमार हो-होकर मर जाया करेंगे।

यदि कोई स्त्री बीमार हुई, तो कह दिया, इसको सौत इस पर आ चढ़ी है। 'बाहरवाली' चुड़ैल लग गई है। दोपहर के समय मीठा खाकर यह आती थी, और वह चुड़ैल वहाँ खड़ी थी, बस, वहीं से इसके संग हो ली। पर कुछ नहीं, हम यह भभूत और मिर्च देते हैं। इनको खाय, छूट जायगी। किसी को यों बता दिया कि शृंगार किये हुए यह बैठी थी, अथवा पान खाये हुए रात्रि में जाती थी, या खीर खाकर दुपहरी में आती थी (अथवा इसी प्रकार और बात बनाकर) सो इस पर 'घूरेवाला' जिन वा 'बुर्जवाला' प्रेत आशक्त हो गया। इसके पास आता जाता है। उसी के मारे यह पीली पड़ी जाती है। उसी ने इसको कष्ट दे रक्खा है। वह अमुक स्त्री को भी लग गया था। पर जब हमको खबर मिली, और इलाज किया, तो दो घड़ी में चिल्लाता हुआ उस पर से उतर गया, और भागा। आज तक नाम भी नहीं लिया। घबराओ मत। हम इस पर भैरों की चौकी बैठा देंगे। फिर गुरु की कृपा से कोई साला जिन्न फिन्न कुछ नहीं कर सकेगा। इसकी खाट को भी हम 'कील देंगे', फिर वह इसकी खाट तक न फटकने पावेगा। यदि किसी स्त्री के गर्भाशय में कुछ रोग होकर रज का प्रवाह हो गया, रोगवश शीघ्र आराम न हुआ और इन

स्यानों को दिखाया, तो इन्होंने बता दिया कि इसका पाँव किसी 'गड़ंत' पर पड़ गया है सो इसका 'पैर कट गया' है। हम इसका 'उखड़ंत' कर देंगे, तो फिर वैसा ही हो जायगा।

ऐसी बातें बनाकर और मूर्ख लोगों को भरमाकर ये लोग अपने ऊपर श्रद्धा करा लेते हैं। जब घरवालों ने आग्रह किया कि आप ही के हाथ से यश होगा, आप ही इसको जीवदान देंगे, तो बोले, हम तो रात-दिन यही करते हैं। पर तुम जानते हो कि देवता की प्रसन्नता पर सब कुछ किया जाता है। जो देवता के भोखन (भोजन) आदि के लिये कुछ खर्च करोगे, तो हाथ-पाँव की मेहनत हम कर देंगे। तुम जानते हो, हम तो पुण्य जानकर कर देते हैं, कुछ लेते नहीं। ईश्वर की राह पर कर देते हैं। अपने कर्मों से चाहे किसी को आराम हो या न हो। पर यदि सच्चे मन से किया जाता है, तो आरा[म] नचे (निश्चय) होगा। गुरु ने वह विद्या बताई है [कि] झूठी कभी पड़ती ही नहीं। सैकड़ों चुड़ैलों और भूतों को बोतलों में बन्द कर करके पृथ्वी में गाड़ दिया है।

इनकी ऐसी बातों और फुसलाने में जब मूर्ख आ जाते हैं, तब उन पर ये अपना हाथ खूब साफ करते हैं। किसी कारण से यदि कुछ आराम पड़ गया, तब तो

फिर स्याने की प्रशंसा में स्त्रियाँ भी डोम और भाट बन जाती हैं और जो आराम न हुआ, तो अपने कर्मों की खोट बताने लग जाती हैं। इनसे ठगाकर फिर दूसरों से इसी प्रकार जा ठगाती हैं, और वे भी इसी प्रकार इनको वैसा ही खूब ठगते हैं। अन्त को कुछ भी नहीं होता, कष्ट सहना पड़ता है, प्राण तक जाते रहते हैं। यदि औषध की जाती, तो कदाचित् आराम भी हो जाता, ठगाना भी न पड़ता और न इतना कष्ट उठाना पड़ता। एक बेर, दो बेर, बरन् दस-बीस बेर देखकर भी मूर्ख लोग इन स्यानों के भ्रमजाल में से नहीं निकलते। कुछ ऐसा मोहनी मन्त्र पढ़ा है कि इन्हीं को परमेश्वर और जीवदानी समझते हैं। आराम हो गया, तब तो स्यानों की कृपा; और जो न हुआ, तो अपने कर्मों का दोष बतलाती हैं। यह नहीं सोचतीं कि आराम न होने पर जो हमारे कर्मों का दोष है, तो आराम होने पर हमारे कर्मों का पुण्य और प्रभाव क्यों नहीं ?

ये स्याने और भगत अपनी बातों का विश्वास मूर्खों के चित्त पर इस प्रकार जमाते हैं कि फिर मिटाये नहीं मिटता। पर मैंने बहुत-सी स्त्रियों के चित्त से इनके जमाए हुए भ्रम और विश्वास को दूर कर दिया है। ये स्त्रियाँ इनकी ठगी से जानकार हो गई हैं और अब

ठगाही में नहीं आतीं। यह बात यों हुई कि मेरे पड़ोस में एक स्याना एक बालक को झाड़ने आया करता था। एक दिन मैं भी देखने को चली गई तो मुझे विश्वास कराने को अब यह कहने लगा कि अब इस बालक का रोग चला। मेरे देवता ने मुझको सपना दिया है कि अब यह बालक अच्छा हुआ। हमारा भोखन (भोजन) खूब-सा मिलना चाहिये। देखो, इस मोरछल में होकर हम इस बालक के रोग को खींचते हैं। यह जब झाड़ चुका, तो दिखाने लगा कि इस मोरछल में इसका रोग उतरता आता है। न मानो तो देख लो। उसने मोरछल की चन्द्रकला पर हाथ फेरकर, एक तिनके को हाथ में लेकर जो उस मोरछल के पास किया, तो वह तिनका उसमें चिपट गया। उस बालक की माता इसको देखकर ऐसी प्रसन्न हुई कि बस, कहा ही नहीं जाता उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि रोग अवश्य उतर चला। पर मुझे विश्वास न आया। मैंने एक मोरपंख को लेकर वैसे ही हाथ फेरा, तो उसी प्रकार तिनका उठ गया। तब तो मैं उस स्त्री से बोली कि ये सब 'ठगविद्या' की बातें हैं। देख ! क्या मेरे भी हाथ में रोग है, जो उतरकर इसमें आ गया। तुझको तो तुच्छ बात का विश्वास आ जाता है। जब मैंने उसे उसके सामने ही

पैसा करके दिखाया, तो उसका विश्वास हट गया और फिर उसने नहीं झड़वाया। एक वेर मैंने यह भी देखा कि एक स्याने ने किसी पर खोर बताई, और उसके पहचानने का यह उपाय बताया कि आज रात्रि को मैं तुम्हें करके यह दिखा दूँगा कि इस पर खोर है या नहीं। हमारी बात झूठ है या सच, जब आँख से देख लो, तब मानना।

रात को वह स्याना आया, और बहुत-सा पाखण्ड रचकर उसने क्या किया कि एक परात लेकर उसमें पानी भरा। तीन ईंटें उसमें रखकर चौमुखा दिया बाला, और बीच में उसे इस प्रकार धरा कि दिये की बत्ती पानी से कुछ ऊपर रहे, जिससे बुझने न पावे। इसके पीछे उसने उन ईंटों पर एक सँकरे मुँह का घड़ा औंधा रक्खा, और कहने लगा, देखो, जो इस पर खोर होगी, तो इस परात का सब पानी इस घड़े में ऊपर चढ़ जायगा। मैं अपने देवता से बिनती करता हूँ। देवता की कृपा होते ही फिर आज ही से आराम पड़ जायगा। कुछ भी खटका या भय न रहेगा। पर देवता की मानता करनी पड़ेगी। उसको 'बलि' चढ़ानी होगी, और 'धार' देनी होगी।

हम सबने कहा, अच्छा, जो कहोगे, सो करेंगी।

भाँति ऐसा ही बचा रहेगा। यह कहते-कहते बहुत-सा प्रपञ्च रचकर उसने अगियारी की और मन-ही-मन में कुछ गुन-गुन करता रहा। जब अगियारी कर चुका, तो उस कपड़े को निकाला। वह बिना जला निकल आया, कहीं आँच का लेशमात्र भी नहीं लगा। स्त्रियाँ और पुरुष बड़े ही अचम्भे में रहे। मैं भी इस अवसर पर वहाँ थी। मैंने सोचा-विचारा तो प्रथम तो कुछ समझ में न आया। अचानक एक पुस्तक मेरी दृष्टि में पड़ गई। उसमें लिखा था कि दुआतशी (spirit) दारू में कपूर को घिस-घिसकर कपड़े में सात पुट दे, सुखाकर आग में डाल दो, जलेगा नहीं। मैंने जो इसको किया, तो सच्चा निकला। तब तो मैंने यह करके स्त्रियों को दिखाया। तब वे कहने लगीं, जो पहले से बता देतीं, तो काहे को दस-बीस रुपये का धन लुटा बैठतीं।

इसी प्रकार एक स्याने ने यह कहा कि मैं अपने पीर की चौकी बैठाये देता हूँ। जो पीर आज आ जायँगे, तो फिर तुमको किसी का कुछ भी भय न रहेगा। उसने क्या किया कि बहुत लीप पोतकर, बहुत-सी मिठाई, फल, फूलों की माला इत्यादि मँगाकर बहुत कुछ प्रपञ्च रचा। फिर एक मिट्टी की गुड़गुड़ी अपने

लड़के से मँगाकर वहाँ रक्खी। उसको ताजा करने के मिस से उसमें पानी-सा कुछ भरा, एक फूल की माला उस पर उसने पहना दी, और कुछ गुन-गुन करता रहा। इतने में उस गुड़गुड़ी में से शब्द आने लगा। स्यानेजी बोले—लो, पीरजी आ गये। जो माँगना हो, माँग लो। मुझे ऐसी बातों का चाव था। यद्यपि मेरी सास मुझको ऐसी बातों के लिये मना किया करती थीं। पर मैं ऐसी जगह जाये विना न मानती थी, अवश्य ही जाती थी। यहाँ भी पहुँच गई। यह सब मैंने देखा; पर पीर का विश्वास नहीं आया। सोचते-सोचते स्मरण आ गया कि विना बुझे हुए चूने में नींबू का रस डालने से ऐसा कौतुक हो सकता है। इस गुड़गुड़ी में चूना भरा हुआ है। उसी का शब्द है। जब यह शब्द मेरा स्याने के कान में पड़ा, तो वह घबड़ाया, और यह कह-कर कि यहाँ पीरजी की अवज्ञा होती है, ऐसे स्थान पर हम कुछ नहीं करना चाहते, जाते हैं। यह कहता-ही-कहता विना कुछ लिये दिये वहाँ से तत्काल चम्पत हुआ, और सबसे पहले उस गुड़गुड़ी ही को मँगवाया। मैंने जब यह खेल करके स्त्रियों को दिखाया, तो बहुत ही प्रसन्न हुईं कि तूने हमको ठगी से बचा लिया।

इसी प्रकार एक पण्डितजी आये, और कहने लगे—

हमको देवी का इष्ट है । जो मनुष्य हमसे कुछ माँगे, तो वह ताम्रपत्र पर देवी की कृपा से उसको लिखा हुआ मिल जाता है । यही देवी के सिद्ध होने का प्रमाण है ।

यह सुनकर बहुत-से मनुष्य उस पंडित के निकट गये, और अपने-अपने मन की उससे कहने लगे । जब देखा कि मनुष्यों की श्रद्धा हमारे प्रति हुई है, तब उसने अपना ढोंग रचना आरम्भ किया । प्रसिद्ध कर दिया कि आज देवी ने हमसे कह दिया है कि आज इच्छा पूर्ण होने का दिन है । इसलिये जिस किसी को जो माँगना हो, सो हमसे माँगो । यह सुन दो मनुष्यों ने उनसे याचना की । पण्डितजी ने कहा— ताम्रपत्र के टुकड़े हमारे पास लाओ । हम उनको देवी के आगे आज रख दें । फिर तुम ले जाकर उनको आठ दिन तक धूप-दीप देना । आठवें दिन जो कुछ तुमको परिचय देवी की ओर से मिलना होगा, ताम्रपत्र पर लिखा हुआ पाओगे ।

उन्होंने वैसा ही किया । ताम्रपत्र ला दिये । पण्डितजी ने दूसरे दिन वे ताम्रपत्र उनको लौटा दिये । उनसे कह दिया कि देख लो, इन पर कहीं कुछ लिखा तो नहीं है । उन्होंने देखा, कुछ नहीं मालूम पड़ा ।

उन्होंने ले जाकर आठ दिन तक धूप-दीप दी, आठवें दिन जो देखा, तो ताम्रपत्र पर उनकी इच्छा के अनुसार लिखा हुआ मिला। मैंने भी देखा। बहुत सोचा-विचारा, कुछ समझ में न आया। पीछे ज्ञात हुआ कि पण्डितजी ने ताम्रपत्रों पर तेजाब से ये अक्षर लिख दिये थे। उस समय देखने पर प्रकट नहीं हुए, चार-पाँच दिन में ये अक्षर उभर आये। तब मैंने उन्हीं लोगों को ऐसा करके दिखा दिया। तब वे मन में बड़े ही पछताये कि हम पण्डितजी की ठगाही में आ गये। ये लोग ऐसे ही ठगते हैं। जो पहले से ज्ञात हो जाता, तो कभी ठगाही में न आते।

जो ऐसी बातें मैंने कई वेर लुगाइयों को करके दिखा दीं, तब उनको विश्वास हो गया, और कह दिया कि आज से हम किसी स्याने, भोपे, भगत इत्यादि की ठगाही में नहीं आवेंगी; क्योंकि उनके झूठ और धोखे भली भाँति करके तूने बता दिये हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि ये निरे झूठे और ठग होते हैं। मोहल्ले की सब स्त्रियों ने फिर तो ऐसी बातें करना छोड़ दिया, और ईश्वर के भजन और प्रार्थना के सिवा और कुछ नहीं करने लगीं। कोई कभी किसी झाड़ा-फूँकी या भगत का नाम न लेतीं जो कभी किसी को कोई रोग होता, तो वैद्य या हकीम

की औषध करतीं, और इन लोगों के फन्द-फरेब में न
पड़तीं । मैंने उनको यह भी निश्चय करा दिया कि
स्त्रियाँ जो अपने ऊपर सौत या चुड़ैल का विचार मान
लेती हैं, जिससे उनके हाथ-पाँव अकड़ जाते हैं, दाँतों
की बत्तीसी भिच जाती है; या इसी प्रकार के और कष्ट
हो जाते हैं कि अचेत पड़ी रहती हैं, बोलती नहीं, दाँत
बँध जाती है, सो मैंने उनको भली भाँति समझा दिया
कि स्त्रियों के बहुत-से रोग ऐसे होते हैं, जिनसे उनकी
यह दशा हो जाती है । जैसे स्त्रीचिकित्सा में मूर्च्छारोग
का वर्णन मैं कर चुकी हूँ । उनसे ये दुःख उठ खड़े
होते हैं। इन रोगों का कारण यह होता है कि जो स्त्रियाँ
अपवित्र रहती हैं; उन्हीं को ऐसे ऐसे रोग हो जाते हैं
या जो क्रोध अधिक रखती हैं या जिनके पति परदेश
में रहते हैं या जिनको काम की अधिक इच्छा होती है,
अथवा इसी प्रकार और-और कारणों से हो जाते हैं
जैसे मिरगी का रोग होता है । इसमें मनुष्य बहुत दे
तक अचेत पड़ा रहता है; पर फिर अपने आप चेत
आने पर उठ खड़ा होता है । जब रोग का दौरा होता
है, तो फिर वैसा ही हो जाता है । बिना औषध ही
मिरगी रोगवाला एक या दो घंटे में अच्छा होकर चेत
में आ जाता है । इसी भाँति कोई रोग ऐसे हैं, जिनमें

टोंट बँध जाती या बत्तीसी भिच जाती है। ये सब औषध करने से दूर हो सकते हैं, न कि इस झूठी झाड़-फूक और उतारे से।

जब वे स्त्रियाँ इन सब बातों को समझ गईं, तब सब को छोड़कर केवल ईश्वर के ऊपर भरोसा करने लगीं। कोई बात होती, तो ईश्वर की कृपा और इच्छा के ऊपर छोड़ देतीं। जो औषध करने योग्य रोग होता तो उसकी पूर्ण चिकित्सा करतीं। पहले उन स्त्रियों में तरह-तरह की लड़ाइयाँ भी हुआ करती थीं। कोई कहती, मेरे लड़के की उसने 'लट' काट ली, कोई कहती, मेरे बालक के ऊपर आँचल डाल गई, कोई कहती, टोटका कर गई, कोई कहती, मेरे दुपट्टे का पल्ला काट लिया, उसके तो बालक हो-होकर मर जाते हैं, मेरे पास आकर वह क्यों बैठ गई, और मेरे कपड़ों से अपने कपड़े भिड़ा दिये, मेरे बालक की टोपी और कुर्ता टोटका करने के लिये चुरा ले गई, कोई कहती, खाने में मेरे बालक को नजर लगा गई। इसी प्रकार कोई दिन ऐसा न होता था कि दो-चार जनी आपस में लड़ाई न लड़ लेती हों। इसी विचार से कोई किसी के पास नहीं बैठती थी, और न कोई दूसरी को पतियाती थी। बरन् एक दूसरी से सदा लड़ती-भिड़ती या कहती-सुनती ही रहती थी,

इसी कारण आपस की प्यार-प्रीति सब जाती रही थी आपस का उठना-बैठना सब बन्द हो गया था। मनों ः अन्तर और बैर पड़ गये थे। आपस में बुराई होने लगी थी। पर जब से उनका विश्वास बदला, और सच्चा परिचय मिला, तो उनके विचार भी बदले। वे पहली बातों को छोड़ बैठीं, और आपस में एक दूसरे से क्षमा की प्रार्थी होने लगीं। अपनी पहले की मूर्खता पर पछताने लगीं कि ना-समझी में कैसी-कैसी बातें हो गईं. आपस में व्यर्थ बैर-भाव उत्पन्न हो गया था! अब उन बातों को मन से निकाल दो, और परस्पर प्यार-प्रीति से रहो सहो। ईश्वर सबका भला करेगा। वही तुम्हारे बालकों को पालता है, और वही हमारों को चीता हुआ किसी के मन का नहीं होता। हमारे कर्मो के अनुसार ईश्वर हमको दुःख या सुख देता है। मौत आती है, तभी कोई मरता है। किसी के चाहे कोई नहीं मरता। ऐसा विचार और आपस में प्यार-प्रीति मानकर रहने लगीं। उसी दिन से अपने बालकों के गंडे, तावीज, बद्धी, यन्त्र इत्यादि सब तोड़कर फेंक दिये। फिर कभी उनका नाम न लिया।

बहुत-सी स्त्रियाँ तो ऐसी समझीं कि वे इस विषय में अपने पतियों को उलटे समझाने लगीं, उपदेश करने

और चतुराई की बात निकालने लगीं। एक बेर का वृत्तान्त है कि एक स्त्री के पति ने आकर कहा—मथुरा के ज़िला में सुरसान एक ग्राम है। वहाँ एक बाबाजी को हनुमान्जी ने सपना दिया है कि हम कोटाग्राम में, जो मथुरा से दो कोस पर, दिल्ली की सड़क पर है, जो चार सौ वर्ष से तालाब में दबे हुए पड़े हैं, हमको जाकर खुदवा और निकलवा लो। हम फलाँ बुर्ज के कोने में हैं। बाबाजी ने आकर वहाँ खुदवाया। उसी बुर्ज के कोने में दस या ग्यारह हाथ नीचे पर हनुमान्जी निकले हैं। मैं भी देख आया हूँ। अभी पूरे निकले नहीं हैं। खुदाई हो रही है। बहुत आदमी देखने को नित्य जाते और भेंट चढ़ाते हैं। बाबाजी से कोई बेटा माँगता है, कोई विवाह की कहता है। कोई नौकरी-चाकरी माँगता है। तू भी चल, दर्शन कर आवें। यह सुन वह स्त्री बहुत हँसी और अपने पति से कहने लगी. आप तो बहुत भूले! जब हनुमान्जी आप समर्थ हैं कि द्रोणाचल को उठा लाये थे, तो क्या इस तालाब में से आप न निकल सके, जो बाबाजी को सपना दिया। और, चार सौ वर्ष से क्या करते रहे! तब से किसी को सपना क्यों न दिया! हे प्राणनाथ! ये सब झूठी बातें हैं। बाबाजी ने यह सब अपने धन्धे की बात

निकाली है। मुझे तो इसका कारण यह ज्ञात होता है कि कुछ वर्ष हुए हों, पचास, सौ या अधिक, उस समय इन बाबाजी के गुरु या गुरु के गुरु इस स्थान पर रहते होंगे, और इन हनुमान्‌जी की पूजा करते होंगे। उस समय का कोई ही आदमी कदाचित् उस गाँव में होगा, जो इस भेद को जानता हो।

इसलिये बाबाजी ने सोचा, चलो विख्यात कर दें कि हमको स्वप्न हुआ है, और इससे हम सिद्ध-प्रसिद्ध हो जायँगे, करामाती हनुमान्‌जी के कारण खूब पुजने लगेंगे। मन्दिर बन जायगा, और हमारे भोजन चलेंगे, मौज उड़ेगी। स्वप्न कुछ भी न दिया होगा। बात असल में इसी भाँति होगी। सो वहाँ जाना केवल धोखा खाना है। परमेश्वर का भजन करो, जो सदा सब स्थान में है, और सबको देता है।

उस स्त्री ने इसी प्रकार कई बेर अपने पति को ऐसी बातों पर समझाया, तब उसके पति के जी में भी बैठ गई।

एक बेर एक ब्राह्मण ने बस्ती से कुछ दूर पर अपने खेत में एक गड्ढा खोद उसमें कुछ चने भर दिये। फिर एक देवी की मूर्ति उसमें सीधी गाड़कर दो-दो हाथ मिट्टी ऊपर से डाल दी, और प्रसिद्ध कर दिया कि सावन के महीने में एक देवी मेरे खेत के किसी स्थान

में निकलेगी। मुझको स्वप्न दिया है; पर यह नहीं बताया कि किस दिन निकलेगी। लोगों ने उसकी बात को कुछ सत्य और कुछ झूठ माना; क्योंकि वह देवी का भगत भी था। जब सावन के महीने में एक दिन बहुत मेह बरसा, तो यह देवी की मूर्ति निकल आई। कारण यह था कि वर्षा का पानी जो उस गड्ढे में गया, तो चने भीजकर फूले, और वह मूर्ति ऊपर को उकसी; पर केवल मस्तक-ही-मस्तक निकला। लोगों ने यह देखकर भगत की बड़ी बड़ाई की। और उसका कहना मानने लगे। सबने मिलकर उसका मन्दिर बनवाना चाहा। कहा, देवी को खोदकर सब निकाल लें। पर ब्राह्मण ने कहा, नहीं, देवी की बड़ी इच्छा है कि इतनी ही रहूँ। उसकी इस बात को भी सब मान गये। पर वहाँ पर एक पुरुष मूर्तिपूजा न माननेवाला भी था। उसने इस भेद की खोज की। पता लगा लिया, और सबसे कह आया। बहुतों ने उसकी बात मान खोदकर देखा, तो सब भेद खुल गया।

भगतजी फिर तो उस घड़ी से मुँह छिपाकर, न जाने, रात ही को कहीं चले गये, और अपना घर-बार भी छोड़ गये।

इस पाप का फल यह हुआ कि उनका घर-बार

(बाहर) खेत, धरती दूसरे लोगों ने ले ली। इसलिये बहन! मैं तुझसे कहती हूँ कि तू कभी ऐसी मूर्खता क बातों में मत पड़ना। मैंने तुझे थोड़े ही में सब समझा दिया है। सीखना तो इसका बहुत ही बड़ा है, कहाँ तक कहूँ! दो-चार दृष्टांत तुझे बता दिये हैं। तू ईश्वर को छोड़ कभी किसी अन्य देवता को मत पूजना। इन भूत, प्रेत, चाण्डाल, पिशाचों के फन्दे में मत पड़ना। धर्म के विषय में मैं तुझसे यही कहती हूँ कि तू इनसे बचना और केवल अपने ईश्वर ही को पैदा करनेवाला, पालने-वाला, सुख-दुःख का देनेवाला, मारने और बचानेवाला, हमारी प्रार्थना सुननेवाला, संकट हरनेवाला, आनन्द और सम्पत्ति देनेवाला, विपत्ति और कष्ट में सहाय करनेवाला जानना। वही एक परमेश्वर है जो जगत् का पालनकर्त्ता है, दूसरा कोई पूजा या वन्दना के योग्य नहीं। स्त्री और पुरुष अपना मन कहीं और न भटकावें। केवल उसी की ओर ध्यान रक्खें और उसी की शरण लें।

नीति

बहन! आज मैं तुझको कुछ नीति भी बताये देती हूँ। तू यह नहीं जानती कि नीति किसको कहते हैं। सो पहले यही बताती हूँ।

नीति उसे कहते हैं, जिसके अनुसार वर्तने या काम करने से अपना बिगाड़ न हो, दूसरे की घातों से बची रहे। सबकी भली और प्यारी बनी रहे। किसी से धोखा न खा जाय अथवा ठगा न जाय, अच्छी-अच्छी बातों को ग्रहण करे, और बुरी बातों को छोड़ अपना काम न बिगड़ने दे, चतुराई सीखे, मूर्खता तजे इत्यादि। ऐसी-ऐसी बातों के करने को नीति कहते हैं। यह नीति तीन प्रकार की है। जैसे—

(१) आत्मिक या धर्मनीति—इसका यह अभिप्राय है कि अपने को सुख मिले, अपनी उन्नति हो, दुःख से बची रहे और आदर-मान पावे।

(२) राजनीति—इसका यह अभिप्राय है कि किसी के छल और कपट में न आ जाय। राजदण्ड आदि से रक्षित रहे। चतुराई से समयोचित काम करे। अपना काम न बिगड़ने दे, जैसे बने ; बना ले।

(३) सामाजिक नीति—ऐसे कार्य करने को कहते हैं कि अपने को कोई बुरा न कहने पावे, वरन लोग प्रशंसा करें और प्रेम-प्रीति मानें। अब तुझको—क्रम से ये तीनों बताती हूँ—

(१) आत्मिक या धर्मनीति

(१) (२) (३) (४)
द्वै निहचै करि एक सों, चहुँ करि त्रय बस आन।
(५) (६) (७)
पाँच जीत छः जान अरु, सात छाँड़ सुख मान॥
मुनि जानै सब धर्म को, तजै कुमति सुनि सार।
सुनि-सुनि ज्ञानी होत है, सुनत मोक्ष अधिकार॥
स्तुति निन्दा कोऊ करै, लक्ष्मी रहै कि जाय।
मरैं कि जियैं न धीर जन, धरैं कुमारग पाय॥
छमातुल्य कोउ तप नहीं, सुख संतोष समान।
तृष्णा सम कोउ व्याधिनहिं, धर्म दया सों आन॥
पेट भरे अपमान सहि, सुख की शोभा जाइ।
तन दुख सहि जो धृति गहै, नित-नित श्री अधिकाइ॥

नारी

सांसारिक सब सम्पदा, तिनमें उत्तम नारि।
जानो पूरब पुन्य-फल, मिलै जाहि सुभनारि॥
जो नारी सुचि अरु चतुर, भर्ता के अनुसार।
नित्य मधुर बोलै सरस, लक्ष्मी ताहि निहार॥

---

(१) धर्म, अधर्म। (२) बुद्धि। (३) साम, दाम, दण्ड, भेद। (४) मित्र, उदास, शत्रु। (५) पंचइन्द्रिय। (६) द्विविधा, विग्रह, सन्धि, आश्रय, आसन, धरि। (७) काम, क्रोध, मद, लोभ, तृष्णा, मत्सर, मोह।

पति के सँग जीवनमरन, पति हरषे हरषाइ।
नेहमयी कुलनारि की, उपमा कही न जाइ ॥
क्रूर भूप, कलहिन तिया, और कुटिल परधान।
ये तीनों इक छिनक में, करैं नास धन मान ॥
भूमि पस्यो जल सुचि भयो, पतिसेवक सुचि नारि।
प्रजा छेमकर राज सुचि, विप्र सँतोष सुधारि ॥
विप्र अँगीकृत दृढ़ भयो, धर्मी दृढ़ राजान।
पतिसेवक नारी जु दृढ़, दृढ़ तृन धूल समान ॥
नदीतीर जो तरु लग्यो, बिन अंकुस जो नारि।
मन्त्रिहीन जो राज ये, तिहुँ विनसैं निरधारि ॥
क्रियाहीन सब ज्ञानहत, नरहत मूढ़ गँवार।
नायक बिनु सेना जु हत, नारी बिनु भर्तार ॥
असन्तोष द्विज नष्ट है, सन्तोषी भूपाल।
वेश्या विनसै लाज सों, लाज तजे कुलबाल ॥
नृप उदार, मन्त्री सुघर, और पतिव्रत नारि।
सदा सुखद ये तीनि हैं, बुधजन कह्यो विचारि ॥
पण्डित की नारी भई, पर घर चित्त बसाइ।
लाज तजै निन्दा भरी, जरा बढ़ै अधिकाइ ॥
सेवक सठ, नारी कुटिल, नृपति कृपन, खल मीत।
करौ भूलि विश्वास जनि, इनको भीति समीत ॥
नारी दुष्टा, मित्र सठ, उत्तरदायक भृत्य।

सर्प सहित गृहवास पे, निश्चय जानो मृत्यु ॥
वचन-पलट नृप, कलहि तिय, और चटोरो पूत
ये तीनों दुख देत हैं, समुझि लेउ मजबूत ॥

पुत्र

सुभ तरुवर जो एकही, फूल्यो, फल्यो, सुवास।
सब वन आमोदित कियो, सुकुल सुपूत सुपास ॥
सुत गुनज्ञ हो एक ही, सो न होई गुनहीन।
एक चन्द्र की ज्योति ज्यों, सहस तार नहिं कीन ॥
कह जाये बहु सुतन ते, शोकरु दुख के धाम।
कुल धार्य सो एक ही, भल कुल को बिसराम ॥
सोवे निर्भय सिंहिनी, इक सुपुत्र को पाय।
दस कुपुत्र के साथ ही, गदही लादी जाय ॥
जैसे एक कुवृत्त की, अग्नि होत वन नास।
तैसे एक कुपुत्र सों, होत सकल कुल नास ॥

विद्या

उत्तम विद्या लीजिये, जदपि नीच पै होय।
परयो अपावन ठौर में, कञ्चन तजै न कोय ॥
माता बैरिन, पिता, रिपु, जिन न पढ़ाये बाल।
सभा माहिं सोभित नहीं, जिमि बकनिकट मराल ॥
ब्राह्मण को गुरु अग्नि है, विप्र वर्न गुरु जान।
पत्नी के पति ही गुरू, विद्या सबकी मान ॥

विद्या देती विनय को, विनय पात्रता जोग।
जिहि ते धन धनते धरम, जिहि सुख भोगत लोग॥
जाके विद्या, दान, तप, धर्म, सील, नहिं ज्ञान।
सो नर धरती-भार है, घूमत मृगा समान॥
विद्याजुत सुवरन सदृश, जहाँ जाइ तहँ मान।
मूर्ख दुखी निज नगर में, चाहत देस बिरान॥
विद्या-धन सम और नहिं, जग में कहत सुजान।
विद्या ही से मनुज लघु, होवैं भूप समान॥
धन करिके जो हीन, हीन न ताकां कहत बुध।
विद्या बुद्धि-विहीन, हीन सोई सब वस्तु में॥
अति उतावलो होइ, गुरुसेवा कबहुँ न करै।
चहै बड़ाई सोइ, ये विद्या के तीन अरि॥

सत्य

सत्य स्वर्ग-सोपान, जैसे बोहित उदधि को।
ता सम और न जान, जानत सकल सुजान हैं॥
जहाँ सत्य तहँ धर्म है, जहाँ सत्य, तहँ जोग।
जहाँ सत्य, तहँ श्री रहत, जहाँ सत्य तहँ भोग॥
सत्य नाव करि जो चढ़ै, वह भवसिन्धु अपार।
आप बचै अरु और को, देवे पार उतार॥

क्षमा

उत्तम धन छाँड़े क्षमा, हिये धरे अति रोष।

जान-बूझ यह आपको, बड़ो लगावत दोष॥
नर को भूषन रूप है, रूपहु को गुन जान।
गुन को भूषन ज्ञान है, क्षमा ज्ञान को जान॥
क्षमावन्त को जान, लोग कहत असमर्थ हैं
सो यह दोष न मान, क्षमिवे को धन जानिये॥

संतोष

हे संतोष सुसम्पदा, हमें करो धनवान।
यद्यपि जग में बहुत धन, नहिं कोउ तोहिं समान॥
नहिं लखपति, नहिं कोटिपति, नहिं कुबेर को होइ।
संतोषी जो पाय सुख, रहै कौन में सोइ॥

गर्व

स्वान लेत जूठन लपकि, तापर करत गरूर।
सौ को दै भच्छन करत, धीर धीर गज पूर॥
जाको जौं-पुष्टी नहीं, होत बड़े नृपराज।
छोटे मोटे होत सब, सोच गर्व नहिं काज॥

मृत्यु

इन्द्र भये, धनपति भये, भये शत्रु के साल।
कल्प जिये सोऊ भये, अन्त काल के गाल॥
जो जन्मत, सो मरत है, यामें नहिं संदेह।
चहै आज चहै सौ बरस, पीछे फिर एवा नेह॥
कोउ परसों, नरसों कोऊ, मरत एक कोउ आज।

रहै न कोउ चिरकाल लौं, यहि विधि जगत समाज ॥
जिहिदिन गर्भ पर्यो यह प्रानी। मृत्युहुतादिनतेलिपटानी॥

आराधना

चलत-फिरत बैठत-उठत, सोवत-जागत आदि।
ताको नित ध्यावत रहो, जो प्रभु परम अनादि ॥
ब्राह्म * मुहूरत में उठहु, करहु गुरू को ध्यान।
भजन करहु जगदीश को, जाते सब कल्यान ॥

धन

दान, भोग अरु नास, तीनि होत गति द्रव्य की।
नाहिंन द्वै को वास, तहाँ तीसरो बसतु है ॥
दुखी आर्त अरु दीन, नास्तिक, उन्मद, आलसी।
इन्द्रिन के आधीन, ता घर रहै न लच्छमी ॥
दान-भोग से हीन जो, कृपन करे धन गोप।
दण्ड जोग सो अधम नर, करै नृपति तेहि लोप ॥
अमिल द्रव्यहू जब ते, मिलै सुअवसर पाय।
संचितहू रच्छा बिना, आप नष्ट ह्वै जाय ॥
क्रूर कर्म ते होत धन, सकुल बिनासै हाल।
सुधरम ते धन जोरिये, सो निबहै बहु काल ॥
द्वै प्रकार ते होत है, धन को नास निदान।
दानपात्र अपमान करि, देत अपात्रहि दान ॥

* दो घड़ी रात रहे ब्राह्ममुहूर्त होता है।

द्रव्य पायकैं देत नहिं, और करै नहिं भोग।
निश्चै ताकी सम्पदा, होत और के जोग॥

विभव

और मदन ने विभव-मद, अति पापिष्ठ लखाय।
वह उतरै अपने समय, यह बिनु विपति न जाय॥
उद्यम, संजम, चतुराई, करै समय लखि काज।
अप्रमाद, धीरज, सुमति, विभव-मूल महराज॥

सुख

सुतवस हैं पुनि भक्ति अरु, सहज वचन वस नारि।
अल्प विभव संतोषपन, यह स्वर्ग निरधारि
भोग्य सु भोजन,सक्तिपुनि, अरु सुन्दर भरतार
गृह-विभूति दातारपन, छः मोटे तप धार।
पुत्रि चरित तिय हितकरन, दुख सुख मित्र समान।
मनरंजन तीनों मिलैं, पूरव पुन्यहि जान॥
बहुसुत, विद्या, सील,बल, कुल, धन, सत्य, स्वरूप।
चित्र भाविनो सूरता, स्वर्ग जान दस भूप॥
असंतोष जाके सदा, क्रोधी संकावन्त।
ईर्षा-सहित मलीन मन, पराधीन जीवन्त॥
ये छः नर या लोक में, यहै नहीं सुख साज।
दुःखी नित्यहि जानिये, महाराज कुकराज॥

पूर्व पुण्य

बन पुर है, जग मित्र है, कष्ट भूमि है रत्न।
पूरब पुन्यहिं पुरुष के, होत इते बिन यत्न॥

इन्द्रियाँ

पाँचों इन्द्रिय मन सहित, जीति करै बस कोय।
पाप न लहै अनर्थ तिहिं, कहो कहाँ ते होय॥
नर के इन्द्रिय पाँच जो, एक खुले नरवीर।
बुधि ताही मग स्रवत है; मसकछिद्र ज्यों नीर॥
जीभ न ताके बस रहै, होत दुखी मतिहीन।
जिमि कटिया के मांस लगि, प्रान तजत है मीन॥
(१)
गज, कुरंग, झष, भृंग पतंगा। बिनसैं एक एक के संगा॥
जो एकहि ये पाँचों लागैं। ताको क्यों न आपदा पागैं॥
तजि इन्द्रिय प्रिय विषय को, शान्तवृत्ति दृढ़ धारि।
छुधा विकलता से बचै, नहिं मन बढ़ै विकारि॥
क्रोध कबहुँ नहिं कीजिये, होइ क्रोध ते हानि।
हित-अनहित नहिं लखिपरत, है यह दुख की खानि॥

---

(१) हाथी काम इन्द्रिय के, हरिण श्रोत्र (कान) इन्द्रिय के, मीन रसना इन्द्रिय के, भ्रमर घ्राण इन्द्रिय के और पतंग चक्षु इन्द्रिय के वश होकर प्राण तज देते हैं; क्योंकि इनमें यही एक-एक इन्द्रिय प्रधान है। परन्तु मनुष्य में पाँचों इन्द्रियाँ प्रधान हैं। यदि उनके वश में पड़ जायगा, तो कुछ भी ठीक न रहेगा। इसलिये इन्द्रियों ही को अपने वश में रखना उचित है।

काम क्रोध अरु लोभ ये, खुले नरक के द्वार।
ताते इन तिनहून को, करैं सदा परिहार॥
कामक्रोध ये मच्छ कराला। रुकत न अल्पबुद्धि के जाला।
निकसत इन्द्रिय छिद्रन पाई। याको ज्ञान गिलत सतमाई॥
देव, विप्र, राजा, रमनि, रोगी बूढ़ो, बाल।
निग्रह कीजे क्रोध को, इनसों सदा नृपाल॥

आत्मरक्षा

गुरु छाया अरु तात की, बड़े भ्रात की छाँहि।
राजमान छाया गहर, दुर्लभ ये जग माँहि॥
आत्मा को आधार अरु, साचही आत्मा जान।
निज आत्मा को भूलि हू, करिये नहिं अपमान॥

आलस्य

आलस वैरी बसत तन, सब सुख को हरि लेत।
त्यों ही उद्यम बन्धु सम, किये सकल सुख देत॥
कर्म हेतु हरि तन दियो, ताते कीजै काज।
दैव थापि आलस करैं, ताको होइ अकाज॥
श्रम कीने सुख मिलत है, बिन उपाय नहिं भोग।
दैव-दैव करि आलसी, भोगत हैं दुख रोग॥
आलस तजि मतिमान, बुद्धि फूल जो विनय को।
गहिये कर सुभ ज्ञान, यह मति मनुमहराज की॥
आलस दोष महान, देखो फल कैसो भयो।

जाते ऊँट अयान, मरन लह्यो निज करम ते ॥

परिश्रम

स्रम सों विद्या पाइये, स्रम ही सों धन होइ।
स्रम ही से सुख होत है, स्रम बिनु लहै न कोइ ॥
स्रम ही सों अधिकार पुनि, लहत मनुज अधिकाइ।
बिनु स्रम कारज होइ नहिं, स्रम सों दुःख नसाइ ॥
स्रमी पुरुष सम्पति लहै, स्रमी सुधन अरु धाम।
स्रम ही सों या जगत में, ज्ञान लहै अभिराम ॥
स्रम कीने धन होत है, धन ही सुख को मूल।
व्यवसायी अरु चतुर नर, उद्यम को मति भूल ॥
द्वै जन ये या जगत में, लहैं न सोभा साज।
उद्यम तजे गृहस्थ अरु, जती करै सब काज ॥
कंकन ते सोहत न कर, कुण्डल ते नहिं कान।
चन्दन ते सोहत न तन, गुन ते सोभित जान ॥

ग्राह्य गुण

अनसूया धीरज छमा, अनालस्य अरु दान।
सान्ति सहित इन छः गुनन, तजै न नर मतिमान ॥
कुल कृतज्ञता, दान, दम, बुद्धि पराक्रम पाठ।
बहु सुनिबो, बहु भाखिबो, तेज बढ़ावत आठ ॥
क्रोध हर्ष के वेग को, जे थाँभत निज चित्त।
मोह न लहैं विपत्ति में, तहाँ बसत श्री नित्त ॥

अनसूया धीरज छमा, मृदुता सरल सुभाय।
मित्रन को सनमान गुन, इनते बाढ़त आय॥
आयुर्बल जस सौख्य धन, पुन्य पुत्रादि प्रभाव।
वृद्ध होत जेहि कर्म ते, सो सेवहु करि भाव॥
विद्या, उत्तम कुल जनम, बहु धन, रूप उदार।
नीचन को उन्मादकर, संतन को सिंगार॥
तुलसी या संसार में, चार वस्तु हैं सार।
सत्य वचन, आधीनता, हरि सुमिरन, उपकार॥
धर्म, अर्थ, अरु काम, भली भाँति सेवत जु नर।
ये तीनौं अभिराम, दुहूँ लोक तिनको मिलत॥

त्याज्य दोष

तजत बड़े हू अर्थ, निरखि अनीति अधर्मजुत।
सुख ही दुःख समर्थ, छोड़त अहि ज्यों केंचुली॥
द्वै कंटक तीखन महा, देह सुखावन अर्थ।
अधन करै चित कामना, कोप करै असमर्थ॥
हरै परायो द्रव्य अरु, परपतिहित अनुकूल।
छोड़ै सेवा करत को, ये तीनों क्षयमूल॥

पण्डित के गुण

चाह न करै अलभ्य की, गत को सोच न होइ।
मोह न लहै विपत्ति को, पण्डित कहिये सोइ॥
गुन में धरै न दोष चित, सर्व भूत करि काज।

रखै आरज कर्म ते, सो पण्डित महराज ॥
पाय बड़ो ऐश्वर्य अरु, विद्या अर्थ समाज ।
विनय सील छोड़ै नहीं, सो पण्डित महराज ॥

सज्जन के गुण

सत्पुरुषन की रीति, सम्पति में कोमलहि मन ।
दुख हू में यह रीति, वज्र समानहि होत तन ॥
ससि कुमुदिन प्रफुलित करत, कमल विकासत भानु ।
बिनु माँगे जल देत घन, त्यों ही सन्त सुजानु ॥
पुहुप गुच्छ सिर पै रहै, कै सूखे बन माहिं ।
मान ठौर सतपुरुष रहि, कै सुख दुख धन माहिं ॥
लोक हेत धारत धरा, निरझर पेड़ पहार ।
चहिय सोइ बिधि साधु कहँ, करै सदा उपकार ॥

मूर्ख के लक्षण

जो सेवै परअर्थ को, अपने अर्थहि खोइ ।
मिथ्या कहि मित्रहि छलै, मूरख कहिये सोइ ॥
छाँड़ै वांछित काज को, पचै अवांछित चाहि ।
बैर करै बलवन्त सों, मूरख कहिये ताहि ॥
लखै अनर्थहि अर्थ में, अर्थ अनर्थहि जानि ।
सो मूरख संसार में, लेत दुखहु सुख मानि ॥

पाप-पुण्य

तीनि बरस त्रयमास अरु, तीनि पाख दिन तीन ।

पातुषत कहें उग्र को, यही होत फल योग ॥

फुटकर

मानवीय निरकाम को, मन कर वचन बढ़ाय।
मंद मूढ़ हो गमिये, काम पड़े हो माय॥
नहिं आदर जिहि देश में, पुनि न बान्धव कोइ।
नहिं विद्या आवै जहाँ, इक दिन बसै न कोइ॥

(२) राजनीति

द्वैधभाव आश्रय कलह, आसन सन्धि प्रयान।
राजनीति मत ये कहै, षट्गुन जानहु जान॥
जानै अरि के भेद को, अपने लखै न कोइ।
कछुआ सम निज अंग को, राखै सब विधि गोइ॥
बगुला सम सोचै अरथ, पौरुष सिंह-समान।
गहै अर्थ भिड़िया-सदृश, भागै ससा-समान॥
(१) (२) (३)
इकहू बक अरु सिंह ते, कुक्कुट तें पुनि चार।
(४) (५) (६)
पाँच कागतें स्वान षट, खर तिहि सिच्छा धार॥

---

(१) मौन साध के रहना। (२) समय पड़े कार्य करना (३) प्रातः उठना, युद्ध करना, बन्धु विभाग देना, भोजन ढूँढ़ना। (४) गुप्त मैथुन, धृष्टता, अवसर देखना, अप्रमाद, विश्वास न करना। (५) बहुत भौंकना, थोड़े में सन्तुष्ट, सुख की निद्रा, झटके से जाग उठना, स्वामी की भक्ति, शूरता। (६) परिश्रम से न थकना, गरमी-सरदी न गिनना, सदा सन्तोषी रहना।

शत्रु

अवसर रिपु सों संधि कर, अवसर सत्रु विरोध।
कालछेप परिडत करै, कारज कारन सोध॥
सम्मुख आये सत्रु को, जीति लेइ धन धाम।
मरिवे हू में स्वर्ग सुख, लहत वाम अभिराम॥
अरि छोटो गनिए नहीं, जाने होति विगार।
तृनसमूह को छनक में, जारत तनिक अँगार॥
का रस में का रोस में, अरि सों जनि पतियाय।
जैसे सीतल तप्त जल, डारत अग्नि बुझाय॥
आवे अरि जो दाँव में, निश्चय हनिये ताइ।
दया न उर में कीजिये, फिर वह बल वढ़ि जाइ॥
जद्यपि अरि मृदु है रहै, नहिं कछु लखे निवाह।
जब तक दाँव न आवहीं, मिटै न अन्तस डाह॥

नीति

सुख दिखाइ दुख दीजिये, खल सों लरिये काहि।
जो गुड़ दीन्हे ही मरे; क्यों विष दीजै ताहि॥
जो रीझे जिहि भाँति सों, तैसे ताहि रिझाव।
पीछे जुक्ति विवेक सों, अपने मत पर लाव॥
विपति धार, सम्पति छमा, सभा माहिं सुभ वैन।
युधिविक्रम; जसमाहिंरुचि, ते नरवर गुन-ऐन॥
जो वर्तै जिहि रीति, तासों त्यों ही वर्तिये।

सुद्ध साधु सों प्रीति, कपटी सों कीजै कपट ॥
अपने-अपने लाभ को, बोलत बैन बनाय।
वेस्या बरस घटावही, जोगी बरस बढ़ाय।
काम परे ही जानिये, जो नर जैसो होय।
बिन तायें खोंटो खरो, सोनो लखै न कोय ॥
विपति बराबर सुख नहीं, जो थोड़े दिन होय।
इष्ट मित्र बन्धू जिते, जानि परैं सब कोय ॥
समय न चूकै, नै चलै, दान जथाविधि देइ।
भली भाँति मुख ते कहै, स्वबस सबै करि लेइ ॥
बड़े बंस जनम्यो जो नर, पावक, विष, भुजंग
ये न कबहुँ अपमानिये, अमित तेज इन संग ॥
गूढ़ मंत्र कोऊ करै, तहाँ न जइये जान।
कबहुँ न कीजै नीच सों, गूढ़ मंत्र हितमान ॥
राजा, रमनी, अग्नि, गुरु, सत्रु, सर्प, सुख-भोग।
आयुध को विस्वास जिय, करत न पण्डित लोग ॥
मूरख मीत, अमीत अरु, पण्डित चञ्चल-चित्त।
इनसों कबहुँ न मंत्र को, भेद भाखिये मित्त
जिहि नर को कुल सील अरु, विद्या जानी नाहिं।
कवि तिनके विस्वास को, करै न कहुँ मनमाहिं ॥
मुदित मिलापी जानि कै, मत कर भुगल विसास।
बहुदिन सेवा सर्प ज्यों, अन्त डसै गहि गास ॥

कारज आछो अरु बुरो, कीजै बहुत विचार।
बिना विचारे करत ही, होत रार अरु हार॥
बंचक बेस्या बानियाँ, ये बकार दुख देत।
तुरत नास धन तन करैं, तनिक द्रव्य के हेत॥
बनिता, बपु, बानी, बिनय, बस्तर, बुद्धि, बिबेक।
ये बकार सुख देत हैं, बुध जन कह्यो सटेक॥
जहाँ न दीखैं पाँच ये, तहाँ न कर अनुराग।
भय लज्जा अरु लोकगति, चतुराई अरु त्याग॥
भले बुरे जहँ एक से, तहाँ न बसिये जाय।
ज्यों अनीतिपुर में बिकै, खर गुरु एकै भाय॥
काम परे चाकर परखि, बन्धु दुःख में काम।
मित्र परखि आपद समै, बिभव हीन लखि बाम॥
जो देखे नहिं जीत, जद्यपि भूमि सुहावनी।
तजे सकल यह रीत, आतमरच्छा के लिये॥

वचन

लागत तीर सरीर में, तऊ घाव पुरि जात।
कुवचन क्षत क्योंहु न पुरत, दीसत नाहिं पिरात॥
सजै न उद्धत बेस अरु, मुख ते बड़ उचरै न।
सो सबको प्यारो लगै, निज बिक्रम बलऐन॥

समानता

कीजै आप समान सों, बैर, प्रीति, ब्यवहार।

कबहु न कीनें नीच सों, परचा कथा बिचार॥

कीर्ति

जो न करत कबहूं कलह, अन्य प्रयोजन अर्थ।
तिनकी कीरत जग चढ़त, रञ्च न होत अनर्थ॥
नम्र चतुर मित मान नर, सरल कृतज्ञ सुकोर।
लहैं बड़ाई जगत में, जदपि निर्धन होइ॥

शील

संकटहू में ना करै, जो अनकरनो काज।
ताको आरज सील कवि, भाखत हैं महराज॥
पर-दुख लखि हरषै नहीं, निज सुख में न सुखाय।
आर्य सील सो जानिये, कबहूँ नहिं पछिताय॥

साखी

वैद्य, कुचाली, चोर, ठग, सत्रु, मित्र विख्यात।
व्योपारी जु जहाज को, साखी करै न सात॥

रक्षा

दीन, वृद्ध, बालक, त्रिया, बिन अपराध अनाथ।
इनकी रच्छा कीजिये, चित्त बुद्धि-बलसाथ॥

बुद्धिमानी

जाति धर्म अरु समय-गति, जानै देसाचार।
अगली-पिछली बात को, जो चित करै बिचार॥
होनहार आगम लखै, जानै सब व्यवहार।
जहाँ जाइ तहँ होइ वह, सब ही को सरदार॥

जहँ मूरख को मान है, पण्डित को अपमान।
बसत न ऐसे देस में, जे नर बुद्धिनिधान॥

गुण

जहाँ न जाको गुन लहै, तहाँ न ताको काम।
धोबी बसिकै कह करै, दीगम्बर के गाम॥
गुन पूजौ तजि रूप को, गहौ सील कुलचाल।
गहौ सिद्धि विद्या लहौ, बिना भोग धनपाल॥
मुग्धपूज्य निज धाम में, प्रभुपूजित निजवग्र।
भूपति पूज्य स्वदेस में, पूजत गुनी समग्र॥
गुन गुनज्ञ सँग होत गुन, निर्गुनीन सँग दोस।
जिमि दीनन को मिष्ट जल, होत समुद्रन ओस॥

त्याज्य दोष

मद्यपान जूवा कलह, अरु बहुतन सों बैर।
अरु करिबो तिय पुरुष को, अन्तर चुगली घर॥
पतिपत्नी को वाद अरु, नृप को दोष कुचाल।
अनकरने इतने कहे, कुरुकुलतिलक नृपाल॥

बल

धर्म अल्पहू सेइये, सूच्छम गति टर आनि।
निर्बल पै बल साजिये, सो बल अल्प बखानि॥
सुश्रूषा बल तियन को, नृपबल दण्ड बखान।
दुष्टन को बल मारिबो, छमा साधुबल जान॥

अधम नर

मलिन काय निज करै, सदा झगराई ठानै।
बहुत जु बोलै झूठ, भक्ति कबहूँ न उर आनै।
करै नीच सौं नेह, चतुर आपहि अति मानै।
इनको तजिये संग, इते नर अधम बखानै॥

दुष्ट

दुर्जन को विश्वास मन, कबहूँ न कीजे भूल।
यह विनास को करन है, तदपि होइ अनुकूल॥
मिष्ट वचन कहि आदि में, पीछे करै विनास।
ऐसे नर के संग तें, लहि अपजस उपहास॥
फूलैं, फलैं न बेन, तदपि सुधा बरसहिं जलद।
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं विरंचि सम॥
मूरख को उपदेस ते, बढ़त कोप नहिं सांति।
दूधपान हू ते बढ़त, विषधर विष बहुभांति॥
काव्यशास्त्र-आनन्द ते, रसिकन के दिन जात।
मूरख के दिन नींद में, कलह करत उतपात॥

दुःखद

अर्थ, धर्म को छाँड़ि कै, इंद्रिन के बस होइ।
काम, धाम, धन, मान को, नासु लहै नर सोइ॥

संग

जैसी संगत सेइये, बसिये जैसे बास।
जैसे नर चाहै भयो, तैसो होइ प्रकास॥

उत्तम ही को सेइये, मध्यम समय प्रमान।
अधम न कबहूँ सेइये, जो चाहै कल्यान॥
करत नहीं उपदेश कछु, तऊ करौं सतसंग।
सत्पुरुषन की बात हू, देत चित्त को रंग॥
सहवासी बस होत नृप, गुनकुल रीति विहाय।
नृप जुवती अरु तरुलता, मिलत प्राय सँग पाय॥
संगति कीजै साधु की, जो पण्डित बुधिमान।
साधारन हू वचन में, निकसत मुख ते ज्ञान॥
चाँटि न खाय कठोर, लज्जाहीन, कृतघ्न नर।
दुष्टआतमा चोर, इनको संग न कीजिये॥

मित्र

मीत होत बहु आय, धन दै मीठी बात कहि।
जे हित मंत्र उपाय, मिलैं मीत नेई सही॥
मूरख, क्रोधी, साहसी, अरु अभिमानी होइ।
धरम रहित सों मित्रता, पण्डित करै न कोइ॥

लोभ

जैसे ऊपर भच्छ लखि, मच्छ बंसी विधि जात।
तैसे लोभी अर्थ तकि, लखै न आतमघात॥
लोभ महारिपु देह में, सब दुःखन की खान।
पापमूल, अरु मानहर, तजैं ताहि मतिमान॥
लोभ-विवस नर करत हैं, मित्र-विप्र-गुरु घात।

देहधर्म कुलधर्म अरु, तजै तुरत रिपु-मान ॥
क्रोध, काम, अहंकार ते, लोभ महाबलवान ।
नाहिं वश ह्वै तनन है, दुर्लभ प्रिय नर मान ॥

तृष्णा

मैन निकुर तन दमन बिन, भयो बदन ज्यों कूप ।
गात सबै सिथिलित भये, तृष्णा तरुन सरूप ॥

द्यूत

सुनी पुरातन बात, जुआ कलह को मूल है ।
हाँसी हू मे तात, ताते जुआ न खेलिये ॥

फुटकल

उत्तम नर अपमान ते, डरपत सील-समुद्र ।
मरिबे ते मध्यम डरें, वृत्तिनास ते क्षुद्र ॥
उपजत श्री सुभ कर्म ते, बढ़त बुद्धि सों सोइ ।
चतुराई ते मूल गहि, संजम ते दृढ़ होइ ॥
रूप तेज बलवान वर, श्रीसुचि परम उदोत ।
तिय सराहि सुकुमारता, स्नान किये दुति होत ॥
बुद्धि-वृद्धि वय-वृद्धि अरु, विद्या-वृद्धि सुजान ।
द्रव्य-वृद्धि इनको करत, मूढ़न लौं अपमान ॥
बन में, रन में, दुर्ग में, विषम आपदा माहिं ।
जिनके धीरज मुख्य है, तिनको कछु भय नाहिं ॥
या जग में ह्वै कर्म करि, नर पावै अति चैन ।

आश्रय करै न नीच को, कहै न कटुये बैन ॥
सुलभ पुरुष संसार में, कहैं सुहाती बात।
दुर्लभ अप्रिय पथ्यवच, वक्ता श्रोता तात ॥
जो ध्रुव वस्तुहि छोड़िकै, सेवत अध्रुव बात।
अध्रुव प्रथमहि नष्ट है, ध्रुवहु नष्ट ह्वै जात ॥
आवै समय विनास जब, बुद्धि होत विपरीत।
हित-शिक्षा भावै नहीं, प्यार लगै अनरीत ॥
विना विचारे कहत हैं, जो नर मिथ्या बात।
तिन कर घट विश्वास सब, फिरि पीछे पछितात ॥
खीझै विन अपराध, रीझै विन कारन सुनर।
तिनके साल असाध, सरद्‌काल के मेघ जिमि ॥

(३) सामाजिक नीति

जो कहुँ सब मानीन सों, होय सरलता भाव।
तीरथ-जल-अभिषेक ते, ताको अधिक प्रभाव ॥
जिनके गृह, धन तिनहि के, मित्रऽरु बाँधव लोग।
जिनके धन तेई पुरुष, जीवन तिनको जोग ॥
हाथ रसोई मातु के, गृह कारज सुत धाप।
धर्म-काज भार्या जु बस, करि देखे नित आप ॥

ग्राह्य गुण

आदर दै विद्वान को, गुन को कर सनमान।
प्रियबानी अरु न्यायरत, करो सुपात्रहि दान ॥

सुष्क बैर, हिंसा, वृथा, निन्दा पर की बात।
राजधर्म को सोच को, तजहु व्यर्थ जो बात॥
वृद्धन की सेवा करत, सबसों नमत सुभाय।
ते पावन जग चारि फल, जस, बल, कीरति, आयु॥

त्याज्य दोष

निन्दा, चुगली, झूट अरु, पर दुखदायक बात।
जे न करहिं तिनपर द्रवहिं, सर्वेश्वर सब भाँत॥

सम्पत्ति

सम्पति संचय कीजिये, सम्पति से सुख जान।
जग में सम्पति से सुजस, सम्पति धर्म निदान॥
सम्पति बिनु कुलधर्म नहिं, सिद्ध काज नहिं होइ।
लहे दीनता जग विषे, दुखी होइ पुनि सोइ॥
सम्पति ही से सत्रु सब, बस में करत सुजान।
सम्पति से धीरज रहै, सम्पति से कुलकान॥

पराधीनता

गंगातट, गिरिवर गुहा, उहाँ कहाँ नहिं ठौर।
क्यों ऐसे अपमान सों, खात बिराने कौर॥
सूखी रोटी है भली, टहल किये जो पाउ।
दानी के पक्वान पर, नहिं चित कबहुँ चलाउ॥
जो पर-भोजन देखिकै, रातै नित अभिलाख।
सोवत-जागत रात-दिन, सो दुख पावै लाख॥

शोभा

उत्तम कुल आचार बिन, करै मनाम न कोइ।
कुलहीनो, आचारजुत, लहै बड़ाई सोइ॥

सत्संग

जड़ताई मति की हरत, पाप निवारन अंग।
कीरति, सत्य प्रसन्नता, देत सदा सतसंग॥

प्रीति

बिनसत वार न लागही, ओछे जन की प्रीति।
अम्बर डम्बर साँझ के, अरु वारू की भीति॥
नीच की प्रीति की रीति यही है।
जौलौं प्रयोजन तौलौं सही है॥
कारज सिद्ध भयो जब जानै।
रंचकहू उर प्रीति न मानै॥
ओछे नर की प्रीति की, दीनी रीति बताय।
जैसे छीलर ताल जल, घटत-घटत घटि जाय॥
जहाँ बैर अति बढ़त है, तहाँ न प्रीति सँजोग।
पूँछ-सोक नित सर्प को, गायक को सुतसोग॥
धन दै कै तन राखिये, तन दै रखिये लाज।
धन दे, तन दे, लाज दे, एक प्रीति के काज॥

कुलकलह

कुलकलेससों जगत में, सुखी भयो नहिं कोइ।
करि विरोध सुग्रीवसों, गयो वालि जिमि खोइ॥
कुलकलेससों निसिदिवस, सदा मानिये सङ्क।
तनिक विभीषन के कलह, छन में टूटी लङ्क॥

उपकार

अट्टारहौ पुरान में, कियो व्यास निरधार।
महापाप अपकार है, महापुन्य उपकार॥

धन

मित्र, नारि, सुतजन सुहृद, जन निर्धन तजि देह।
पुनिधन लखि आश्रय लहैं, धनहिं पुरुष को नेह॥
विभव पूजिये लोक में, नहिं सरीर की चाहि।
पुरुष श्रेष्ठ चण्डालहू, जाके धन घर माहि॥
सुतबिन घर सून्यो जु गिन, बिन बांधव पुनि देस।
मूरख को सून्यो हृदय, निर्धन को सब देस॥
आदर, आसन, भूमि, जल, कहिवो मधुरी बानि।
होत संत के दरस ते, कबहुँ न हित की हानि॥

सज्जन

अमृत-भरे तन-मन वचन, निसि-दिन जगउपकार।
पर गुन मानत मेरु सम, विरले जन संसार॥
उत्तम नर विपदा सहैं, सदा पराये हेत।

नय कमान अनि नवत हैं, तुरत तीर लगि जाय॥
हस्ती हाथ हजार तज, घोड़ा सत हथ दूर।
सिंगवाले दस हाथ तज, दुर्जन देसहिं दूर॥
ऊपर दीखे सुमिल सो, भीतर अनमिल आँक।
कपटी जन की प्रीति है, खीरा की-सी फाँक॥
विष तक्षक के दन्त में, माखिन के सिरभंग।
वीछिन के पूँछन बसै, दुष्टन के सब अंग॥

कृतघ्न

मेटे कृत उपकार को, और करै अपकार।
सोई पतित कृतघ्न नर, दुर्गति लहै अपार॥
चोर, जुआरी, अधम खल, लम्पट को गति मान।
नहिं कृतघ्न की होत गति, यह निहचै करि जान॥
जो तृन सम उपकार को, मानत सहस पहार।
ऐसे उत्तम जीव की, होय न कबहूँ हार॥

दुःखद

रूप, सील, कुल, वित्त बड़, सुख सोभा सतकार।
देखि और को जो कुढ़ै, ताको रोग अपार॥

बल

ब्रह्मज्ञान को ब्रह्मबल, तप तपसी बल तात।
गुनवन्तन को बल छमा, दुष्टन को बल घात॥
कैसे निबहै निबल जन, करि सबलन सों बैर।
जैसे बसि सागर विषे, करत मगर सों बैर॥

फुटकल

सज्जन जन बस करन को, रची विधाता मौन।
दूरन हू को आभरन, मौन सदा सुख भौन॥
वृद्धन को सेवै न जो, धनचित कुलहिं न सुद्धि।
ताकी प्रीति न होय थिर, जाकी चञ्चल बुद्धि॥
वचन पारखी होउ तुम, पहिले आप न भाख।
अनपूछे नहिं भाखिये, यही सीख जिय राख॥
पाँच-सात की बात को, करत न जो हित मानि।
सो पाछे पछितात है, जिमि मन्दोदरि रानि॥
जो बिन बूझे हठ करै, सो पाछे पछिताय।
लाख भाँति बोधन करै, जिय की जरनि न जाय॥
चंचल चित्त निहार, ऐसे निर्दय पुरुष को।
बुद्धि बिलोकि विचार, पण्डित दूरहि ते तजत॥

रीति, त्योहार और व्रत

बहन मोहिनी, मैंने तुझको जो बताने को कहा था, सो तो बता चुकी। अब वह बताती हूँ, जिससे यह ज्ञात हो जाय कि जो रीति-भाँति मैं करती हूँ, उससे क्या लाभ है? वह रीति क्यों नियत की गई, क्यों प्रचलित हुई, उसके न करने से कोई हानि भी होती है कि नहीं, और उस रीति का ठीक अभिप्राय क्या है?

और ये रहीं निरी मूर्ख। इनके मन में जो आया या जैसा जिसने बहकाया, वैसा ही ये करने लगीं। यहाँ तक कि शास्त्र की रीति-भाँति तो अब एक भी नहीं रही। अनपढ़ों का शास्त्र 'बुढ़ियापुराण' अलग ही रच गया, जिसमें ऐसी-ऐसी अद्भुत बातें रक्खी हैं कि उन्हें कहते जिह्वा लजाती और सकुचाती है।

यह बुढ़ियापुराण इतना बढ़ गया है कि जो मैं तुझे आज से सुनाने बैठूँ, तो दो-चार वर्ष में शायद पूरा हो। यह इस भारत देश में इतना रचा गया है कि हमारे वेद, पुराण, शास्त्र, स्मृति, काव्य, व्याकरण इत्यादि सब ग्रन्थ एक ओर और यह अकेला एक ओर।

मैं सब तुझे बता नहीं सकती और न सब बत की कुछ आवश्यकता समझती हूँ। कौन-से स्था या कुल की रीति तुझे बता दूँ, जिससे तुझे आगे क काम पड़े; क्योंकि तेरे सासुरे का अभी कुछ ठीक नहीं। न-जाने कहाँ और किस कुल में विवाह हो। मैं तुझे थोड़ी-सी कुरीतियाँ बताये देती हूँ, जिनका करना उचित नहीं। इससे तू समझ जायगी कि यदि काम पड़े, तो किस प्रकार की रीति करना अच्छा होगा, और किस प्रकार की नहीं।

तुझे ज्ञात हो जायगा कि मूर्खता के कारण कैसी-

इस प्रकार एक-एक कनौजिया, सरवरिया और कुलीन ब्राह्मण, दस-दस, बीस-बीस स्त्रियों से (धन लेकर) लोभवश ब्याह कर लेता है, * और फिर उनको उनके पीहर (माता के घर) ही में छोड़ देता है। जो धनवान् की बेटी होती है, उसको केवल अपने पास रख लेता है। जिसके मा-बाप इस छोड़ने के भय से उसको बहुधा धन देते रहते हैं।

बहुत-से मनुष्य ऐसे भी होते हैं, जो धन के लालच ही से अपनी बेटियों को बढ़ाया करते हैं, रुपये ले-लेकर उनका विवाह करते हैं, और इस लालच के कारण वे ऐसे अन्धे हो जाते हैं कि अपनी बेटी के जीवन और सुख भोग का उनको कुछ भी ध्यान नहीं रहता। उनको केवल धन ही का ध्यान है, जिसके कारण दस-दस वर्ष की कन्याओं तक को वे साठ या सत्तर और कभी-कभी अस्सी वर्ष के बुड्ढों तक को ब्याह देते हैं। ये दो-चार वर्ष पीछे ही राँड़ होकर अपने माता-पिता के नाम को निन्दित कर्म करके धूल में मिला देती हैं। पर इन धन

* लेखक की यह धारणा ठीक नहीं। किसी समय बंगाल के कुलीन ब्राह्मणों में ऐसा होता था। कान्यकुब्जों में बहुत कम। अब न तो कान्यकुब्ज ही ऐसा करते हैं और न बंगाल के कुलीन ब्राह्मण ही। —सं०

के लोभी माता-पिताओं को कुछ भी ल
'धीवेचा' 'हजारों के बाप' इत्यादि न
लोक और परलोक, दोनों बिगाड़ते हैं

कोई-कोई अपनी पुत्री को शालग्रा
अथवा पीपल के पेड़ ही से ब्याह कर
हैं। किसी पुरुष या स्वजातीय के संग उ
करते। वे बेचारी जन्म-भर ब्याही हुई भी
हैं। कोई-कोई अपने पुत्र या पुत्री का
छोटी अवस्था में कर देते हैं कि लड़क
जाता है, और कन्या को आयु-भर रँड़ाप
है। अथवा लड़के का दूसरा विवाह करना
कभी लड़का बड़ी अवस्था होने पर म
जाता है। उस दशा में बेचारी विवाहिता कन
और दुःख भोगने पड़ते हैं। कभी-कभ
आयु समान होने पर भी विवाह कर देते
तो धन के लोभ या अन्य और किसी क
धनवान् माता-पिता होने से) उनके कम
ही को अपनी बड़ी उमर की बेटी ब्याह दे
कहीं तो यहाँ तक सुनने और देखने में आ

हुई बात है कि एक स्त्री दूसरी से कह रही थी जो तेरे और मेरे इस गर्भ से बालक उत्पन्न हों, तो उनकी सगाई हो गई। जो मेरे लड़की और तेरे लड़का हो, तो मैं सगाई कर दूँगी। जो इसके विरुद्ध होगा, तो तू सगाई कर देना। ये दोनों आपस में बहुत ही प्रेम के साथ बातें कर रही थीं।

दूजिया के विवाह में दोष माना जाता है। जो लड़का रँडुआ हो गया, चाहे उसकी थोड़ी ही अवस्था है, पर उसको दूजिया जानकर बहुत-से उस लड़के के संग अपनी पुत्री का विवाह करने में दोष समझते हैं। कोई-कोई तो कदापि नहीं करते। अन्य लड़के के संग, जो उससे बड़ी आयु का है, विवाह देते हैं; पर उसके संग नहीं करते।

सगाई करते समय लड़के को तो देख लें, पर लड़की को न दिखावें। उसके दिखाने में बुराई या अपनी मानहानि * समझें।

* विचार करने से इसके दो कारण प्रतीत हुए--(१) यदि देखने पर लड़की कानी, भोंदी अथवा कुरूपा इत्यादि जान पड़ी तो कदाचित् उसकी सगाई में विघ्न पड़ जाय। (२) विवाह होने पर यदि लड़की बुरी-भली निकलेगी, तो दूसरी भी ब्याह ली जायगी। लड़के को केवल इसलिये देख लेते हैं कि विवाह के पीछे जो लड़का बुरा-भला निकलेगा, तो फिर लड़की दूसरा लड़का नहीं ब्याह सकेगी।—अं०

उसके नातेदारों से घृणा होगी। वे बातें जिनमें वर कन्या के अधीन रहे या हो और ही होती हैं; जैसे कन्या वर की आज्ञा के अनुसार चले, रहे-सहे। तन मन, धन से वर का मान आदर करे। प्रीति सहित उनके वचन को पूरा करे, न कि ऐसी बातें करे।

यदि वर को कन्या के अधीन रखना चाहो, तो कन्या को गुण सिखाओ, विद्या पढ़ाओ, सुलक्षणा बनाओ, अच्छी-अच्छी बातों की सीख दो, सती और पतिव्रता के धर्म बताओ, जिनसे वह अपने स्वामी के मन को वश में करे, न कि ऐसी मूर्खता की बातें करो।

कन्या का विवाह ऐसी अवस्था में करो कि वह पति के घर जाकर वहाँ के धर्म भली भाँति समझ सके, और उनका पालन भी कर ले। अब फेरे फिरते समय, जो जो वचन वर-कन्या में होते हैं, उनको वह समझे, और याद भी रख सके कि मैंने जो-जो वचन अपने पति से कहे थे, उनका पालन करती हूँ कि नहीं? यदि नहीं करती तो करना चाहिये। जो वचन पति ने मुझसे कहे थे; उनका पालन भी होता है या नहीं अथवा प्रचलित प्रतिज्ञाओं के सिवा दूसरी और कोई प्रतिज्ञा यदि अपनी इच्छा के अनुसार करानी चाहे, तो करा ले।

कौन-सी आवश्यकता है ? जो-जो
तो मैं पहले ही कह चुकी हूँ।

कन्या के पिता के यहाँ की स्त्रि
करती हैं कि जब वर-कन्या मे
हैं, तब उस समय, वर की परीक्षा
जूतियाँ कपड़े में लपेटकर रख देती हैं
हैं कि पहले इनको पूजो। जो वर
तो जूतियों को खोलकर दिखा देती
हँसी करती हैं, और जो वह इनको
कहती हैं, तुम कुलदेवों की भी पूजा

- इस समय स्त्रियाँ परीक्षा के लिए वर
(श्लोक) अथवा "छन्न" (छन्द)
हैं, और पारितोषिक में छल्ले, अँगूठा,
देती हैं। यह वर की विद्या और बुद्धिमत्ता
लेना है। पर फेरे फिर जाने के पीछे
है, इसलिये व्यर्थ है; क्योंकि अब क्या
विवाह के पूर्व ली जाती, तो कुछ प्रयोजन भी था।
जब फेरे फिर गये, तब सिवा मूर्खता के और क्या है।
क्योंकि विवाह के पूर्व तो दूसरा वर भी कन्या का हो
सकता था, अब विवाह के उपरान्त क्या हो सकता
है ? कहते हैं छन्द से वेद-विद्या का अभिप्राय था

अर्थात् वेद-विद्या में परीक्षा ली जाती थी। परन्तु अब तो निपट बकने के सिवा और कुछ नहीं होता। निर्लज्ज छन्दों पर फूल-फूलकर स्त्रियाँ पारितोषिक देती हैं।

इसका कारण उनकी मूर्खता ही है कि वे आप भी बकतीं, निर्लज्ज गीत गाती हैं, और बरातियों को लक्ष्य करके गालियाँ गाती हैं। मा, बाप, बहन, भाई, सास, ससुर और जेठ, देवर, किसी की तनिक भी लाज नहीं मानतीं। यहाँ तक कि हाट-बाट में भी बकती हुई चली जाती हैं। और ऐसे शब्द बकती हैं, जिनको एकान्त में भी मुख से निकालते लाज आती है। पर इनको तनिक भी लाज नहीं आती। ये सैकड़ों मनुष्यों के सम्मुख गाती चली जाती हैं, और नाममात्र को भी नहीं लजातीं। यह महानिंदित और बड़ी ही बुरी रीति है। इससे बढ़कर शायद ही कोई दूसरी कुरीति हो। न जाने इसको स्त्रियाँ कब छोड़ेंगी, और अपने को धिक्कार देंगी? ऐसी ही दूसरी निर्लज्ज बात एक और यह देखने में आती है कि पकवान या अन्य सामग्री पर, जो समधा के यहाँ भेजने को बनवाई जाती है, समधी, समधिन दोनों की आकृति बनवाती हैं, और मनुष्य देह के समस्त अंग उनमें रखवाती हैं, जिनको देख-देखकर लाज आती है। यह रीति भी निपट निष्प्रयोजन

प्रचारित कर रक्खी है। इसमें
केवल मूर्खता और लज्जा से भर
ये स्त्रियाँ अपनी मूर्खता के
करती हैं। हर्ष और आनन्द के सम
लगती हैं, और बुरी बात को भी
यदि उसी को कोई दूसरा करे, तो
पर जो आप करें, तो उसी को
स्त्री अपनी सन्तान के विवाह में
अपने पिता या भाई से मिलकर
को सगुन समझती हैं। इसी प्र
जाती हैं, तो भी रोती हैं। भला
क्या काम ? ऐसे समय में हँसना
सोच तो सही।

कुलदेवताओं को पुरोहितजी
दो उलटे सरवे चिपकवाकर, बन्द
भाँति मेह, आँधी, आग, बिजली, ओले
कौआ, कुत्ता, बिल्ली इत्यादि को भी
और उनसे यह प्रार्थना करना कि तुम हमारे विवाह में
विघ्न मत डालना, हम तुम्हारा न्योता पीछे अच्छी
तरह करेंगे। अब तेरी समझ में यह बात आती है कि
कुलदेवता, आँधी, मेह, ओला इत्यादि सभी

इस प्रकार बन्द करने से बन्द हो सकते हैं, और वे कभी बन्द रहे हैं।

मैंने तो कभी नहीं देखा कि आँधी, मेह, ओला किसी के ब्याह में बन्द रहे हों। जब कभी पड़ने को हुए, तभी पड़ गये। पर यह अंध परम्परा कुछ ऐसी छा गई है कि कोई इसके झूठे या सच्चे होने का कुछ विचार ही नहीं करता। रीति पर चले ही जाते हैं।

अपनी क्वारी कन्या को दूसरी विवाहित कन्या के कुल-देवों के स्थान में इस अभिप्राय से ले जाती हैं कि यहाँ उनसे माँगने से इसको भी इसी वर्ष में वर मिल जायगा। ऐसा करने पर भी चाहे पाँच वर्ष पीछे विवाह हो, पर इस झूठे भ्रम को वे न छोड़ेंगी।

पुत्र के विवाह में भी वैसी ही रीतियाँ होती हैं, जै[illegible] कन्या के में। जैसे, जब से वर के तेल चढ़े, तभी से पास कोई लोहे की वस्तु अवश्य रखती हैं, जिससे प्रेत जो उसको उबटना आदि लगा हुआ बाधा करना चाहे या कोई परी उस पर मो[illegible] अपने देश को उड़ा ले जाना चाहे, तो डर जाय। भला जो इतना करना चा[illegible] न देगा, वह इस लोहे के टुकड़े से क्या [illegible] भ्रम है।

फिर घुड़चढ़ी के समय घोड़ी पर चढ़ाने से पहले किसी-किसी के यहाँ गधी पर चढ़ा देते हैं, तब पीछे घोड़ी पर चढ़ाते हैं। इसमें न-जाने कौन-सी समझदारी की बात रक्खी है। इसी समय एक और रीति होती है। जब घुड़चढ़ी होकर वर चलता है, तब माता रूसकर कुएँ में डूबने को चलती है कि मैंने तुझे पालकर इतना बड़ा किया, अब तू कहाँ जाता है? मेरे दूध का मोल देता जा, नहीं तो मैं कुएँ में गिरती हूँ। यह कहकर कुएँ पर जा बैठती है। तब वर उसके बहुत मनाबने करके समझाता है, पर वह तब भी नहीं उठती। रुपये और गहने का लालच देता है, इस पर भी वह नहीं मानती। अन्त को कहता है, सबका मोल होता है, पर मा के दूध का मोल नहीं। मैं तेरे लिये दासी लेने जाता हूँ जो तेरी टहल करेगी। यह सुनकर माँ कुएँ पर से उठ आती है।

बहन, इस रीति और चतुराई को तो तनिक देख, अभी तक यही नहीं मालूम कि मेरा पुत्र कहाँ जाता है, और उससे दूध का मोल माँगा जाता है। वाह! क्या अच्छी संसार भर से निराली रीति है!

जब पुत्र ब्याहने को चला जाता है, तब स्त्रियाँ ब्याह की सब रीति यहाँ पर आपस में करती हैं। एक

स्त्री उनमें से पुरुष बनती है, जिसे 'बूनना' कहते हैं। सब मुहल्ले और पड़ोस भर में ऐसी बकती-फिरती और ऊधम मचाती हैं कि मुझे तो कहने में भी लाज आती है। पर न-जाने उनके मन कैसे निर्लज्ज हैं कि बुरे-बुरे शब्दों के नाम ले-लेकर बकने में वे जरा नहीं लजातीं। वे किसी बड़ी-बूढ़ी या पुरुष की भी शंका नहीं करतीं। इस रीति का नाम 'खोरिया' है।

जब वर ब्याह कर आता है, तब वर का फूफा या बहनोई जो 'मान्य' कहलाता है, उसको द्वार पर रोकता है कि घर में नहीं घुसने दूँगा। इस पर वर अथवा उसके माता-पिता कुछ देते हैं, तब वर घुसने पाता है। किसी बहनोई ने अपने साले से लड़कर शायद ऐसा किया हो, पर अब वह एक रीति ही मान ली गई है। सोचने की बात है कि दुलहिन को घर में अन्दर से लेना चाहिये या बाहर ही से रोक देना चाहिये ?

जब दुलहिन ब्याह कर आ जाती है, तब उसका मुख देखकर उसको गहना या रुपये देते हैं। भला अब मुख देखने से क्या लाभ ? अब क्या वह फिर सकती है ? कुरूपा है, तो तुम्हारे यहाँ को, और सुरूपा है, तो तुम्हारे यहाँ को। मुख देखो, चाहे न देखो। पहले देख लेते, तो कुछ हो भी सकता था, अब तो

ऐसा करना केवल मूर्खता है। इसी प्रकार दुलहिन की परीक्षा घर के काम-काज में लेती हैं। जो दुलहिन बहुत ही छोटी होती है, तो उसका केवल हाथ पके हुए भोजन से छुआ देती हैं।) लीक तो पीटेंगी ही, चाहे कोई बात सार हो, या असार। अब जो दुलहिन फूहर है, तो क्या, और चतुर है तो क्या ? अब तो दुलहिन जैसी है, वैसी भुगतनी पड़ेगी। अब यदि पछतायँ, तो क्यों ? ये बातें तो बहन, रहीं सो रहीं, इनसे भी अनोखी एक बात और है। वह यह कि बेटी को धोबिन से सुहाग मँगवाती हैं। जब तक धोबिन अपने मुख से न कह दे कि 'हाँ मैंने सुहाग दिया', तब तक सुहाग ही न चढ़े! भला यह भी कोई रीति में रीति है ? कहाँ नीच जाति धोबिन, और कहाँ उससे सुहाग माँगना ! क्या उसके पास सुहाग रक्खा है, जो पुड़िया बाँधकर दे देगी ? क्या उसी का दिया हुआ सुहाग मिलता है ? आप तो धोबिनें राँड़ बैठी रहती हैं, और दूसरों को सुहाग देती हैं। जो ऐसे ही सुहाग देने-वाली हैं, तो अपने ही पति को क्यों मरने देती हैं ?

जब तक स्त्री पतिव्रता है, तब तक उसका सुहाग बना ही है। धोबिन बेचारी क्या सुहाग देगी ? जो एक धोबिन ने किसी को सुहाग दे दिया, तो क्या सभी धोबिनें दे सकती हैं ? इस रीति की भी कैसी अन्ध-परम्परा है !

इसका कारण जो मैंने 'भविष्योत्तरपुराण' में दे
तो यह जान पड़ा कि काञ्चीनगर में एक देवस्व
ब्राह्मण था, जिसके एक पुत्री थी। इस देवस्वामी
स्त्री से किसी भिक्षुक ने यह कह दिया था कि तेरी
विवाह के समय विधवा हो जायगी। परन्तु सिंहल
में जो पतिव्रता सोना धोबिन रहती है, वह यदि अ
सुहाग तेरी पुत्री को दे देगी, तो उसका पति जी उठे
विवाह के समय ऐसा ही हुआ। जब सोना आई
उसने अपने पातिव्रत धर्म के बल से उसके मृत पति
जिला दिया, तब से मूर्ख स्त्रियों ने इसकी एक रीति
मान लिया कि चाहे कोई भी धोबिन हो, उससे वि
में सुहाग अवश्य माँगती हैं।

जैसी मूर्खता की रीति यह है, वैसी ही मूर्खता के स
'माई पूजन' की रीति है, जिसका ठीक अभिप्राय 'मा
पूजन' का है, अर्थात् अपनी माता का पूजन करने
और धन्यवाद देते हैं कि तूने पालकर हमको इतना ब
किया, हमारे कारण इतने कष्ट और दुःख सहे। अब
जब तेरी सेवा करने योग्य हुए, तभी तू हमको वि
करके अलग किये देती है, अर्थात् जो कुछ सेवा का भा
उन पर है, उसका धन्यवाद अभी दे देते हैं, फिर न
जाने, कन्या के साथ में रहकर वह माता की पूजा भा

या कन्या ही वर के स्नेह में अपनी माता को याद न रक्खे, अथवा फिर कोई ऐसा अवसर ही न मिले कि माता की सेवा बन पड़े। परन्तु आजकल जो 'माई-पूजन' होता है, उसे सभी जानते हैं। कहने की कुछ आवश्यकता नहीं है।

विवाह की एक रीति और कहने को रह गई है। वह है स्त्रियों के आगे रंडी नचाना और समधिन को उससे महावाहियात गालियाँ दिलवाना। यह भी महानिषिद्ध रीति है; क्योंकि इसको देखकर स्त्रियों के चित्त चलायमान हो जाते हैं। उनके जी में इनकी-सी वृत्ति धारण करने के विचार उत्पन्न होने लगते हैं।

ये दूसरे के घर पर, अर्थात् अपनी समधिन को तो गाली दिलवाने में हर्ष मानते हैं, पर जब इनके घर पर इनका समधी गाली गवाता है, तब बुरा मानते हैं।

जैसी विवाह समय की ये निषिद्ध रीतियाँ हैं, वैसी ही मृत्यु समय की अनेक और रीतियाँ हैं। मृत्यु समय की भी बहुत-सी ऐसी ही कुरीतियाँ हैं कि उनसे भी मूर्खता के सिवा और कुछ प्रकट नहीं होता। जैसे जब कोई वृद्ध मनुष्य मरता है, तब उसका विमान (विवाहन) निकालते हैं, और गाजे-बाजे से हर्ष मनाते हुए उसके शव को दाह के निमित्त [illegible] विमान

निकालने के कारण मृतक को घण्टों तक, वरन् कभी-कभी पूरे दिन-भर या रात-भर पड़ा रखते हैं और शव के बिगड़ने का कुछ विचार नहीं करते। ऐसे अवसरों पर धनवान् लोग बहुधा शव के ऊपर बहुमूल्य कपड़ा अपने नाम या प्रतिष्ठा के लिये डालते हैं, जिसको चाण्डाल या भंगी ले लेता है।

इस बहुमूल्य वस्त्र के डालने अथवा विमान के निकालने से मृतक का कोई प्रयोजन नहीं सरता; क्योंकि अब क्या? जो कर्म उसने अपने जीते-जी किये थे, उन्हीं का फल-भोग उसे दूसरे जन्म में मिलेगा, चाहे बहुमूल्य कपड़ा डाला जाय वा थोड़े मूल्य का।

हाँ, यह अवश्य है कि इस वृथा के झंझट से शव में दुर्गन्ध आने का भय हो जाता है।

अपने घर के मनुष्य के मरने पर, सबको शोक होना है; परन्तु इस कुरीति के कारण लोग अपने पुरखा का देहान्त होने से हर्ष मानते हैं, अर्थात् यह समझते हैं कि उसका जो वृथा भार हमारे ऊपर था, उसका आज पाप कटा। यह कितनी बुरी बात है कि जिन्होंने पालन-पोषण के निमित्त इतने कष्ट और दुःख उठाये, उनकी सेवा का भार उठ जाने के कारण हम हर्ष मानें। धिक्कार है ऐसी बुद्धि पर! इस दुशाले अथवा बहुमूल्य

कपड़ा डालने में बहुत बड़ा दोष यह है कि भंगी उस बहुमूल्य वस्त्र को ओढ़कर निकलता और बराबरी करता है। उस समय लोग कहते हैं, अब भंगी दुशाले ओढ़ते और बराबरी करते हैं।

यदि विचार करके देखा जाय तो इसमें भंगी का क्या दोष? दोष तो तुम्हारा ही है। न तुम भंगी को बहुमूल्य कपड़े दो, न वह ओढ़कर निकले; क्योंकि मोल लेकर भंगी दुशाले आदि कदापि न ओढ़ेगा। जब तुमने सिहाकर उसको दुशाले आदि दिये, तो उसके ओढ़ने में उसका क्या दोष? जो कुछ दोष है, वह तो तुम्हारा ही है।

दूसरी बात यह कि इसी विमान का गोटा-किनारी या कपड़ा इत्यादि लाकर घर में रखना। वैसे तो मृतक को छूते भी नहीं और यदि छूते हैं तो बिना स्नान किये घर में नहीं घुसते। पर इसके वस्त्रों तक को इस निमित्त घर में रखना कि बालकों के कपड़ों में उनको टाँक देंगे, तो हमारे भी बालक इतनी ही आयु के हो जायँगे!

किसी-किसी जाति में, जैसे अग्रवाल बनियों में यह भी कुरीति इस समय होती है कि समधियाने की स्त्रियाँ जब शोक जताने को आती हैं, तब अपने संग बहुत स्त्रियों को लाती हैं। वे कपड़े का एक गुड्डा बना-

किसी-किसी अभागिनी स्त्री को तो जन्म-भर इसी स्यापे के रँड़ापे में बिता देना पड़ता है। उसे कभी छुटकारा नहीं मिलता। उसकी आयु इसी में घुल जाती है।

जब वे रोती-पीटती हैं, तब स्वर के साथ रोती हैं। माना एक प्रकार का गान कर रही हैं। मृतक के जन्म से लेकर मरणपर्यन्त का बखान करती हैं, जिसको 'बैन पढ़ना' कहते हैं। इस रीति का नाम 'उल्लानी' है, जिसमें एक स्त्री पहले बोलती है, फिर पीछे सब स्त्रियाँ 'हय-हय' करके छाती पीटने लगती हैं। इसमें भी स्त्रियों की चतुराई और मूर्खता देखी जाती है। जो अच्छी तरह बैन पढ़ती है, उसकी प्रशंसा होती है। जिसको अच्छा पढ़ना नहीं आता, वह मूर्ख गिनी जाती है।

इसी कारण सारस्वतों और खत्रियों के यहाँ एक प्रकार के लोग होते हैं, जिनकी स्त्रियाँ बैन पढ़ने का अभ्यास करती रहती हैं, और बड़ी-बड़ी तनख्वाह पर बैन पढ़ने के लिये दिल्ली-आदि नगरों में बुलाई जाती हैं।

स्यापे का प्रयोजन तो यह था कि जाकर अपने नातेदारों को ढाढ़स बँधावें, उनको समझा-बूझाकर सन्तोष दिलावें, न कि ऐसा करें कि याद दिला-दिलाकर उसके घरवालों को उलटा और रुलावें और राँड़ों की-सी अपनी दशा कर लें। सुहागिनों को कब कहा है कि वे

र के सम्मुख मुख खोले रहती हैं, और गुरुजनों की
! पड़ने पर उनके मानरक्षा के लिये सिर ढक लेती हैं।
ो प्रथा पुरानी है; जैसा कि करनाटकी महाराज पृथ्वी-
ा के सिवा दूसरे पुरुष का मान नहीं करती थी, और
ोलिये दूसरे पुरुष के आगे सिर नहीं ढकती थी।
परन्तु मुसलमानों की देखादेखी अब इसका प्रचार
ता रहा। मरहठे आदि में, जहाँ यवनों का प्रभाव
धिक नहीं होने पाया था, हमारी यह पुरानी रीति
ी तक बनी है। इसका प्रमाण इतिहासों से मिलता
कुछ मुसलमानों के अन्याय और अत्याचार के कारण,
ा समय यथोचित समझकर, पर्दे का प्रचार कर लिया
। पर अब वह अन्यायी राज्य नहीं रहा, जिसके
ा से यह सोचा गया था। शायद अब की स्त्रियाँ कहें
ः यह प्रचलित प्रथा अब छूट नहीं सकती; क्योंकि
रकाल के प्रचार से इसका इतना प्रभाव हो गया है
ः इसको त्यागकर उस त्यागी हुई प्रथा को पुनः
लित करने में बड़ा ही संकोच जान पड़ता है, और
ा प्रचलित प्रथा को पूर्व की प्रथा से बहुत अच्छा
मझती हैं, तो यों ही सही। मेरा अभिप्राय इस घूँघट
ो प्रचलित रीति को उठाने का नहीं है। मेरा प्रयोजन
ा केवल यह प्रकट करने का है कि इस घूँघट की रीति

का ठीक अभिप्राय स्त्रियाँ नहीं समझतीं, वरन उलटा समझ रही हैं। सो मैं इसका ठीक अभिप्राय तुम्हें बतलाना चाहती हूँ।

मैं इस घूँघट के बहुत से लाभ समझ रही हूँ। इस घूँघट से स्त्री के शरीर की बहुत सी रक्षा होती है क्योंकि इसके कारण मुँह पर धूल और हवा अपना कुछ प्रभाव नहीं जमाने पाती, जिससे मुख का रंगरूप बिगड़े। किन्तु यह घूँघट एक प्रकार से मुख की कान्ति और शोभा बढ़ाने का और अवगुणों को छिपाने का हेतु होता है, जो किसी को अपने हित के लिये अत्यन्त अभीष्ट और प्रयोजनीय है। जब गुरुजनों (बड़ों) का मान करना कनिष्ठों (छोटों) का धर्म है, तब उनको पूरी तरह से निबाहना चाहिये। पर मैं देखती हूँ आजकल की स्त्रियाँ अपने जेठ, ससुर इत्यादि गुरुजनों के आगे घूँघट तो डेढ़ हाथ का काढ़ लेंगी, परन्तु वैसे उनके सिर की पगड़ी तक उतारने को तैयार हो जावेंगी। तो फिर मान कहाँ रहा? क्या वे घूँघट खींचकर ही मान करना जानती हैं? मानरक्षा की जो बातें हैं, उनमें से एक भी नहीं करतीं। न गुरुजनों का उपदेश मानती हैं, न उनकी शिक्षा सुनती हैं, न उनकी आज्ञा पालती हैं। तो क्या निरे घूँघट खींचने ही से उनका मान हो

गया ? कदापि नहीं। चाहे तुम घूँघट खींचो या न खींचो, मानरक्षा के जो नियम हैं, उनका पालन तन, मन, धन से करो। तब तो मानरक्षा है, नहीं तो इस वृथा घूँघट काढ़ने में क्या धरा है ? मेरे कहने का यही अभिप्राय है।

मैंने तुझको कुरीतियों का यह वर्णन संक्षेप से बता दिया। नहीं तो यह बहुत बड़ा है; क्योंकि अगणित कुरीतियाँ प्रचलित हो रही हैं। उनका कहाँ तक वर्णन हो सकता है। उनमें से कोई-कोई तो ऐसी हैं कि उनका कुछ प्रयोजन ही समझ में नहीं आता। जैसे जन्मोत्सव में 'कुआँपूजन' और विवाह में 'चाकपूजन'।

बहन, यह तो कुरीतियों की बात तुझे बताई। अब लगे हाथों तुझे कुछ थोड़ा-सा त्योहारों का भी समाचार बता दूँ। इस समय बहुत तो नहीं बता सकूँगी; क्योंकि इसके पीछे तुझे व्रतों का भी वृत्तान्त बताना है। तुझे मालूम है, त्योहारों का अर्थ क्या है ? पहले तुझे यही बताती हूँ। इसका अर्थ है, 'अतिआहार' या 'तिथिउपहार' अर्थात् ऐसा दिवस, जिसको और दिवसों से अधिक भोजन दिया जाय वा अपने घर अच्छे खाद्यपदार्थ बनाकर अपने सगे-सम्बन्धियों को उपहार में भेजे जायँ। तिथि-उपहार का अपभ्रंश होकर ही त्योहार शब्द बन गया।

त्योहार अनेक हैं। परन्तु जैसे चार वर्ण ब्राह्मण,

महीने या पक्ष में एक दिन ऐसा भी होना चाहिए, जिस दिन जीविका की चिन्ता छोड़ हर्ष मनायें। अच्छे भोजन करें। आपस में मिलें, भेंटें, स्नान करें, वस्त्र बदलें, शृंगार करें, वाटिकाओं में जायँ, विविध प्रकार के आनन्द और हर्ष मनावें, और जगत् के जंजाल को एक प्रकार से भूल जायँ।

दूसरा अभिप्राय यह भी था कि आपस का मेल-मिलाप और प्यार-प्रीति बढ़े। जो कुछ भोजन आदि हमारे यहाँ बने हैं, वे हम दूसरों के यहाँ भेजें, और दूसरों की सामग्री हमारे यहाँ आवे। औरों के बनाये भोजन का स्वाद हम लें, और हमारे का वे, अथवा हम और वे एक स्थान पर बैठकर संग भोजन करें, गावें, बजावें, हँसें, बोलें और हर्ष मनावें। आपस में जो कुछ वैरभाव किसी प्रकार का हो गया हो, तो उसे आज के दिन मिटा लें, और आगे को पहली-ही-जैसी प्यार-प्रीति फिर कर लें। इसी कारण इन त्योहारों के नाम बहुधा ऐसे ही रक्खे गये हैं, जिनका ब्योरा मैं तुझे आगे बताऊँगी।

त्योहारों से 'सूपकर्म' अर्थात् 'पाकविद्या' की उन्नति और शिक्षा का भी अभिप्राय था कि स्त्रियों को अच्छे-अच्छे भोजन बनाने आ जायँ; क्योंकि चित्त प्रसन्न करने के लिये भोजन भी एक ही पदार्थ है।

सो अब ये सब अभिप्राय तो उड़ गये, केवल लीक

पीटना रह गया है। सो भी ठीक नहीं, किन्तु विरुद्धता के साथ। त्योहार तो होते ही हैं; पर प्यार-प्रीति नाम को नहीं रहती, वरन् उलटी कहा-सुनी हो जाती है। कोई कहती है, फलानी ने हमारे बायना न भेजा, या भेजा तो थोड़ा या बुरा भेजा, अथवा हमारे जिवाने को न्योता भी नहीं दिया। जब हमारे हुआ था, तब हमने खुशी-खुशी दिया था। क्या खाना ही जानती हैं, खिलाना नहीं जानतीं?

अब तो त्योहारों को इसी प्रकार की कहा-सुनी होती है। प्यार-प्रीति रखना तो अब नाम को भी नहीं।

अब तुझको मुख्य-मुख्य त्योहारों के नाम और उस दिन क्या-क्या होता है, यह और बताती हूँ। पीछे प्रत्येक त्योहार के अर्थ भी बताऊँगी।

पहला त्योहार तीज है। यह सावन-सुदी तृतीया को होता है, जिसको 'सुहाग तीज' या 'हरियाली तीज' कहते हैं। यह त्योहार केवल स्त्रियों ही का है। पुरुष इसमें सम्मिलित नहीं होते। इस दिन झूला झूलने को मुख्य काम समझती हैं, जिसमें अभीष्ट यह रहता है कि वर्षाकाल में घरों में वायु रुकी रहती है। झूला झूलने से समीरसेवन का फल हो जाता है। मेघमाला के कारण मलार रागिनी गाई जाती है, जो ऐसे समय में बहुत ही प्रिय लगती और चित्त को प्रफुल्लित करती

है। परन्तु अब इस अभीष्ट अभिप्राय के विपरीत कार्य होता है। अर्थात् थोड़े-से स्थान में इतनी स्त्रियाँ इकट्ठी हो जाती हैं कि वहाँ की वायु को उलटे विषतुल्य करके बिगाड़ देती हैं। ऐसे काल में बहुत-सी स्त्रियों का थोड़ी-सी जगह में इकट्ठा होना ठीक नहीं।

इसके पीछे सावन-सुदी पूर्णमासी को सलूनो होती है। इस दिन सब कोई अपनी बहन, भतीजी, फूफी इत्यादि से और ब्राह्मणों से रक्षाबन्धन (राखी बँधवाने) कराते और दक्षिणा देते हैं। इस रक्षाबन्धन का कारण यह ज्ञात हुआ है कि एक बेर राजा इन्द्र राक्षसों से लड़ने को चढ़े थे। तब प्रस्थान के समय उनके हाथ में उनकी स्त्री इन्द्राणी ने रक्षाबन्धन कर दिया था, जिसमें राई, हल्दी, सुपारी, दूब, रोली, चावल और गुड़ बाँधा था। वह दिन आज की तिथि का था। राजा इन्द्र की जय रही। इसी कारण उस समय से यह त्योहार हो गया कि हर कोई, चाहे वह कहीं जाय या न जाय, इस तिथि को राखी अवश्य बँधवावेगा।

पर अब यह बात तो रही नहीं कि वे ही वस्तुएँ राखी में बाँधी जायँ। अब तो उनके स्थान में झूठे मोती-मूँगे राखी में लगाये जाते हैं, जिनसे न कुछ प्रयोजन, और न लाभ।

इसके पीछे क्वाँर-सुदी दशमी को दशहरे का त्योहार

होता है। कोई तो इसका कारण यह बतलाता है कि रामचन्द्रजी महाराज ने आज के दिन रावण पर चढ़ाई की थी, और कोई कहता है कि आज के दिन रावण को जीता था, जिसके कारण इसका नाम 'विजय दशमी' भी पड़ गया है। एक कारण यह भी बतलाते हैं कि जेठ-सुदी दशमी से राजाओं की सेना अपने अस्त्र-शस्त्र रख देती थी; क्योंकि वर्षाकाल में चढ़ाई और लड़ाई सब बन्द रहती थी। अब क्वाँर-सुदी में वर्षाकाल का अन्त हो जाता है, इसलिये सैनिक लोग अपने-अपने हथियार निकाल उज्ज्वल करते और ओपते थे, घोड़ों आदि को सजाते थे। सो यह रीति रजवाड़ों में अभी तक वर्ती जाती है। राजा की सवारी बड़ी धूमधाम और गाजे-बाजे के साथ निकलती है, और छोंकर (शमी) के वृक्ष की पूजा होती है। जैसा कि इस तिथि को शमीवृक्ष की पूजा का विधान कहीं-कहीं पर पुस्तकों में किया गया है। पर बहुधा, वरन् समस्त स्थानों में देखा गया है कि लोग आज के दिन नौरते या जुनियाँ (जौ के पेड़, जिनको आठ-दस दिन पहले हाँडियों में बो देते हैं) अपनी-अपनी बहन, भानजी, फूफी इत्यादि से सलूनों की भाँति टँकवाते और उनको तथा ब्राह्मणों को गा देते हैं।

इसका कुछ अभिप्राय ज्ञात नहीं होता कि ऐसा करने का क्या प्रयोजन है ।

करवाचौथ—यह त्योहार सुहागिन स्त्रियों ही का है, और पति के निमित्त किया जाता है। जब पाण्डव वन को गये थे, तब द्रौपदी ने पति की प्रसन्नता के लिये इसे किया था। सो अब स्त्रियाँ इसको करती तो हैं, परन्तु पति की प्रसन्नता का कुछ विचार और ध्यान नहीं करतीं; क्योंकि त्योहारों के दिन ही अपने पति से रार ठान देती हैं।

दिवाली का त्योहार, जो सब त्योहारों में बड़ा और सुधरा है, कार्त्तिक बदी अमावस्या को होता है । वर्षा के कारण जो हाट-बाट, मन्दिर-इत्यादि बिगड़ गये थे, वे सब सुधारकर आज के दिन सजाये जाते हैं। नये लेखे चलने शुरू होते हैं । धन-धान्य भी पकने पर आ जाता है, जिस कारण आह्लाद और हर्ष होता है।

दिवाली नाम इसका यों पड़ गया कि इस अमावस को अपने-अपने मन्दिर की शोभा दिखाने के लिये हर कोई दिये जलाता है । इसलिये यह दियेवाली अमावस कहलाती थी । 'दियेवाली' का संक्षिप्त होकर 'दिवाली' हो गया * ।

* असल में यह 'दीपावली' शब्द का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ 'दीपकों की कतार' होता है।—सं०

दिये जलाने का एक कारण यह भी माना जाता है कि इस तिथि को यमराज, धर्मराज और मृत्यु का तर्पण और देवताओं का पूजन करना, संध्या या रात्रि के समय राह-बाट, बाग, बावड़ी, कुआँ, तालाब, अटा, अटारी इत्यादि पर दीपक जलाना । दूसरे दिन स्नान करके पितरों का तर्पण करना लिखा है। परन्तु अब कुछ नहीं होता। नाम-मात्र को कोई-कोई आदमी लक्ष्मी का पूजन कर लेते हैं, नहीं तो रात-भर, वरन् दूसरे दिन तक जुआ खेला जाता है, जिसको अगाड़ी के साल भर की हार या जीत का सगुन मानते हैं।

अन्नकूट—दिवाली के दूसरे दिन होता है। इस दिन वर्षाऋतु में उत्पन्न हुई समस्त वस्तुओं का भोज्य बनाया जाता है । इस ऋतु की जो-जो वस्तुएँ अब तक इस कारण नहीं खाई जाती थीं कि वे पूर्ण परिपक्व, स्वादिष्ट और गुणकारी नहीं हुई थीं, आज से उनको खाने लगते हैं। जैसे ईख, कचरी इत्यादि। परन्तु देखने में आया है कि अब तो बहुत-से मनुष्य इन वस्तुओं को अन्नकूट होने के पूर्व ही खाने लगते हैं । सो यह अन्नकूट भी पूर्ण प्रकार से जैसा चाहिये, नहीं होता।

गोवर्धनपूजा—यह भी इसी पड़वा को रात्रि के समय होती है। इस त्योहार के गुण तो उसके नाम ही

से स्पष्ट और प्रत्यक्ष हैं। यह गो-माता की महिमा प्रकट करने को नियत किया गया था कि लोग गौ का उतना ही मान करके उसकी रक्षा करें, जितने उससे उनको लाभ पहुँचते हैं। जैसे दूध, दही, घी, गोबर, ईंधन (उपले), खेतों को खाद। बैल धरती को जोतते हैं, गाड़ी खींचते और बोझ ढोते हैं, और मरने पर भी उनकी खाल की अनेक वस्तुएँ चरसे-जूते इत्यादि बनती हैं। इस-लिए गौ को लक्ष्मी तुल्य मानकर वर्ष-भर में एक दिन उनका सम्मानपूर्वक पूजन करें। सो तो होता है: परन्तु गौ-माता की रक्षा, जो इसका मुख्य अभीष्ट थी, नहीं होती। अर्थात् बूढ़ी-ठेढ़ी (ठाँठ, जो दूध न दे) गौ को जिससे इतने लाभ उठाये हैं, अपने घर बाँधकर रक्षा करें, वधिक आदि के हाथ लोभवश बेच न डालें। सो नहीं होता। प्रायः अधिकांश बेच ही डालते हैं।

देवउठान—यह कार्तिक-सुदी एकादशी को होता है। वर्षा का आरम्भ होने पर आषाढ़ सुदी एकादशी से शुभ कार्य और यात्रा आदि बन्द हो जाती है। बहुत-से फल-फलारी तथा अन्य वस्तुओं के हानिकारी हो जाने से उन्हें खाना बन्द कर देते हैं। उसी भाँति इस तिथि का वर्षा की समाप्ति होने से शुभ कर्मों और यात्रा आदि का आरम्भ हो जाता है, और बहुत-सी वस्तुओं

को (जिनका खाना अब तक बन्द था) खाने लगते हैं।

लोगों का यह विश्वास है कि "देवता लोग जो सो गये थे, सो इस तिथि को अब जागे हैं" ठीक नहीं। असल बात यह है कि देव अर्थात् दिव्यगुणवाले श्रेष्ठ पुरुष, जो वर्षाकाल में बैठे थे, वे अब उत्तम कार्यों के करने को उठ बैठे यह अभिप्राय है। लोग इसको तो विचारते नहीं। उनका विश्वास है कि देवता लोग जो आकाश में रहते हैं, वर्षा के चार महीने भर सोते हैं, बाकी आठ महीने जागते हैं।

वसन्तपञ्चमी—यह माघ-सुदी पंचमी को होती है। इस दिन नाच-रंग करके लोग अत्यन्त हर्ष मनाते हैं। जिस प्रकार श्रावणमास में मलार रागिनी अतिप्रिय लगती है, उसी प्रकार इस वसन्तऋतु में वसन्त और होली का गान अतिप्रिय और सुरीला लगता है। अधिक हर्ष का कारण यह भी होता है कि अब हिम-ऋतु की समाप्ति होती है, और वसन्तऋतु का, जो सब ऋतुओं का राजा माना गया है, अब आरम्भ हो जाता है। अंग में उमंग आने लगती है। अनेक जड़ी-बूटियाँ फूट निकलती हैं। खेती भी पकने लगती है। आम में बौर आना शुरू हो जाता है, और चित्त में आनन्द भरने लगता है। उसी के कारण उत्सव मनाया जाता है।

होली का त्योहार फागुन-सुदी पूर्णमासी को होता है, और बड़ा त्योहार माना गया है। यह अधम श्रेणी के मनुष्यों (अर्थात् शूद्रों) का त्योहार था ; क्योंकि आज के दिन प्रह्लादजी को, जो दैत्यकुल में परम ईश्वर-भक्त थे, उनके पिता ने अपनी बहन होलिका की गोद में बिठाकर अग्नि में जलवा दिया था। उस समय दैत्य लोग यह हर्ष मनाते थे कि आज प्रह्लाद भस्म हो जायगा, और होलिका जीवित निकल आवेगी। इसलिये वे मद पीकर उन्मत्त हो गये थे, और उच्चस्वर से 'जय होलिका माई की', 'जय होलिका माई की' उच्चारण करते थे। मदमत्त होने के कारण अपशब्द भी उनके मुख से निकलते थे। यह त्योहार दैत्यकुल अर्थात् शूद्रों के हर्ष मनाने का है। सभ्य लोगों या उच्च वर्णों का नहीं। परन्तु अब चारों वर्ण इसको मनाते हैं, और उन्मत्त हुए बकते फिरते हैं* यह नहीं विचारते कि होलिका कौन थी, उसकी जय हमको मनानी चाहिये या नहीं और शूद्रों के आचरण हम क्यों धारण करें ?

यह तो त्योहारों का अति संक्षिप्त वृत्तान्त रहा। अब तुमको इनका अर्थ भी बताती हूँ कि जिस प्रकार ये त्योहार बुद्धिमानों को मनाने चाहिये।

* अब होली की गंदगी और बेहूदापन बहुत कम रह गया है।–सं०

(१) तीज—अपने पति से कपट, दुराव और झूठ ये तीन बातें तज, जिससे तेरा सुहाग अचल रहे।

(२) सलूनो—जैसे द्विज लोग वर्ष-भर के पापों का प्रायश्चित्त आज करते हैं, उसी भाँति तू भी अपने वर्ष-भर के अपराध दूसरों से क्षमा करा ले, और दूसरों के आप क्षमा कर दे। श्रावक लोगों में इसी प्रकार की रीति प्रचलित है। वे लोग भादों सुदी पड़वा को आपस में एक दूसरे से क्षमा कराते हैं, जिसको वे 'खिमाई' कहते हैं। यह रीति उनमें भादों के व्रतों के पीछे होती है।

(३) दशहरा—अपनी दशों इन्द्रियों (अर्थात् पाँच ज्ञान-इन्द्रिय और पाँच कर्म-इन्द्रिय) को हरा। अभिप्राय यह है कि उनको अपने वश में रख। उनसे कोई अनुचित कर्म न होने दे। दूसरा अर्थ यह है कि दश बातें प्यार-प्रीति को खोनेवाली हैं, उनको हरा, अर्थात् छोड़। वे बातें ये हैं—ईर्ष्या, द्वेष, मद, मिथ्या, निन्दा, अपकार, कृतघ्नता, वैर, लगालूतरी और बुराई।

(४) दिवाली—प्यार-प्रीतिवालों को और दान आश्रितों को सुख की देनेवाली।

(५) श्रीपञ्चमी—पाँच श्री को संचय कर, अर्थात् १ मुखश्री (मुख की कान्ति), २ श्री (धन), ३ श्री (लक्ष्मी-जैसी अपने पति की सेवा), ४ राजश्री

राजद्वार में मान), ५ मित्रश्री (परस्पर प्यार-प्रीति)।
(६) होली—किसी उपकार के कारण आप दूसरी की हो ली या दूसरी अपनी हो ली, और मन का कपट और अन्तर भस्म कर दिया।

बहन, अब तू त्योहारों का अर्थ समझी ? मैंने बहुत ही थोड़ा-सा तेरे समझाने-भर को कह दिया है। बहुत न कह सकी। अब तुझसे व्रत और कहे देती हूँ, जिन्होंने स्त्रियों को बहुत ही दुःख दे रक्खा है, जिनसे सदा वे अकाल की मारी ही-सी रहती हैं। घर में होते हुए भी अन्न नहीं खातीं। यह हाल भी उनकी भूल के कारण अथवा उनके उपदेशकों के बहकाने से है। क्योंकि व्रतों का प्रयोजन यह नहीं था जैसा कि स्त्रियाँ आजकल समझे हुई हैं, और व्रत करती हैं।

व्रत का अभिप्राय क्या कहूँ, अब तो उसका अर्थ भी उलट गया है, क्योंकि व्रत 'वृ' धातु से निकला है, जिसका अर्थ 'पसंद करना' है, अर्थात् एक किसी अच्छी बात को स्वीकार करके धारण कर लेना। जैसे सत्य का व्रत, परोपकार का व्रत, हिंसा अथवा छल-कपट और मिथ्या के त्याग का व्रत। परन्तु अब इसका अर्थ उपवास अर्थात् भूखे रहना हो गया है। पूर्व समय में यह बात नहीं थी, पर अब हो गई है। इस पूर्व-प्रथा

का पता किसी-किसी बात में अब भी पाया जाता है। जैसा कि वर्षाऋतु में बहुत-सी स्त्रियाँ किसी विशेष वस्तु का खाना छोड़ देती हैं। जैसे कोई स्त्री नमक नहीं खाती, कोई हरी भाजी नहीं खाती, कोई ऐसी वस्तु खाना छोड़ देती है, जो हल से जोतकर उत्पन्न की जाती हैं। वे केवल ऐसी वस्तुएँ खा-खाकर चार महीने अपना निर्वाह कर लेती हैं, जैसे सिंघाड़ा, पसाई के चावल, कूटू, फल-फलारी इत्यादि। बहुधा ऐसी वस्तुएँ त्यागी जाती हैं, जो उनको अत्यन्त प्रिय हैं। इससे यह अभिप्राय है कि मन मारने की टेव पड़े, और दूसरा यह कि वर्षाकाल में भोजन को पचाने की शक्ति घट जाती है, भोजन भली-भाँति पचता नहीं। इस कारण ऐसे पदार्थों को भोजन के काम में लाया जाय, जो सहज में पच जायँ। पहले अभिप्राय से यह लाभ भी है कि यदि ऐसी टेव मनुष्य को रहे, तो किसी समय जो किसी वस्तु को मन चले, और वह उस समय न मिल सके, तो मन को दुःख या खेद न हो।

पर अब यह प्रथा तो उठ गई है, अर्थात् इन बातों को कोई करती नहीं। अब तो व्रत का अभिप्राय उपवास या भूखों मरने का ले लिया गया है। इसी कारण स्त्रियाँ उपवास करती हैं, और व्रतों के गूढ़ और यथार्थ अभिप्राय को नहीं जान सकतीं।

व्रत से केवल उपवास करना ही समझ लिया गया है जो स्त्रियों के लिये शास्त्रों में अत्यन्त वर्जित है; क्योंकि व्रत करने से पति और पुत्र, दोनों की आयु घटती है। पर आजकल की मूर्ख स्त्रियाँ इसको उलटा समझ रही हैं; इसीलिये व्रत करती हैं, जिसका फल यह होता है कि पति मर जाते हैं, पुत्र भी रोगी बने रहते या परलोक सिधार जाते हैं, और आप राँड़ होकर बैठती हैं।

जिस स्त्री ने व्रत किया, वह दुर्बल तो हो ही गी। स्त्री के दुर्बल होने से दूध भी निर्बल हो ही जाता है। जब भोजन ही न खायेगी, तब दूध कहाँ से आवेगा? बालक भूखा रहेगा, दुर्बल होगा और आयु घटेगी। इसी प्रकार पति की दशा होगी; क्योंकि जो स्त्री रोगी रहती है, अथवा दुर्बल रहती है, उसके संग से उसका पति भी रोगी और दुर्बल हो जाता है। मैं तुझे लज्जा के भय से इस समय नहीं बता सकती कि स्त्री के रोग पति की देह में किस प्रकार आ जाते हैं। बड़ी स्त्रियाँ इसको जानती हैं, और बड़ी होने पर तू भी जान लेगी। परन्तु प्रचलित प्रथा के अनुसार उपवास भी किया जाय, तो उसके गुण जानने चाहिये, जिससे कुछ लाभ भी हो। उपवास के गुण ये हैं—

(१) पेट का कब्ज पचाना।

(२) भूख का दुःख मालूम होना। यदि कोई भूखा

आवे तो उसके दुःख का यथावत् ज्ञान हो जाय कि भूख में यह क्लेश होता है, जैसा कि उपवास के दिन न खाने से हमको हुआ था।

जिस मनुष्य को भूख लगने से पहले ही नित्य पेट भर भोजन मिल जाता है, उसको भूख की व्यथा का ज्ञान नहीं हो सकता।

(३) जो अन्न हमारे इस दिन के एक समय के भोजन न करने से बच रहा, वह किसी दीन, दुखी अथवा भूखे-प्यासे को दे दिया जाय, जिसमें हमारी कुछ हानि भी न हो, वरन् पुण्य हो, और दूसरे का संकट कटे; क्योंकि यदि हम खाते, तब भी यह अन्न उठता। अब उसके उठने में दो लाभ हुए।

पर स्त्रियों के व्रत में यह बात और भी सोची गई है कि प्राचीन कथाओं को और अपने धर्म को भी स्मरण रख सकें, भूल न जायँ; क्योंकि जिस रीति से कि स्त्रियाँ व्रत करती हैं, अर्थात् वर्ष के नियत दिन को उपवास करती और कहानी सुनती हैं, कुछ दान-पुण्य भी करती हैं, सो इसी अभिप्राय का सूचक है। परन्तु इस प्रकार के व्रत से जो लाभ निकलते हैं, आजकल की मूर्ख स्त्रियाँ उनको नहीं समझतीं-बूझतीं, चाहे अन्ध-परम्परा से व्रत बराबर बड़े नियम से करती हों। हाँ

व्रत तो पातिव्रतधर्म की और कोई व्रत दयापालन की महिमा की शिक्षा देता है। मतलब यह कि स्त्रियाँ इसी बहाने से पातिव्रत या सतीधर्म इत्यादि की महिमा भूल न जायँ, ऐसे श्रेष्ठ धर्मों को त्याग न बैठें। इसीलिये इन व्रतों में कहानी आदि सुनने के द्वारा उनको प्रतिवर्ष उनका स्मरण बना रहेगा।

व्रत का प्रयोजन भूखों मरना नहीं है। इनके नियत करनेवालों का यह अभिप्राय न था, वरन् यह प्रयोजन था कि मैंने इस बात को अर्थात् दया, धर्म, सत्यभाषण, पातिव्रत इत्यादि की वृत्ति धारण की है। सो स्त्रियाँ अब व्रत तो करती हैं, और कहानी भी सुनती हैं, पर व्रतों के मुख्य उद्देश्य को नहीं समझतीं। और व्रत भी इतने बढ़ा लिये हैं कि वर्ष-भर के दिन तो ३६० ही होते हैं, पर व्रत गिनो तो ४६०, वरन् ५०० होंगे।

प्रथम तो ७ वारों के सात व्रत के हिसाब से ३६० तो वैसे ही हो गये। रहे नवदुर्गा, गणेशचौथ, एकादशी, पूर्णमासी, प्रदोष और दूसरे, जैसे वामनद्वादशी, हरछठ, शिवचतुर्दशी इत्यादि ; क्योंकि जैसे कोई दिन सप्ताह भर में व्रत से खाली नहीं रहने दिया, उसी प्रकार को तिथि भी ऐसी नहीं छोड़ी, जिसको व्रत न माना गया हो। कारण, प्रति तिथि का यह लेखा रक्खा गया है

(१) अमावस पितरों की, (२) प्रतिपदा ब्रह्मा की, (३) दूज अश्विनीकुमारों की, (४) तीज गौरी की, (५) चौथ गणेश की, (६) पंचमी नागों की, (७) छठ स्वामिकार्त्तिक की, (८) सप्तमी मुनियों की, (९) अष्टमी ऋषियों की, (१०) नवमी दुर्गाओं की, (११) दशमी कुलदेव की, (१२) एकादशी विष्णु की, (१३) द्वादशी वामनावतार की, (१४) त्रयोदशी महादेव की, (१५) चतुर्दशी नृसिंह की, (१६) पूर्णमासी चन्द्रमा की।

पर इससे तो मेरा कुछ प्रयोजन नहीं। मैं तो तुझे केवल यह बताती हूँ कि ये व्रत जो स्त्रियाँ रखती हैं, सो रखने चाहिये या नहीं अथवा उनके बदले क्या करना चाहिए? यह तो मैं तुझे पहले ही बता चुकी कि स्त्री के उपवास करने से बहुत-सी हानियाँ होती हैं—आपको भी, पुत्र को भी और पति को भी, जिनके निमित्त वे व्रत रहती हैं; क्योंकि व्रत चार प्रकार के हैं—

(१) पति के निमित्त, (२) पुत्र के निमित्त, (३) भ्राता के निमित्त, (४) अपने मोक्ष के निमित्त।

व्रत तो बहुत हैं; मैं इस समय सब गिनाना नहीं चाहती। केवल तत्त्व-तत्त्व बताये देती हूँ कि जो कहानी व्रत के दिन सुनाई जाती है, उसे मन में धारण कर

वैसा ही काम करे, न कि दिन-भर भूखी मरे। भूखी मरने से कुछ नहीं होता। किन्तु जो कुछ उस व्रत से अभीष्ट है, उसे करे। अब पहले मैं तुझे वे व्रत बताती हूँ, जो पति के निमित्त किये जाते हैं। वे ही व्रत अधिकतर हैं। मैं तिथिवार क्रम से कहती हूँ। चैत्र-सुदी ३—इस दिन सब बहू-बेटियाँ जो सुहागिन होती हैं, व्रत रहती हैं। विधवा स्त्रियाँ इस व्रत को नहीं करतीं। महादेवजी और गौरी पार्वती की मूर्ति बनाकर पूजती हैं, जिसे 'गनगौर' कहती हैं। इसका उद्देश्य यह है कि जैसा महादेव और पार्वतीजी में स्नेह था, वैसा ही हममें हो। पार्वती की भाँति सुहाग अचल बना रहे, और जन्म-जन्म में वही पति मिले, जैसे पार्वतीजी को मिला था। यह वरदान माँगती हैं। पर इसके अभिप्राय को नहीं समझतीं कि उनमें क्यों ऐसा अचल और निष्कपट प्रेम रहा? जो-जो बातें पार्वती ने पातिव्रतधर्म के पालन में कीं, उनको वे भी करें। ऐसा तो करतीं नहीं; क्योंकि पातिव्रतधर्म तो नाममात्र को नहीं, केवल व्रत-ही-व्रत हैं; पर पार्वतीजी का-सा दुर्लभ फल एक दिन के उपवास में चाहती हैं। सो क्योंकर मिल सकता है? मैंने देखा है, जो स्त्रियाँ नित्यप्रति अपने पति को दुःख और क्लेश देती रहती हैं, प्रातःकाल से आधी रात व

(१) अमावस पितरों की, (२) प्रतिपदा ब्रह्मा की, (३) दूज अश्विनीकुमारों की, (४) तीज गौरी की, (५) चौथ गणेश की, (६) पंचमी नागों की, (७) छठ स्वामिकार्त्तिक की, (८) सप्तमी मुनियों की, (९) अष्टमी ऋषियों की, (१०) नवमी दुर्गाओं की, (११) दशमी कुलदेव की, (१२) एकादशी विष्णु की, (१३) द्वादशी वामनावतार की, (१४) त्रयोदशी महादेव की, (१५) चतुर्दशी नृसिंह की, (१६) पूर्णमासी चन्द्रमा की।

पर इससे तो मेरा कुछ प्रयोजन नहीं। मैं तो तुझे केवल यह बताती हूँ कि ये व्रत जो स्त्रियाँ रखती हैं, सो रखने चाहियें या नहीं अथवा उनके बदले क्या करना चाहिए? यह तो मैं तुझे पहले ही बता चुकी कि स्त्री के उपवास करने से बहुत-सी हानियाँ होती हैं—माता को भी, पुत्र को भी और पति को भी, जिनके निमित्त वे व्रत रहती हैं; क्योंकि व्रत चार प्रकार के हैं—

(१) पति के निमित्त, (२) पुत्र के निमित्त, (३) भ्राता के निमित्त, (४) अपने मोक्ष के निमित्त।

व्रत तो बहुत हैं; मैं इस समय सब गिनाना नहीं चाहती। केवल तरह-तरह बताये देती हूँ कि जो कहानी व्रत के दिन सुनाई जाती है, उसे मन में धारण कर

वैसा ही काम करे, न कि दिन-भर भूखी मरे। भूखी मरने से कुछ नहीं होता। किन्तु जो कुछ उस व्रत से अभीष्ट है, उसे करे। अब पहले मैं तुझे वे व्रत बताती हूँ, जो पति के निमित्त किये जाते हैं। ये ही व्रत अधिकतर हैं। मैं तिथिवार क्रम से कहती हूँ। चैत्र-सुदी ३—इस दिन सब बहू-बेटियाँ जो सुहागिन होती हैं, व्रत रहती हैं। विधवा स्त्रियाँ इस व्रत को नहीं करतीं। महादेवजी और गौरी पार्वती की मूर्ति बनाकर पूजती हैं, जिसे 'गनगौर' कहती हैं। इसका उद्देश्य यह है कि जैसा महादेव और पार्वतीजी में स्नेह था, वैसा ही हममें हो। पार्वती की भाँति सुहाग अचल बना रहे और जन्म-जन्म में यही पति मिले, जैसे पार्वतीजी को मिला था। यह वरदान माँगती हैं। पर इसके अभिप्राय को नहीं समझतीं कि उनमें क्यों ऐसा अचल और निष्कपट प्रेम रहा ? जो-जो बातें पार्वती ने पातिव्रतधर्म के पालन में कीं, उनको वे भी करें। ऐसा तो करतीं नहीं; क्योंकि पातिव्रतधर्म तो नाममात्र को नहीं, केवल व्रत-ही-व्रत हैं; पर पार्वतीजी का-सा दुर्लभ फल एक दिन के उपवास में चाहती हैं। सो क्योंकर मिल सकता है ? मैंने देखा है, जो स्त्रियाँ नित्यप्रति अपने पति को दुःख और क्लेश देती रहती हैं, प्रातःकाल से आधी रात व

में गरमी अधिक होने से इस वटवृक्ष के नीचे एकत्र होती हैं। अमावस के दिन सावित्री को यह वर मिला था, इसीलिये उस दिन यह व्रत किया जाता है।

भादोंसुदी ३—जिसे 'हरितालिका' तीज कहते हैं। इसे भी सब स्त्रियाँ रखती हैं। यह व्रत सबसे प्रथम पार्वतीजी ने किया था, जिसके कारण इसका नाम 'हरितालिका' पड़ा। जब पार्वतीजी राजा हिमाचल के यहाँ जन्मीं, और थोड़ी ही अवस्था में सब पढ़ लिया, तब उनके लिये वर की खोज हुई कि इनके लिये कोई ऐसा ही श्रेष्ठ वर होना चाहिये। इतने में नारदजी ने उनके पिता से आकर कहा कि पार्वती का विवाह जो विष्णु से हो, तो अच्छा। पार्वती के योग्य वर वही हैं। परन्तु पार्वती के मन में महादेवजी बस रहे थे, इसलिये शिवजी से विवाह करने के निमित्त तप करने को वह चली गईं। आज ही के दिन उनकी प्रार्थना पूरी हुई। तब से यह व्रत चला है। इसका उद्देश्य यह है कि सब स्त्रियाँ अपने-अपने पति से विवाह करने को ऐसा ही पक्का मन रक्खें, किसी प्रकार न बहँकें।

इस व्रत में आठ पहर निर्जल उपवास करना होता है। दूसरे दिन जाकर भोजन मिलता है। रात को जागरण करना होता है। यह सब व्रतों में कठिन है

इसका कारण यह है कि स्त्रियाँ जानें कि एक दिन-रात के उपवास से इतना कष्ट होता है, तो पार्वतीजी को वर्षों के उपवास में न जाने कितना कष्ट हुआ होगा ! जिसके बदले उनको मनवाञ्छित फल (पति) मिला। पर आजकल की स्त्रियाँ एक दिन तो व्रत करती हैं, और फल ऐसा माँगती हैं, जो पार्वतीजी को सहस्रों वर्ष की घोर तपस्या करने पर मिला था।

अब की स्त्रियाँ वर्ष-भर या अक्सर लड़ती रहती हैं, तनिक-तनिक-सी बात में रूठती हैं, और एक दिन व्रत रखकर यह फल चाहती हैं। सो कब सम्भव है ? हाँ, यदि तुम भी अपना मन अपने पति की ओर से ऐसा ही निश्चल रक्खो, जैसा पार्वतीजी ने रक्खा था कि नारद के बहकाने पर भी विष्णु के संग रह बैकुण्ठ का सुख न चाहा, पर योगीश्वर महादेव से विवाह किया, तो संभव है।

भादोंसुदी ५—इसे 'ऋषिपंचमी' भी कहते हैं। यह इसलिये रक्खा गया है कि इस दिन उत्तंक ऋषि ने अपनी पुत्री से व्रत कराया था। इसका कारण यह था कि उत्तंक ऋषि की कन्या को कृमिरोग हो गया था; क्योंकि वह स्त्रीधर्म के दिनों में कुछ अनाचार कर बैठी थी, और आचार-भंग कर डाला था। इन चार दिनों के [illegible] बनाये गये हैं, उनके विरुद्ध उसने

कार्य कर लिया था, अर्थात् पति के पास चली गई थी, इसीलिये उसके पिता ने आज के दिन उससे व्रत कराया था। और ऐसा भोजन उसको कराया था, जो उन पदार्थों से बनता है, जो हल द्वारा उत्पन्न नहीं होते— जैसे सिंघाड़ा, पसाई इत्यादि। इनके सेवन से उसका रोग जाता रहा। कुछ औषधि भी अवश्य दी होगी; क्योंकि केवल व्रत से रोग नहीं जा सकता। अब स्त्रियाँ व्रत तो करती हैं, और ऐसे ही अन्न वे भोजन भी करती हैं, जो विना जुती हुई भूमि में उत्पन्न होते हैं, पर मुख्य बात को नहीं जानतीं। इस व्रत से यह याद रखना चाहिये कि मासिक धर्म के चारों दिनों में स्त्री को बड़े नियम के साथ आचार-विचार से रहना चाहिये कि कोई हानि न होने पावे।

इसका नाम ऋषिपञ्चमी यों रक्खा है कि सप्तऋषियों (अर्थात् कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और वशिष्ठ) की सम्मति से उन ऋषि ने कन्या की चिकित्सा की होगी ; क्योंकि ये सातों ऋषि एक ही स्थान पर साथ-साथ रहते थे।

पुत्रनिमित्त के व्रत

आषाढ़ में शीतला के व्रत होते हैं। स्त्रियाँ ठंडा और बासी भोजन करती हैं। इससे यह अभिप्राय है कि ये दिन शीतला निकलने के होते हैं। जो माता दूध पिलाने-

वाली हैं, वे ऐसा करें, जिससे उनके दूध में शीतल गुण उत्पन्न हों, और शीतला न निकलने पावें। व्रत रखने की कुछ आवश्यकता नहीं। व्रत से तो और गरमी बढ़ती है। केवल ठंडी वस्तु का सेवन करना चाहिये। सो वह भी उस स्त्री को, जो दूध पिलाती हो, न कि सबको, जैसा कि आजकल करती हैं। जो बालक मा का दूध नहीं पीते, भोजन करते हैं, उनकी माताओं को ऐसे भोजन की कुछ आवश्यकता नहीं, वरन् उन बालकों ही को है। इसी प्रकार चैत में भी कराना चाहिये, जिसके कारण 'बसोड़ा' किया जाता है।

पुत्रवती स्त्रियाँ हर चौथ को गणेशजी का व्रत करती हैं—जैसा 'सकटचौथ' आदि को। यह इस अभिलाषा से कि पुत्र गुणवान् हों। सो यह भी उनका भ्रम है। बिना पढ़ाये, केवल व्रत करने से कोई गुणवान् नहीं हो सकता। यदि गुणवान् बनाना है, तो लिखाओ, पढ़ाओ।

कार्त्तिकबदी ८—इसको 'अहोईअष्टमी' कहते हैं। इस व्रत को पुत्रवती स्त्रियाँ ही रखती हैं। इसका वर्णन फिर कभी करूँगी।

वे व्रत जो भाई की प्रीति-निमित्त किये जाते हैं।

सावनसुदी ५—इसे 'नागपंचमी' कहते हैं। इसमें बेटियाँ भाई की प्रीति के गीत गाती हैं; पर व्रत रखना वृथा

है। प्रीति की रीति ही करनी चाहिए, व्रत से कुछ नहीं।

कार्त्तिकसुदी २—इसे 'यमद्वितीया' और भाईदूज भी कहते हैं। ऐसा व्यवहार कर रक्खा है कि बहन के घर का भोजन बड़ा भाई नहीं करता ; परन्तु इस तिथि को बहन के घर का ही भोजन किया जाता है, और भाई बहन को कुछ रुपये-पैसे यथाश्रद्धा देता है। कारण इसका यह रक्खा है कि ऐसा करने से भाई-बहन की प्रीति में अन्तर न आने पावेगा ; किन्तु वह बनी रहेगी।

इसी कारण आज के दिन स्त्रियाँ व्रत रहकर बहन-भाई की कहानी सुनती हैं। परन्तु भाई मे जिनकी प्रीति भी नहीं है, वे भी व्रत रहती हैं। उनको भाई की प्रीति से कुछ काम नहीं है, व्रत से काम है।

अब तुझको वे व्रत बताती हूँ जो अपने मोक्ष के निमित्त किये जाते हैं। सबसे प्रथम चैत्र-सुदी पड़वा को व्रत रखती हैं, जिसे संवत्सर की पड़वा कहते हैं। यह इसलिये है कि सब कोई जानता रहे कि आज के दिन परमेश्वर ने इस सृष्टि को पैदा किया था। हम सबको उसका धन्यवाद देना उचित है। इसी दिन से नवदुर्गा का व्रत रखते और बलिदान देते हैं। पर इसमें बड़ी भूल है कि बलिदान बकरे और भैंसे का देते हैं; क्योंकि इनसे ठीक अभिप्राय कुछ और ही है। इस कारण कि जीवहत्या

करना कभी अच्छा नहीं। इन दोनों पशुओं के बलिदान से सरस्वती देवी की प्रसन्नता मानी है। पर विचार से मालूम हो सकता है कि पाप करने से कब अच्छा फल मिल सकता है? इस बलिदान से इन पशुओं के वध का अभिप्राय कदापि नहीं है। किन्तु यह है कि जो भैंसे और बकरे तुम्हारी देह में बसते हैं, जिनको पालने से सरस्वती तुमसे अप्रसन्न होती है, अर्थात् तुम्हारी बुद्धि हीन हो जाती है, उनको शरीर से निकालकर उनका बलिदान कर दो। यह अलंकार में वर्णन किया है। अब इसका विस्तार से वृत्तांत लिखा जाता है। भैंसे से क्रोध का और बकरे से काम का प्रयोजन है; क्योंकि भैंसे का क्रोध और बकरे का काम विख्यात है और देह में काम-क्रोध के रहने से बुद्धि मलिन रहती है, और मनुष्य अंधा-सा हो जाता है। पर इनका दमन करने से बुद्धि निर्मल हो जाती है, और वही सरस्वती की प्रसन्नता है।

आषाढ़ में व्यासपूनो को गुरु-पूजा होती है। इसलिए कि गुरु के उपकार को न भूल जायँ, और वर्ष-भर की जो कुछ शंकाएँ हों, उनका आज के दिन समाधान कर लिया जाय।

भादोंबदी ४—इसको 'बहुलाचौथ' कहते हैं। यह सत्य बोलने की प्रशंसा में है। इस दिन इसी की कहानी

स्त्रियाँ सुनती हैं। बहुला गौ को इस दिन वन में फिरते हुए सिंह मिला। उसने उसे खाना चाहा, तो बहुला ने कहा—मैं अपने बछड़े को देख आऊँ, तब खा लेना। इस पर बाघ ने गौ को चले जाने दिया। बहुला सत्य-वादिनी थी। बछड़े को देखकर सिंह के पास चली गई। तब बाघ बोला—"तू जो चली आई सो क्या तुझे अपने प्राण का भय न था ?" इसके उत्तर में बहुला बोली—"प्राण का भय तो अवश्य था, परन्तु उससे अधिक मुझको अपने सत्यप्रण के जाने का भय था ; क्योंकि मेरा प्रण है 'प्राण जायँ, पर वचन न जाई' ।" सिंह ने जब यह सुना और सोचा कि इस गौ ने अपने सत्य के प्रण को न छोड़ा, और प्राण देने को आ गई, तब उसने गौ को प्राणदान कर दिया। उसी दिन से, सत्य की महिमा दिखाने के लिये इसका व्रत नियत कर दिया कि सब लोग बहुला की भाँति सत्य की वृत्ति धारण करें, प्राण जाने तक का भय न करें, पर सत्य को न छोड़ें। सो स्त्रियाँ व्रत तो करती हैं, पर सत्य की प्रतिज्ञा नाममात्र को भी नहीं करतीं। यहाँ तक कि व्रत के दिन भी सत्य नहीं बोलतीं। उस दिन भी अनेक झूठी बातें बोलकर संसार में पाप की भागिनी होती हैं।

भादोंसुदी ४—इसे 'सिद्धविनायक' और 'पत्थर-

चौथ' भी कहते हैं। इससे यह प्रयोजन रक्खा है कि
किसी को झूठा कलंक न लगावे, जैसा कि आज के
श्रीकृष्णचन्द्र को लगा था, और उससे उन्हें क्लेश हुआ

भादोंसुदी १२—इसे 'वामनद्वादशी' कहते हैं।
दिन वामन अवतार हरि ने राजा बलि को छला
जिसका कारण यह हुआ कि राजा बलि ने छल
इन्द्र का राज्य ले लिया था। इस व्रत से यह उपदेश
है कि यदि कोई किसी के संग छल करेगा, तो दूसरे
संग छल करेंगे, जैसा वामन ने बलि के संग किया

भादोंसुदी १४—इसे 'अनन्तचौदस' कहते हैं
दिन सूत अथवा रेशम आदि का जो अनन्त ब
जाता है, उसमें १४ गाँठें दी जाती हैं। इसका
यह रक्खा है कि परमेश्वर अनन्त है; चौदह भुवन
स्वामी है। उसका सदा स्मरण रक्खो। उसक
मानो। वह सब स्थानों में है, और तुम्हारे भले-बुरे
को देखता है। १४ भुवनों में तुम उससे छिपाकर
स्थान में कोई कर्म नहीं कर सकते, जहाँ वह न देख

क्वाँर में भी नवदुर्गा होती हैं। पर अभिप्राय व
जो चैत्र की नवदुर्गा का है।

लग जाते हैं। इनमें काम की अधिकाई होती है, इसलिये प्रातःकाल स्नान करना, व्रत रखना और ऐसा भोजन न करना चाहिये, जो बल बढ़ानेवाला व वीर्य उत्पन्न करनेवाला हो। जैसे उड़द, तिल, मधु इत्यादि। किन्तु ऐसे साधन करने चाहिये, जिनसे काम आदि कम होते जायँ। जैसे स्नान आदि। इसी युक्ति से माघ का स्नान रक्खा है। वह भी विधवाओं के लिये ही है, सुहागिनों के लिये नहीं। पर आजकल तो सभी स्त्रियाँ, क्या छोटी, क्या बड़ी, क्या ब्याही, क्या क्वाँरी, क्या राँड़, क्या सुहागिन इसके फल को लूटती हैं। ठीक बात को कोई नहीं समझतीं, और न कोई उनको उपदेश करता है। भेड़िया-धसान की रीति मच रही है।

बहन मोहिनी, मैं तुझे कहाँ तक बताऊँ। जितना बता दिया है, उसी से तू सब समझ ले। इन बातों को समझ-बूझकर करना। मूर्ख स्त्रियों की भाँति तू भी इनमें मत फँस जाना। जहाँ तक बने, वहाँ तक औरों को भी उपदेश करती रहना, जिसमें स्त्रियाँ इनको छोड़-कर गुणवान् बनें, और अपने पति-पुत्र की सब भाँति सहायता करें।

मैंने भी बहन, अपना यह धर्म समझ लिया है कि एक या दो घंटे नित्य ऐसी बातों में लगा देना, जिनसे

चौथ' भी कहते हैं। इससे यह प्रयोजन रक्खा है
किसी को झूठा कलंक न लगावे, जैसा कि आज
श्रीकृष्णचन्द्र को लगा था, और उससे उन्हें क्लेश

भादोंसुदी १२—इसे 'वामनद्वादशी' कहते
दिन वामन अवतार हरि ने राजा बलि को
जिसका कारण यह हुआ कि राजा बलि ने
इन्द्र का राज्य ले लिया था। इस व्रत से यह उप
है कि यदि कोई किसी के संग छल करेगा, तो
संग छल करेंगे, जैसा वामन ने बलि के संग

भादोंसुदी १४—इसे 'अनन्तचौदस' क
दिन सूत अथवा रेशम आदि का जो अ
जाता है, उसमें १४ गाँठें दी जाती हैं।
यह रक्खा है कि परमेश्वर अनन्त है; च
स्वामी है। उसका सदा स्मरण रक्खो
मानो। वह सब स्थानों में है, और तुम
को देखता है। १४ भुवनों में तुम उससे
स्थान में कोई कर्म नहीं कर सकते, जह

क्वाँर में भी नवदुर्गा होती हैं। पर
जो चैत्र की नवदुर्गा का है।

कार्त्तिक-स्नान—यह विधवाओं
स्त्रियों के लिये कदापि नहीं